संक्षिप्त सूरसागर

सम्पादक

प्रोफ़ेसर वेनीप्रसाद, एम० ए०

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

द्वितीय संस्करण]   १९२७ ई०   [मूल्य २॥)

Published by
K. Mittra,
at The Indian Press, Ltd.,
Allahabad.

Printed by
A. Bose,
at The Indian Press, Ltd.,
Benares-Branch.

प्रोफ़ेसर बेनीप्रसाद-कृत ग्रन्थ

हिन्दी

१—हिन्दी-गुलिस्ताँ—शेख़ सादी-कृत फ़ारसी ग्रन्थ का अनुवाद (इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग)

२—राजनीति-प्रवेशिका

अँगरेज़ी

३—जहाँगीर का इतिहास (आक्सफ़र्ड यूनीवर्सिटी प्रेस)

४—प्राचीन भारत में शासन-सिद्धान्त (इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग)

द्वितीय संस्करण की

भूमिका

हिन्दी-संसार ने प्रथम संस्करण का यथेष्ट आदर किया। "सूरदास का जीवनचरित और काव्य"-शीर्षक उपोद्घात का गुजराती अनुवाद एक गुजराती महिला ने किया है। वर्तमान संस्करण का संशोधन प्रोफ़ेसर धीरेन्द्र वर्मा, एम० ए०, ने किया है। एतदर्थ उनको धन्यवाद।

प्रयाग,
१७-४-२६

बेनीप्रसाद

सूची

सूरदास का जीवनचरित और काव्य

हिन्दू-धर्म और सभ्यता के इतिहास में, भारतीय और विशेषतः हिन्दी-साहित्य के इतिहास में, सूरदास का नाम अजर-अमर रहेगा। जब तक हमारा राष्ट्रीय जीवन है, जब तक हमारी भाषा का अस्तित्व है, जब तक संसार में कवित्व-प्रतिभा, सौष्ठव, शब्द-विन्यास और शालीनता का मान है तब तक सूरदास सम्मान, प्रशंसा, श्रद्धा और भक्ति के पात्र रहेंगे। अभाग्यवश इनके जीवन की घटनाओं का ठीक-ठीक पता नहीं लगता। होमर, शेक्सपियर, वाल्मीकि, कालिदास आदि महाकवियों की तरह इनकी कविता ही इनके मानसिक जीवन का ज्वलन्त चित्र है; शेष अन्धकार में छिपा हुआ है।

सूरदास का परम्परागत जीवनचरित

गोकुलनाथ-कृत चौरासी वार्ता, भक्तमाल और टीकाओं में सूरदास परम्परागत चरित लेखबद्ध है। कहते हैं कि वह एक निर्धन सार-त ब्राह्मण रामदास के पुत्र थे और देहली के पास सीही गाँव में पैदा हुए थे। जन्म के अन्धे थे। आठ बरस की अवस्था में इनका जनेऊ हुआ। एक बार अपने माता-पिता के साथ वे मथुरा गये; लौटने से इन्कार किया। मा-बाप बहुत रोये-पीटे पर बालक सूरदास ने कहा कि कृष्ण के सहारे मैं यहीं रहूँगा। अन्त में एक साधु के यहाँ रह ही गये। एक दिन वे कुएँ में गिर गये और छः दिन तक पड़े रहे। सातवें दिन जब किसी ने निकाला तब, यह समझकर कि साक्षात् श्रीकृष्ण ही हैं, उनकी ह पकड़ ली। जब वह छुड़ाकर चलने लगे तब सूरदास बोले—

दोहा

बाँह छोड़ाये जात हौ निबल जानि कै मोहिं ।
हिरदै सों जब जाइहौ मर्द बदौंगो तोहिं ※॥ १ ॥

आगरा और मथुरा के बीच जमना किनारे गऊघाट पर, व्रजभूमि के बिल्कुल मध्य में, सूरदास रहने लगे और कृष्ण की भक्ति में अपना जीवन बिताने लगे। सुप्रसिद्ध महाप्रभु, भक्ति-मार्ग के उपदेशक, वल्लभाचार्य के शिष्य हो गये और उनके साथ कृष्ण के लीलागार गोकुल में श्रीनाथ के मन्दिर में बहुत दिन तक रहे। वल्लभाचार्य के पुत्र गोस्वामी विट्ठलनाथ से भी इनकी मित्रता हो गई। इन्हीं विट्ठलनाथ के पुत्र गोकुलनाथ ने अपनी चैारासी वार्ता में सूरदास का संक्षिप्त चरित लिखा है।

अष्टछाप

वल्लभाचार्य के शिष्यों में चार प्रधान थे—सूरदास, कुम्भनदास, परमानन्ददास और कृष्णदास। विट्ठलनाथ के शिष्यों में चार प्रधान थे—छीतस्वामी, गोविन्दस्वामी, चतुर्भुजदास और नन्ददास। विट्ठलनाथ ने इन आठों को लेकर अष्टछाप की स्थापना की।

अन्त समय सूरदास पारासोली चले गये। विट्ठलनाथजी भी उनसे अन्तिम भेट करने को पहुँचे। किसी ने सूरदास से पूछा कि "आपने अपने गुरु का कोई छन्द क्यों नहीं बनाया ?" महात्मा ने उत्तर दिया कि मेरे सभी छन्द गुरुजी के हैं। तो भी वल्लभाचार्यजी का एक छन्द तत्काल बनाया

"भरोसो दृढ़ इन चरनन केरो ।
श्रीवल्लभनख-चन्द-छटा विनु सब जग माँझ अँधेरो ॥
साधन और नहीं या कलि में जासों होत निबेरो ।
सूर कहा कहि दुबिध आँधरो बिना मोल को चेरो ॥"

※ सर जार्ज ग्रियर्सन अपने "हिन्दुस्तान की भाषाओं के साहित्य-इतिहास" (Vernacular Literatures of Hindustan) में इस दोहे पर मुग्ध हैं यद्यपि उन्होंने इसके अर्थ का अनर्थ कर डाला है।

राधा-कृष्ण का एक और भजन गाते-गाते सूरदास की आँखों में जल भर आया। गोस्वामीजी ने पूछा कि सूरदासजी! नेत्र की वृत्ति कहाँ है? सूरदासजी ने कहा—

खंजन नैन रूप-रस माते। अतिसै चारु चपल अनियारे पल-पिंजरा न समाते॥ चलि-चलि जात निकट स्रवनन के उलटि-पलटि ताटङ्क फँदाते। सूरदास अंजन गुन अटके नातरु अब उड़ि जाते॥

इतना कहकर सूरदास ने शरीर छोड़ दिया।

एक दूसरा जीवनचरित

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी-संसार के सामने एक और प्राचीन लेख रक्खा था, जिसमें सूरदास के जीवन का सर्वथा भिन्न वर्णन किया है। यह सूरदास का ही लिखा कहा जाता है और इस प्रकार है—

प्रथम ही प्रथ जगाते में प्रगट अद्भुत रूप।
ब्रह्मराव बिचारि ब्रह्मा राखु नाम अनूप॥
पानपय देवी दियो शिव आदि सुर सुख पाय।
कहा दुर्गापुत्र तेरो भयो अति सुखदाय॥
पार पायन सुरन के पितु सहित अस्तुति कीन्ह।
तासु वंश प्रशंस में भौ चन्द चारु नवीन॥
भूप पृथ्वीराज दीनों तिन्हें ज्वाला देश।
तनय ताके चार कीन्हों प्रथम आप नरेश॥
दूसरे गुणचन्द तासुत शीलचन्द सरूप।
वीरचन्द प्रताप पूरण भयो अद्भुत रूप॥
रन्तभार हमीर भूपत सङ्ग खेलत आप।
तासु वंश अनूप भो हरचन्द अति विख्यात॥
आगरे रहि गोपचल में रहो तासुत वीर।
पुत्र जनमे सात ताके महाभट गम्भीर॥

कृष्णचन्द उदारचन्द जो रूपचन्द सुभाइ ।
बुधचन्द प्रकाश चौथौ चन्द भै सुखदाइ ॥
देवचन्दप्रबोध संसृत चन्द ताको नाम ।
भयो सप्तो नाम सूरज चन्द मन्द निकाम ॥
सो समर करि साहि सेवक गये विधि के लोक ।
रहो सूरजचन्द दृग ते हीन भर भर शोक ॥
परो कूप पुकार काहू सुनी ना संसार ।
सातयें दिन आइ यदुपति कियो आप उधार ॥
दियो चख दै कही शिशु सुनु मांग वर जो चाइ ।
हों कहों प्रभु भगत चाहत शत्रु नाश सुभाइ ॥
दूसरो ना रूप देखों देखि राधा-श्याम ।
सुनत करुणासिन्धु भाषी एवमस्तु सुधाम ॥
प्रबल दच्छिन विप्र कुल ते शत्रु ह्वैहै नास ।
अपित बुद्धि विचारि विद्यामान माने मास ॥
नाम राखे मोर सूरजदास, सूर, सुश्याम ।
भये अंतर्धान बीते पाछली निशि याम ॥
मोहि पनसो इहै ब्रज की बसे सुख चित थाप ।
थपि गोसाईं करी मेरी आठ मध्ये छाप ॥
विप्र प्रथजगात को है भाव भूर निकाम ।
सूर है नँदनंदजू को लयो मोल गुलाम ॥

इसके अनुसार सूरदास चन्दबरदाई के वंशज थे। उनके छः भाई मुसलमानों से युद्ध में मारे गये थे, वह स्वयं अंधे थे, कुएँ में गिरने पर कृष्ण-द्वारा निकाले गये थे, उनका नाम सूरजदास था और अष्टछाप में उनकी स्थापना हुई थी* ।

---

* सूरदास के जीवन के लिए देखिए चौरासी वार्ता, भक्तमाल, और उनकी टीकाएँ; सरदार-कृत सूरदास के दृष्टिकूट, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के

निष्कर्ष

दूसरे जीवनचरित का कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है। इसमें मराठा-विजय का उल्लेख है जो सूरदास के लगभग १०० वर्ष पीछे हुई थी। ऊपर जो पद उद्धृत किया गया है वह १८ वीं शताब्दी में बना होगा और इसलिए अप्रामाणिक है।

परम्परागत जीवन-चरित अत्यन्त संक्षिप्त है पर उससे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि सूरदास का जन्म एक निर्धन ब्राह्मणकुल में देहली के पास हुआ था पर वह बचपन में ही व्रज में आ बसे और सारे जीवन वहीं रहे। व्रजभाषा पर सूरदास ने जो प्रगाढ़ अधिकार दिखाया है वह भी व्रज-निवास का सूचक है। सूरसागर में उपदिष्ट भक्ति-मार्ग इस कथन का समर्थन करता है कि सूरदास महाप्रभु वल्लभाचार्य के शिष्य थे। वनस्थली के अपूर्व वर्णन से सिद्ध होता है कि सूरदास वनों में खूब घूमे थे। समुद्र का उल्लेख उन्होंने इतनी बार किया है, और दो-एक स्थान पर सामुद्रिक शोभा का ऐसा चित्र खींचा है कि उनके समुद्र-तट जाने का अनुमान होता है। उस समय साधु-संन्यासी द्वारका, जगन्नाथ, रामेश्वर आदि तीर्थों को जाया ही करते थे। सम्भवतः सूरदास भी गये होंगे। सूरदास के समस्त पद गाने के लिए हैं। प्रत्येक पद का राग उन्होंने लिख दिया है। सम्भवतः वह जयदेव की तरह बड़े गायक थे।

होमर और मिल्टन की तरह सूरदास अन्धे थे—यह परम्परा से सुनते हैं। उन्होंने कई स्थानों पर इसका उल्लेख किया है। उदाहरणार्थ —

……सूर क्रूर आंधरो मैं द्वार पर्यो गाऊँ………

लेख, वेंकटेश्वर प्रेस से प्रकाशित सूरसागर में "श्री सूरदास का जीवन-चरित" शीर्षक राधाकृष्णदास का लेख, मिश्रबन्धुविनोद, मिश्रबन्धु-कृत हिन्दी-नवरत्न।

पर इससे इतना ही सिद्ध होता है कि इस पद के लिखने के समय सूरदास अन्धे थे। प्राकृतिक दृश्य का अनुपम चित्र-चित्रण किसी प्रकार यह नहीं मानने देता कि वह जन्म से ही अन्धे थे। मिल्टन की तरह अवस्था बढ़ने पर ही वे नेत्रविहीन हो गये थे।

जीवन के किसी समय भी सूरदास गृहस्थ थे, इसका कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं है। पर बाललीला, रासलीला, मानलीला आदि के वर्णन से उनके गृहस्थ रहने का अनुमान अवश्य होता है। आँखें फोड़ने के विषय में जो दन्तकथाएँ हैं वे भी इस अनुमान का समर्थन करती हैं।

सूरदास का समय

सूरदास के समय का ठीक-ठीक निर्णय अभी तक नहीं हो सका। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के अनुसार वल्लभाचार्य का समय है १५३५ वि० सं०—१५८७ वि० सं० और विट्ठलनाथजी का समय है १५७२ वि० सं०—१६४२ वि० सं०। सूरदास इनके समकालीन थे; अतः उनका समय १५३५ वि० सं०—१६४२ वि० सं० के बीच ठहरता है। अपने गुरु वल्लभाचार्य से वे अवश्य छोटे होंगे; अतः उनका जन्मकाल लगभग १५४५ वि० सं० प्रतीत होता है। अपने एक ग्रन्थ साहित्यलहरी का संवत् उन्होंने इस प्रकार दिया है—

मुनि पुनि रसन के रस लेख।
दसन गौरी नन्द को लिखि सुबल सम्वत पेख॥
नन्दनन्दन मास छै ते हीन तृतिया बार।
नन्दनन्दन जनमते हैं बाण सुख आगार॥
तृतिय ऋक्ष सुकर्म्म जोग बिचारि सूर नवीन।
नन्दनन्दनदास हित साहित्यलहरी कीन॥

यह बराबर है अक्षयतृतीया वैशाख सं० १६०७ के॥

---

1. देखिए मिश्रबन्धु-कृत हिन्दी-नवरत्न पृ० १४३।

सूरसारावली में वे कहते हैं —

गुरुप्रसाद होत यह दरसन सरसठि बरस प्रवीन ।
शिव विधान तक करउ बहुत दिन तऊ पार नहिं लीन ॥

अर्थात् सूरसारावली सूरदास ने ६७ वर्ष की अवस्था में बनाई। यदि जन्म-संवत् १५४५ मानें तो सारावली का संवत् १६१२ निकलता है। मिश्रबन्धुओं का अनुमान है कि साहित्यलहरी और सूरसारावली लगभग एक समय बनी होगी और इस प्रकार सूरदास का जन्मकाल लगभग १५४० सं० है। पर इससे दृढ़ अनुमान यह है कि सूरदास जो विट्ठलनाथ के भी समकालीन थे उनके पिता वल्लभाचार्य से कम से कम १० वर्ष छोटे रहे होंगे। साहित्यलहरी दृष्टकूटों का संग्रह है। सूरसारावली सूरसागर का संक्षेप है। यह मानने में कोई आपत्ति नहीं है कि सारावली साहित्यलहरी के पीछे बनी।

बाबू राधाकृष्णदास ने लिखा है कि मुझे सूरदास के ८० वर्ष तक जीवित रहने का पक्का प्रमाण मिला है। वह प्रमाण लिखा नहीं है पर यदि उसे मान लें तो सूरदास का मृत्युकाल लगभग १६२५ वि० सं० ठहरता है।

अनुमान से इतना कह सकते हैं पर जब तक प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों के भाण्डार में अधिक खोज न हो तब तक निश्चय-पूर्वक कुछ नहीं कह सकते। सूरसागर के समान बृहद्ग्रन्थ अनेक वर्षों में बना होगा—यह अनुमान से सिद्ध है। एक स्थान पर वे कहते हैं—

राग धनाश्री ।

हरि हौं सब पतितन को राव ।
को करि सकै बराबरि मेरी सो तौ मोहिं बताव ॥
व्याध गीध अरु पतित पूतना तिनमें बढ़ि जो और ।
तिनमें अजामेल गणिकापति उनमें मैं शिरमौर ॥
जहँ तहँ सुनियत यहै बड़ाई मो समान नहिं आन ।
अब रहे आजु कालि के राजा मैं तिनमें सुलतान ॥

अबलौं तौ तुम बिरद बुलायो भई न मोसों भेंट।
तजौं बिरद कै मोहिं उधारों सूर गही कसि फेंट॥

आगरे में सुलतानों का राज्य १५२६ ई० तक अर्थात् १५८३ वि० सं० तक रहा। सम्भवतः इसी समय के लगभग उपर्युक्त पद की रचना हुई होगी।

सूरदास के ग्रन्थ

सूरदास का प्रधान ग्रन्थ **सूरसागर** कहलाता है। स्वयं सूरदास ने कहा है—

श्रीमुख चारि श्लोक दिये ब्रह्मा को समुझाइ।
ब्रह्मा नारद सों कहें नारद व्यास सुनाइ॥
व्यास कहे शुकदेव सों द्वादश स्कंध बनाइ।
सूरदास सोई कहै पद भाषा कर गाइ॥

सूरदास ने सैकड़ों बार नम्रतापूर्वक कहा है कि मैं केवल भागवत के अनुसार कथा कहता हूँ। पर यह कोरा अनुवाद नहीं है। कथा-भाग भागवत से अवश्य लिया गया है पर उसकी कविता सर्वथा स्वतन्त्र प्रणाली पर हुई है। सूरदास की शैली में जितनी मौलिकता है उतनी शायद ही किसी हिन्दी-कवि में होगी। कहते हैं कि सूर-सागर में एक लाख पद हैं पर पूरे पद किसी प्रति में नहीं मिलते। शायद यह किंवदन्ती-मात्र है। असली संख्या दस-पाँच हज़ार से अधिक न होगी। इस विषय में भी प्राचीन भाण्डारों के अनुसन्धान के बाद ही कुछ निश्चय हो सकेगा। राधाकृष्णदास-द्वारा सम्पादित संस्करण में ४०१८ पद हैं। इस ग्रन्थ का सार **सूरसारावली** में है। इस ग्रन्थ के दृष्टकूटों में कुछ और मिलाकर **साहित्यलहरी** ग्रन्थ बना है। **पदसंग्रह और नागलीला** सूरसागर के केवल भाग हैं। **दशम स्कन्ध टीका** इनकी बनाई हुई नहीं मालूम होती। **ब्याहलो** और **नल-दमयन्ती** भी शायद इनकी रचना नहीं हैं।

भक्तिमार्ग

महापुरुषों की शक्ति का रहस्य यह है कि वे अपने युग की प्रबल आकांक्षाओं और आदर्शों के प्राणस्वरूप होते हैं। कबीर, नानक, सूरदास और तुलसीदास, अपने-अपने ढङ्ग पर, उस भक्तिस्रोत के प्रतिनिधि थे जो १५ वीं और १६ वीं सदी में तीव्र वेग से देश में बह रहा था। भक्ति का तत्त्व है परमात्मा से प्रेम, प्रेम में तल्लीनता और आत्म-समर्पण। भक्त विश्वास करता है कि परमात्मा मेरी भक्ति को स्वीकार करेगा। आन्तरिक भक्ति के सिवा अन्य कर्म-काण्ड, तीर्थ, मूर्तिपूजा, दान-तर्पण आदि को भक्त व्यर्थ, तुच्छ या गौण समझता है। भक्ति का भाव कोई नया भाव न था। सामवेद ने भक्ति की महिमा गाई है। भगवद्गीता का उपदेश है कि जीवन को परमेश्वर को समर्पण कर दो। बौद्ध-धर्म का महायान पन्थ बुद्ध भगवान् की भक्ति के आधार पर स्थिर है। जैन धर्म भी तीर्थङ्करों की भक्ति पर ज़ोर देता है। पुराण भी भक्ति-भाव से खाली नहीं है। श्रीमद्भागवत ने इस प्रकार भक्ति को सब ज्ञान, कर्म, तप, व्रत, तीर्थ, योग, यज्ञ आदि पर प्रधानता दी है—

न प्रेतो न पिशाचो वा राक्षसो वा सुरोपि वा।
भक्तियुक्तमनस्कानां स्पर्शने न प्रभुर्भवेत् ॥ १७ ॥
न तपोभिर्न वेदैश्च न ज्ञानेनापि कर्मणा।
हरिर्हि साध्यते भक्त्या प्रमाणं तत्र गोपिकाः ॥ १८ ॥
नृणां जन्मसहस्रेण भक्तौ प्रीतिर्हि जायते।
कलौ भक्तिः कलौ भक्तिर्भक्त्या कृष्णः पुरः स्थितः ॥ १९ ॥
भक्तिद्रोहकरा ये च ते सीदन्ति जगत्त्रये।
दुर्वासा दुःखमापन्नः पुरा भक्तिविनिन्दकः ॥ २० ॥
अलं व्रतैरलं तीर्थैरलं योगैरलं मखैः।
अलं ज्ञानकथालापैर्भक्तिरेकैव मुक्तिदा ॥ २१ ॥

श्रीमद्भागवत-माहात्म्य अध्याय २ ॥

अस्तु, भक्ति की यह धारा प्राचीन समय से देश में बह रही थी।

मुसलमान धर्म में भक्ति

मुसलमानों के आने पर इस धारा ने मुसलमान भक्ति-मार्ग की धारा से सङ्गम किया। मुहम्मद ने उपदेश दिया था कि परमेश्वर एक है। परमेश्वर के प्रेम में मुहम्मद मस्त हो जाता था। आठवीं सदी में ख़ुरासान आबू मुस्लिम आदि सन्त परमेश्वर के प्रेम में ऐसे तल्लीन हो गये कि अपने को ही परमेश्वर समझने लगे। परमेश्वर को उन्होंने इस तरह अपना लिया था, परमेश्वर को ऐसा आत्म-समर्पण कर दिया था, परमेश्वर में ऐसे तल्लीन हो गये थे कि भेद-भाव ही मिट गया था। फ़ारस के धुनिया सन्त हल्लाज ने इस भक्ति-मार्ग को सुव्यवस्थित करके सूफ़ी धर्म का रूप दे दिया। प्रेम में मस्त होकर वह चिल्लाता था कि मैं सत्य हूँ अर्थात् परमेश्वर हूँ; जो वैदान्तिक 'तत्त्वमसि' का स्मरण दिलाता है। हल्लाज लिखता है कि जो कोई तप से अपनी आत्मा को पवित्र कर लेता है, जो कोई सांसारिक कामनाओं से मुक्त हो जाता है वही परमात्मा का स्थान है। उसमें परमेश्वर की आत्मा प्रवेश करती है। जो इस आध्यात्मिक गति को प्राप्त हो गया उसके सब कर्म परमेश्वर के कर्म हैं, वह जो चाहता है, वही होता है। सुप्रसिद्ध मुसलमान विद्वान् और आध्यात्मिक उपदेशक अलग़ज़्ज़ाली के समय तक सूफ़ी धर्म सारे इस्लामिक संसार में फैल गया था। सूफ़ी धर्म वेदान्त और भक्ति-मार्ग का सम्मिश्रण है, परमेश्वर को सर्वव्यापी मानता है और उसकी भक्ति का उपदेश देता है। कुछ सूफ़ी महन्तों का दावा था कि हम परमेश्वर में मिल गये हैं; परमेश्वर को हमने अपनी आंखों से देखा है; परमेश्वर से हमने वार्तालाप किया है। अपने लेखों में "हम ऐसा कहते हैं" के स्थान पर वह "परमेश्वर ऐसा कहते हैं" लिखते हैं। इस्लाम का वचन है "परमेश्वर की प्रशंसा

हो।" इसके बजाय अबू यज़ीद विस्तामी कहते हैं "मेरी प्रशंसा हो"। फ़ारस के सूफ़ियों का आदर्श था कि हम 'फ़ना' हो जायँ अर्थात् परमेश्वर के सिवा हमें और कुछ न दीखे, और न कुछ अनुभव हो, हमारे ज्ञान और कर्म सब परमात्मध्यान के समुद्र में मिल जावें।

हिन्दू और मुसलमान भक्ति-मार्ग का मिलाप

इस प्रकार के सूफ़ी विचार भारतवर्ष में मुसलमानों के साथ आये। यह समझना भूल है कि यहाँ मुसलमान लोग हिन्दूधर्म पर अत्याचार ही करते रहे और हिन्दुओं को ज़बरदस्ती मुसलमान बनाते रहे। कुछ दिन उन्होंने अवश्य ऐसा किया पर अनुभव ने उन्हें शीघ्र ही जता दिया कि हिन्दू-धर्म का नाश असम्भव है। हिन्दू-सभ्यता से केवल द्रोह करने से काम न चलेगा; समझौता करना पड़ेगा। दूसरे, मुसलमान उतने असहनशील न थे जितना इतिहासकारों ने दिखाया है। १२ सौ वर्ष से ईसाई और मुसलमान जातियों में ऐसा घोर विद्वेष और संग्राम रहा है कि दोनों ने एक दूसरे के गुणों को भूलकर अवगुणों को ख़ुर्दबीन से देखकर सौ गुना बढ़ा दिया है। ईसाई इतिहासकारों ने मुसलमानों का जो चित्र खींचा है वह सर्वथा सत्य नहीं है। क़ुरान के कुछ पदों में तलवार से धर्म-प्रचार करने का आदेश अवश्य है पर अन्यत्र विश्वव्यापक प्रेम का आदेश है। न पहले आदर्श का अक्षरशः पालन हुआ और न दूसरे का। छोटे एशिया और स्पेन में मुसलमानों ने तद्देशीय सभ्यता को नाश करना तो दूर रहा, उलटा अपनाया और उन्नत किया। यूरोपीय सभ्यता के इतिहास में स्पेनवासी मुसलमान मूरों का नाम अमर रहेगा, उन्होंने अन्धकार के समय यूरोप में ज्ञान का प्रकाश फैलाया, उन्होंने अरस्तू आदि यूनानी तत्त्ववेत्ताओं के पठन-पाठन का क्रम फिर से जारी किया, उन्होंने सबसे पहले विश्वविद्यालय स्थापित किये जहाँ सैकड़ों ईसाई विद्यार्थियों ने शिक्षा पाई। १२वीं और १३वीं सदी में क्रूसेड नामक जो धर्म-युद्ध ईसाई योरप

श्रौर सल्जुक तुर्की साम्राज्य में हुए थे वह यूरोप में बहुत सी नई चीज़ें श्रौर बहुत से नये विचार ले गये।

७१२ ई० में मुहम्मद बिन क़ासिम ने सिन्ध पर हमला किया श्रौर युद्ध में बर्बरता से काम लिया। पर विजय होने पर सिन्ध में शासन-व्यवस्था करते समय उसने हिन्दुश्रों की धार्मिक श्राचार-विचार, पूजा-पाठ की स्वतन्त्रता में कोई हस्तक्षेप नहीं किया। ११ वीं सदी में महमूद ग़ज़नवी ने धन के लालच से हिन्दू-मन्दिरों को लूटा श्रौर मूर्तियों को तोड़ा पर हिन्दुश्रों में इस्लाम का प्रचार करने की उसने कोई परवा न की। १३ वीं सदी के मुसलमान राजाश्रों ने हिन्दुश्रों पर श्रनेक श्रत्याचार किये पर उन्हें शीघ्र ही मालूम हो गया कि संसार की कोई शक्ति प्राचीन भारतवर्षीय सभ्यता को नाश नहीं कर सकती। उलटे मुसलमानों पर हिन्दुश्रों का प्रभाव पड़ने लगा। १५वीं सदी में धार्मिक श्रत्याचार का एक प्रकार से श्रन्त हो गया। बाद को श्रौरङ्गज़ेब श्रादि कई राजाश्रों ने पुरानी श्रसहनशील नीति को पुनरुज्जीवित करने का उद्योग किया पर उनको सफलता नहीं हुई; उलटी हानि उठानी पड़ी। हिन्दू-मुसलमान एक साथ रहना सीख गये, एक दूसरे से शिक्षा लेने लगे, एक दूसरे की कमी को पूरा करने लगे। बहुत से हिन्दुश्रों ने फ़ारसी श्रौर श्ररबी पढ़ी, बहुत से मुसलमानों ने संस्कृत श्रौर हिन्दी पढ़ी। हिन्दू वेदान्त श्रौर योग ने मुसलमानों पर बहुत असर डाला। मुसलमान श्रद्वैतवाद ने हिन्दुश्रों पर बहुत श्रसर डाला।

दो सभ्यताश्रों के सम्पर्क से बहुधा नये श्रान्दोलन उत्पन्न होते हैं श्रथवा पुराने श्रान्दोलन नया रूप धारण करते हैं। १५वीं सदी में सूफ़ी मत की बड़ी उन्नति हुई श्रौर हिन्दुश्रों में एक परमेश्वरवाद श्रौर भक्ति-मार्ग का प्राबल्य हुश्रा। यों तो वेदान्त के श्रीभाष्य के रचयिता श्रीरामानुजाचार्य ने ११वीं सदी में ही दक्षिण में भक्ति का उपदेश दिया था पर दक्षिण में विशुद्ध भक्ति-मार्ग का बहुत प्रचार न हुश्रा।

रामानुजाचार्य के शिष्य हुए देवाचार्य; उनके हुए हरिनन्द, उनके राघवानन्द और उनके रामानन्द। रामानन्द ने दक्षिण से आकर उत्तर में भक्ति-मार्ग का प्रचार किया अथवा यों कहिए कि प्रचार में सहायता दी। भक्ति की महिमा गाते हुए वे कहते हैं कि नीच से नीच मनुष्य भी भक्ति के सहारे परमपद को पहुँच सकता है; पहुँचे हुए भक्ति-मार्गियों के लिए मूर्त्ति पूजा आदि की कोई आवश्यकता नहीं है। संस्कृत को छोड़कर रामानन्द ने, सर्वसाधारण के हित के लिए, भाषा में उपदेश दिया।

कबीर

रामानन्द के शिष्य मुसलमान जुलाहे कबीर ने भक्ति-सिद्धान्त को और भी बढ़ाया। कबीर ने हिन्दी-साहित्य की इतनी उन्नति की और अपने समकालीन एवं आगामी सुधारकों और कवियों पर इतना प्रभाव डाला कि उनके उपदेश को समझना आवश्यक है। परमेश्वर से प्रेम—बस यह बड़ी बात है। **प्रेम** कैसा होना चाहिए—

साखी

यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
सीस उतारै भुँइ धरै, तब पैठे घर माहिं॥
सीस उतारै भुँइ धरै, ता पर राखै पांव।
दास कबीरा यों कहै, ऐसा होय तो आव॥
प्रेम न बाड़ी ऊपजै, प्रेम न हाट बिकाय।
राजा परजा जेहि रुचै, सीस देइ लै जाय॥
प्रेम पियाला जो पियै, सीस दच्छिना देय।
लोभी सीस न दे सकै, नाम प्रेम का लेय॥
प्रेम पियाला भरि पिया, राचि रहा गुरु ज्ञान।
दिया नगारा सबद का, लाल खड़े मैदान॥

छिनहिं चढ़ै छिन ऊतरै, सो तो प्रेम न होय।
अघट प्रेम पिञ्जर बसे, प्रेम कहावै सोय॥
प्रेम प्रेम सब कोइ कहै, प्रेम न चीन्है कोय।
आठ पहर भीना रहै, प्रेम कहावै सोय॥
जा घट प्रेम न संचरै, सो घट जानु मसान।
जैसे खाल लोहार की, सांस लेत बिन प्रान॥
प्रेम तो ऐसा कीजिए, जैसे चन्द चकोर।
घींच टूटि भुइँ मां गिरै, चितवै वाही ओर॥
अधिक सनेही माछरी, दूजा अल्प सनेह।
जबहीं जल तें बीछुरै, तबहीं त्यागे देह॥
जहां प्रेम तहँ नेम नहिं, तहां न बुधि व्यौहार।
प्रेम मगन जब मन भया, तब कौन गिनै तिथि वार॥
प्रेम भाव इक चाहिए, भेष अनेक बनाय।
भावे गृह में बास कर, भावे बन में जाय॥
जोगी जङ्गम सेवड़ा, संन्यासी दुरवेस।
बिना प्रेम पहुँचै नहीं, दुरलभ सतगुरु देस॥
जब लगि मरने से डरै, तब लगि प्रेमी नाहि।
बड़ी दूर है प्रेम घर, समुझि लेहु मन माहिं॥
प्रेम भक्ति का गेह है, ऊँचा बहुत इकन्त।
सीस काटि पग तर धरै, तब पहुँचै घर सन्त॥

परमेश्वर से **विरह** जीव को व्याकुल कर देता है।

साखी

विरहिन देइ सँदेसरा, सुनो हमारे पीव।
जल बिन मच्छी क्यों जिये, पानी में का जीव॥
बिरह तेज तन में तपै, अंग सबै अकुलाय।
घट सूना जिव पीव में, मौत ढूँढ़ि फिर जाय॥

साखी

सुमिरन से सुख होत है, सुमिरन से दुख जाय ।
कह कबीर सुमिरन किये, साईं माहिँ समाय ॥

राजा राना राव रङ्क, बड़ा जो सुमिरै नाम ।
कह कबीर बड़्डों बड़ा, जो सुमिरै निःकाम ॥

सुमिरन की सुधि यों करौ, जैसे कामी काम ।
एक पलक बिसरै नहीं, निसु दिन आठो जाम ॥

सुमिरन की सुधि यों करौ, ज्यों गागर पनिहार ।
हालै डोलै सुरति में, कहै कबीर विचार ॥

सुमिरन की सुधि यों करौ, ज्यों सुरभी सुत माहिं ।
कह कबीर चारा चरत, बिसरत कबहूँ नाहिं ॥

सुमिरन की सुधि यों करौ, जैसे दाम कँगाल ।
कह कबीर बिसरै नहीं, पल पल लेहि सम्हाल ॥

सुमिरन से मन लाइये, जैसे नाद कुरङ्ग ।
कह कबीर बिसरै नहीं, प्रान तजै तेहि सङ्ग ॥

सुमिरन से मन लाइये, जैसे दीप पतङ्ग ।
प्रान तजै छिन एक में, जरत न मोड़ै अङ्ग ॥

सुमिरन से मन लाइये, जैसे कीट भिरङ्ग ।
कबीर बिसरै आपको, होय जाय तेहि रङ्ग ॥

ज्ञान कथै बकि बकि मरै, कोई करै उपाय ।
सतगुरु हम से यों कह्यो, सुमिरन करो समाय ॥

कबीर सुमिरन सार है, और सकल जञ्जाल ।
आदि अन्त मधि सोधिया, दूजा देखा ख्याल ॥

शब्द और सामर्थ्य

कबीर ने शब्द की भी महिमा खूब गाई है॰ और ईश्वर की सामर्थ्य कहते-कहते कवित्व-प्रतिभा का परिचय दिया है† ।

॰ कबीर-साखी-संग्रह पृष्ठ १०२-६ † कबीर-साखी-संग्रह पृष्ठ ११३-१४

अवतार और मूर्तिपूजा का खण्डन

अवतारों में कबीर को विश्वास न था। मूर्तिपूजा को वे हेय समझते थे और मन्दिर-मस्जिद को भी थोथा जञ्जाल।

साखी

पाहन पूजे हरि मिलै, तौ मैं पुजूँ पहार।
तातें यह चाकी भली, पीसि खाय संसार॥
मूरति धरि धन्धा रचा, पाहन का जगदीस।
मोल लिया बोलै नहीं, खोटा बिस्वा बीस॥
पाथर ही का देहरा, पाथर ही का देव।
पूजनहारा आँधरा, क्योंकरि मानै सेव॥
पाहन पानी पूजि कै, सेवा जासी बाद।
सेवा कीजै साध की, सत्तनाम करु याद॥
पाथर लै देवल चुना, मोटी मूरति माहिं।
पिंड फूटि परबस रहै, सो लै तारै काहि॥
कबीर दुनिया देहरे, सीस नवावन जाय।
हिरदे माहीं हरि बसैं, तू ताही लौ लाय॥
मन मथुरा दिल द्वारिका, काया कासी जान।
दस द्वारे का देहरा, ता में जोति पिछान॥
काँकर पाथर जोरि कै, मसजिद लई चुनाय।
ता चढ़ि मुल्ला बांग दे, क्या बहिरा हुआ खुदाय॥
मुल्ला चढ़ि किलकारिया, अलख न बहिरा होय।
जेहि कारन तू बांग दे, सो दिलही अन्दर जोय॥
तुर्क मसीते हिन्दू देहरे, आप आप को धाय।
अलख पुरुष घट भीतरे, ता का द्वार न पाय॥
पूजा सेवा नेम व्रत, गुड़ियन का सा खेल।
जब लगि पिव परसै नहीं, तब लगि संसय मेल॥

कबीर के मत में **तीर्थ** और **व्रत** इत्यादि भी कोरे आडम्बर हैं।

साखी

जप तप दीखै थोथरा, तीरथ व्रत बिस्वास।
सूआ सेँभल सेइ कै, फिर उड़ि चला निरास॥
तीरथ व्रत विष बेलरी, सब जग राखा छाय।
कबीर मूल निकंदिया, कौन हलाहल खाय॥
तीरथ व्रत करि जग मुआ, जूड़े पानी न्हाय।
सत्त नाम जाने बिना, काल जुगन जुग खाय॥
न्हाये धोये क्या भया, जो मन का मैल न जाय।
मीन सदा जल में रहै, धोये बास न जाय॥
और धरम सब करम हैं, भक्ति धरम निःकर्म।
नदिया हत्यारी अहै, कुवा बावड़ी भर्म॥
बहुत दान जो देत हैं, करि करि बहुतै आस।
काहू के गज होहिंगे, खइहैं सेर पचास॥

यज्ञोपवीत, सुन्नत, छुआछूत का खण्डन

इसी प्रकार हिन्दुओं के यज्ञोपवीत और मुसलमानों के सुन्नत की घोर निन्दा की गई है, छुआछूत का भेद गर्हणीय ठहराया गया है। संसार को भ्रम में डालनेवाले **पण्डित** और **मुल्लाओं** की भी बेतरह खबर ली गई है—

साखी

बाम्हन गदहा जगत का, तीरथ लादा जाय।
जजमान कहै मैं पुन किया, वह मिहनत का खाय॥
बाम्हन तें गदहा भला, आन देव तें कुत्ता।
मुल्ला तें मुरगा भला, सहर जगावै सुत्ता॥
कबीर बाम्हन की कथा, सो चोरन की नाव।
सब अंधे मिलि बैठिया, भावै तहँ लै जाव॥

कबीर ब्राम्हन बूड़िया, जनेऊ केरे जोरि।
लख चौरासी माँगि लइ, सतगुरु सेती तोरि॥
कलि का बाम्हन मसखरा, ताहि न दीजै दान।
कुटुँब सहित नरकै चला, साथ लिया जजमान॥
पण्डित और मसालची, दोनों सूझै नाहिँ।
औरन को करैं चांदना, आप अँधेरे माहिँ॥

भाषा का पक्षपात

मातृभाषा को छोड़कर जो संस्कृत का आश्रय लेते हैं वे भी कबीर के कोप से नहीं बचे हैं—

साखी

संस्कृतहिँ पण्डित कहै, बहुत करै अभिमान।
भाषा जानि तरक करै, ते नर मूढ़ अजान॥
संस्किरत संसार में, पंडित करै बखान।
भाषा भक्ति दृढ़ावही, न्यारा पद निरबान॥
संसकिरत है कूप-जल, भाषा बहता नीर।
भाषा सतगुरु सहित है, सत मत गहिर गँभीर॥

पण्डितों और मुल्लाओं के स्थान पर कबीर ने सद्गुरु की स्थापना की। **गुरु-महिमा** ने कबीर के समय से बड़ा बल पाया। ऊपर परमेश्वर के प्रेम और विरह के सम्बन्ध में जो साखियां उद्धृत की हैं वे गुरु के प्रेम और विरह में भी लागू हैं। कहीं तो गुरु को परमेश्वर से भी बढ़ा दिया है—

गुरु गोविँद दोऊ खड़े, का के लागौं पांय।
बलिहारी गुरु आपने, जिन गोविँद दियो बताय॥
बलिहारी गुरु आपने, घड़ि घड़ि सौ सौ बार।
मानुष से देवता किया, करत न लागी बार॥

लाख कोस जो गुरु बसैं, दीजै सुरत पठाय ।
सबद तुरी असवार ह्वै, पल पल आवै जाय ॥
जो गुरु बसैं बनारसी, सिष्य समुन्दर-तीर ।
एक पलक बिसरै नहीं, जो गुन होय सरीर ॥
सब धरती कागद करूँ, लेखनि सब बनराय ।
सात समुँद की मसि करूँ, गुरु-गुन लिखा न जाय ॥
गुरु मानुष करि जानते, ते नर कहिये अन्ध ।
महा दुखी संसार में, आगे जम के बन्ध ॥
भवसागर जल विष भरा, मन नहिँ बाँधै धीर ।
सबल सनेही गुरु मिला, उतरा पार कबीर ॥

इसी प्रकार सैकड़ों साखियों और शब्दों में सद्गुरु की महिमा गाकर पाखण्डी गुरु को धिक्कारा है । शिष्यों को सन्मार्ग में रखने के लिए **सत्सङ्गति** का उपदेश दिया है—

सत्संग

कबीर संगत साध की, जौ की भूसी खाय ।
खीर खांड़ भोजन मिलै, साकट संग न जाय ॥
कबीर संगत साध की, ज्यों गंधी का बास ।
जो कछु गंधी दे नहीं, तौ भी बास सुबास ॥
ऋद्धि सिद्धि मांगों नहीं, मांगों तुम पै येह ।
निसु दिन दरसन साध का, कह कबीर मोहिँ देय ॥
राम बुलावा भेजिया, दिया कबीरा रोय ।
जो सुख साधु-संग में, सो बैकुंठ न होय ॥
जा पल दरसन साधु का, ता पल की बलिहारि ।
सत्त नाम रसना बसै, लीजै जनम सुधारि ॥
ते दिन गये अकारथी, संगति भई न संत ।
प्रेम बिना पसु जीवना, भक्ति बिना भगवंत ॥

एक घड़ी आधी घड़ी, आधी हूँ से आध।
कबीर संगति साधु की, कटै कोटि अपराध॥

कुसंग की वैसी ही घोर निन्दा की है।

तत्पश्चात् कबीर ने **काम**, **क्रोध**, **लोभ**, **मोह**, **मान** इत्यादि को छोड़ने का उपदेश दिया है; **शील**, **क्षमा**, **सन्तोष**, **धीरज**, **दीनता**, **दया**, **सत्य**, **विचार**, **विवेक** इत्यादि सद्गुण को ग्राह्य बताया है*।

रैदास, धना, सेन, पीपा, धरमदास

अपने गुरु-भाइयों पर अर्थात् रामानन्द के अन्य शिष्य रैदास चमार, धना जाट, सेन नाई, राजा पीपा पर कबीर का बड़ा प्रभाव पड़ा। उनमें कबीर की प्रतिभा नहीं है पर उनके पदों और भजनों में कबीर के भाव, विचार और आदर्श बराबर झलकते हैं। कबीर के प्रधान शिष्य धरमदास ने भी भक्तिपूर्वक गुरु का अनुकरण किया है†।

इस सुधार-परम्परा का प्रवाह **नानक** की रचना में सतत स्मरणीय महत्त्व पाता है। नानक के भजनों में वही एकेश्वरवाद है, भक्ति अर्थात् सुमिरन, शब्द, नाम—सद्गुरु, सत्सङ्ग की वही महिमा है, जप तप,

---

* कबीर के जीवन और उपदेश के लिए देखिए कबीरकसौटी, बीजक (जिसके अनेक संस्करण प्रकाशित हुए हैं), कबीरसाखीसंग्रह (बेल्वेडियर प्रेस, प्रयाग); अयोध्यासिंह उपाध्याय-द्वारा सङ्कलित कबीरवचनावली। सिक्खों के आदिग्रन्थ में कबीर के बहुत से भजन दिये हुए हैं। बेल्वेडियर प्रेस द्वारा प्रकाशित कबीरशब्दावली के अधिकांश शब्द कबीर के नहीं हैं। वेङ्कटेश्वर प्रेस-द्वारा प्रकाशित बोधसागर के, पहले भाग को छोड़कर, शेष भागों की रचना भी कबीर की नहीं है। राजपूताना में कई सज्जनों के पास कबीर की बहुत सी अप्रकाशित रचना मौजूद है।

† पद उद्धृत करने के लिए यहां स्थान नहीं है। जिज्ञासु आदि-ग्रन्थ, रैदास की बानी, धरमदास की बानी, नाभाजी का भक्तमाल एवं अन्य भक्तमाल देखें।

तीर्थ-व्रत, मूर्तिपूजा, पुरोहितगीरी, कुसङ्ग आदि का वही खण्डन है जो हम कबीर के ग्रन्थ में देख चुके हैं। नानक के शिष्य **अङ्गद** के विषय में भी यही कहा जा सकता है*। **दादूदयाल** का भी यही हाल है†।

ईसवी पन्द्रहवीं सदी और सोलहवीं सदी के कुछ वर्षों तक भक्ति-मार्ग का यह क्रम रहा। एक-निराकार परमेश्वर की भक्ति, गुरु की भक्ति, सदाचार—यही दुन्दुभी बजती रही।

भक्तिमार्ग में परिवर्तन

पर निराकार की पूजा भावुक जनता को सन्तोष नहीं देती। बुद्ध भगवान् ने ईश्वर को नहीं माना पर उनके अनुयायियों ने उनको ही ईश्वर बनाकर पूजा है। जैनधर्म किसी को सृष्टि का कर्ता-हर्ता नहीं मानता पर जैनी साकार तीर्थङ्करों को परमेश्वर के समान पूजते हैं। मुसलमानों के यहाँ परमेश्वर पृथ्वी पर अवतार नहीं ले सकता पर वे पैग़म्बर मुहम्मद की भक्ति करते हैं। बहुत से मुसलमान साकार पीरों को पूजते हैं। ईसाइयों ने तो ईसामसीह को परमेश्वर के पद तक पहुँचा दिया है। रोमनकैथलिक ईसाई आज भी मरियम और अनेक सन्त-महन्तों को मानते और पूजते हैं। देहान्त के कुछ वर्ष बाद कबीर और नानक साहब भी अपने शिष्यों की कल्पना में परब्रह्म के अवतार हो गये। बात यह है कि मानवी हृदय अपने देवता से निकट सन्निकर्ष चाहता है, अपने ध्येय को अपने पास बुलाना चाहता है। मानवी आत्मा प्रेम के लिए लालायित है, प्रेम के लिए तड़पता है, परमेश्वर को भी प्रेमी समझता है। यदि परमेश्वर प्रेमी है तो उसे सातवें आसमान से उतरकर प्रेमपात्र के पास आकर प्रेमी की तरह रहना चाहिए। उद्धव के द्वारा निराकार की भक्ति और योग का सँदेशा पाकर गोपियों ने दोनों की ही दिल्लगी उड़ा दी।

---

* नानक और अङ्गद के लिए देखिए आदि-ग्रन्थ।

† देखिए दादूदयाल की बानी।

मानवी हृदय की प्रेम-पिपासा ने प्रत्येक निराकारी मत को कुछ साकार रूप दे दिया है। १५ वीं सदी के जिस भक्तिमार्ग का निरूपण ऊपर हुआ है वह १६ वीं सदी में कुछ बदल गया। निराकार परमेश्वर के स्थान पर साकार परमेश्वर की भक्ति प्रचलित हुई। यह अभिप्राय नहीं है कि पन्द्रहवीं सदी में साकार भक्ति नहीं थी अथवा १६ वीं सदी में निराकार भक्ति का सर्वथा लोप हो गया। हमारा अर्थ केवल यह है कि एक समय में एक प्रवृत्ति प्रबल थी, दूसरे समय में दूसरी प्रवृत्ति। यों तो सैकड़ों वर्ष पहले पुराणों में अवतारों का सिद्धान्त प्रतिपादित हो चुका था पर १६ वीं सदी में इसका विशेष प्राबल्य हुआ। भक्ति का विश्लेषण कुछ अस्वाभाविक सा मालूम होता है पर आचार्यों ने पाँच भाव माने हैं—शान्त, दास, वात्सल्य, सख्य और शृङ्गार। तुलसीदास में दासभाव है, सूरदास में वात्सल्य, सख्य और शृङ्गार-भाव है।

एक और परिवर्तन भक्तिमत में हुआ। सब नये पन्थों पर सनातन धर्म का प्रभाव थोड़े दिन में अवश्य पड़ता है। कबीर और कबीर के समकालीन उपदेशकों ने सनातन-धर्म के देवी-देवता, तीर्थ-व्रत इत्यादि का निराकरण किया था पर आगामी सदी में भक्तिमार्ग ने उनका ग्रहण कर लिया। अतएव भक्तिमार्ग के एकेश्वरवाद में कुछ अन्तर पड़ गया। अब अधिकांश भक्तिपन्थावलम्बी यह मानने लगे कि परमेश्वर तो एक है, सर्वोपरि है पर अनेक देवी-देवता भी हैं जिनकी पूजा मनुष्य के ऐहिक और पारलौकिक सुख को बढ़ा सकती है। परमेश्वर की भक्ति धर्म का प्रधान अङ्ग है। पूर्ण भक्त को और कोई साधन न चाहिए पर अपूर्ण भक्तों को परमात्म-भक्ति के साथ तीर्थ, व्रत, जप, तप, आदि का भी अवलम्बन हानिकर नहीं है।

१५ वीं सदी का भक्तिमार्ग एक निराकार ईश्वर के सिवा और किसी को न मानता था। १६ वीं सदी में वह एक परमेश्वर को प्रधान मानता था पर उसके अनेक अवतार मानता और अन्य देवों को भी

मानता था। १५ वीं सदी का भक्तिमार्ग एक-मात्र भक्ति का उपदेश देता था। १६ वीं सदी में वह भक्ति को प्रधान मानता था पर अन्य साधनों का निराकरण नहीं करता था। भक्तिपन्थ के अन्य लक्षण वैसे ही बने रहे। वही गुरु-महिमा, सत्सङ्ग-महिमा, सदाचार, प्रचलित भाषा का प्रयोग जो कबीर, नानक आदि के पन्थ में मिलते हैं नये भक्तिमार्ग में दृष्टिगोचर हैं। यहाँ भी वर्णव्यवस्था पर अधिक ज़ोर नहीं दिया जाता, छुआछूत का भेद बहुत नहीं माना जाता। 'हरि को भजै सो हरि का होई' यही नया सिद्धान्त है।

चैतन्य, मीराबाई, एकनाथ, तुकाराम, रामदास इत्यादि

चैतन्य ने बङ्गाल में, मीराबाई ने राजपूताना में, एकनाथ, तुकाराम, रामदास आदि ने महाराष्ट्र में इसी मार्ग का उपदेश दिया है। पद उद्धृत करने के लिए यहाँ स्थान नहीं है पर उनके ग्रन्थावलोकन से विषय स्पष्ट हो जायगा। सूरदास का समस्त सूरसागर, तुलसीदास का समस्त रामचरितमानस और विनयपत्रिका इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं।

सूरदास के सिद्धान्त

सनातन-धर्म ने परमेश्वर के २४ अवतार माने हैं। उनमें दस मुख्य हैं। उनमें भी दो मुख्य हैं—राम और कृष्ण। १६ वीं १७ वीं सदी के भक्तिमार्गी उपदेशकों और कवियों ने इन दो में से एक की भक्ति गाई है। रामभक्ति तुलसीदास* का स्मरण कराती है, कृष्णभक्ति सूरदास का स्मरण दिलाती है। अस्तु, सूरदास के मुख्य सिद्धान्त ये हैं—कृष्णावतार की भक्ति, कृष्णभक्ति में मगन हो जाना, आपे को भूल जाना, भक्ति के सामने सब कुछ भूल जाना, कृष्णविरह में व्याकुल होना; अन्य देवों और साधनों की गौणता; गुरु-महिमा; सत्सङ्ग-महिमा।

---

* तुलसीदास रामभक्ति के पहले कवि न थे। वे कहते हैं—

कलि के कविन्ह करउँ परनामा। जिन बरने रघुपति-गुनग्रामा॥
जे प्राकृत कवि परम सयाने। भाषा जिन्ह हरिचरित बखाने॥

सूरदास की कविता

पर सूरदास मुख्यतः सिद्धान्ती या उपदेशक नहीं हैं। वे प्रधानतः कवि हैं, गायक हैं। भागवत के कथानक के आधार पर उन्होंने सर्वथा स्वतन्त्र मौलिक रीति पर एक वृहत् और उत्कृष्ट काव्य की रचना की है। कविता का रहस्य भावुकता, तल्लीनता या मस्ती है जिसका रहस्य स्वाभाविकता है। कवि बनते नहीं हैं, पैदा होते हैं। प्रकृति ने जिसे प्रबल भाव दिये हैं, जिसे जोश दिया है वह कवि है। भावों से, जोश से, प्रेम से जब उसका हृदय भर जायगा वह आप से आप कविता कह उठेगा। उपमा, अलङ्कार, पदलालित्य इत्यादि का विचार करने की उसे आवश्यकता नहीं है—ऐसे विचार से तो कृत्रिमता आ जावेगी। जो सच्चा कवि है उसकी रचना आप से आप इन गुणों से विभूषित होगी। जो कवि नहीं है उसकी रचना इन गुणों से यत्किञ्चित् विभूषित रहने पर भी कविता न होगी। स्वाभाविक कविता का प्रवाह स्वाभाविक होगा, कृत्रिम न होगा, अतएव सादा होगा, बनावटी क्लिष्टता से रहित होगा। जब व्याध ने क्रौञ्च पक्षियों को तीर से मारा तब आदि-कवि वाल्मीकि के दयार्द्र चित्त के भाव आप से आप एक सुन्दर सुष्ठु श्लोक के रूप में प्रकट हुए। सच्ची कविता की उत्पत्ति का यह सर्वोत्तम दृष्टान्त है। वाल्मीकि, व्यास और कालिदास प्राकृतिक कवि थे—अतएव उनकी रचना जोश से भरी है, प्राकृतिक झरने की तरह बहती है, बनावट से दूर है। हिन्दी में सूरसागर और तुलसीकृत रामायण स्वाभाविक, सादी कविता के सर्वोत्कृष्ट उदाहरण हैं।

सूरदास और तुलसीदास

प्रधान कवित्व गुणों में दोनों महाकवि समान हैं, सिद्धान्तों में भी बहुधा सहमत हैं पर कतिपय अंशों में एक दूसरे से भिन्न हैं। तुलसीदास ने आद्योपान्त एक कथा कही है—तेज़ी के साथ। अनेक विषयों का विशद वर्णन किया है पर एक ही बात को अनेक रीति पर कहने

का उन्हें अवकाश नहीं है। सूरदास ने कृष्ण की पूरी कथा नहीं गाई; जितनी कथा कही है उसके कुछ अंश तो अत्यन्त विस्तार से कहे हैं, दुहराये हैं, तिहराये हैं, एक ही बात दस-दस बीस-बीस भजनों में बयान की है और शेष अंश योंही कुछ पदों में टाल दिये हैं। यह कोई दोष नहीं है, यह कविता की एक रीति है। सूरदास ने बाल-लीला, माखन-लीला, गौचारण-लीला, चीरहरण-लीला, रास-लीला, कृष्ण-गवन, उद्धवगोपी-संवाद प्रधानतः गाये हैं। यह सब दशम स्कंध पूर्वार्ध में हैं जिसका परिमाण शेष स्कंधों के कुल परिमाण से बहुत ज़्यादा है*।

प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन तुलसीदास ने कहीं विस्तार से नहीं किया, सूरदास ने सर्वत्र विस्तार से किया है और हिन्दी में सबसे अच्छा किया है। रूप का वर्णन तुलसीदास ने किया है पर सूरदास ने अपने पात्रों के और विशेषतः राधा और कृष्ण के रूप का अत्यन्त विशद, मनोहर, चमत्कारिक वर्णन किया है*।

तुलसीदास ने अपने काव्य में सांसारिक प्रेम को अल्पातिअल्प स्थान दिया है। सूरदास ने कृष्ण और गोपियों में सांसारिक प्रेम कराकर क़लम तोड़ दी है*। तुलसीदास को सदा यह ध्यान रहता है कि हमारे राम परब्रह्म हैं। सूरदास ने एक बार कृष्ण को अवतार मानकर उन्हें मनुष्य बना दिया है, उनसे मनुष्य का सा बर्ताव कराया है। कृष्ण और राधा, कृष्ण और रुक्मिणी के प्रेम के बारे में कोई कुछ नहीं कह सकता पर अन्य गोपियों का प्रेम सांसारिक सदाचार की सीमा को उल्लंघन कर गया है। हम कह चुके हैं कि सदाचार भक्ति-मार्ग का एक प्रधान लक्षण है, तो सूरदास के व्यतिक्रम का कारण क्या है? स्वयं उन्होंने दो बातें कही हैं—एक तो यह कि गोपियां वास्तव में श्रुतियों की अवतार थीं जो परब्रह्म से रमण करना चाहती थीं; दूसरी यह कि वह अप्सराओं की अवतार थीं जो कृष्णावतार के समय ब्रह्मा

---

* उदाहरणों के लिए देखिए संक्षिप्त सूरसागर।

के आदेश से भूलोक में आई थीं। भागवत में शङ्का उठने पर शुक-देवजी ने यही कहा—

धर्मव्यतिक्रमो दृष्ट ईश्वराणां च साहसम्।
तेजीयसां न दोषाय वह्नेः सर्वभुजो यथा॥

अर्थात्, तुलसीदास के शब्दों में "समरथ को नहिं दोष गुसाईं"। यह बात भी स्मरण रखनी चाहिए कि व्रजनिवास के समय कृष्ण निरे बालक थे। सूरसागर पढ़ने पर तो यह धारणा होती है कि गोपियाँ कृष्ण के प्रेम में ऐसी मग्न हो गईं, कृष्ण में ऐसी समा गईं कि सदाचार का प्रश्न ही मिट गया। कविता के जोश में कवि ने सांसारिक आचार-विचार को बहुत पीछे छोड़ दिया। मानों जिस लोक में गोपी-लीला हो रही है उसमें सांसारिक सदाचार के नियम लागू ही नहीं हैं। जो हो, यह मानना पड़ेगा कि इस प्रकार की रास-लीला का प्रभाव भविष्य में अच्छा नहीं हुआ। स्वयं सूरदास कई स्थानों पर अश्लील हो गये हैं। तथापि उनकी प्रतिभा उनके अवगुण को ढक लेती है। पढ़ते समय हमें अनुभव होता है कि कवि का भाव शुद्ध है, वह केवल प्रेम में मतवाला होकर आपे से बाहर हो गया है। पर सूरदास के उत्तराधिकारियों में न तो प्रतिभा का और न विशुद्धता का अनुभव होता है।

व्रज-भाषा

सौभाग्य से सूरदास के समय तक हिन्दी भाषा परिपक्व हो चुकी थी। यों तो प्रतिभा का चमत्कार प्रत्येक बोली के द्वारा प्रकट हो सकता है पर परिपक्व भाषा के साधन से सोने में सुहागा हो जाता है। पूर्वी हिन्दी, छत्तीसगढ़ी, खड़ीबोली, पंजाबी आदि हिन्दी की सब बोलियों में सच्ची उत्कृष्ट कविता हुई है पर व्रज-भाषा की मधुरता व्रज-भाषा में ही है। आगरा, मथुरा, वृन्दावन, गोकुल के आस-पास देहात में जो लोग घूमे हैं वे इस मर्म को समझ सकते हैं। ईस्ट इण्डियन

रेलवे के यात्रियों ने भी शायद टूँडला और हाथरस के बीच स्टेशनों पर चढ़ने-उतरनेवाले यात्रियों की बोली में एक अनिर्वचनीय मनोहरता का अनुभव किया होगा। व्रजभाषा की मनोहर मधुरता सूरदास में पराकाष्ठा को पहुँच गई है। कृष्ण के क्रीड़ास्थल की यही भाषा है—यह स्मरण करने पर कविता और भी चित्ताकर्षक है।

एक तो भाषा ऐसी; दूसरे, सूरदास की चमत्कारिक प्रतिभा; तीसरे, कृष्णप्रेम जिससे बढ़कर कविता के लिए कोई विषय नहीं है; चौथे, गाने के योग्य भजनों की रचना-शैली; इन कारणों से सूरदास का कांव्य संसार के श्रेष्ठतम दो-चार काव्यों में से एक है, सम्भवतः सर्वश्रेष्ठ है। जैसा रघुराजसिंह ने कहा है—

कवित्त

कविकुल कोक कंज पाइकै किरिन काव्य विकसे विनोदित ह्वै नेरे और दूर के। सूखि गो अज्ञानपंक मन्द भो मयंक-मोह विषयविकार अन्धकार मिटे कूर के॥ हरि की विमुखताइ रजनी पराइ गई मूक भये कुकवि उलूक रस भूक के। छायो तेज पुहुमि में रघुराज रूर हरिजन जीव मूर सूर उदय होत सूर के॥ १॥ मतिराम, भूषण, विहारी, नीलकंठ, गंग, बेनी, शम्भु, तोष, चिन्तामणि, कालिदास की। ठाकुर, नेवाज, सेनापति, शुकदेव, देव, पजन, घनआनन्द, घनश्यामदास की॥ सुन्दर, मुरारि, बोधा, श्रीपतिहूँ, दयानिधि, युगल, कविन्द, त्यों गोविन्द केशवदास की। भनै रघुराज और कविन अनूठी उक्ति मोहिं लगी जूँठी जानि जूँठी सूरदास की॥ २॥ अखिल अनूठी उक्ति युक्ति नहिं झूठी नेकु सुधाहूँ ते सरस सरस को सुनावतो। उद्धत विराग भाग सहित अनेक राग हरि को अदाग अनुराग को सिखावतो॥ जगत उजागर अमलपद आगर सु नट नागर ध्याय सूरसागर कों गावतो। भाषै रघुराज राधा-माधव को रास-रस कौन प्रगटावतो जो सूर नहिं आवतो॥ ३॥

संस्कृत के कवि कालिदास, भारवि, दण्डिन् और माघ के विषय में कहावत है—

उपमा कालिदासस्य, भारवेरर्थगौरवम् ।
दण्डिनः पदलालित्यं, माघे सन्ति त्रयो गुणाः ॥

हिन्दी-कवियों के विषय में किसी ने ठीक कहा है —

उत्तम पद कवि गंग के उपमा को बरबीर ।
केसव अरथ-गँभीरता सूर तीनि गुन धीर ॥

जैसा कि कुछ और कवियों ने कहा है—

'सूर सूर, तुलसी ससी, उड़गन केसवदास ।
अब के कवि खद्योत सम, जहँ तहँ करत प्रकास ॥'
'कविता करता तीनि हैं, तुलसी, केसव, सूर ।
कविता खेती इन लुनी, सीला बिनत मजूर ॥'
'तत्व तत्व सूरा कही, तुलसी कही अनूठी ।
बची खुची कबिरा कही, और कही सब झूठी ॥'
'किधौं सूर को सर लग्यो, किधौं सूर की पीर ।
किधौं सूर को पद लग्यो, तन मन धुनत सरीर ॥'

१६ वीं सदी से लेकर आज तक के हिन्दी-साहित्य पर सूरदास का प्रभाव दृष्टिगोचर है। सैकड़ों कवि और लेखक उनके ऋणी हैं।

सूरसागर के संस्करण

सूरसागर के दो संस्करण प्रकाशित हुए हैं, एक तो नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ से और दूसरा वेङ्कटेश्वर प्रेस, बम्बई से। दोनों के क्रम में बड़ा अन्तर है। वेङ्कटेश्वर संस्करण का सम्पादन हिन्दी के सुप्रसिद्ध विद्वान् लेखक बा० राधाकृष्णदास ने "अनेक शुद्ध प्रतियों से संशोधित करके," भूमिका-सहित, किया था। निस्सन्देह वह हिन्दी-साहित्य का एक रत्न है पर इसमें भी छापे की बहुत सी ग़लतियां हैं, अनेक स्थानों पर पाठ भी अशुद्ध मालूम होता है। नम्बरों में भी कहीं-कहीं गड़बड़

है। हस्त-लिखित प्रतियां अनेक पुस्तकालयों में विद्यमान हैं। यदि कोई सज्जन अनुसन्धान करके एक सम्पूर्ण और शुद्ध पाठ प्रकाशित करें तो साहित्य-संसार का बड़ा उपकार करेंगे।

संक्षिप्त सूरसागर

सूरसागर के दोनों ही संस्करण बड़ी मोटी जिल्दों में हैं, महँगे हैं और अब कुछ दुष्प्राप्य भी हैं। सूरदास की कविता का आनन्द सब उठाना चाहते हैं पर बड़ी पोथी पढ़ने का न सबको अवकाश है, न सबको सुविधा है। अस्तु, संक्षिप्त सूरसागर की आवश्यकता थी। इस पुस्तक में लखनऊ और बम्बई दोनों संस्करणों को देखकर यथासम्भव शुद्ध पाठ दिया है। बनारस, जयपुर, और जोधपुर में मुझे हस्त-लिखित प्रतियां देखने का अवसर मिला था। कहीं-कहीं उनसे भी सहायता ली गई है पर उक्त स्थानों में थोड़े ही दिन रहने के कारण सारे पाठ की तुलना न हो सकी। संक्षेप में राधाकृष्णदासजी के संस्करण के नम्बर रक्खे गये हैं। आशा है कि संक्षेप को पढ़कर बहुत से पाठक पूर्ण ग्रन्थ को पढ़ेंगे अथवा पूर्ण ग्रन्थ के कुछ भाग अवश्य पढ़ेंगे। उनको इन नम्बरों से कुछ सहायता मिलेगी। कहीं-कहीं बम्बई संस्करण में नम्बर गड़बड़ हो गये हैं। अतएव संक्षेप में दो-एक स्थानों पर अन्तर हो गया है।

कथा-संक्षेप

संक्षेप में छुटे हुए पदों की कथा अत्यन्त संक्षेप से कह दी गई है। पाठकों को कथाक्रम समझने में कोई असुविधा न होगी।

तुलनात्मक पद्धति

श्रीमद्भागवत और लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर के अध्यायों का बराबर हवाला दे दिया गया है। बहुत से स्थानों पर सूरदास के भाव और शैली की तुलना कराने के लिए कबीर, तुलसी, केशव, आनन्दघन, नन्ददास, सुन्दर इत्यादि-इत्यादि हिन्दी-कवियों के पद उद्धृत कर दिये

हैं। तुलनात्मक पद्धति ही साहित्य-परिशीलन की सच्ची पद्धति है। संस्कृत-टीकाओं से मालूम होता है कि प्राचीन समय में विद्यार्थी एक कवि का अध्ययन करते हुए दूसरे कवियों की चना से बराबर मिलान करते जाते थे। आजकल पाश्चात्य विश्वविद्यालयों में यही रीति प्रचलित है। साहित्य का मर्म समझने का यह सर्वोत्तम उपाय है। इस संक्षेप के लिए विस्तीर्ण हिन्दी-साहित्य-क्षेत्र से बहुत से पद जमा किये थे। पर पुस्तक का कलेवर इतना बढ़ने लगा कि थोड़े ही उद्धृत हो सके।

सङ्कलन की कठिनाई

सूरसागर से सङ्कलन करना बड़ा कठिन है। यह समझ में नहीं आता कि क्या छोड़ा जाय और क्या सम्मिलित किया जाय। विशेषतः दशम स्कंध पूर्वार्ध में ऐसी मधुर और भावपूर्ण, ऐसी अनुपम कविता है कि कोई भी पद छोड़ने को जी नहीं चाहता। यदि सङ्कलन करना ही हो तो निस्सन्देह मतभेद के लिए बहुत अवकाश है। बहुत मनन करने पर मुझे मुख्य-मुख्य कथाओं के जो पद सर्वोत्तम प्रतीत हुए वे चुन लिये। परन्तु "भिन्नरुचिर्हि लोकः"।

ऊपर सङ्केत कर चुके हैं कि आवेश के कारण सूरदास के कुछ पदों में अश्लीलता का स्पर्श है। अभाग्यवश यह पद सर्वोत्कृष्ट पदों में से हैं। शायद यह संक्षेप बालक-बालिकाओं के भी हाथ पड़े, इस विचार से इनको सङ्कलन में स्थान नहीं दिया। परिपक्व अवस्था के कविता-प्रेमी सम्पूर्ण ग्रन्थ का अवलोकन कर सकते हैं। अन्य कारणों से भी यह उचित है कि पाठक सम्पूर्ण ग्रन्थ का परिशीलन करें। संक्षेप का परिश्रम तभी सफल है जब उससे सौर कविता के पठन-पाठन की उन्नति हो।

प्रयाग।
वसन्त-पञ्चमी,
संवत् १९७९

बेनीप्रसाद

अथ संक्षिप्त सूरसागर

प्रथम स्कन्ध

राग बिलावल

चरण कमल बंदौ हरि राई। जाकी कृपा पंगु* गिरि लंघै अंधे को सब कुछ दरशाई॥ बहिरो सुनै मूक पुनि बोलै रंक चलै शिर छत्र धराई। सूरदास† स्वामी करुणामय बार बार बंदौं तेहि पाई॥ १॥

---

* भाषा कवियों ने यह भाव संस्कृत से लिया है यथा—

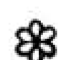
मूकं करोति वाचालं पङ्गुं लङ्घयते गिरिम्।
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दमाधवम्॥

देखिए तुलसीकृत रामायण बालकाण्ड।

मूक होइ बाचाल, पंगु चढ़ै गिरिवर गहन।
जासु कृपा सुदयालु, द्रवौ सकल कलिमल-दहन॥

† लगभग सब पदों में कवि ने सूरदास, सूर अथवा कोई ऐसा ही स्वनामसूचक शब्द रख दिया है।

अविगत गति कछु कहत न आवै। ज्यों गूँगे मीठे फल को रस अंतर्गत ही भावै॥ परम स्वादु सबही जु निरंतर अमित तोष उपजावै। मन बाणी को अगम अगोचर सो जानै जो पावै॥ रूप रेख गुण जाति जुगति बिनु निरालंब मन चकृत धावै। सब बिधि अगम विचारहिं ताते सूर सगुण लीलापद गावै॥



राग धनाश्री

प्रभु को देखो एक सुभाई। अति गंभीर उदार उदधि सरि जान शिरोमणि राई॥ तिनका सों अपने जन को गुण मानत मेरु समान। सकुचि समुद्र गनत अपराधहि बूँद तुल्य भगवान॥ वदन प्रसन्न कमल ज्यों सन्मुख देखत हौं हो जैसे। बिमुख भये अकृपिण निमिप हूँ फिर चितयो तो तैसे॥ भक्त बिरह कातर करुणामय डोलत पाछे लागे। सूरदास* ऐसे स्वामी को देहि सु पीठ अभागे॥ ८॥



राग धनाश्री

राम भक्तवत्सल निज बानो। जाति गोत कुल नाम गनत नहिं रंक होय कै रानो*॥ ब्रह्मादिक शिव कौन

---

* पन्द्रहवीं, सोलहवीं, सत्रहवीं शताब्दी के सब भक्त कवियों ने इस भाव पर ज़ोर दिया है कि परमेश्वर भक्ति के सामने जाति-पाँति को कुछ नहीं गिनता।

जात* प्रभु हौं अजान नहिं जानो। महता जहाँ तहाँ प्रभु नाहीं सो द्वैता क्यों मानो ॥ प्रगट खम्भ तै दई दिखाई यद्यपि कुल को दानो†। रघुकुल राघो कृष्ण सदाही गोकुल कीनो थानो ॥

जाति-पाँति पूछै नहिं कोई। हरि को भजै सो हरि का होई ॥

विनयपत्रिका में तुलसीदासजी ने इस भाव को इस तरह व्यक्त किया है—

भजन २१५

श्रीरघुवीर की यह बानि।
नीचहूँ सो करत नेह सुप्रीति मन अनुमानि ॥
परम अधम निषाद पाँवर कौन ताकी कानि।
लियो सो उर लाइ सुत ज्यों प्रेम की पहिचानि ॥ २ ॥
गीध कौन दयालु जो विधि रच्यो हिंसा सानि।
जनक ज्यों रघुनाथ ता कहँ दियो जल निज पानि ॥ ३ ॥
प्रकृति मलिन कुजाति सवरी सकल अवगुन-खानि।
खात ताके दिये फल अति रुचि बखानि बखानि ॥ ४ ॥
रजनिचर अरु रिपु विभीषन सरन आयो जानि।
भरत ज्यों उठि ताहि भेटत देहदसा भुलानि ॥ ५ ॥
कौन सुभग सुसील बानर जिनहिं सुमिरत हानि।
किये ते सब सखा पूजे भवन अपने आनि ॥ ६ ॥
राम सहज कृपालु कोमल दीन-हित दिन दानि।
भजहि ऐसे प्रभुहि तुलसी कुटिल कपट न ठानि ॥ ७ ॥

* ब्रह्मा, शिव इत्यादि किसके पैदा किये हुए हैं ?

† हिरण्यकशिपु के पुत्र भक्त प्रह्लाद की कथा प्रसिद्ध है। नाभाजी ने भी प्रह्लाद का स्मरण किया है। "सुठि सुमिरन प्रह्लाद पृथू पूजा कमला चरननि मन ॥ १४ ॥" प्रियादास ने यह टीका की है। सुमिरण

बरणि न जाय भजन की महिमा बारंबार बखानो* । ध्रुव रज-

सांचो कियो लियो देखि सब ही में एक भगवान कैसे काटे तरवार है। काटियो खड्ग जल बोरी सकती है जाकी ताहि को निहारे चहुँ ओर सों अपार है। पूँछे ते बतायो खम्भ तहाँ ही दिखायो रूप प्रगट अनूप भक्त बानिहि सों प्यार है। दुष्ट डारयो मारि गरे आते लई डारि तऊ क्रोध को न पार कहा कियो यों विचार है॥ ९९॥ डरे शिवादि सब देख्यो नहीं क्रोध ऐसो आवत न ढिग कोउ लक्ष्मी हू को त्रास है। तब तो पठायो प्रह्लाद अहलाद महा अहो भक्ति भाव पग्यो आयो प्रभु पास है॥ गोद में उठाइ लियो सीस पर हाथ दियो हियो हुलसायो कहि बानी बिनै रास है। आई जग दया लागी परी श्रीनृसिंहजू को अरयो यों लुटावो करयो माया ज्ञान नाश है॥१००॥ पुराणों में यह कथा विस्तार से लिखी है। देखिए सूरसागर सप्तम स्कन्ध पद १–६ यथा—

ऐसी को सकै करि बिना मुरारी। कहत प्रह्लाद के धारि नरसिंह वपु निकसि आये तुरित खंभ फारी॥ हिरण्यकश्यपु निरखि रूप चकृत भये। बहुरि कर लै गदा असुर धायो। हरि गदायुद्ध तासों कियो भली विधि बहुरि संध्या समय होन आयो॥ गहि असुर धाइ पुनि निज जंघ पर नखनि सों उदर डारयो विदारी। देखि यह सुरन वर्षा करी पुहुप की सिद्ध गंधर्व जय ध्वनि उचारी॥ बहुरि बहु भाइ प्रह्लाद अस्तुति करी ताहि दै राज बैकुंठ सिधाये। भक्त के हेत हरि धरयो नरसिंह वपु सूर जन जानि यह शरन आये॥

देखिए श्रीमद्भागवत सप्तम स्कन्ध अध्याय २–१०।

* रामनाम की महिमा के लिए देखिए तुलसीकृत रामायण बाल-काण्ड दोहा १८–२८ इंडियन प्रेस संस्करण पृष्ठ १४–१७। देखिए विनयपत्रिका भजन २२७—नाम राम रावरोई हितु मेरे। स्वारथ परमा-रथ साथिन्ह सों भुज उठाइ कहौं टेरे॥ इत्यादि॥

भजन ६५-७०, २२८ इत्यादि। दोहावली में भी गुसाईंजी ने नाम-भजन की महिमा गाई है। जैसे—

राम नाम सुमिरत सुयस भाजन भये कुजात।
कुतरु कुसुरपुर राज मग लहत भुवन विख्यात ॥ १६ ॥
स्वारथ सुख सपनेहु अगम परमारथ परवेश।
राम नाम सुमिरत मिटहिं तुलसी कठिन कलेश ॥ १७ ॥
राम नाम अवलम्ब बिनु परमारथ की आश।
वर्षत वारिद बूँद गहि चाहत चढ़न अकाश ॥ २० ॥
बिगरी जन्म अनेक की सुधरै अबहीं आज।
होहिं राम को राम जपु तुलसी तजि कुसमाज ॥२२॥ इत्यादि

दादूदयाल ने भी अपनी बानी व साखी के सुमिरन और चेतावनी अङ्ग में नाम और भजन की महिमा गाई है। जैसे—

दादू नीका नाव है, तीन लोक ततसार।
राति दिवस रटिबो करो, रे मन इहै विचार ॥
दादू राम अगाध है, बेहद लख्या न जाइ।
आदि अंत नहिं जाणिये, नाव निरंतर गाइ ॥
निमिष न न्यारा कीजिए, अंतर थैं उरि नाम।
कोटि पतित पावन भये, केवल कहता राम ॥
दादू दुखिया तब लगै, जब लग नाव न लेहि।
तबही पावन परम सुख, मेरी जीवन येहि ॥
अहनिसि सदा सरीर में, हरि चिंतत दिन जाइ।
प्रेम मगन लयलीन मन, अंतर गति ल्यै लाइ ॥
राम कहे सब रहत है, नखसिख सकल सरीर।
राम कहे बिन जात है, मूरख मनवाँ चेत ॥
राम सबद मुख ले रहै, पीछे लागा जाइ।
मनसा वाचा कर्मना, तेहि तत सहत समाइ ॥

पूत* विदुर दासी-सुत† कौन कौन अरगानो ॥ युग युग विरद

कबीर साहब कहते हैं—

आदि नाम पारस अहै, मन है मैला लोह।
परसत ही कंचन भया, छूटा बंधन मोह॥
आदि नाम बीरा अहै, जीव सकल लो बूझि।
अमरावै सतलोक लै, जम नहिं पावै जूझि॥
आदि नाम निज सार है, बूझि लेहु सो हंस।
जिन जान्यो निज नाम को, अमर भयो सो बंस॥
आदि नाम निज मूल है, और मंत्र सब डार।
कह कबीर निज नाम बिनु, बूढ़ि मुआ संसार॥
सुमिरन से सुख होत है, सुमिरन से दुख जाय।
कह कबीर सुमिरन किये, साईं माँहि समाय॥
सुमिरन से मन लाइये, जैसे दीप पतंग।
प्रान तजै छिन एक में, जरत न मोड़े अंग॥
सुमिरन से मन लाइये, जैसे कीट भिरंग।
कबीर बिसरै आपको, होय जाय तेहि ंग॥
सुमिरन से मन लाइए, जैसे पानी मीन।
प्रान तजै पल बीछुरे, सत कबीर कहि दीन॥

स्वामी रामानन्द के दूसरे शिष्य रैदास कहते हैं—

थोथा मंदिर भोग विलासा। थोथी आन देव की आसा॥
साचा सुमिरन नाम विसासा। मन वच कर्म कहै रैदासा॥

* स्वायम्भू मनु के प्रपौत्र और उत्तानपाद के पुत्र, बालक ध्रुव, को एक बार उनकी विमाता ने पिता की गोद से अपमानपूर्वक उठा दिया कि तुम मुझसे उत्पन्न नहीं हो। ध्रुव अपनी माता की आज्ञा लेकर तप करने को वन की ओर चल दिये। राजा ने बहुत समझाया और प्रलोभन दिया पर वह न माने। घोर तप करके वह अचल लोक

पहुँचे। इनकी कथा पुराणों में और भक्तमालाओं में है। इनके जीवन पर कई नाटक अर्वाचीन काल में बने हैं।

† विदुरजी के पिता व्यासजी थे पर उनकी माता एक दासी थी। यह बड़े भक्त हुए और सर्वत्र आदर के पात्र हुए। हस्तिनापुर में श्रीकृष्ण ने दुर्योधन के यहाँ भोजन न करके इनके यहाँ भोजन किया। विदुरनीति अब तक प्रसिद्ध है। सूरदास ने आगे चलकर श्रीकृष्ण के, विदुर के घर में भोजन करने की कथा गाई है। दुर्योधन से कुछ बातें करने के बाद कृष्ण ने उद्धव से कहा (सूरसागर सप्तम स्कन्ध)—

उद्धव चलो विदुर के जाइयै। दुर्योधन के कौन काज जहां आदर भाव न पाइयै॥ गुरुमुख नहीं बड़े अभिमानी का पै सेव कराइयै। टूटी छानि मेघ जल बरपै टूटे पलँग बिछाइयै॥ चरण धोइ चरणोदक लीनो त्रिया कहै प्रभु आइयै। सकुचति फिरति जु वदन छिपावै भोजन कहा मँगाइयै॥ तुम तो तीन लोक के ठाकुर तुम ते कहा दुराइयै। हम तौ प्रेम प्रीति के गाहक भाजी शाक चखाइयै॥ हँसि हँसि खात कहत मुख महिमा प्रेम प्रीति अधिकाइयै। सूरदास प्रभु भक्तन के वश भक्तन प्रेम बढ़ाइयै॥ १२७॥

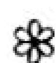
हरि ठाढ़े रथ चढ़े दुवारे। तुम दारुक आगे ह्वै देखहु भक्त भवन किधौं अनत सिधारे॥ सुनि सुंदरि उठि उत्तर दीनो कौरव-सुत कछु काज हँकारे। तहँ आये यदुपति कहियत है कमल नयन हरि हितू हमारे॥ तिहि को मिलन गयो मेरो पति ते ठाकुर हैं प्रभू हमारे। सूर प्रभू सुनि संभ्रम धाए प्रेम मगन तन बसन बिसारे॥ १२८॥

प्रभुजू तुम हो अंतर्यामी। तुम लायक भोजन नहिं गृह में अरु नाहीं गृहस्वामी। हरि कह्यो साग पत्र जो मोहिं प्रिय अमृत या सम नाहीं। वारंवार सराहि सूर प्रभु शाक विदुर घर खाहीं॥ १२९॥

भगवान्-दुर्योधन संवाद। राग सोरठ

क्यों दासीसुत के पाँव धारे। भीषम कर्ण द्रोण मंदिर तजि मम

यहै चलि आयो भक्तन हाथ बिकानो* । राजसूय में चरण पखारे श्याम लये कर पानो† ॥ रसना एक अनेक श्याम गुण कहँ लौं करों बखानो । सूरदास प्रभु की महिमा है साखी वेद पुरानो ॥११॥



राग बिलावल

काहू के कुल तन न विचारत । अविगत की गति कहि न परतु है‡ व्याध§ अजामिल§§ तारत ॥ कौन धैां जाति अरु

गृह तजे मुरारे ॥ सुनियत दीन हीन वृपलीसुत जाति पांति ते न्यारे । तिनके जाइ कियो तुम भोजन यदुवंशी सब लाजनि मारे ॥ हरिजू कहैं सुनो दुर्योधन सोइ कृपण मम चरण बिसारे । वेई भक्त भागवत वेई राग द्वेष ते न्यारे ॥ सूरदास प्रभु नंदनँदन कहैं हम ग्वालन जुठिहारे ॥१२०॥

* राम भगत हित नर-तनु धारी । सहि संकट किय साधु सुखारी ॥
(तुलसीकृत रामायण बालकाण्ड) ।

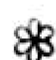
† युधिष्ठिर ने जो यज्ञ किया था उसमें श्रीकृष्ण ने अभ्यागतों के चरण धोने का काम अपने ऊपर लिया था ॥

‡ देखिए पृष्ठ २ टिप्पणी * ।

§ वाल्मीकि ऋषि पहले व्याध थे श्रैार लूट-मार करना उनका व्यवसाय था । एक दिन कुछ ऋषियों के कहने से जिनको वह लूटना चाहते थे, उन्होंने अपने कुटुम्बियों से पूछा कि तुम लोग हमारे कर्म-फल के साथी हो या नहीं ? उन्होंने उत्तर दिया नहीं । वाल्मीकि उसी समय विरक्त हो गये श्रैार राम का उलटा नाम जपते-जपते परमभक्ति को पहुँचे । तब उन्होंने संस्कृत रामायण की रचना की ।

§§ पापी अजामिल की स्त्री ने, कुछ अतिथि ऋषियों के उपदेशानुसार अपने पुत्र का नाम नारायण रक्खा । मरते समय अजामिल ने पुत्र को

पाँति विदुर की ताही के प्रभु धारत। भोजन करत दुष्ट घर उनके राज मान भँग टारत* ॥ ऐसे जन्म करम के ओछे ओछे हो अनुसारत। यहै सुभाव सूर के प्रभु को भक्तवछल प्रण पारत ॥ १२ ॥



राग गौरी

करुणामय तेरी गति लखि न परै। धर्म अधर्म अधर्म धर्म करि अकरन करन करै ॥ जय अरु विजय कर्म कहा कीनो ब्रह्म शराप दिवायो। असुर योनि ता ऊपर दीनी धर्मउ छंद करायो† ॥ पिता वचन खंडे सो पापी सो प्रह्लादहि कीनो।

पुकारा। नाम सुनते ही नारायण के दूत आये और पापी को परमधाम ले गये। इसकी कथा पुराणों और भक्तमालाओं में है।

देखिए सूरसागर षष्ठ स्कन्ध। श्रीमद्भागवत षष्ठ स्कन्ध अध्याय १–३।

* देखिए पृष्ठ ७ टिप्पणी †।

† गुसाईं तुलसीदासजी ने इनकी कथा का इतना संकेत किया है—

द्वारपाल हरि के प्रिय दोऊ। जय अरु विजय जानि सब कोऊ ॥

वह भगवान् की आज्ञा के बिना किसी को भीतर न जाने देते थे। एक बार उन्होंने सनकादि ऋषि को भी रोका। उन्होंने क्रुद्ध होकर शाप दिया कि तुम राक्षस होओ। पश्चात् कृपा करके उन्होंने कहा कि तीसरे जन्म में तुम्हारी मुक्ति होगी। इस प्रकार,

विप्रशाप तें दोनों भाई। तामस असुरदेह तिन पाई।

निकसे खंभ बीच ते नरहरि ताहि अभय पद दीनो* ॥ दान धर्म बहु कियो भानुसुत सो तुव विमुख कहायो। वेद विरुद्ध सकल पांडव सुत सो तुम्हरो मन भायो ॥ यज्ञ करत वैरोचन को सुत वेद विमल विधि कर्मा। सो छलि बाँधि पताल पठायो कौन कृपानिधि धर्मा† ॥ द्विज कुल पतित अजामिल विषयी‡

कनककशिपु अरु हाटकलोचन। जगत विदित सुरपति मद मोचन। विजयी समर वीर विख्याता। धरि वराहवपु एक निपाता। हुइ नरहरि पुनि दूसर मारा। जन प्रहलाद सुयश विस्तारा॥

भये निशाचर जाइ ते, महावीर बलवान।
कुंभकर्ण रावण सुभट, सुरविजयी जग जान॥

मुक्त न भयेउ हते भगवाना। तीन जन्म द्विज वचन प्रमाना। एक बार तिनके हित लागी। धरेउ शरीर भक्त अनुरागी॥

(तुलसीकृत रामायण, बालकाण्ड।)

देखिए श्रीमद्भागवत तृतीय स्कन्ध अध्याय १५—१६।

* देखिए पृष्ठ ३ टिप्पणी †।

† प्रह्लाद का पौत्र बलि इन्द्र को जीतकर स्वर्ग का राज्य करने लगा। इन्द्र की माता अदिति की स्तुति से प्रसन्न होकर भगवान् ने वामनरूप धारण किया और बलि से तीन पैर पृथ्वी का दान माँगा। बलि के प्रतिज्ञा करने पर वामन ने अपना रूप ऐसा बढ़ाया कि एक पैर से आकाश और दूसरे से पृथ्वी नाप ली और तीसरे पैर के लिए स्थान मांगा। बलि ने अपने को ही नपा लिया। भगवान् प्रसन्न हुए और पाताल में बलि के द्वार पर पहरा देने लगे।

देखिए श्रीमद्भागवत अष्टम स्कन्ध अध्याय १५–२३।

‡ देखिए पृष्ठ ८ टिप्पणी§§।

गणिका* नेह लगायो। सुत हित नाम लियो नारायण सो वैकुंठ पठायो ॥ पतिव्रता जालंधर युवती सो पतिव्रत ते टारी†। दुष्ट पुंश्चली अधम सु गणिका सुवा पढ़ावत तारी ॥ मुक्त हेतु योगो श्रम कीनो असुर विरोधहिं पावै। अविगति गति करुणामय तेरी सूर कहा कहि गावै ॥ ४५ ॥



राग सारंग

तुम हरि सांकरे के साथी। सुनत पुकार परम आतुर ह्वै दौरि छुड़ायो हाथी‡ ॥ गर्भ परीक्षित रक्षा कीनी वेद उपनिषद साखी§। बसन बढ़ाय द्रुपद तनया के सभा माँझ पत राखी ॥

---

* जीवन्ति नामी महापापी गणिका ने एक तोता पाला और उसे राम नाम पढ़ाया। नाम पुकारने के प्रभाव से दोनों ने मोक्ष पाई।

† महाप्रतापी दैत्य जालन्धर का बल क्षीण करने के लिए भगवान् ने कपटरूप धारण कर उसकी पतिव्रता स्त्री से पैर दबवाये। परपुरुष स्पर्श से उसका तेज जाता रहा और जालन्धर का वध सम्भव हो गया।

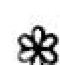
‡ जल-प्रविष्ट गजराज का पैर मगर ने पकड़ लिया। दोनों में १००० दिव्य वर्ष तक युद्ध हुआ। विकल होकर हाथी ने भगवान् को पुकारा। गरुड़ पर चढ़कर भगवान् चले। रास्ते में शीघ्रता के कारण उतर पड़े और पैदल ही दौड़कर मगर-समेत हाथी को बाहर खींच लिया। भगवान् ने चक्र से मगर का मुख फाड़कर हाथी की रक्षा की। देखिए सूरसागर अष्टम स्कन्ध। श्रीमद्भागवत अष्टम स्कन्ध अध्याय २—४।

§ प्रथम स्कन्ध के १६८ वें पद में सूरदास ने परीक्षित गर्भ-रक्षा का इस तरह वर्णन किया है—

राज रवनि गाई व्याकुल ह्वै दै दै सुत को धीरक । मागधि हति

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौं । हरि चरणारविंद उर धरौं ॥ हरि परीक्षितै गर्भ मँझार । राखि लियो निज कृपा अधार ॥ कहौं सु कथा सुनौ चितलाई । जो हरि भजै रहै सुख पाई ॥ भारत युद्ध वितत जव भयो । दुर्योधन अकेल तहँ रह्यो ॥ अश्वत्थामा तापै जाई । ऐसी भांति कह्यो समुझाई ॥ हमसों तुमसों वाल मिताई । हमसों कछु न भई मित्राई ॥ अब जो आज्ञा मोको होई । छांडि विलम्ब करों अब सोई ॥ राज्य गये को दुःख न सोई । पांडव राज भयो जो होई ॥ उनके मुए हीय सुख होई । जो करि सको करौ अब सोई । हरि सर्वज्ञ बात यह जान । पांडु सुतनि सों कह्यो बखान ॥ आज सरस्वति तट रहौ सोई । पै यह बात न जाने कोई । पांडव हरि की आज्ञा पाइ । तजि गृह रहे सरस्वति जाइ ॥ काहू सों यह कहि न सुनाई । वहां जाइ सब रैन बिताई । अश्वत्थामा तब इहां आए । द्रौपदीसुत तहां सोवत पाए ॥ उनको शिर लै गयो उतारि । कह्यो दुर्योधन आयो मारि ॥ बिन देखे ताको सुख छयो । देखे ते दूनो दुख भयो ॥ ए बालक तैं वृथा जु मारे । पुनि कुरुपति तजि प्राण सिधारे ॥ अश्वत्थामा भय करि भग्यो । इहां लोग सब सोवत जग्यो । द्रौपदि देखि सुतन दुख पायो । अर्जुन सों यह वचन सुनायो ॥ अश्वत्थामा जब लगि मारों । तब लगि अन्न न मुख में डारों ॥ हरि अर्जुन रथ पर चढ़ि धाये । अश्वत्थामा पै चलि आये ॥ अश्वत्थामा अस्त्र चलायो । अर्जुनहू ब्रह्मास्त्र पठायो ॥ उन दोनों से भईलराई । तब अर्जुन दोउ लए बुलाई ॥ अश्वत्थामा को गहि लाए । द्रौपदि शीश मुठी मुकराए ॥ याके मारे हत्या होई । मूयो जिवत न देख्यो कोई ॥ अश्वत्थामा बहुरि खिसाई । ब्रह्मअस्त्र को दियो चलाई ॥ गर्भ परीक्षित जारन गयो । तब हरि ताहि जरन नहिं दियो । रूप चतुर्भुज गर्भ मँझार । ताको तासों लियो उबार ॥ जन्म परीक्षित को जब भयो । कह्यो चतुर्भुज अब कहँ गयो ॥ पुनि जब हरि को देखौं जोई । पाइ सँतोष सुखी

राजा सब छोरे ऐसे प्रभु परपीरक ॥ कपट स्वरूप धर्‌यो जब कोकिल नृप प्रतीत करि मानी। कठिन परी तबहीं तुम प्रकटे रिपु हति सब सुख दानी ॥ ऐसे कहौं कहाँ लौं गुण गण लिखत अंत नहिं पइयै। कृपासिंधु उनहीं के लेखे मम लज्जा निर्वहियै ॥ सूर तुम्हारी ऐसी निबही संकट के तुम साथी। ज्यों जानों त्यों करों दीन की बात सकल तुम हाथी ॥ ५३ ॥



राग कान्हरा

दीनानाथ अब बार तुम्हारी। पतित उधारन बिरद जानि कै बिगरी लेहु सँभारी ॥ बालापन खेलत ही खोयो युवा विषय रस माते। वृद्ध भये सुधि प्रगटी मो को दुखित पुकारत ताते ॥ सुतनि तज्यो तिय तज्यो भ्रात तजि तन त्वच भई जु न्यारी। श्रवण न सुनत चरण गति थाकी नैन भये जलधारी ॥ पलित केश कफ कंठ विरोध्यौ कल न परी दिन राती। माया मोह न छाड़ै तृष्णा ए दोऊ दुख दाती ॥ अब या व्यथा दूरि करिबे को और न समरथ कोई। सूरदास प्रभु करुणासागर तुमते होइ सो होई* ॥ ५४ ॥

होउ सोई। राजा जन्म समय को देखि। मन में पायो हर्ष विशेखि ॥ गर्भ परीक्षित रक्षा करी। सोई कथा सकल बिस्तरी। श्रीभगवान कृपा जिहि करै। सूर सो मारे काके मरै ॥ १६८ ॥

देखिए श्रीमद्भागवत प्रथम स्कन्ध, अध्याय ८।

* जैसा कि पहले कह चुके हैं, इस समय के भक्त कवियों में बहुधा परमेश्वर को आत्म-समर्पण के भाव मिलते हैं। कबीर की साखी,

राग सारंग

तातें तुमरो भरोसो आवै। दीनानाथ पतित पावन यश वेद उपनिषद गावै। जो तुम कहौ कौन खल तारयो तौ हौं बोलों साखी॥ पुत्र हेतु हरि लोक गयो द्विज सक्यो न कोऊ राखी*॥ गणिका किये कौन व्रत संयम शुक हित नाम पढ़ावै। मनसा करि सुमिरयौ गज बपुरो ग्राह परमगति पावै†॥ बकी जो गई घोष में छल करि यशुदा की गति दीनी‡। और कहत श्रुति वृषभ व्याधि की जैसी गति तुम कीनी§॥ द्रुपदसुताहि दुष्ट दुर्योधन सभा माहिं पकरावै। ऐसो कौन और करुणामय वसन प्रवाह वहावै||॥ दुखित जानि कै सुत कुवेर के तिहि लगि आप बँधावै+। ऐसो को ठाकुर जन कारन दुख सहि भजो

दादू की वानी, नानक के भजन, तुलसीदास की विनयपत्रिका सबमें यही झलक है।

* देखिए पृष्ठ ८ टिप्पणी §§।

† देखिए पृष्ठ ११ टिप्पणी ‡

‡ बकी—कंस की आज्ञा से—बालक कृष्ण को मारने आई थी।

§ वृषभ भी कंस की आज्ञा से बालक कृष्ण को मारने आया था।

|| सभा में दुर्योधन की आज्ञा से दुःशासन ने पाण्डवपतियों द्वारा जुए में हारी हुई द्रौपदी का चीर खींचा। श्रीकृष्ण की महिमा से चीर बढ़ता ही चला गया।

+ कुवेर के लड़के नलकूवर एक वार कैलास पर गङ्गाजी में स्त्रियों के साथ जलक्रीड़ा कर रहे थे। अकस्मात् नारदजी आ निकले। तब भी इन्होंने वस्त्र न पहिने। नारदजी ने शाप दिया कि गोकुल में जाकर वृक्ष होओ।

मनावै ॥ दुर्वासा दुर्योधन पठयो पंडव अहित विचारी। सुमिरत तीनों लोक अघाए न्हात भज्यो कुश डारी। देव राज मख भंग जानिकै बरस्यो ब्रज पर आई। सूर श्याम राखे सब निज कर गिरि लै भए सहाई* ॥ ६३ ॥



राग गूजरी

कृपा अब कीजिए वलि जाउँ। नाहिं मेरे और कोऊ वलि चरण कमल विन ठाउँ॥ हौं असोच अकृत अपराधी सन्मुख होत लजाउँ। तुम कृपालु करुणानिधि केशव अधम उधारन नाउँ॥ काके द्वार जाइहौं ठाढ़ो देखत काहि सुहाउँ। अशरण शरण नाम तुमरो हौं कामी कुटिल सुभाउँ॥ कलँकी और मलीन बहुत मैं सेंतैमेंत विकाउँ। सूर पतित पावन पद अंबुज क्यों सो परिहरि जाउँ† ॥ ६९ ॥

गोपियों की शिकायत पर माखनचोर श्रीकृष्णजी को जब यशोदा ने उलूखल से बांध दिया तब बालक ने उलूखल को दोनों वृत्तों के बीच में डालकर ऐसा झटका दिया कि दोनों वृक्ष टूट गये और नलकूवर प्रकट हो गये। श्रीकृष्ण की स्तुति करके उन्होंने भक्ति का वरदान पाया। देखिए सूरसागर एवं संक्षिप्त सूरसागर दशम स्कन्ध पूर्वार्द्ध।

* सूरसागर एवं संक्षिप्त सूरसागर दशम स्कन्ध पूर्वार्द्ध।

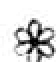
श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्द्ध अध्याय १०।

† माधव मो समान जग माहीं।

सब विधि हीन मलीन दीन अति लीन विषय कोउ नाहीं ॥१॥

राग धनाश्री

अब मैं नाच्यों बहुत गुपाल। काम क्रोध को पहिरि चोलना कंठ विषय की माल ॥ महामोह को नूपुर बाजत निंदा शब्द रसाल। भरम भये मन भयो पखावज चलत कुसंगत चाल ॥ तृष्णा नाद करत घट भीतर नाना विधि दे ताल। माया को कटि फेंटा बाँध्यो लोभ तिलक दियो भाल ॥ कोटिक कला काँछि देखराई जल थल सुधि नहिं काल। सूरदास की सबै अविद्या दूरि करो नँदलाल ॥ ६३ ॥



राग मारू

मेरी तौ गति पति तुम अंतहि दुख पाऊँ। हौं कहाइ तिहारौ अब कौन को कहाऊँ ॥ कामधेनु छाँड़ि कहा अजा* जा दुहाऊँ। हय† गयंद‡ उतरि कहा गर्दभ चढ़ि धाऊँ ॥ कंचन

तुम सम हेतु रहित कृपालु आरत हित ईश न त्यागी।
मैं दुख सोक विकल कृपाल केहि कारन दया न लागी ॥२॥
नाहिं न कछु औगुन तुम्हार अपराध मोर मैं माना।
ज्ञान भवन तनु दियहु नाथ सोउ पाय न मैं प्रभु जाना ॥३॥
वेनु करील श्रीखंड बसंतहि दूषन मृषा लगावै।
सार रहित हतभाग्य सुरभि पल्लव सो कहु किमि पावै ॥४॥
सब प्रकार मैं कठिन मृदुल हरि दृढ़ विचार जिय मोरे।
तुलसिदास प्रभु मोह सृंखला छूटिहि तुम्हरे छोरे ॥५॥
तुलसीकृत विनयपत्रिका, भजन ११४ ॥

* बकरी। † घोड़े। ‡ हाथी।

मणि खोलि डारि काँच कर बँधाऊँ। कुंकुम को तिलक मेटि काजर मुख लाऊँ॥ पाटंवर अंबर तजि गूदर पहिराऊँ। अंब को फल छाँड़ि कहा सेवर को धाऊँ॥ सागर की लहर छाँड़ि खार कत अन्हाऊँ। सूर कूर आँधरो मैं द्वार परो गाऊँ॥ १०५॥



राग सारंग

तुम्हारी भक्ति हमारे प्रान। छूटि गये कैसे जन जीवत ज्यों पानी बिन प्रान॥ जैसे मगन नाद सुनि सारँग बधत वधिक तनु बान। ज्यों चितवे शशि ओर चकोरी देखत ही सुखमान॥ जैसे कमल होत परिफूलित देखत दरशन भान। सूरदास प्रभु हरि गुण मीठे नित प्रति सुनियत कान॥ १०६॥



(शुकदेवजी की उत्पत्ति और व्यास-अवतार वर्णन के बाद कवि राम-नाम का माहात्म्य कहता है।)

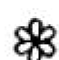
नाम-माहात्म्य वर्णन। राग कान्हरा

बड़ो है राम नाम की ओट। शरण गये प्रभु काढ़ि देत नहिं करत कृपा के कोट॥ बैठत सभा सबै हरि जू की कौन बड़ो को छोट। सूरदास पारस के परसे मिटत लोह के खोट*॥ १२०॥

* देखिए पृष्ठ ४ टिप्पणी * ।

राग धनाश्री

सोई भलो जो रामहि गावै। श्वपच प्रसन्न होइ बड़ सेवक विनु गुपाल द्विज जन्म न भावै ॥ वाद विवाद यज्ञ व्रत साधै कतहूँ जाइ जन्म डहकावै। होइ अटल जगदीश भजन में सेवा तासु चारि फल पावै ॥ कहूँ ठौर नहिं चरण कमल विनु भृंगी ज्यों दशहूँ दिशि धावै। सूरदास प्रभु संत समागम आनँद अभय निशान बजावै ॥ १२१ ॥



(यहाँ सूरदास ने महाभारत की कुछ कथा कही है—श्रीकृष्ण का विदुर के यहाँ भोजन करना, उद्धव-संवाद, दुर्योधन-संवाद, महाभारत, भीष्म-प्रतिज्ञा, भीष्म-मरण, श्रीकृष्ण का द्वारिका को जाना, पाण्डवों का हिमालय जाना, परीक्षित-गर्भ-रक्षा, परीक्षित-कलियुग-संवाद, ऋषि द्वारा परीक्षित को शाप, परीक्षित को ऋषियों द्वारा उपदेश—यह सब संक्षेप से कहा है। चित्त-बुद्धि-संवाद और मन-बुद्धि-संवाद के बाद मन-प्रबोध प्रारम्भ होता है।)

राग सारंग

छाँड़ि मन हरि विमुखन को सङ्ग। जिनके सँग कुबुद्धि उपजति है परत भजन में भंग ॥ कहा होत पय पान कराये विष नहिं तजत भुजंग। कागहि कहा कपूर चुगाये श्वान न्हवाये गंग ॥ खर को कहा अरगजा लेपन मर्कट भूषन अंग। गज को कहा न्हवाये सरिता बहुरि धरै खहि छंग ॥ पाहन पतित बाण नहिं बेधत रीतो करत निषंग। सूरदास खल कारी कामरि चढ़त न दूजो रंग ॥ २११ ॥

द्वितीय स्कन्ध

राग बिलावल

हरि हरि हरि सुमिरन करौ। हरि चरणारविंद उर धरौ ।। शुकदेव हरिचरणन चित लाई। राजा सों बोल्यो या भाई ।। तुम कह्यो सप्त दिवस मम आय* । कहो हरि कथा सुनो चितलाय ।। चिंता छाँड़ि भजो यदुराई । सूर तरो हरि के गुण गाई ।। १ ।।



राग सारङ्ग

जो सुख होत गोपालहिं गाये। सो नहिं होत जप तप के कीने कोटिक तीरथ न्हाये।। दिये लेत नहिं चारि पदारथ चरण कमल चित लाये। तीनि लोक तृण सम करि लेखत नंदनँदन

* कलियुग के वश होकर राजा परीक्षित ने योगमग्न लोमश ऋषि के गले में एक मरा सांप डाल दिया। ऋषि के पुत्र ने समाचार सुनकर शाप दिया कि आज के सातवें दिन अपराधी को सांप डसेगा। यह ख़बर पाकर राजा स्वयं गङ्गातट पर मरने के लिए आ बैठा। बहुत से ऋषि राजा के पास आये। श्रीशुकदेवजी राजा को धर्मशास्त्र सुनाने लगे। राजा परीक्षित की कथा के लिए देखिए श्रीमद्भागवत प्रथम स्कन्ध, अध्याय १२—१६। महाभारत आदिपर्व। सूरसागर प्रथम स्कन्ध। प्रेमसागर।

उर आये। वंशीबट वृन्दावन यमुना तजि वैकुंठ को जाये। सूरदास हरि को सुमिरन करि बहुरि न भव चलि आये* ॥२॥



राग केदारा

सोइ रसना जो हरिगुण गावै। नैन की छवि यहै चतुरता ज्यों मकरंद मुकुंदहि ध्यावै॥ निर्मल चित्त तौ सोई साँचो कृष्ण बिना जिय और न भावै। श्रवणनि की जु यहै

---

* पन्द्रहवीं, सोलहवीं और सत्रहवीं सदी में भारतवर्ष में सर्वत्र भक्तिमार्ग का उपदेश हो रहा था। कबीर, रैदास, दादू, नानक, अङ्गद आदि महात्माओं ने तीर्थ, मूर्तिपूजन, तप इत्यादि की मुक्त कण्ठ से निन्दा की है। सूरदास, तुलसीदास आदि महात्माओं ने कर्मकाण्ड की निन्दा नहीं की पर भक्ति को सर्वोपरि माना है।

रामायण के उत्तरकाण्ड में रामचन्द्रजी काकभुशुण्ड से कहते हैं—

पुनि पुनि सत्य कहहुँ तोहि पाहीं। मोहि सेवक सम प्रिय कोउ नाहीं॥
भगति हीन विरंचि किन होई। सब जीवहु सम प्रिय मोहि सोई॥
भगतिवंत अति नीचहु प्रानी। मोहि प्रानप्रिय असमय वानी॥

फिर—

कलिजुग केवल हरिगुन गाहा। गावत नर पावहिं भव थाहा॥
कलिजुग जोग न जज्ञ न ज्ञाना। एक अधार रामगुन ज्ञाना॥
सब भरोस तजि जो भजि रामहिं। प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहिं॥
सोइ भव तर कछु संशय नाहीं। नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं॥

गीता में भी कहा है—

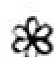
अनन्यांश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

अधिकाई सुनि रसकथा सुधारस प्यावै ॥ कर तेई जो श्यामहिं सेवैं चरणनि चलि वृन्दावन जावै । सूरदास जैये बलि ताके जो हरिजू से प्रीति बढ़ावै ॥ ३ ॥



राग सारङ्ग

जब ते रसना राम कह्यो। मानो धर्म साधि सब बैठ्यो पढ़िबे मैं धौं कहा रह्यो॥ प्रगट प्रताप ज्ञान गुरु गमते दधि मथि घृत लै तज्यो मह्यो । सार को सार सकल सुख को सुख हनूमान शिव* जानि कह्यो ॥ नाम प्रतीत भई जा जन की लै आनन्द दुख दूरि दह्यो । सूरदास धन धन वे प्राणी जो हरि को व्रत लै निबह्यो ॥ ४ ॥



---

* शिवजी ने पार्वती से कहा है—

परमेश्वरनामानि सन्त्यनेकानि पार्वति ।
परन्तु रामनामेदं सर्वेषामुत्तमोत्तमम् ॥
नारायणादिनामानि कीर्तितानि बहून्यपि ।
आत्मा तेषां च सर्वेषां राम-नामप्रकाशकः ॥

अन्यच्च,

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ।
सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने ॥

इस प्रकार—

सहस नाम सम सुनि शिववानी । जपि जेईं पिय संग भवानी ।

अनन्य भक्तिमहिमा । राग सारङ्ग

गोविंद सो पति पाइ कहा मन अनत लगावै* । गोपाल भजन बिन सुख नहीं जो चहुँ दिश धावै ॥ पति को व्रत जो धरै त्रिया सो शोभा पावै । आन पुरुष को नाम लेत तिय पतिहि लजावै ॥ गणिका ते उपजै सुपूत कौन को कहावै ॥ बसत सुरसरीतीर मंदमति कूप खनावै ॥ जैसे श्वान कुलाल के पाछे उठि धावै । आन देव हरि तजि भजै सो जन्म गँवावै† ॥ फल की आशा चित्त धारि जो वृक्ष बढ़ावै । महामूढ़ सो मूल तजि शाखा जल नावै ॥ सहज भजै नंदलाल को सो सब शुचि पावै । सूरदास हरिनाम लिये दुख निकट न आवै ॥ ५ ॥

---

* नाहिं नै नाथ अवलम्ब मोहिं आन की ।
करम मन वचन पन सत्य करुनानिधे,
एक गति राम भवदीय पदत्रान की ॥ इत्यादि
तुलसीकृत विनयपत्रिका भजन २०१ ।

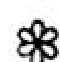
और कहँ ठौर रघुबंसमनि मेरे ।
पतितपावन प्रनतपाल असरनसरन बांकुरे बिरद बिरुदैत केहि केरे ॥ इत्यादि
भजन २१० ।

† दादूजी कहते हैं—पतिवरता के एक है, विभिचारणि के दोय ।
पतिवरता विभिचारिणी मेला क्योंकरि होय ॥
नारी सेवक तब लगैं, जब लग साईं पास ।
दादू परसै आन को, ताकी कैसी आस ॥

आदिग्रन्थ में गुरु नानक कहते हैं—
रंडियाँ एह न आंखियन, जिनके चलन भतार ।
रंडियाँ सेई नानका, जिन विसरिया करतार ॥

राग कान्हरा

जाको मन लाग्यो नँदलालहिं ताहि और नहिं भावै हो। ज्यों गूँगा गुर खाइ अधिक रस सुख सवाद न बतावै हो॥ जैसे सरिता मिलै सिंधु को बहुरि प्रवाह न आवै हो। ऐसे सूर कमल लोचन ते चित नहिं अनत डुलावै हो॥ ६॥



राग विहाग

जो मन कबहुँक हरि को जाँचै। आन प्रसंग उपासना छाँड़ै मन वच क्रम अपने उर साँचै* ॥ निशि दिन श्याम सुमिरि यश गावै कल्पन मेटि प्रेमरस पाचै। यह व्रत धरै लोक में विचरै सम करि गनै महा मणि काचै॥ शीत उष्ण सुख दुख नहिं मानै हानि भये कछु शोच न राचै। जाइ समाइ सूर वा निधि में बहुरि न उलटि जगत में नाचै॥ ७॥



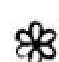
राग सारङ्ग

कह्यो शुक श्रीभागवत विचारि। हरि की भक्ति विरद है युग युग आन धर्म दिन चारि॥ चिंता तजौ परीक्षित राजा सुन सुख साखि हमारि। कमल नयन की लीला गावत कटत अनेक विकारि॥ सतयुग सतत्रेता तप कीनो द्वापर

---

* टिप्पणी * पृष्ठ २० और टिप्पणी * पृष्ठ २२।

पूजा चारि। सूर भजन कलि केवल कीजै लज्जा कानि निवारि* ॥ ८ ॥



राग विलावल

गोविंद भजन करो इहि बारा। शंकर पार्वती उपदेशत तारक मन्त्र लिख्यो श्रुतिद्वारा ॥ अश्वमेध यज्ञ जो कीजै गया बनारस अरु केदारा। रामनाम सरि तऊ न पूजै जो तनु गारो जाइ हिवारा ॥ सहसबार जो बेनी परसै चन्द्रायण सौ बारा। सूरदास भगवन्त भजन बिनु यम के दूत खरे हैं द्वारा† ॥९॥

---

* कृतजुग त्रेता द्वापर, पूजा मख अरु जोग।
जो गति होइ सो कलि हरि, नाम ते पावहिं लोग ॥
कलिजुग जोग न जज्ञ न ज्ञाना। एक अधार रामगुन गाना ॥
सब भरोस तजि जो भज रामहिं। प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहिं ॥
सोइ भव तर कछु संसय नाहीं। नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं ॥
कलि कर एक पुनीत प्रतापा। मानस पुन्य होइ नहिं पापा ॥
कलिजुग सम जुग आन नहिं, जो नर कर विश्वास।
गाइ राम गुनगन विमल, भव तर विनहि प्रयास ॥
(तुलसीकृत रामायण उत्तरकांड।)

कलि नाम कामतरु राम को।
दलनिहार दारिद दुकाल दुख दोष घोर धन धाम को ॥ इत्यादि
तुलसीकृत विनयपत्रिका भजन १५६।

† द्वापर में ही श्रीकृष्ण ने गीता में कहा था—
सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।

राग केदारा

है हरि नाम को आधार। और इहि कलिकाल नाहीं रह्यो विधि व्यवहार।। नारदादि शुकादि मुनि मिलि कियो बहुत बिचार। सकल श्रुति दधि मथित काढ्यो इतोई घृतसार।। दशो दिश ते कर्म रोक्यो मीन को ज्यों जार। सूर हरि को सुयश गावत जाहि मिट भव भार* ।। १० ।।

(नाम महिमा के संक्षिप्त कथन के बाद भक्ति-साधन का उपदेश करते हैं।)



राग धनाश्री

सबै दिन एक से नहिं जात। सुमिरन ध्यान कियो करि हरि को जब लगि तन कुशलात।। कबहूँ कमला चपला पाके टेढ़े टेढ़े जात। कबहुँक मग मग धूरि टटोरत भोजन को बिल-खात।। या देही के गर्व बावरो तदपि फिरत इतरात। बाद विवाद सबै दिन बीते खेलत ही अरु खात।। हौं बड़ हौं बड़ बहुत कहावत सूधे कहत न बात। योग न युक्ति ध्यान नहिं पूजा वृद्ध भये अकुलात।। बालापन खेलत ही खोयो तरुणापन अल-सात। सूरदास औसर के बीते रहिहौ पुनि पछितात।। २२ ।।

अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ।।

अ० १८ श्लोक ६६ ।

* टिप्पणी * पृष्ठ २४ ।

राग नट

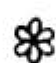
अपुनपो आपुनहो बिसरयो। जैसे श्वान काँच मंदिर में भ्रमि भ्रमि भूसि मरयो॥ हरि सौरभ मृग नाभि बसत है द्रुम तृण सूँघि मरयो। ज्यों सपने में रङ्क भूप भयो तस करि अरि पकरयो॥ ज्यों केहरि प्रतिविम्ब देखि कै आपुन कूप परयो। ऐसे गज लखि स्फटिक शिला में दशननि जाइ अरयो॥ मर्कट मुट्ठि छाँड़ि नहिं दीनी घर घर द्वार फिरयो। सूरदास नलनी को सुवटा कहि कौने जकरयो॥ २६॥

(परमेश्वर के विराट्रूप और आरती का यहाँ वर्णन है।)⁂



अथ नृप विचार। राग गूजरी

श्रीशुक के सुनि वचन नृप† लाग्यो करन विचार। झूठे नाते जगत के सुत कलत्र परिवार॥ चलत न कोऊ सँग चलै मोरि रहैं मुख नार। आवत गाढ़े काम हरि देखो सूर विचार॥ २६॥



नृप को वचन शुकदेव के प्रति। राग गूजरी

नमो नमो करुणानिधान। चितवत कृपा कटाक्ष तुम्हारी मिटि गयो तम अज्ञान॥ मोह निशा को लेश रह्यो नहिं भयो विवेक विहान। आतम रूप सकल घट दरश्यो उदय कियो रवि ज्ञान॥ मैं मेरी अब रही न मेरे छुट्यो देह अभिमान।

⁂ श्रीमद्भागवत द्वितीय स्कन्ध अध्याय ६।

† राजा परीक्षित।

भावै परो आजु हो यह तनु भावै रहो अमान ॥ मेरे जिय अब यहै लालसा लीला श्रीभगवान। श्रवण करौं निशि बासर हित सों सूर तुम्हारी आन ॥ ३३ ॥



अथ शुकदेव वचन । राग सारङ्ग

कह्यो शुक सुनो परीक्षित राव। ब्रह्म अगोचर मन वाणी ते अगम अनन्त प्रभाव ॥ भक्तन हित अवतार धारि जो करि लीला संसार। कहौं ताहि जो सुनै चित्त दै सूर तरै सो पार* ॥ ३४ ॥



अथ नारद-ब्रह्मा-संवाद । राग बिलावल

नारद ब्रह्मा को शिरनाई। कह्यो सुनो त्रिभुवन पतिराई ॥ सकल सृष्टि यह तुमते होई। तुम सम द्वितिया और न कोई ॥ तुम हो धरत कौनको ध्यान। यह तुम मोसो कहो बखान ॥ कह्यो कर्त्ता हर्ता भगवान। सदा करत मैं तिनको ध्यान ॥ नारद सों कह्यो विधि या भाई। सूर कह्यो त्योंही शुक गाई† ॥३५॥



अथ चतुर्विंशति अवतार-वर्णन । राग धनाश्री

जो हरि करै सो होई कर्त्ता नाम हरी। ज्यों दर्पण प्रतिबिम्ब त्यों सब सृष्टि करी ॥ आदि निरंजन निराकार कोउ

---

* श्रीमद्भागवत द्वितीय स्कन्ध चतुर्थ अध्याय।

† श्रीमद्भागवत द्वितीय स्कन्ध पञ्चम अध्याय।

हुतो न दूसर। रचो सृष्टि विस्तार भई इच्छा इक औसर॥ त्रिगुण तत्त्व ते महातत्त्व महातत्त्वते अहंकार। मन इंद्रिय शब्दादि पंची ताते किये विस्तार॥ शब्दादिक ते पंचभूत सुन्दर प्रगटाये। पुनि सबको रचि अण्ड आप में आप समाये॥ तीन लोक निज देह में राखे करि विस्तार। आदि पुरुष सोई भयो जो प्रभु अगम अपार॥ नाभि कमल ते आदि पुरुष मोको प्रगटायो। खोजत युग गए बीति नाल को अन्त न पायो॥ तिन मोसो आज्ञा करी रचि सब सृष्टि उपाई। स्थावर जंगम सुर असुर रचे सबै मैं आई॥ मच्छ कच्छ बाराह बहुरि नरसिंह रूप धरि। वामन बहुरो परशुराम पुनि राम रूप करि॥ वासुदेव सोइ भयो बुध भयो पुनि सोई सोई। कल्की होइ है और न द्वितिया कोई॥ ए दश हैं अवतार कहौं पुनि और चतुर्दश। भक्तवछल भगवान धरे बपु भक्तनि के वश॥ अज अविनाशी अमर प्रभु जन्मे मरै न सोई। नटवर कला करत सकल बूझै बिरला कोई॥ सनकादिक पुनि व्यास बहुरि भए हंसरूपहरि। पुनि नारायण ऋषभदेव बहुरयो धन्वंतरि॥ नारद दत्तात्रेय हरि यज्ञ पुरुप वपु धारि। कपिल मोहनी पृथु हयग्रीव सुध्रुव उद्धारि॥ भूमि रेणु कोऊ गनै और नक्षत्रन समुझावै। कह्यो चहे अवतार अंत सोऊ नहिं पावै॥ सूर कहौ क्यों कहि सकै जन्म कर्म अवतार। कहै कछुक गुरु कृपा ते श्रीभागवत अनुसार* ॥३६॥ (ब्रह्मा ने अपनी उत्पत्ति का निर्देश किया है)

* श्रीमद्भागवत द्वितीय स्कन्ध, अध्याय ६ और ७।

तृतीय स्कन्ध

तृतीय स्कन्ध में उद्धव-विदुर-संवाद के होने पर विदुर, सनकादि ऋषि, महादेव, सप्तऋषि, चार मनु, देवता और राक्षसों की उत्पत्ति का और वाराह अवतार का बहुत संक्षिप्त वर्णन है। तब कपिलमुनि के अवतार का निर्देश है।

देवहूति माता ने कपिलमुनि से आत्मज्ञान पूछा। कपिल ने धर्म का वर्णन किया और भक्ति का निर्देश किया। तब "देवहूति कह भक्ति सु कहिए। जाते हरिपुर वासा लहिए॥ १२॥"

भक्तिप्रश्न। राग बिलावल

अरु सुभक्ति कीजै किहिं भाई। सोऊ मोको देहु बताई॥ माता* भक्ति चारि परकार। सत रज तम गुण सुधा सार॥ भक्ति एक पुनि बहु विधि होई। ज्यों जल रंग मिलि रंगसु होई॥ भक्ति सात्विकी चाहत मुक्त। रजोगुणी धन कुटुम्ब अनुरक्त॥ तमोगुणी चाहै या भाई। मम वैरी क्यों ही मरजाई॥ सुधा भक्ति मोक्ष को चाहे। मुक्तिहुँ को नाहीं अवगाहे॥ मन क्रम वच मम सेवा करै। मन ते भव आशा परिहरै॥ ऐसो भक्त सदा मोहिं प्यारो। इक छिन जाते रहौं न न्यारो॥ ताके मैं हित मम हित सोई। जा सम मेरो और न कोई॥ त्रिविध भक्ति मेरे है जोई। जो माँगै तिहि देहुँ मैं सोई॥ भक्त अनन्य कछू नहिं माँगै। ताते मोहिं सकुच अति लागै॥ ऐसो भक्त जानि है

* कपिलमुनि बोले।

जोई । जाके शत्रु मित्र नहिं दोई ॥ हरि माया सब जग संतापै । ताको माया मोह न व्यापै* ॥ १३ ॥

---

* गीता में सप्तम अध्याय में कुछ भिन्न प्रकार से भक्ति के चार भेद कहे हैं । श्रीकृष्ण कहते हैं —

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन ।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ॥
उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम् ।...॥ १८ ॥

बहुधा भक्ति के नौ भेद कहे हैं —

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम् ।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ॥

हिन्दी में इसका बड़ा ही सरस वर्णन सत्रहवीं शताब्दी के कवि सुन्दरदास ने ज्ञानसमुद्र में किया है यथा—

श्रीगुरुरुवाच । चौपाई छन्द

सुनि शिष नउधा भक्ति विधानं । श्रवण कीर्तन समरण जानं ॥
पादसेवनं अर्चन वन्दन । दासभाव सख्यत्व समर्पन ॥ ६ ॥

१—श्रवण । चंपक छंद

शिष तोहि कहौं श्रुति बानी । सब संतनि माखि बखानी ।
द्वै रूप ब्रह्म के जानै । निर्गुन और सगुन पिछानै ॥ ११ ॥
निर्गुन निज रूप नियारा । पुनि सगुन संत अवतारा ॥
निर्गुन की भक्ति सु-मन सौं । संतन की मन अरु तन सौं ॥ १२ ॥
येकाग्र हि चित्त जु राखै । हरिगुन सुनि रस चाखै ॥
पुनि सुनै संत के बैना । यह श्रवण भक्ति मन चैना ॥ १३ ॥

२—कीर्त्तन

हरि गुन रसना मुख गावै । अतिसै करि प्रेम बढ़ावै ॥
यह भक्ति कीर्तन कहिये । पुनि गुरु प्रसाद तें लहिये ॥ १४ ॥

३—स्मरण

अब समरन दोइ प्रकारा। इक रसना नाम उचारा॥
इक हृदय नाम ठहरावै। यह समरन भक्ति कहावै॥ १५॥

४—पादसेवन।

नित चरण कँवल महिं लोटै। मनसा करि पाव पलोटै॥
यह भक्ति चरन की सेवा। समुझावत है गुरु देवा॥ १६॥

५—अर्चना। गीता छंद

अब अरचना को भेद सुनि शिष देऊं तोहि बताइ।
आरोपि कै तहँ भाव अपनौ सेइये मन लाइ॥
रचि भाव को मंदिर अनूपम अकल मूरति माहिं।
पुनि भावसिंघासन विराजै भाव विनु कछु नाहिं॥ १७॥

निज भाव की तहां करै पूजा, बैठि सनमुख दास।
निज भाव की सब सौंज आनै, नित्य स्वामी पास॥
पुनि भाव ही कौ कलस भरि धरि, भावनीर न्हवाइ।
करि भाव ही के बसन बहु विधि, अंग अंग बनाइ॥ १८॥

तहँ भाव चंदन भाव केसरि भाव करि घसि लेहु।
पुनि भाव ही करि चरचि स्वामी तिलक मस्तक देव॥
लै भाव ही के पुष्प उत्तम गुहै माल अनूप।
पहिराइ प्रभु को निरखि नख सिख भाव खेवै धूप॥ १९॥

तहँ भाव ही लै धरै भोजन भाव लावै भोग।
पुनि भावही करिकैं समर्प्यैं सकल प्रभु कैं योग॥
तहां भाव ही कौ जोइ दीपक भाव घृत करि सींचि।
तहां भाव ही की करै थाली धरै ताके बीचि॥ २०॥

तहां भाव ही की घंट झालरि संख ताल मृदङ्ग।
तहां भाव ही के शब्द नाना रहै अतिशय रंग॥

यह भाव ही की आरति करि करै बहुत प्रनाम।
तब स्तुति बहु विधि उच्चरै धुनि सहित लै लै नाम ॥ २१ ॥

अथ स्तुति। मोतीदाम छन्द

अहो हरि देव; न जानति सेव। अहो हरि राइ; परौं तौ पाइ ॥
सुनौ यह गाथ; गहौ मम हाथ। अनाथ अनाथ; अनाथ अनाथ ॥२२॥

६—वंदना। लीला छन्द

वंदन दोई प्रकार कहौं शिष संभलियं।
दंड समान करै तन सौं तन देउ दियं ॥
त्यों मन सौं तन मध्य प्रभू करि पाइ परै।
या विधि दोइ प्रकार सुबन्दन भक्ति करै ॥ ३१ ॥

७—दासत्व। हंसाल छन्द

नित्य भय सौं रहै हस्त जोरे कहै। कहा प्रभु मोहिं आज्ञा सु होई ॥
पलक पतिव्रता पति वचन खंडै नहीं। भक्ति दासत्व शिप जानि सोई ॥३२॥

८—सख्यत्व। डुमिला छन्द

सुनि शिष्य सखापन तोहि कहौं, हरि आतम कै नित संग रहै।
पल छांड़त नाहिं समीप सदा, जितही जितको यह जीव बहै ॥
अब तू फिरिकैं हरि सों हित राखहि, होइ सखा दृढ़ भाव गहै।
इमि सुन्दर मित्रन मित्र तजै, यह भक्ति सखापन वेद कहै ॥३३॥

९—आत्मसमर्पण। कुण्डली छन्द

प्रथम समर्पन मन करै, दुतिय समर्पन देह।
तृतीय समर्पन धन करै, चतुः समर्पन गेह ॥
गेह दारा धनं, दास दासी जनं।
वाज हाथी गनं, सर्व दै यों भनं ॥
और जे मे मनं, है प्रभू ते तनं।
शिष्य वार्ना सुनं, आतमा अर्पनं ॥ ३४ ॥

चतुर्थ स्कन्ध

चतुर्थ स्कन्ध में यज्ञपुरुष-अवतार, पार्वती-विवाह, ध्रुवचरित्र, पृथु और पुरञ्जन की कथाएँ हैं।

पञ्चम स्कन्ध

पञ्चम स्कन्ध में ऋषभदेव और जड़भरत का वर्णन है।

षष्ठ स्कन्ध

षष्ठ स्कन्ध में अजामिल की कथा है और गुरु-महिमा गाई है।

सप्तम स्कन्ध

हिरण्यकशिपु के पुत्र प्रह्लाद को गर्भ में ही नारदजी का उपदेश सुनकर ज्ञान हो गया था और राम-नाम पर भक्ति हो गई थी। बालकपन में उन्होंने राम-नाम को छोड़कर और कुछ पढ़ना स्वीकार न किया।

श्रीनृसिंहरूप अवतार वर्णन। राग बिलावल

षंडामर्क रहे पचिहाल। राजनीति कह्यो बारंबार ॥ कह्यो प्रह्लाद पढ़त मैं सार। कहाँ पढ़ावत और जंजार ॥ जब पाँड़े इत उत कहिं गए। बालक सब इकठौरे भए ॥ कह्यो यह ज्ञान कहाँ तुम पायो। नारद माता गर्भ सुनायो ॥ सबनि कह्यो देहु हमैं सिखाइ। सबहुन कै मति ऐसी आइ ॥ कह्यो सबनि से तब समुझाई। सब तजि भजो चरण रघुराई ॥ रामहि राम पढ़ो रे भाई। रामहिं जहँ तहँ होत सहाई ॥ इहाँ कोऊ काहू को नाहिं। असंबंध मिलत जगमाहिं ॥ काल अवधि जब पहुँचे आई। चलते बेर कोउ संग न जाई ॥ सदा संघाती श्रीयदुराई। भजिए ताहि सदा लवलाई ॥ हर्ता कर्ता आपै सोई। घट घट व्यापि रह्यो है जोई ॥ ताते द्वितिया और न कोई। ताके भजे सदा सुख होई ॥ दुर्लभ जन्म सुलभही पाई। हरि न भजे सो नरकहि जाई ॥ यह जिय जानि विषय परिहरो। राम नाम ही

सदा उच्चरो ॥ शत संवत मनुष्य की आई। आधी तो सोवत ही जाई ॥ कछु बालापन हो में बीते। कछु विरधापन माहिं व्यतीते ॥ कछु नृप सेवा करत विहाई। कछु इक विषय भोग में जाई ॥ ऐसे ही जो जन्म सिराई। विन हरि भजन नरक में जाई ॥ वालपनो गए ज्वानी आवै। वृद्ध भये मूरख पछतावै ॥ तीनों पन पुनि ऐसेहि जाई। ताते अबहिं भजो यदुराई ॥ विषय भोग सब तन में होई। बिनु नर-जन्म भक्ति नहिं होई ॥ जो न करै सो पशु सम होई। ताते भक्ति करो सब कोई ॥ जब लगि काल न पहुँचै आई। हरि की भक्ति करौ चितलाई ॥ हरि व्यापक है सब संसार। ताहि भजो ऐसही विचार। शिशु किशोर वृद्ध तनु होई। सदा एक रस आतम सोई ॥ जानि ऐसो तनु मोह त्यागो। हरिचरणारविंद अनुरागो ॥ माटी में जो कंचन परै। त्योंही आतमतनु संचरै ॥ कंचन ते जो माटी तजै। त्यों तनु मोह छाँड़ि हरि भजै ॥ नर सेवा ते जो सुख होई। क्षणभंगुर थिर रहै न सोई ॥ हरि की भक्ति करो चित लाई। होइ परम-सुख कबहुँ न जाई ॥ नीच ऊँच हरि गिनत न दोइ। यह जिय जानि भजो सब कोइ ॥ असुर होइ सुर भावै होई। जो हरि भजै पिआरो सोई ॥ रामहि राम कहो दिन रात। नातर जन्म अकारथ जात ॥ सौ बातन की एकै बात। सब तजि भजो द्वारकानाथ ॥ सब चेटियन ऐसी मन आई। रहे सबै हरिपद चित लाई ॥ हरि हरि नाम सदा उच्चारैं। विद्या और न मन में धारैं ॥ २ ॥

(प्रह्लाद की हरिभक्ति से रुष्ट होकर हिरण्यकशिपु ने उसको मारने के बहुत उपाय किये पर कोई उपाय सफल न हुआ। तलवार खींचकर उसने प्रह्लाद से पूछा कि बता अब तेरा राम कहाँ है ? प्रह्लाद ने कहा कि सब जगह है मोंमें, तोमें या खम्भ में। खम्भ में से नृसिंह निकले जिन्होंने हिरण्यकशिपु को रात और दिन के बीच में गोद में लेकर नखों से मार डाला। इसके बाद सूरदास ने नारदजी की उत्पत्ति कही है।)

अष्टम स्कन्ध

आठवें स्कन्ध में गजमोचन-अवतार, कच्छप-अवतार, समुद्रमथन, मोहिनीरूप, वामन-अवतार और मत्स्य-अवतार का वर्णन है।

नवम स्कन्ध

नवें स्कन्ध में राजा पुरुरवा, च्यवन, हलधर, राजा अम्बरीष और सौभर ऋषि की कथा है। तत्पश्चात् मृत्युलोक में गङ्गाजी के आने का वर्णन है। परशुराम-अवतार के बाद कवि ने राम-अवतार के कारणों का निर्देश किया है। इस स्कन्ध में संक्षेप से पूरा रामचरित्र कहा गया है*।

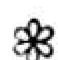
बालकाण्ड श्रीरामजन्म-वर्णन। राग कान्हरा

आजु दशरथ के आँगन भीर। आए भुव भार उतारन कारन प्रगटे श्याम शरीर॥ फूले फिरत अयोध्यावासी गनत न त्यागत चीर। परिरंभण हँसि देत परस्पर आनँद नैननि नीर॥ त्रिदश नृपति ऋषि व्योम विमाननि देखत रहे न धीर। त्रिभुवननाथ दयालु दरश दै हरी सबन की पीर॥ देत दान राख्यो

---

* श्रीमद्भागवत के नवम स्कन्ध के दसवें अध्याय में रामचरित्र का संक्षिप्त निर्देश किया गया है।

न भूप कछु महा बड़े नग हीर। भये निहाल सूर सब याचक जे याचे रघुबीर* ॥ १४ ॥



राग कान्हरा

अयोध्या बाजत आज बधाई। गर्भ मुच्यो कौशल्या माता रामचंद्र निधि आई॥ गावैं सखी परस्पर मंगल ऋषि अभिषेक कराई। भीर भई दशरथ के आँगन साम वेद ध्वनि गाई॥ पूछत ऋषिहि अयोध्या को पति कहि हो जन्म गुसाई। बुद्धवार नौमी तिथि नीकी चौदह भुवन बड़ाई॥ चारि पुत्र दशरथ के उपजे तिहूँ लोक ठकुराई। सदा सर्वदा राज राम को सूरदादि तहाँ पाई॥ १५ ॥†



राग कान्हरा

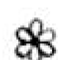
रघुकुल प्रगटे हैं रघुवीर। देश देश ते टीका आयो रतन कनक मनि हीर॥ घर घर मंगल होत बधाई अति पुरवासिन भीर। आनँद मगन भये सब डोलत कछू न शोध शरीर॥ मागध बंदी सूत लुटाए गउ गयंद हय चीर। देत अशीश सूर चिरजीयो रामचंद्र रणधीर† ॥ १६ ॥

---

* गृह गृह बाज बधाव शुभ, प्रगटेउ सुखमा कंद।
हरषवंत सब जहँ तहाँ, नगर नारि नर वृंद॥
(तुलसीकृत रामायण, बालकांड।)

† मागध सूत बंदि गण गायक। पावन गुण गावहिं रघुनायक॥

(इसके बाद विश्वामित्र के साथ राम-लक्ष्मण का जाना, ताड़का-वध, धनुष-यज्ञ, विवाह आदि का निर्देश है। दशरथ ने रामचन्द्र को तिलक देने का सामान किया। कैकेयी ने विघ्न डाला। रामचन्द्रजी वन जाने को तैयार हुए। सीताजी ने भी साथ चलने की ठानी। राम ने बहुत समझाया। पर वे न मानीं। बोलीं—)



जानकी वचन श्रीराम जू प्रति। राग केदारा

ऐसी जिय जिनि धरो रघुराई। तुम सों तजि प्रभु मो सी दासी अनत न कहूँ समाई॥ तुमरो रूप अनूप भानु ज्यों जब नैननिभरि देखौं। ता छिन हृदय कमल परिफुल्लित जन्म सफल करि लेखौं*॥ तुमरे चरन कमल सुखसागर यह व्रत हौं प्रतिपलिहौं। सूर सकल सुख छाँड़ि आपुनो वन विपदा सँग चलिहौं॥ ३४॥

(राम, सीता और लक्ष्मण वन को चले। गङ्गा-तट पर पहुँचकर लक्ष्मण ने नाव मँगाई।)

लक्ष्मण-केवट-संवाद। राग मारू

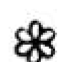
रे भैया केवट ले उतराई। रघुपति महाराज इत ठाढ़े तैं कित नाव दुराई†॥ अबहिं शिला ते भई देव गति जब पगु रेणु

सर्बस दान दीन्ह सब काहू। जेहिं पावा राखा नहिं ताहू॥
मृगमद चंदन कुंकुम सींचा। मची सकल बीथिन बिच कीचा॥
(तुलसीकृत रामायण, बालकांड।)

* नाथ सकल सुख साथ तुम्हारे। सरद बिमल बिधु बदन निहारे॥
(तुलसीकृत रामायण, अयोध्याकांड।)

† इतना सुनकर केवट ने उत्तर दिया।

छुआई। हौं कुटुंब काहे प्रतिपारौं वैसी यह ह्वै जाई ॥ जाके चरनरेणु की महिमा सुनियतु अधिक बड़ाई। सूरदास प्रभु अगनित महिमा वेद पुराननि गाई ॥ ३८ ॥



केवट-विनय। राग कान्हरा

नवका नाहीं हौं लै आऊँ। प्रगट प्रताप चरण को देखौं ताहि कहाँ लौं गाऊँ ॥ कृपासिंधु पै केवट आयो कंपत करत जु बात। चरण परसि पाषान उड़त है मति मेरी उड़ि जात ॥ जो यह वधू होय काहू की दार स्वरूप धरै। छूटै देह जाइ सरिता तजि पग सों परस करै ॥ मेरी सकल जीविका यामें रघुपति मुक्ति न कीजै। सूरजदास चढ़ो प्रभु पाछे रेणु पखारन दीजै* ॥ ३९ ॥

केवट-वचन राम प्रति। राग रामकली

* मेरी नवका जिन चढ़ो त्रिभुवन पति राई। मो देखत पाहन उड़े मेरी काठ की नाई ॥ मैं खेवौंही पार को तुम उलटि मँगाई। मेरो जिय योंही डरै मति होहि शिलहाई ॥ मैं निर्बल मेरे बल नहीं जो और गढ़ाऊँ। मेरो कुटुँब याहीं लग्यो ऐसी कहां पाऊँ ॥ मैं निर्धन मेरे धन नहीं परिवार घनेरो। सेमर ढाक पलाश काटि बांधो तुम बेरो। बार बार श्रीपति कहै केवट नहिं मानै। मन परतीति न आवै उड़ती ही जानै ॥ नियरेहीं जल थाह है चलो तुमैं बताऊँ। सूरदास की विनती नीके पहुँचाऊँ ॥ ४० ॥

मांगी नाव न केवट आना। कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना ॥
चरन कमल रज कहँ सब कहई। मानुषकरनि मूरि कछु अहई ॥
छुवत सिला भइ नारि सुहाई। पाहन ते न काठ कठिनाई ॥

(अन्त में केवट ने पार उतार दिया। जहाँ-जहाँ राम-सीता-लक्ष्मण जाते थे भीड़ लग जाती थी। स्त्रियां सीताजी के पास आकर बातें करती थीं।)



पुरवासी वचन जानकी प्रति। राग रामकली

सखी री कौन तिहारी जात। राजिवनैन धनुष कर लीने वदन मनोहर गात॥ लज्जित रही पुर वधू पूँछे अंग अंग मुसक्यात। अति मृदु वचन पंथ बन विहरत सुनियत अद्भुत बात॥ सुंदर नैन कुँवर सुंदर दोउ सूर किरन कुम्हिलात। देखि मनोहर तीनों मूरति त्रिविध ताप तनु जात॥ ४१॥



सीता सैन, पति जनावन। राग धनाश्री

कहि धौं सखी बटोही को हैं। अद्भुत वधू लिये सँग डोलत देखत त्रिभुवन मोहैं॥ परम सुशील सुलच्छण जोरी विधि की

तरनिउँ मुनि-घरनी होइ जाई। बाट परइ मोरि नाव उड़ाई॥
एहि प्रतिपालउँ सब परिवारू। नहिं जानउँ कछु अउर कबारू॥
जौ प्रभु पार अवसि गा चहहू। मोहि पदपदुम पखारन कहहू॥
पदकमल धोइ चढ़ाइ, नाव न नाथ उतराई चहहुँ।
मोहि राम राउरि आन, दसरथ सपथ सब साँची कहहुँ॥
बरु तीर मारहि लपन पै जब लगि न पाय पखारिहउँ।
तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपालु पारु उतारिहउँ॥

(तुलसीकृत रामायण, अयोध्याकांड।)

रचो न होई। काकी अब उपमा यह दीजै देह धरे धौं कोई ॥ इहि में को पति त्रिया तुम्हारो पुरजन पूछै धाई। राजिवनैन मैन की मूरति सैनन माहिं बताई ॥ गए सकल मिलि संग दूरि लों मन न फिरत पुरवास। सूरदास स्वामी के बिछुरत भरि भरि लेत उसाँस* ॥ ४२ ॥

(राम-वियोग से दशरथ ने प्राण तज दिये। ननिहाल से लौटकर भरत को सब समाचार जानने पर बड़ा शोक हुआ। वह राम-सीता से मिलने के लिए वन को गये।)



राग केदारा

भरत मुख निरखि राम बिलखाने। मुंडित केश शीश बिहवल दोउ उमँगि कंठ लपटाने ॥ तात मरन सुनि श्रवण

---

* सीय समीप ग्रामतिय जाहीं। पूछत अति सनेह सकुचाहीं ॥
राजकुमारि विनय हम करहीं। तिय सुभाय कछु पूछत डरहीं ॥
स्वामिनि अविनय छमबि हमारी। बिलगु न मानब जानि गँवारी ॥
राजकुँअर दोउ सहज सलोने। इन्ह ते लहि दुति मरकत सोने ॥
स्यामल गोर किसोर वर, सुंदर सुखमा ऐन।
सरद सर्वरी नाथ मुख, सरद सरोरुह नैन ॥
कोटि मनोज लजावनि हारे। सुमुखि कहहु को आहिं तुम्हारे ॥
सुनि सनेहमय मंजुल बानी। सकुचि सीय मन महँ मुसुकानी ॥
तिनहि बिलोकि बिलोकति धरनी। दुहु सकोच सकुचति वर बरनी ॥
सकुचि सप्रेम बालमृगनैनी। बोली मधुर वचन पिकबैनी ॥
सहज सुभाय सुभग तन गोरे। नाम लषन लघु देवर मोरे ॥

कृपानिधि धरणि परे मुरझाई। मोह मगन लोचन जलधारा बिपति हृदय न समाई॥ लोटति धरणि परी सुनि सीता समुझति नहिं समुझाई। दारुण दुःख दवा ज्यों तृणवन नाहीं बुझति बुझाई॥ दुर्लभ भयो दरश दशरथ को भयो अपराध हमारे। सूरदास स्वामी करुणामय नैन न जात उघारे* ॥ ५०॥

(राम के समझाने पर भरत लौट गये। रामचन्द्रजी दक्षिण की ओर चले। लङ्काधिराज रावण सीता को हर ले गया। किष्किन्धा में राम से सुग्रीव की मैत्री हुई। ढूँढ़ते-ढूँढ़ते हनूमान्‌जी ने सीताजी को अशोक-वाटिका में देखा।



हनूमान्‌जी बोले—

राग सारंग

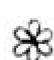
जननी हौं रघुनाथ पठायो। रामचन्द्र आये की तुमको देन बधाई आयो॥ हौं हनुमंत कपट जिनि समुझो बात कहत समुझाई। मुँदरी दूब धरी लै आगे तब प्रतीति जिय आई॥ अति सुख पाइ उठाइ लई तब बार बार उर भेंटति। ज्यों मलयागिरि

बहुरि बदन बिधु अंचल ढांकी। पिय तन चितइ भौंह करि बांकी॥
खंजन मंजु तिरीछे नैननि। निज पति कहेउ तिन्हहि सिय सैननि॥

*(वशिष्ट ने) नृपकर सुरपुर गवन सुनावा। सुनि रघुनाथ दुसह दुख पावा॥
मरनहेतु निज नेह बिचारी। भे अति बिकल धीर धुरि धारी॥
(तुलसी०, अयोध्याकांड।)

आँसुन सो सब पर्वत धोये। जंगम को जड़ जीवन रोये॥
(केशवदास रामचन्द्रिका दशम प्रकाश, ३२)

पाइ आपनी जरनि हृदय की मेटति ॥ लक्ष्मण पालागन करि पठयो हेतु बहुत करि माता। दई अशीश तरनि सन्मुख ह्वै चिरजीयो दोउभ्राता ॥ बिछुरन को संताप हमारो तुम दरशन ते काट्यो। ज्यों रवि तेज पाइ दशहूँ दिशि दोष कुहर को फाट्यो ॥ ठाढ़े बिनती करत पवनसुत अब जो आज्ञा पाऊँ। अपने देख चले को यह सुख उनहूँ जाइ सुनाऊँ ॥ कल्प समान एकछन राघव कर्म कर्म करि बितवत। ताते हौं अकुलात कृपानिधि ह्वै हैं पैंड़ो चितवत ॥ रावण हतिलै चलो साथ ही लंका धरौं अपूठी। याते जिय अकुलात कृपानिधि करौं प्रतिज्ञा झूठी* ॥ यहाँ जोइ सब दशा हमारी सूर सो कहियो जाई। बिनती बहुत कहा कहौं रघुपति जिहि विधि देखौं पाई ॥ ८५ ॥



सीताराम-पराक्रम-वर्णन। उराहनासमेत वेगि मिलाप हित। राग कान्हरा

सुनु कपि वे रघुनाथ नहीं। जिन रघुनाथ पिनाकहिं तान्यो तोरयो निमिष महीं ॥ जिन रघुनाथ फेरि भृगुपति गति डारी

---

* यही भाव तुलसीदास में भी है। हनूमान्जी सीताजी से कहते हैं—

अबहीं मातु मैं जाउँ लेवाई। प्रभु आयसु नहिं राम दोहाई।

(तुलसी०, सुंदरकांड)

सभा में अंगद ने रावण से कहा—

जौं न राम अपमानहिं डरऊँ। तोहि देखत अस कौतुक करऊँ ॥

काटि तर्हीं। जिहिं रघुनाथ हाथ खरदूषण हरे प्राण शरहीं ॥ कै रघुनाथ तज्यो प्रण अपनो योगिन दशा गही। कै रघुनाथ दुखित कानन कै नृप भये रघुकुलहीं ॥ कै रघुनाथ अतुल राक्षस बल दशकंधर डरहीं। छाँड़ो नारि विचारि पवनसुत लंक बाग बसहीं ॥ किधौं कुचोल कुरूप कुलक्षण तौ कंतहि न चहीं। सूरदास स्वामी सों कहियो अब विरमियो नहीं ॥ ८९ ॥

(राम और रावण में घोर युद्ध हुआ। मेघनाद ने लक्ष्मण को शक्ति मारकर मूर्छित कर दिया।)



श्रीराम करुणा। राग मारू

निरखि मुख राघव धरत न धीर। भये अरुण विकराल कमलदल लोचन मोचत नीर ॥ बारह बरस नींद है साधी ताते विकल शरीर। बोलत नहीं मौन कहा साधी विपति बटावन वीर ॥ दशरथ मरन हरन सीता को रन वीरन की भीर। दूजो सूर सुमित्रा सुतबिनु कौन धरावै धीर ॥ १४१ ॥



अन्यच्च

अबहीं कौन को मुख हेरों। रिपुसैना समूह जल उमड़े काहि संग लै फेरों ॥ दुख समुद्र जिहि वार पार नहिं तामें नाव

तोहि पटकि महि सेन हति, चौपट करि तव गाउँ।
तव जुवतीन्ह समेत सठ, जनक-सुतहिं लेइ जाउँ ॥
(तुलसी०, लंकाकांड।

चलाई। केवट थक्यो रह्यो अधबीचक कौन आपदा आई॥ नाहिंन भरत शत्रुघन सुंदर जासों चित्त लगायो। बीचहि भई और की औरै भयो शत्रु को भायो॥ मैं निज प्राण तजौंगो सुन कपि तजिहैं जानकी सुनि कै। ह्वैहै कहा विभीषण की गति यहै सोच जिय गुनि कै॥ बार बार शिर लै लक्ष्मण को निरखि गोद पर राखैं। सूरदास प्रभु दीन बचन यों हनूमान सों भाखैं* ॥ १४२ ॥

(सुषेन वैद्य की बताई हुई औषधि हनुमान्‌जी पर्वत-सहित ले आये। लक्ष्मणजी की मूर्छा दूर हुई। युद्ध में कुम्भकर्ण, मेघनाद, रावण और सब राक्षस मारे गये। सीताजी को लेकर राम अयोध्या की ओर चले।)



राम आगमन श्रवण सुनि भरत रचना करन उत्सव प्रकाश। राग वसंत

राघव आवति हैं अवधि आजु। रिपु जीते साधे देव काजु॥ प्रभु कुशल बधू सीतासमेत। जस सकल देश आनंद

---

*तुलसीकृत रामायण में रामविलाप कुछ भिन्न रीति से दिया है—

सकहु न दुखित देखि मोहि काऊ। बंधु सदा तव मृदुल सुभाऊ॥
जो जनतेउँ बन बन्धु बिछोहू। पिता वचन मनतेउँ नहिं ओहू॥
जथा पंख बिनु खग अति दीना। मनि बिनु फनि करिबर कर हीना॥
अस मम जिवन बंधु बिनु तोही। जौं जड़ दैव जियावइ मोही॥
जैहउँ अवध कवन मुँह लाई। नारि हेतु प्रिय भाइ गँवाई॥
(तुलसी०, लङ्काकांड।)

देव ॥ कपि शोभित सकल अनेक संग । ज्यों पूरण शशि सागर तरंग ॥ सुग्रीव विभीषण जाम्बवंत । अंगद केदार सुखेन संत ॥ नल नील द्विविद केसरि गवच्छ । कपि कहं मुख्य और अनेक लच्छ ॥ जब कही पवनसुत विविध बात । तब उठी सभा सब हर्ष गात ॥ ज्यों पावस ऋतु घन प्रथम घोर । जल जीवक दादुर रटत मोर ॥ जब सुने भरत पुर निकट भूप । तब रच्यौ नगर रचना अनूप ॥ प्रति प्रति गृह तोरण ध्वजा धूप । सजे सकल कलश अरु कदलि जूप ॥ दधि हरद दूब फल फूल पान । कर कनकथार त्रिय करत गान ॥ सुनि भा वेदध्वनि शंख नाद । सुनि निरखि पुलक आनँद प्रसाद ॥ देखत प्रभु की महिमा अपार । सब विसरि गयं मन बुधि विकार ॥ जय जय दशरथ कुल कमल भान । जय कुमुद जननि शशि प्रजा प्रान ॥ जय दिव भूतल शोभा समान । जय जय जय सूर न शब्द आन* ॥ १६४ ॥

---

*समाचार पुरवासिन पाये । नर अरु नारि हरषि सब धाये ॥
दधि दुर्वा रोचन फल फूला । नव तुलसीदल मंगल मूला ॥
भरि भरि हेमथार भामिनी । गावत चलीं सिन्धुरगामिनी ॥
अवधिपुरी प्रभु आवति जानी । भई सकल शोभा के खानी ॥
भइ सरजू अति निर्मल नीरा । बहइ सुहावन त्रिविध समीरा ॥
सुमन वृष्टि नभ संकुल, भवन चले सुखकंद ।
चढ़ी अटारिन्हि देखहिं, नगर नारि नर वृन्द ॥
कंचन कलस विचित्र सँवारे । सबहिं धरे सजि सजि निज द्वारे ॥
वंदनवार पताका केतू । सबन्हि बनाये मंगलहेतू ॥

(अयोध्या में बड़े आनन्द हुए। माताओं ने राम की आरती की। राज्याभिषेक हुआ। नवम स्कन्ध के शेष भाग में अहिल्या, नहुष, कच और देवयानी की कथा है।)



बीथी सकल सुगंध सिंचाई। गजमनि रचि बहु चौक पुराई॥
नाना भाँति सुमंगल साजे। हरषि नगर निसान बहु बाजे॥
करहिं आरती आरतिहर कें। रघुकुल कमल बिपिन दिन करकें॥
नारि कुमुदिनी अवध सर, रघुपति बिरह दिनेस।
अस्त भये बिगसत भईं, निरखि राम राकेस॥

(तुलसी०, उत्तरकांड।)

दशम स्कन्ध पूर्वार्ध

मथुरा के राजा उग्रसेन का पुत्र कंस बड़ा दुष्ट और राक्षसी स्वभाव का था। उसके और अन्य दुराचारियों के पापों और अत्याचारों से दुखी होकर पृथ्वी विलाप करती हुई ब्रह्माजी के पास गई। ब्रह्माजी ने परमेश्वर का ध्यान किया और हृदयाकाश में यह अलौकिक वाणी सुनी कि परमेश्वर शीघ्र ही पृथ्वी का भार उतारने के लिए अवतार लेंगे। ब्रह्माजी के आदेश से देवताओं ने यदुवंश में जन्म लिया और अप्सराओं ने गोपियों का रूप धारण किया।

इधर शूरवंशी वसुदेव कंस की बहन देवकी से विवाह कर घर लौट रहे थे। कंस भी कुछ दूर पहुँचाने के लिए साथ हुआ और रथ हाँकने लगा। इतने में कंस के प्रति आकाशवाणी हुई कि "हे मूर्ख, जिस देवकी का रथ तू हांक रहा है उसका आठवां पुत्र तेरा काल होगा।" यह सुनकर कंस बहन की जान लेने पर उद्यत हुआ।

वसुदेव ने बहुत समझाया-बुझाया, बहुत अनुनय-विनय की और प्रतिज्ञा की कि देवकी के सब पुत्रों को मैं तुम्हें दे दूँगा। तब कंस ने देवकी को विदा किया। एक-एक करके वसुदेव ने अपने सात पुत्र कंस के समर्पण कर दिये। एक-एक करके कंस ने सबके प्राण ले लिये। आठवां गर्भ रहते ही कंस के भय का वार-पार न रहा। उसने वसुदेव और देवकी को लोहे की ज़ंजीरों से जकड़कर अपने घर में बन्द कर दिया। चारों ओर सशस्त्र पहरा बैठा दिया। भादों के कृष्णपक्ष की अष्टमी को आधीरात पर बालक का जन्म हुआ। उसके मनोहर मुख को देखकर देवकी पति से बोली*—

---

* श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्द्ध अध्याय १—३।

लल्लूजीलालकृत प्रेमसागर।

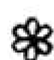
राग केदारा

हो पिय सो उपाय कछु कीजै। जेहि तेहि बिधि दुराय इह बालक राखि कंस सों लीजै ॥ मनसा वाचा कहत कर्मना नृपतिहिं नहीं पतीजै। वुधि वल छल कल कैसेहूँ करिकै काटि अनत लै दीजै ॥ नाहिन यतनो भाग सो यह रस नित लोचन पट पीजै। सुनहु सूर ऐसे सुत को मुख निरखि निरखि जग जीजै ॥ ५ ॥

(यह सुनकर वसुदेव ने कहा)

राग केदारा

सुन देवकी को हितू हमारे। असुर कंस अपवंश विनाशन शिर पर वैठे हैं रखवारे ॥ ऐसो को समरथ त्रिभुवन में जो यह वालक नेक उवारै। खड्ग धरे आयो तो देखत अपने कर छण मांह पछारे ॥ यह सुनतहि अकुलाइ गिरी धर नैन नीर भरि भरि दोउ डारे। दुखित देखि वसुदेव देवकी प्रगट भये धरिकै भुज चारे ॥ बोलत उठे प्रतिज्ञा प्रभु यह मति उवरै तव मोहिं जु मारे। अति दुख में सुख दै पितु मातहि सूर को प्रभु नंदभवन सिधारे ॥ ६ ॥



राग केदारा

भादों भर की राति अँधियारी। द्वार कपाट कोट भट रोके दशहुँ दिशि कंस भय भारी ॥ गर्जत मेघ महा डर लागत बीच

बढ़ी यमुना जल कारी। तब ते इहै शोच जिय मेरे क्यों दुरिहै शशिवदन उज्यारी॥ कत पिय बोल बचन करि राखी बरु ताही दिन जीवनमारी। कहि जाको ऐसो सुत बिछुरै सो कैसे जीवै महतारी॥ करि न बिलाप देवकी सो कहि दीनदयालु भक्त भयहारी। छुटि गयो निबिड़ तबहि गये गोकुल सूर सुमति दै बिपति निवारी॥ ७॥



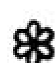
(यशोदा की नवजात बालिका को उठाकर और उसके स्थान पर बालक कृष्ण को रखकर वसुदेव चल दिये। देवकी के पास बालिका रोने लगी। पहरेवालों को होश आया। समाचार पाते ही कंस दौड़ा आया। और बालिका को मारने को उद्यत हुआ। देवकी ने बड़ी विनय की, पर वह न माना। पत्थर पर पछाड़ते ही वह आकाश को चली गई और कंस से कह गई कि तेरा मारनेवाला अन्यत्र जन्म ले चुका है। इधर गोकुल में)

राग बिलावल

जागी महरि* पुत्र मुख देख्यो आनँद तूर बजाइ। कंचन कलश हेम द्विजपूजा चंदन भवन लिपाय॥ दिन दश ही ते बर्षें कुसुमनि फूलन गोकुल छाइ। नंद कहै इच्छा सब पूजी मनवांछित फल पाइ॥ आनँद भरे करत कौतूहल उदित मुदित नर नारी। निर्भय भए निशान बजावत देत निशंके गारी॥ नाचत महर

* यशोदा।

मुदित मन कीनो ग्वाल बजावत तारी। सूरदास प्रभु गोकुल प्रगटे मथुरा कंस प्रहारी* ॥ १३ ॥



राग रामकली

हौं एक बात नई सुनि आई। महरि यशोदा ढोटा जायो घर घर होत बधाई ॥ द्वारे भीर गोप गोपिन के महिमा बरणि न जाई। अति आनंद होत गोकुल में रत्न भूमि सब छाई ॥ नाचत तरुण वृद्ध अरु बालक गोरस कीच मचाई। सूरदास स्वामी सुखसागर सुंदर श्याम कन्हाई ॥ १६ ॥



हौं सखी नई चाह एक पाई। ऐसे दिनन नंद के सुनि-यत उपजे पूत कन्हाई ॥ बाजत पवन निशान पंचविधि रुंज मुरज सहनाई। महर महरि व्रज हाट लुटावत आनँद उर न समाई ॥ चलौ सखी हमहूँ मिलि जैये वेगि करौ अतुराई। कोउ भूषण पहिरयौ कोउ पहरति कोउ वैसेहि उठि धाई ॥ कंचन थार दूब दधि रोचन गावत चलीं बधाई। भाँति भाँति बनि चली युवतिगण यह उपमा मो पै नहिं आई ॥ अमर विमान चढ़े सुर देखत जयध्वनि शब्द सुनाई। सूरदास प्रभु भक्त हेतु हित दुष्टन के दुखदाई ॥ १७ ॥

---

* श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध अध्याय २ और ३।

राग काफी

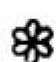
आजु निशान बाजै नंद महरि के। आनंद मगन नर गोकुल शहर के ॥ आनँदभरी यशोदा उमँगि अंग न समाति आनंदित भई गोपी गावति चहर के। दूब दधि रोचन कनकथार लै लै चलीं मानों इंद्रवधू जुरि पाँतिनि बहर के ॥ आनंदित भये ग्वाल बाल करत विनोद ख्याल भुजभरि धरि अंकम दै बरहरि के। आनंदमगन धेनु थन स्रवै पय फेनु उमँग्यो यमुनजल उछलै लहर के ॥ अंकुरित तरु पात उकठि रहे जे गात बनबेली प्रफुलित कलिन कहर के। आनंदित विप्रसुत मागध याचक गण उमँगे असीस देत तरह तरह हरि के ॥ आनंदमगन सब अमर गगन छाए पुहुप बिमान चढ़े पहर पहर के। सूरदास प्रभु आइ गोकुल प्रगट भये संतन भयो हरष दुष्टजन मन दहर के ॥ २४ ॥



छठी व्यवहार राग काफी

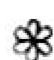
अति परम सुंदर पालना गढ़ि ल्याव रे बढ़ैया। शीतल चंदन कटाउ धरि खरादि रंग लगाउ विविध चौकी बनाउ रंग रेशम लगाउ हीरा मोती लाल मढ़ैया ॥ विश्वकर्मा सुढार रच्यो है काम सुनार मणि गणि लागे अपार नंदमहर सुत काज अढ़ैया। आनि धरयो नंदद्वार अतिही सुंदर सुढार व्रजबधू देखैं बार बार शोभा नहिं वारपार धनि धनि धन्य है गढ़ैया ॥ पालनो आन्यो सबहि अति मनमान्यो नीको सो दिन धराइ

सखिन मंगल गवाय रंगमहल में पौढ्यो है कन्हैया। सूरदास प्रभु की मैया यशुमति नँदरानी जोई माँगत सोइ लेत बधैया॥ ३६॥



राग धनाश्री

यशोदा हरि पालने झुलावै। हलरावै दुलराइ मल्हावै जोइ सोइ कछु गावै॥ मेरे लाल को आउ निदरिया काहे न आनि सुवावै। तू काहे न वेगि सी आवै तोको कान्ह बुलावै॥ कबहूँ पलक हरि मूँदि लेत हैं कबहुँ अधर फरकावै। सोवत जानि मौन ह्वै ह्वै रही कर करि सैन बतावै॥ इहि अंतर अकुलाइ उठे हरि यशुमति मधुरै गावै। जो सुख सूर अमर मुनि दुर्लभ सो नँदभामिनी पावै॥ ३७॥



(धीरे धीरे कृष्ण बढ़ने लगे। पता पाकर कंस को चिन्ता हुई। उसने कृष्ण के प्राण लेने के लिए पूतना को भेजा।)

राग धनाश्री

प्रथम कंस पूतना पठाई। नंदघरनि जहँ सुत लिए बैठी चली तेहि धामहि आई॥ अति मोहनी रूप धरि लीनो देखत सबही के मन भाई। यशुमति रही देखि वाको मुख काकी बधू कौन धौं आई॥ नंदसुवन तबहीं पहिचानी असुर घरनि असुरन की जाई। आपुन वज्र समान भए हरि माता दुखित भई

भरपाई ॥ अहो महरि पालागन मेरो हौं तुम्हरो सुत देखन आई। यह कहि गोद लियो अपने तब त्रिभुवनपति मनमन मुसकाई ॥ मुख चूँम्यो गहि कंठ लगाए विष लपट्यो अस्तन मुख लाई। पयसँग प्राण ऐंचि हरि लीन्हें योजन एक परी मुरझाई ॥ त्राहि त्राहि कहि व्रजजन धाए अति बालक क्यों बच्यो कन्हाई। अति आनन्द सहित सुत पायो हृदये मांझ रहे लपटाई ॥ करवर टरी बड़ी मेरे की घर घर आनंद करत बधाई। सूर-श्याम पूतना पछारी यह सुनि जिय डरप्यो नृपराई* ॥ ४२ ॥



(तब कंस ने सिद्धर ब्राह्मण को भेजा)

राग बिलावल

सिद्धर बाभन करम कसाई। कह्यो कंस सों बचन सुनाई ॥ प्रभु मैं तुम्हरो आज्ञाकारी। नंदसुवन को आवों मारी ॥ कंस कह्यो तुमते इह होई। तुरत जाहु कर विलँब न कोई ॥ शिरधर नंद भवन चलि आयो। यशुदा उठिकै माथा नायो ॥ करो रसोई मैं चलि जाओ। तुम्हरे हेतु जमुन जल ल्याओ ॥ इह

---

* श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध अध्याय ६।

पूतना का मायावी रूप इस प्रकार वर्णन किया है—

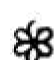
तां केशबन्धव्यतिषक्तमल्लिकां बृहन्नितम्बस्तनकृच्छ्रमध्यमाम्।

सुवाससं कम्पितकर्णभूषणत्विषोल्लसत्कुन्तलमण्डिताननाम् ॥ ५ ॥

वल्गु स्मितापाङ्गविसर्गवीक्षितैर्मनो हरन्तीं वनितां व्रजौकसाम्।

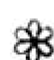
अमंसताम्भोजकरेण रूपिणीं गोप्यः श्रियं द्रष्टुमिवागतां पतिम् ॥६॥

कहि यशुदा यमुना गई। सिद्धर कही भलो इहि भई॥ उन अपने मन मारन ठानो। हरिजी ताको तबही जानो॥ ब्राह्मण मारे नहीं भलाई। अंग याकों मैं देउँ नशाई॥ जबहीं ब्राह्मण हरिढिग आयो। हाथ पकर हरि ताहि गिरायो॥ गोड़ चाप लै जीभ मरोरी। दधि ढरकायो भाजन फोरी॥ राख्यो कछु तेहि मुख लपटाई। आपु रहे पलना पर आई॥ रोवन लागे कृष्ण विनानी। यशुमति आइ गई लै पानी॥ रोवत देखि कह्यो अकुलाई। कहा करयो तैं विप्र अन्याई॥ ब्राह्मण के मुख वात न आवै। जीभ होइ तौ कहि समुझावै॥ ब्राह्मण को घरबाहर कीन्हों। गोद उठाइ कृष्ण को लीन्हों॥ पुरवासी सब देखन आए। सूरदास हरि के गुन गाए॥ ४९॥



राग बिलावल

सुन्यो कंस पूतना मारी। शोच भयो ताके जिय भारी॥ कागासुर को निकट बुलायो। तासों कहि सब वचन सुनायो॥ मम आयसु तुम माथे धरौ। छल वल करि मम कारज करौ॥ इह सुनिकै तिन्ह माथो नायो। सूर तुरत ब्रज को उठि धायो॥५०॥



अथ कागासुर को आयबो। राग सारंग

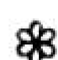
कागरूप एक दनुज धर्यो। नृप आयसु लेकर माथे पर हर्षवंत उर गर्व भर्यौ॥ कितिक वात प्रभु तुम आयसु लै

यह जानो मो जात मरयो । इतनी कहि गोकुल उठि आयो आइ नंदघर छाज रह्यो ॥ पलना पर पौढ़े हरि देखे तुरत आइ नैननि सों अरयो । कंठ चापि बहु बार फिरायो गहि फटक्यो नृप पास परयो ॥ तुरत कंस पूछन तेहि लाग्यो क्यों आयो नहिं काज सरयो । बीत्यो जाम ज्वाब जब आयो सुनहु कंस तेरी आयु सरयो ॥ धरि अवतार महाबल कोऊ एकहि कर मेरो गर्व हरयो । सूरदास प्रभु कंसनिकंदन भक्तहेतु अवतार धरयो ॥ ५१ ॥



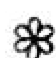
राग बिलावल

मथुरापति जिय अतिहि डेरान्यौ । सभामाझ असुरनि के आगे बार बार शिर धुनि पछितान्यो ॥ व्रज भीतर उपज्यो मेरो रिपु मैं जानी यह बात । दिन ही दिन बहु बढ़त जातु है मोको करि है घात ॥ दनुजसुता पूतना पठाई छिनकहि माँझ सँहारी । धीच मरोरि कागसुर दीनो मेरे ढिग फटकारी ॥ अब हीं ते यह हाल करतु है दिन दिन होत प्रकास । सेनापतिन सुनाइ बात यह नृपमन भयो उदास ॥ ऐसो कौन मारिहै ताको मोहि कहै सो आय । वाको मारि अपनपौ राखै सूर व्रजहि सो जाय ॥ ५२ ॥



अथ शकटासुर को कंस आज्ञा मांगन। गौड मलार

नृपति बात यह सबनि सुनायो। मुहाँ चही सेनापति कीनो शकटासुर मन गर्व बढ़ायो॥ दोउ कर जोरि भयो तब ठाढ़ो प्रभु आयसु मैं पाऊँ। ह्याँते जाइ तुरत ही मारों कहौ तो जीवत ल्याऊँ॥ यह सुनि नृपति हर्ष मन कीनो तुरतहि बीरा दीनो। वारंवार सूर कहि ताको आपु प्रशंसा कीनो॥ ५३॥



गौड मलार

पान लै चल्यां नृप आन कीन्हों। गयो शिर नाइकै गर्वही बढ़ाइकै शकट को रूपधरि असुर लीन्हों॥ सुनत घहरानि ब्रजलोग चकृत भए कहा आघात ध्वनि करतु आवै। देखि आकाश चहुँपास दसहुँ दिशा डरे नरनारि तनु सुधि भुलावै॥ आपु गयो तहीं जहँ प्रभु रहे पालने कर गहे चरण अंगुठ चचोरहि। किलकि किलकि हँसत बालशोभा लसत जानि तिहि कसत रिपु आयौ भोरहि॥ नेक फटक्यो लात शव्द भयो आघात गिर्‌यो भहरात शकटा संहार्‌यो। सूर प्रभु नंदलाल दनुज मार्‌यो ख्याल मेटि जंजाल ब्रजजन उबार्‌यो॥



राग विभास

देखो सखी अद्‌भुत रूप अतूथ। एक अंबुज मध्य देखियत वांस उदधि सुत यूथ॥ एक शुक है जलचर उभय अर्क अनूप।

पंच विराजे एकहि ढिग बहु सखि कौन स्वरूप ।। शिशुता में शोभा भई करो अर्थ विचारी । सूर श्रीगोपाल की छवि राखिय उरधारी ।। ५४ ।।



(यहाँ बारह पदों में सूरदास ने वर्णन किया है कि यशोदा कैसे कृष्ण को पालने में झुलाती थीं और देख-देखकर प्रसन्न होती थीं ।)

राग बिलावल

मेरो नान्हरिया गोपाल वेगि बड़ो किनि होहि । इहि मुख मधुरे बयन हँसि कबहूँ जननि कहोगे मोहि ।। यह लालसा अधिक दिन दिनप्रति कबहूँ ईश करै । मो देखत कबहूँ हँसि माधव पगु द्वै धरनि धरै ।। हलधर सहित फिरै जब आँगन चरणशब्द सुख पाऊँ । छिन छिन क्षुधित जात पयकारन हौं हठि निकट बुलाऊँ ।। आगम निगम नेति करि गायो शिव उनमान न पायो । सूरदास बालक रसलीला मन अभिलाष बढ़ायो ।। ६६ ।।



अथ तृणावर्त वध गोडा तारन । राग बिलावल

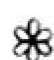
यशुमति मन अभिलाष करै । कब मेरो लाल घुटुरुवन रेंगै कब धरनी पग द्वैक धरै ।। कब द्वै दंत दूध के देखौं कब तुतरे मुख बैन झरै । कब नंदहि कहि बाबा बोलै कब जननी कहि मोहि ररै ।। कब मेरो अचरा गहि मोहन जोइ सोइ कहि मो सों

झगरै। कब धौं तनक तनक कछु खैहै अपने कर सों मुखहि भरै॥ कब हँसि बात कहैंगे मोहि सों छबि पेखत दुख दूरि करै। श्याम अकेले आँगन छाड़े आपु गई कछु काज घरै॥ एहि अंतर अंधवाइ उठी इक गरजत गगन सहित घहरै। सूरदास ब्रज लोग सुनत ध्वनि जो जहाँ तहाँ सब अतिहि डरै॥ ६७॥



राग सूही

अति विपरीत तृणावर्त आयो। बात चक्र मिस ब्रज के ऊपरि नंद पँवरि के भीतर धायो॥ पौढ़े श्याम अकेले आँगन लेत उड़्यो आकाश चढ़ायो। अंधधुंध भयो सब गोकुल जो जहाँ रह्यो सो तहाँ छपायो॥ यशुमति आइ धाइ जो देखै श्याम श्याम करि शोर उठायो। धावहु नंद गोहारी लागौ किनि तेरो सुत अंधवाइ उड़ायो॥ इहि अंतर आकाश ते आवत पर्वतसम कहि सबनि बतायो। मार्‍यो असुर शिला सों पटक्यो आप चढ़े ता ऊपर भायो॥ दौरे नंद यशोदा दौरी तुरतहि लै हित कंठ लगायो। सूरदास यह कहत यशोदा ना जानौं विधिनहिं कह भायो* ॥ ६८॥



---

* श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध अध्याय ७॥ भागवत की कथा इस प्रकार है कि एक दिन यशोदा की गोद में कृष्ण पर्वत के समान

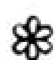
राग सारङ्ग

आजु कान्ह करिहै अनप्राशन। मणिकंचन के थार भराए भाँति भाँति के वासन॥ नंदघरनि सब बधू बुलाई जे सब अपनी जाति। कोउ जिवनार करति कोउ घृत पक षटरस के बहुभाँति॥ बहुत प्रकार किये सब व्यंजन अनेक वरन मिष्टान। अति उज्ज्वल कोमल सुठि सुंदर महरि देखि मनमान॥ यशुमति नंदहि बोलि कह्यो तब महर बुलाइ बहु जाति। आप गए नँद सकल महर घर लै आये सब ज्ञाति॥ आदर करि बैठाइ सबनि को भीतर गयं नँदराइ। यशुमति उबटि न्हवाइ कान्ह को पटभूषण पहिराइ॥ तन भँगुली शिर लाल चौतनी कर चूरा दुहुँ पाइ। बार बार मुख निरखि यशोदा पुनि पुनि लेत बलाइ॥ घरी जानि सुत मुख जुठरावन नँद बैठे लै गोद। महर बोलि बैठारि मंडली आनँद करत विनोद॥ कंचनथार लै खीर धरी भरि तापर घृत मधु नाइ। नंद लै लै हरि मुख जुठरावत नारि उठीं सब गाइ॥ षटरस के परकार जहाँ लगि लै लै अधर छुवावत। विश्वंभर जग-

---

भारी मालूम होने लगे। उनको भूमि पर बिठाकर वह घर के काम में लग गईं। इतने में कंस का भेजा हुआ तृणावर्त राक्षस आँधी-बवंडर के रूप में व्रज पर छा गया और कृष्ण को उठा ले गया। सारे आकाश में धूल छा गई; घोर अन्धकार हो गया; राक्षस का शब्द सब दिशाओं में भर गया। यशोदा कृष्ण को ढूँढ़ने लगीं और कहीं न पाकर मूर्छित हो गईं। उधर कृष्ण ने तृणावर्त का गला ज़ोर से पकड़ लिया और इतने भारी हो गये कि राक्षस नीचे गिर पड़ा। वह चूर-चूर हो गया पर कृष्ण आनन्द से उसकी छाती पर खेलते रहे।

दीश जगतगुरु परसत मुख करुवावत ॥ तनक तनक जल अधर पोंछि कै यशुमति पै पहुँचाए। हर्षवंत युवती सब लै लै मुख चूमति उर लाए॥ महर गोप सबही मिलि बैठे पनवारे परुसाए। भोजन करत अधिक रुचि उपजी जो जेहिके मन भाए॥ इहि विधि सुख विलसत व्रजवासी धनि गोकुल नर नारी। नंदसुवन की या छवि ऊपर सूरदास बलिहारी ॥ ७८ ॥



राग जैत श्री

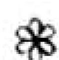
लाला हौं वारी तेरे मुख पर। कुटिल अलक मोहन मन विहँसत भ्रकुटी विकट नैननि पर॥ दमकति द्वै द्वै दँतुलिया विहँसति मानौ सीपिज घरु कियो वारिज पर। लघु लघु शिर लट घूँघरवारी लटकि लटकि रह्यो लिलार पर॥ यह उपमा कहि कापै आवै कछुक कहौं सकुचति हौं हिय पर। नूतन चन्द्र रेखमधि राजति सुरगुरु शुक्र उदोत परस्पर॥ लोचन लोल कपोल ललित अति नासिक को मुक्तारद छद पर। सूर कहा न्यौछावर करिये अपने लाल ललित लर ऊपर॥ ८३ ॥



वर्षगांठ लीला। राग आसावरी

उमँगनि उमगी है व्रजनारी कान्ह की वरषगांठि वरषवरषनि। गावहिं मङ्गलगान नीके सुर नीकी तान आनंद हरषनि॥ कंचनमणि जटित थार दधिलोचन कूल डार देखन चली नंद-

कुमार मिलिबे की तर्सनि। सूरदास प्रभु की वरषगांठि जोरति यह छवि पर तृन तोरति अरस परसनि ॥ ८६ ॥



(कनछेदन लीला के बाद कवि कृष्ण का घुटुअन चलना वर्णन करता है।)

राग आसावरी

खेलत नंद आँगन गोविंद। निरखि निरखि यशुमति सुख पावति वदन मनोहर चंद ॥ कटि किंकिनी कंठ मणि की द्युति लट मुकुता भरि भाल। परम सुदेश कंठ केहरि नख बिच बिच वज्र प्रवाल ॥ कर पहुँचियाँ पायन पैंजनी सुरत न रंजित रज-पीत। घुटुरन चलत अजिर में विहरत मुखमंडित नवनीत ॥ सूर विचित्र कान्ह की वानक वाणी कहत नहीं वनि आवै। बालदशा अवलोकि सकल मुनि योग विरति विसरावै* ॥८८॥

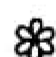
---

* तुलसीदास ने रामचन्द्र का घुटुओं चलना इस प्रकार वर्णन किया है —

रघुबर बाल छवि कहौं वरनि। सकल सुख की सींव कोटि मनोज शोभा हरनि ॥ रुचिर नूपुर किंकिनी मनुहरति रुनु झुन करनि। बसी मानहु चरण कमलनि अरुणता तजि तरनि ॥ मंजुमेचक मृदुल तनु अनुहरति भूषण भरनि। मनहुँ सुभग सिंगार शिशुतरु फर्यो अद्भुत फरनि ॥ भुजनि भुजग सरोज नयननि वदन विधु जित्यो लरनि। रहे कुहरन सलिल नभ उपमा अपर द्विति डरनि ॥ लसत कर प्रति-विम्ब मणि आँगन घुटुरुवनि चरनि। जलज सम्पुट सुछवि भरि भरि धरति जनु उर धरनि ॥ पुण्य फल अनुभवति सुतहि विलोकि दशरथ घरनि। बसति तुलसी हृदय प्रभु किलकनि नटनि लरखरनि ॥

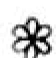
राग धनाश्री

हौं बलि जाउँ छबीले लालकी। धूसरि धूरि घुटुरुवन रेंगनि बोलन वचन रसालकी॥ छिटकि रहीं चहुँदिशि जु लटुरियाँ लटकन लटकत भालकी। मोतिन सहित नासिका नथुनी कंठ कमलदल मालकी॥ कछुकै हाथ कछू मुख माखन चितवनि नैन विशालकी। सूर सुप्रभु के प्रेम मगन भई ढिग न तजति व्रजवालकी॥ ९६॥



कृष्ण का पैरों चलना। राग धनाश्री

चलत देखि यशुमति सुख पावै। ठुमुक ठुमुक धरनीधर रेंगत जननी देखि दिखावै॥ देहरी लौं चलि जात बहुरि फिर फिरि इतही को आवै। गिरि गिरि परत बनत नहि नांघत सुर मुनि शोच करावै॥ कोटि ब्रह्मांड करत छिन भीतर हरत विलंब न लावै। ताको लिए नंद की रानी नानारूप खिलावै॥ तब यशुमति कर टेकि श्याम को क्रमक्रम कै उतरावै। सूरदास प्रभु देखि देखि सुर नर मुनि मन बुद्धि भुलावै॥ ११५॥



(यहां कवि ने कृष्ण के बालवेश का कुछ और वर्णन किया है।)

माखन मांगना। राग आसावरी

तनिक दै री माइ माखन तनिक दैरी माइ। तनिक कर पर तनिक रोटी मांगत चरन चलाइ॥ कनक भू पर रतन की रेखा

नेक पकरयो धाइ। कंपि आगिरि शेष शंक्यो उदधि चलो अकुलाइ ॥ जा मुख को ब्रह्मादिक लोचैं सो माँगत ललचाइ। ईश कं वेग दरश दीजै ब्रज बालक लेत बलाइ ॥ माखन माँगत श्यामसुंदर देत पग पटकाइ। तनक मुख की तनक बतियाँ माँगत हैं तोतराइ ॥ मेरे मन को तनिक मोहन लागु मोहि बलाइ। श्यामसुंदर गिरिधरनि ऊपर सूर बलि बलि जाइ ॥१४५॥



राग बिलावल

सखी री नंद-नंदन देखु। धूरि-धूसरि जटा जूटलि हरि किए हरभेषु ॥ नील पाट परोइ मणिगण फणिग धोखे जाइ। खुनखुना करि हँसत मोहन नचत डौंरु बजाइ ॥ जलजमाल गोपाल पहिरे कहौ कहाँ बनाइ। मुंडमाला मनो हर गर ऐसी शोभा पाइ ॥ स्वातिसुत माला विराजत श्याम तन यों भाइ। मनौं गंगा गौरि डर हर लिए कंठ लगाइ ॥ केहरी के नखहि निरखत रही नारि विचारि। बालशशि मनौ भाल ते लै उर धरयो त्रिपुरारि ॥ देखि अंग अनंग डरप्यो नंदसुत को जान। सूरदास कं हृदय बसि रह्यो श्याम शिव को ध्यान ॥ १४६ ॥



(कृष्ण ने कहा कि मां मेरी चोटी कैसी बढ़ेगी। यशोदा ने उत्तर दिया—)

राग धनाश्री

कजरी को पय पिअहु लाल तेरी चोटी बढ़ै। सब लरिकन में सुन सुंदर सुत तो श्री अधिक चढ़ै ॥ जैसे देखि और ब्रज-

बालक त्यों बलवैस बढ़ै । कंस केशि बक वैरिन के उर अनुदिन अनल उठै ।। यह सुनि के हरि पीवन लागे त्यों त्यों लियो लटै। अचवन पै तातो जब लाग्यो रोवत जीभ उठै ।। पुनि पीवत ही कच टकटोवे झूठे जननि रटै । सूर निरखि मुख हँसत यशोदा सो सुख उर न कढ़ै ।। १५३ ।।



राग रामकली

यशोदा कबहिं बढ़ैगी चोटी । किती वार मोहिं दूध पिवत भई यह अजहूँ है छोटी ।। तू जो कहति बल की बेनी ज्यों ह्वै है लाँबी मोटी । काढ़त गुहत न्हवावत ओछत नागिनि सी भ्वै लोटी ।। काचो दूध पिवावत पचिपचि देत न माखन रोटी । सूर श्याम चिरजीवौ दोउ भैया हरि हलधर की जोटी ।।१५४।।



अथ चन्द्र प्रस्ताव । राग कान्हरो

ठाढ़ी अजिर यशोदा अपने हरिहि लिये चन्दा देखरावत । रोवत कत बलि जाउँ तुम्हारी देखौ धौं भरि नयन जुड़ावत ।। चितै रहे तब आपुन शशितन अपने कर लै लै जू बतावत । मीठो लगत किधौं यह खाटो देखत अति सुन्दर मनभावत ।। मनमनही हरि बुद्धि करत हैं माता को कहि ताहि मँगावत । लागी भूख चंद मैं खैहों देहु देहु रिस करि विरुझावत ।। यशुमति

कहत कहा मैं कीनी रोवत मोहन अति दुख पावत। सूर श्याम को यशुदा बोधति गगन चिरैया उड़त लखावत॥ १६३॥



राग कान्हरो

बार बार यशुमति सुत बोधति आउ चन्द तोहि लाल बुलावै। मधु मेवा पकवान मिठाई आपु न खैहै तोहि खवावै॥ हाथहि पर तोहिं लीने खेलै नहिं धरणी बैठावै। जलभाजन कर लै जु उठावति याही में तू तनुधरि आवै॥ जलपुट आनि धरणि पर राख्यो गहि आन्यो वह चन्द दिखावै। सूरदास प्रभु हँसि मुसुकाने बार बार दोऊ कर नावै॥ १६६॥



राग रामकली

लेहौं री मा चन्दा चहौंगो। कहा करौं जलपुट भीतर को बाहर ओकि गहौंगो॥ इह तौ झलमलात झकझोरत कैसे कै जु लहौंगो। वह तो निपट निकटही देखत वरज्यो हों न रहौंगो॥ तुमरो प्रेम प्रकट मैं जान्यो बौराए न वहौंगो। सूर श्याम कहै कर गहि ल्याऊँ शशि तनु दाप दहौंगो॥ १६८॥



राग धनाश्री

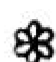
लाल यह चन्दा ले लैहो। कमलनयन बलि जाइ यशोदा नीचे नेक चितैहो॥ जा कारण सुन सुत सुन्दर वर कीन्हो इती

अनैहो। सोइ सुधाकर देखि दमोदर या भाजन में हैहों॥ नभ ते निकट आनि राख्यो है जलपुट जतन जो गैहो। लै अपने कर काढ़ि दमोदर जो भावै सो कैहो॥ गगन मँडलते गहि आन्यो है पंछी एक पठैहो। सूरदास प्रभु इती बात को कत मेरो लाल हठैहो॥ १६९॥



राग बिहागरो

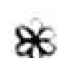
तुम मुख देखि डरतु शशि भारी। कर करिकै हरि हेर्यो चाहत भाजि पताल गयो अपहारी॥ वह शशि तो कैसेहु नहिं आवत यह ऐसी कछु बुद्धि विचारी। वदन देखि विधु विधि सकात मन नैन कंज कुंडल उजियारी॥ सुनहु श्याम तुमको शशि डरपत है कहत ए शरन तुम्हारी। सूर श्याम विरुझाने सोए लिए लगाइ छतियाँ महतारी॥ १७०॥



कृष्ण का जगाना। राग ललित

जागियै गुपाल लाल आनँदनिधि नंदबाल यशुमति कहै बार बार भोर भयो प्यारे। नैन कमल से विशाल प्रीति वापिका मराल मदन ललित वदन ऊपर कोटि वारिडारे॥ उगत अरुन विगत शर्वरी शशांक किरनहीन दीन दीपक मलीन छीन दुति समूह तारे। मनहु ज्ञान घनप्रकाश बीते सब भवविलास आस त्रास तिमिर तोष तरनि तेज जारे॥ बोलत खग मुखर निकर

मधुर ह्वै प्रतीति सुनहु परम प्राण जीवनधन मेरे तुम बारे। मनौ वेद बंदी मुनि सूत वृंद मागधगण विरद वदत जै जै जै जैत कैटभारे ॥ विकसत कमलावलीय चले प्रफंद चंचरीक गुंजत कल कोमल ध्वनि त्यागि कंज न्यारे। मानौ वैराग पाइ सकल कुलग्रह विहाइ प्रेमवंत फिरत भृत्य गुनत गुन तिहारे। सुनत वचन प्रियरसाल जागे अतिशय दयाल भागे जंजाल विपुल दुख कदम टारे। त्यागे भ्रमफंदद्वंद निरखिके मुखारविंद सूरदास अति अनंद मेटे मद भारे* ॥ १७९ ॥



कृष्ण ने यशोदा से कहा। राग गौरी

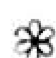
मैया मोहि दाऊ बहुत खिझायो। मो सों कहत मोल को लीनो तू यशुमति कब जायो ॥ कहा करौं एहि रिस के मारे खेलन हौं नहिं जातु। पुनि पुनि कहत कौन है माता को है तुमरो तातु ॥ गोरे नंद यशोदा गोरी तुम कत श्याम शरीर। चुटुकी दै दै हँसत ग्वाल सब सिखै देत बलवीर ॥ तू मोही को मारन सीखी दाउहि कबहुँ न खीझै। मोहन को मुख रिस

---

* तुलसीदास ने रामचन्द्र का जगाना इस प्रकार वर्णन किया है—

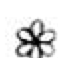
भोर भयेउ जागहु रघुनंदन। गत व्यलीक भक्तन उर चंदन ॥
शशिकर हीन छीन द्युति तारे। तमचुर मुखर सुनहु मेरे प्यारे ॥
विकसित कञ्ज कुमुद बिलखाने। लै पराग रस मधुप उड़ाने ॥
अनुज सखा सब बोलन आये। वन्दित अति पुनीत गुण गाये ॥
मनभावतो कलेवो कीजे। तुलसिदास कहँ जूठन दीजे ॥

समेत लखि यशुमति सुनि सुनि रीझै ॥ सुनहु कान्ह वलभद्र चबाई जनमत ही को धूत। सूर श्याम-मो गोधन की सौं हौं माता तू पूत ॥ १८८ ॥



राग गौरी

खेलन अब मेरी जात बलैया। जबहि मोहिं देखत लरिकन सँग तबहिं खिझत बल भैया ॥ मो सों कहत तात वसुदेव को देवकी तेरी मैया। मोल लियो कछु दे वसुदेव को करि करि जतन बढ़ैया ॥ अब बाबा कहि कहत नंद सों यशुमति को कहै मैया। ऐसेही कहि सब मोहिं खिझावत तब उठि चलो खिसैया ॥ पाछे नंद सुनत हैं ठाढ़े हँसत हँसत उर लैया। सूर नंद बलिरामहि धिरयो सुनि मन हरष कन्हैया ॥ १९० ॥

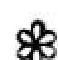


(एक गोपी ने कहा)

राग रामकली

मो देखत यशुमति तेरे ढोटा अबहीं माटी खाई। इह सुनि कै रिस करि उठि धाई बाँह पकरि लै आई ॥ इक कर सों भुज गहि गाढ़े करि इक कर लीने साँटी। मारति हौं तोहिं अबहिं कन्हैया वेग न उगलो माटी ॥ ब्रज लरिका सब तेरे आगे झूठी कहत बनाई। मेरे कहे नहीं तू मानत दिखरावौं मुख बाई ॥ अखिल ब्रह्मांड खंड की महिमा देखरायो मुख

माही। सिंधु सुमेरु नदी वन पर्वत चकृत भई मन माही॥ कर ते साँटि गिरत नहिं जानी भुजा छाँड़ि अकुलानी। सूर कहै यशुमति मुख मूँदहु बलि गइ शारँगपानी॥ २२८॥



अथ माखनचोरी प्रथम*। राग गौरी

मैया री मोहिं माखन भावै। मधु मेवा पकवान मिठाई मोहिं नहीं रुचि आवै॥ ब्रज युवती इक पाछे ठाढ़ी सुनति श्याम की बात। मन मन कहति कबहुँ मेरे घर देखों माखन खात॥ बैठे जाइ मथनियाँ के ढिग मैं तब रही छिपानी। सूरदास प्रभु अंतर्यामी ग्वालि मनहिं की जानी॥ २३३॥



राग गौरी

गए श्याम तिहि ग्वालिनि के घर। देख्यो जाइ द्वार नहिं कोई इत उत चितै चले घर भीतर॥ हरि आवत गोपी तब जान्यो आपुन रही छिपाई। सूने सदन मथनिया के ढिग बैठि रहे अरगाई॥ माखन भरी कमोरी देखी लै लै लागे खान। चितै रहत मणि खंभ छाँहतन तासों करत सयान॥ प्रथम आजु मैं चोरी आयो भल्यो बन्यो है संगु। आपुन खात प्रति-

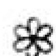
* सूरदास ने अनेक विषयों का दो-दो तीन-तीन और कहीं-कहीं तो तीन से भी अधिक बार वर्णन किया है। इस संक्षिप्त पुस्तक में एक ही वर्णन से अवतरण लिये हैं। माखनचोरी प्रथम वर्णन से ली है।

बिंब खवावत गिरत कहत का रंगु ॥ जो चाहो सब देउँ कमोरी अति मीठो कत डारत । तुमहि देखि मैं अति सुख पायो तुम जिय कहा विचारत ॥ सुनि सुनि बातैं श्यामसुँदर की उमँगि हँसी ब्रजनारी । सूरदास प्रभु निरखि ग्वालि मुख तब भजि चले मुरारी ॥ २३४ ॥



राग गौरी

फूली फिरति ग्वालि मन में री । पूछति सखी परस्पर बातैं पायो परयो कछु कहै तैं री ॥ पुलकित रोम रोम गदगद मुख वाणी कहत न आवै । ऐसो कहा आहि सो सखी री मो को क्यों न सुनावै ॥ तनु न्यारो जो एक हमारो हम तुम एकै रूप । सूरदास कहै ग्वालि सखी सों देख्यो रूप अनूप ॥



राग गूजरी

आजु सखी मणि खंभ निकट हरि जहाँ गोरस को गोरी । निज प्रतिबिंब सिखावत ज्यों शिशु प्रगट करै जिनि चोरी ॥ आध विभाग आजु ते हम तुम भली बनी हैं जोरी । माखन खाहु कितहि डारतहो छाँड़ि देहु मति भोरी ॥ हिसा न लेहु सबै चाहत हौ इहै बात है थोरी । मीठो अधिक परम रुचि लागै देहौं का कमोरी ॥ प्रेम उमँगि धीरज न रह्यो तब प्रगट हँसी

मुख मोरी। सूरदास प्रभु सकुचि निरखि मुख भजे कुंज गहि खोरी ॥ २३५ ॥



राग रामकली

करत हरि ग्वालन संग विचार। चोरि माखन खाहु सब मिलि करौ बालबिहार ॥ यह सुनत सब सखा हर्ष भली कही कन्हाई। हँसत परस्पर देत तारी सौंह करि नँदराई ॥ कहाँ तुम यह बुद्धि पाई श्याम चतुर सुजान। सूर प्रभु मिलि ग्वाल बालक करत हैं अनुमान ॥ २३७ ॥



राग गौरी

सखा सहित गए माखन चोरी। देख्यो श्याम गवाक्ष पंथ है गोपी एक मथति दधि भोरी ॥ हेरि मथानी धरी माटते माखन हो उतरात। आपुन गई कमोरी माँगन हरि पाईहू घात ॥ पैठे सखन सहित घर सूने माखन दधि सब खाई। छूँछी छाँड़ि मटुकिया दधि की हँसि सब बाहिर आई ॥ आइ गई कर लिये मटुकिया घर ते निकरे ग्वाल। माखन कर दधि मुख लपटानो देखि रही नँदलाल ॥ कहँ आजु ब्रज बालक संग लै माखन कर दधि मुख लपटानो। देखत ते उठि भजे सखा एक इहि घर आइ पिछानो ॥ भुज गहि लियो कान्ह इक बालक निकरे ब्रज की खोरि। सूरदास प्रभु ठगि रही ग्वालिनि मनु हरि लियो अजोरि ॥ २३८ ॥

(गोपी ने यशोदा से शिकायत की—)

राग गौरी

जो तुम सुनहु यशोदा गोरी। नँदनंदन मेरे मंदिर में आजु करन गए चोरी॥ हौं भई आनि अचानक ठाढ़ो कह्यो भवन में को री। रहे छपाइ सकुचि रंचक ह्वै भई सहज मति भोरी॥ जब गहि बाँह कुलाहल कीनो तब गहि चरण निहोरी। लागे लै नैनन भरि आँसू तब मैं कान न तोरी॥ मोहिं भयो माखन को संशय रीती देखि कमोरी। सूरदास प्रभु देत दिनहुँ दिन ऐसी लरि कस लेरी॥ २५२॥



राग बिलावल

भाजि गये मेरे भाजन फोरी। लरिका सहस एक संग लीने नाचत फिरत साँकरी खोरी॥ माखन खाइ जगाइ बालकन्ह बनचर सहित बछरुवा छोरी। सकुच न करत फागु सी खेलत गारी देत हँसत मुख मोरी॥ बात कहौं तेरे ढोंटा की सब ब्रज बाँध्यो प्रेम की डोरी। टोना सी पढ़ि नावत शिर पर जो भावत सो लेत अजोरी॥ आपु खाइ तौ सब हम मानैं औरन देत सिकहरो तोरी। सूर सुतहि देखो नँदरानी अब तोरत चोली बंद जोरी॥ २८६॥



राग बिलावल

तेरो लाल मेरो माखन खायो। दुपहर दिवस जानि घर सूनो ढूँढ़ि ढँढोरि आपही आयो॥ खोल किवार सूने मंदिर में दूध दही सब सखन खवायो। सीके काढ़ि खाट चढ़ि मोहन कछु खायो कछु लै ढरकायो॥ दिन प्रति हानि होत गोरस की यह ढोटा कौने ढँग लायो। सूरदास कहती ब्रजनारी पूत अनोखो जायो॥ २९३॥



राग रामकली

माखन खात पराये घर को। नितप्रति सहस मथानी मथिये मेघ शब्द दधि माठ घमर को॥ कितने अहीर जियत हैं मेरे गृह दधि लै मथ बेंचत मही महर को। नव लख धेनु दुहत हैं नित प्रति बड़ो भाग्य है नंद महर को॥ ताके पूत कहावत हौ जी चोरी करत उघारत फरको। सूर श्याम कितनो तुम खैहौ दधि माखन मेरे जहाँ तहाँ ढरको॥ २९४॥

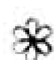


(पर कृष्ण की माखन चुराने की बान नहीं छूटी। गोपियों ने फिर यशोदा से शिकायत की। यशोदा क्रोध करके बोली—)

हरि दांवरि बंधाए। राग गौरी

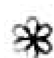
ऐसी रिस में जो धरि पाऊँ। कैसे हाल करौं धरि हरि के तुमको प्रगट देखाऊँ॥ सटिया लिये हाथ नँदरानी थरथरात

रिस गात्त। मारे विना आजु जो छाँड़ों लागै मेरे तात ॥ यहि अंतर ग्वालिनि इक औरै धरे बाँह हरि ल्यावति। भली महरि सूधा सुत जायो चोली हार बतावति ॥ सिर में रिस अतिही उपजाई जानि जननि अभिलाष। सूर श्याम भुज गहे यशोदा अव बाँधौं कहि माप ॥ ३०० ॥*



राग सोरठ

यशुमति रिस करि करि रजु करपै। सुत हित क्रोध देखि माता के मनही मन हरि हरपै ॥ उफनत क्षीर जननि करि व्याकुल इहि विधि भुजा छुड़ायो। भाजन फोरि दही सब डार्‍यो माखन मुँह लपटायो ॥ लै आई जेवरी अब बाँधों गरब जानि न बँधायो। आँगुर द्वै घटि होत सबनि सों पुनि पुनि और मँगायो ॥ नारद शाप भये यमलार्ज्जुन इनको अव जो उधारौं†। सूरदास प्रभु कहत भक्त हित युग युग मैं तनु धारौं ॥ ३०१ ॥



कृष्ण का उलूखल बन्धन। राग सारंग

बाँधौं आजु कौन तोहि छोरै। बहुत लँगरई कीनी मो सों भुज गहि रजु ऊखल सों जोरै ॥ जननी अति रिस जानि

---

* श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्द्ध, अध्याय ९।

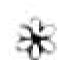
† यमलार्जुन की कथा के लिये देखिए टिप्पणी + पृष्ठ १४।

बँधायो चितै वदन लोचन जल ढोरै। यह सुनि ब्रज युवती उठि धाईं कहत कान्ह अब क्यों नहिं चोरै॥ ऊखल सों गहि बांधि यशोदा मारन को साँटी कर तोरै। साँटी पेखि ग्वालिनि पछितानी बिकल भई जहँ जहँ मुख मोरै॥ सुनहु महरि ऐसी न बूझिये सुत बाँधत माखन दधि थोरै। सूर श्याम को बहुत सतायो चूक परी हमतें यह भोरै॥ ३०५॥



(यशोदा ने कहा—) राग आसावरी

जाहु चली अपने अपने घर। तुमहीं सब मिलि ढीठ करायो अब आई बँधन छोरन वर॥ मोहिं अपने बाबा की सौंहै कान्है अब न पत्याऊँ। भवन जाहु अपने अपने सब लागति हौं मैं पाऊँ॥ मोको जिनि बरजो युवती कोउ देखौं हरि के ख्याल। सूर श्याम सों कहति यशोदा बड़े नंद के लाल॥ ३०६॥



(फिर गोपियों ने कहा—) राग सोरठ

यशोदा तेरो मुख हरि जोवै। कमल नयन हरि हिचिकिन रोवै बंधन छोरि जु सोवै॥ जो तेरो सुत खरोई अचगरो तऊ कोखि को जायो। कहा भयो जो घर के ढोटा चोरी माखन खायो॥ कोरी मटुकी दही जमायो जामन पूजन पायो। तेहि घर देव पितर काहेको जा घर कान्ह रुवायो॥ जाकर नाम लेत भ्रम छूटै कर्म फंद सब काटै। सो हरि प्रेम जेवरी बाँध्यो जननि

साँट लै डाटै ।। दुखित जानि दोउ सुत कुबेर के ता हित आपु बँधायो । सूरदास प्रभु भक्त हेतुही देह धारि तहाँ आयो ।।३०७।।



राग सारंग

कबके बाँधे ऊखल दाम । कमल नयन बाहिर करि राखे तू बैठी सुखधाम ।। हौं निर्दयी दया कछु नाहीं लागि गई गृह काम । देखि क्षुधा ते मुख कुम्हिलानो अति कोमल तनु श्याम ।। छोरहु वेग बड़ी बिरियाँ भई बीत गये युग याम । तेरे त्रास निकट नहिं आवत बोलि सकत नहिं राम ।। जेहि कारण भुज आप बँधाये वचन कियो ऋषि ताम । ता दिन ते यह प्रगट सूर प्रभु दामोदर सो नाम ।। ३२० ।।



बलराम वचन । राग बिलावल

काहेको यशोदा मैया त्रास्यो है बारो कन्हैया मोहन मेरो भैया कितनो दधि पियतौ । हौं तो न भयो घर साँटी दीनी सर सर बांध्यो कर जेवरी नीके कैसे देखि जियतौ ।। गोपाल तौ सबनि प्यारो ताकों तैं कीनो प्रहारो जाको है मोको गारो अजुगुत कियतौ । ठाढ़ो बांधे बलवीर नैनौं से ढरतु नीर हरिजू ते प्यारो तोको दूध दही घियतौ ।। सूरदास गिरिधरन धरनीधर हलधर यह छबि सदाई रहौ मेरे जियतौ ।। ३३२ ।।



राग धनाश्री

तबहिं श्याम इक बुद्धि उपाई। युवती गईं घरनि सब अपने गृह कारज जननी अटकाई॥ आपुन गये यमलार्ज्जुन के तरु परशत पात उठे झहराई। दिये गिराय धरणि दोऊ तरु तब द्वै सुत प्रगटे आई॥ दोउ कर जोरि करत दोउ अस्तुति चारि भुजा तिन्हैं प्रगट देखाई। सूर धन्य व्रज जन्म लियो हरि धरणी की आपदा नशाई॥ ३४२॥



नलकूबरकृत स्तुति। राग बिलावल

धनि गोविंद धनि गोकुल आये। धनि धनि नंद धन्य निशिवासर धनि यशुमति जिन श्रीधर जाये॥ धनि धनि बाल केलि यमुना धनि धनि वन सुरभी वृंद चराये। धनि यह समैा धन्य व्रजवासी धनि धनि वेणु मधुर ध्वनि गाये॥ धनि धनि अनख उरहनो धनि धनि धनि माखन धनि मोहन खाए। धन्य सूर ऊखल तरु गोविंद हमहि हेत धनि भुजा बँधाए॥ ३४३॥



राग सोरठ

धन्य धन्य ऋषि शाप हमारे। आदि अनादि निगम नहि जानत ते हरि प्रकट देह व्रज धारे॥ धन्य नंद धनि मातु यशोदा धनि आँगन में खेलनवारे। धन्य श्याम धनि दाम

बँधाए धनि ऊखल धनि माखन प्यारे ॥ दीनबंधु करुणानिधि हहु प्रभु राखि लेहु हम शरण तिहारे । सूर श्याम के चरण शीश धरि अस्तुति करि निज धाम सिधारे ॥ ३४४ ॥



राग बिलावल

यह जिय जानि गोपाल बँधाये । शाप दग्ध द्वै सुत कुवेर के आनि भये तरु युगल सुहाये ॥ व्याज रुदन लोचन जल ढारत ऊखल दाम सहित चलि आये । विटप भंजि यमलार्ज्जुन तारे करि अस्तुति गोविंद रिझाये ॥ तुम बिनु कौन दीन खलु तारै निर्गुण सगुण रूप धरि आये । सूरदास श्याम गुण गावत हर्षवन्त निज पुरी सिधाये ॥ ३४५ ॥



राग रामकली

तरु दोउ धरणि परे भहराइ । जर सहित अरराइ कै आघात शब्द सुनाइ ॥ भए चकृत लोग सब व्रज के रहे सकुचि डराइ । कोऊ रहे अकाश देखत कोऊ रहे शिरनाइ ॥ घरिक लौं जकि रहे जहाँ तहाँ देह गति बिसराइ । निरखि यशुमति अजिर देखै बँधे नहिं कन्हाइ ॥ वृक्ष दोउ महि परे देखे महरि कीन्ह पुकार । अबहिं आँगन छोडि आई चप्यो तरु के डार ॥ मैं अभागिनि बाँधि राखे नंद प्राणअधार । शोर सुनि नंद दौरि आये विकल गोपी ग्वार ॥ देखि तरु सब अति

डराने हैं बड़े विस्तार। गिरे कैसे बड़ो अचरज नेकु नहीं बयार॥ दुहूँ तरु बिच श्याम बैठे रहे ऊखल लागि*। भुजा छोरि उठाय लीने महरि हैं बड़े भागि॥ निरखि युवती अंग हरि के चोट जनि कहुँ लागि। कबहुँ बाँधति कबहुँ मारति महरि बड़ो अभागि॥ नयन जल भरि ढारि यशुमति सुतहि कंठ लगाइ। जरहु रिस जिन तुमहिं बाँध्यो लागै मोहिं बलाइ॥ नन्द मोहिं कहा कहैंगे देखि तरु दोउ आइ। मैं मरौं तुम कुशल रहौ दोऊ श्याम हलधर भाइ॥ आइ घर जो नन्द देखे तरु गिरे दोउ भारि। बाँधि राखति सुतहि मेरे देत महरिहि गारि॥ तात कहि तब श्याम दौरे महर लियो अंकवारी। कैसे उबरे कृष्ण तरु ते सूर ने बलिहारी॥ ३४६॥



राग नट

मेरे मोहन हौं तुम पर वारी। कंठ लगाइ लिये मुख चूमत सुंदर श्याम विहारी॥ काहे को दाम ऊखल सों बाँध्यो है कैसी महतारी। अतिहि उतंग बयारि न लागत क्यों टूटे दोऊ तरु भारी॥ बारंबार विचारि यशोदा यह लीला अवतारी। सूरदास स्वामी की महिमा का पर जात बिचारी॥३४७॥

---

* यमलार्जुन शाप और उद्धार के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्द्ध अध्याय १०। भागवत में नलकूबर ने कृष्ण की जो स्तुति की है वह दूसरे ढङ्ग की है।

कृष्ण का जगाना । राग बिलावल

जागहु जागहु नंदकुमार । रवि बहु चढ़े रैनि सब निघटी उघरे सकल किवार ॥ वारि वारि जलपियति यशोदा उठु मेरे प्राण अधार । घर घर गोपी दह्यो विलोवहिं कर कंकन झन-कार ॥ साँझ दुहन तुम कह्यो गाइको ताते होत अवार । सूर-दास प्रभु उठे सुनतही लीला अगम अपार ॥ ३६६ ॥

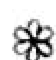


राग सारङ्ग

जोरति छाक प्रेम सों मैया । ग्वालन बोलि लए अध जेंवत उठि दौरे दोउ भैया ॥ तबहीं ते भोजन नहिं कीनो चाहत दियो पठाई । भूखे भए आजु दोउ भैया आपहि बोलि मगाई ॥

कृष्ण कृष्ण महायोगिंस्त्वमाद्यः पुरुषः परः ।
व्यक्ताव्यक्तमिदं विश्वं रूपतो ब्राह्मणा विदुः ॥२९॥
त्वमेकः सर्वभूतानां देहास्वात्मेन्द्रियेश्वरः ।
त्वमेव कालो भगवा न्विष्णुरव्यय ईश्वरः ॥३०॥
त्वं महान्प्रकृतिः सूक्ष्मा रजःसत्वतमोमयी ।
त्वमेव पुरुषोऽध्यक्तः सर्वक्षेत्रविकारवित् ॥ ३१ ॥
यस्यावतारा ज्ञायन्ते शरीरेष्वशरीरिणः ।
तैस्तैरतुल्यातिशयैर्वीर्यैर्देहिष्वसंगतैः ॥ ३४ ॥
स भवान्सर्वलोकस्य भवाय विभवाय च ।
अवतीर्णोंऽशभागेन साम्प्रतं पतिराशिषाम् ॥ ३५ ॥
नमः परमकल्याण नमः परममङ्गल ।
वासुदेवाय शान्ताय यदूनां पतये नमः ॥ ३६ ॥

सद माखन साजो दधि मीठो मधु मेवा पकवान। सूर श्याम को छाक पठावति कहति ग्वारि सों जान ॥ ३६३ ॥



(यशोदा ने)

राग सारङ्ग

घर ही की यक ग्वारि बोलाई। छाक समग्री सबै जोरि कै वा के कर दै तुरत पठाई ॥ कह्यो ताहि वृन्दावन जैये तू जानति सब प्रकृति कन्हाई। प्रेम सहित लै चली छाक वह कहाँ वे हैं भूखे दोउ भाई ॥ तुरत जाइ वृन्दावन पहुँची ग्वाल बाल कहुँ कोउ न बताई। सूर श्याम को टेरति डोलति कत हौ लाल छाक मैं ल्याई ॥ ३६४ ॥



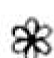
राग कान्हरो

फिरत बन बन बृन्दावन बंशीवट संकेत बट नट नागर कटि काछे खौरि केसरि की किये। पीत बसन चंदन तिलक मोर मुकुट कुंडल श्याम घन यह छबि लिये ॥ तनु त्रिभंग सुगंध अंग निरखि लज्जत रति अनंग ग्वाल बाल लिये संग प्रमुदित सब हिये। सूर श्याम अति सुजान मुरली ध्वनि करत गान ब्रजजन मन को सुख दिये ॥ ३६७ ॥

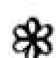


राग कान्हरो

हरि को टेरति फिरति गुआरि। आई लेहु तुम छाक आपनी बालक बल बनवारि॥ आजु कलेऊ करत बन्यो नहिं गैयन संग उठि धाए। तुम कारण बन छाँक यशोदा मेरेहि हाथ पठाए॥ यह बानी जब सुनी कन्हैया दौरि गए तेहि काज। सूर श्याम कह्यो नीके आइ भूख बहुत ही आजु॥ ३९८॥

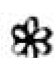


बहुत फिरी तुम काज कन्हाई। टेरि टेरि मैं भई बावरी दोउ भैया तुम रहे लुकाई॥ जे सब ग्वाल गए ब्रज घर को तिन सों कहि तुम छाक मँगाई। लवनी दधि मिष्टान्न जोरि कै यशुमति मेरे हाथ पठाई॥ ऐसी भूख माँझ तू ल्याई तेरी केहि विधि करों बड़ाई। सूर श्याम सब सखन पुकारत आवहु क्यों न छाँक है आई॥ ३९९॥



राग सारङ्ग

गिरि पर चढ़ि गिरि वर धर टेरे। अहो सुबल श्रीदामा भैया ल्यावहु गाइ खरिक के नेरे॥ आई छाँक अबार भई है नैसुकु धैया पिअहु सवेरे। सूरदास प्रभु बैठि शिलनि पर भोजन करैं ग्वाल चहुँ फेरे॥ ४००॥



राग सारङ्ग

ग्वाल मंडली में बैठे हैं मोहन बड़ की छहियां दुपहरी की बिरियाँ संग लीने। एक मथत दोहनी दूध एक बँटावत फल चवैने॥ एक निकरि हरि झगरि लेत ऐसे बनि आपनी कमर के आसन कीने। जेंवत हैं अरु गावत कान्ह सारंगी की तान लेत सखनि के मध्य बिराजत छांक लेत कर छीने॥ सूरदास प्रभु को मुख निरखत सुर रीझि हेरें सुमननि वरषत सभीने॥४०४॥



राग सारङ्ग

ग्वालन करते कौर छड़ावत। जूंठो लेत सबन के मुख को अपने मुख ले नावत॥ षटरसके पकवान धरे सब ता में नहिं रुचि पावत। हाहा करि करि मांगि लेत है कहत मोहि अति भावत॥ यह महिमा एई पै जानें जाते आप बँधावत। सूर श्याम स्वपने नहिं दरशत मुनिजन ध्यान लगावत॥ ४०५॥



राग सारङ्ग

ब्रजवासी पटतर कोउ नाहिं। ब्रह्म सनक शिव ध्यान न पावत इनकी जूठनि लैलै खाहिं॥ धन्य नंद धनि जननि यशोदा धन्य जहां अवतार कन्हाई। धन्य धन्य वृन्दावन के तरु जहां विहरत त्रिभुवन के राई॥ हलधर कह्यो छांक जेंवत मँग मीठो

लगत सराहत जाई। सूरदास प्रभु विश्वंभर हैं ते ग्वालन के कौर अघाई ॥ ४०६ ॥



चकई भौंरा खेलन समय। राग बिलावल

दै मैया भँवरा चकडोरी। जाइ लेहु आरे पर राखो काल्हि मोल ले राखै कोरी ॥ लै आये हँसि श्याम तुरतही देखि रहे रँग रँग बहु डोरी। मैया बिना और को राखै बार बार हरि करत निहोरी ॥ बोलि लिए सब सखा संग के खेलत श्याम नंद की पोरी। तैसेइ हरि तैसेइ सब बालक कर भँवरा चकरिनि की जोरी ॥ देखति जननि यशोदा यह छवि बिहँसत बार बार मुख मोरी। सूरदास प्रभु हँसि हँसि खेलत ब्रजवनिता तृण डारत तोरी ॥ ४५८ ॥



(श्रीकृष्ण बड़े होने लगे। गोपियां उनके रूप पर मोहित होने लगीं।)

राग कान्हरो

मेरे हियरे माँझ लागै मनमोहन लै गयो मन चोरी। अबहीं इहि मारग ह्वै निकसे छवि निरखत तृण तोरी ॥ मोर मुकुट श्रवणन मणि कुंडल उर बनमाला पीत पिछौरी। दशन चमक अधरन अरुणाई देखत परी ठगोरी ॥ ब्रज लरिकन संग खेलत डोलत हाथ लिये फेरत चकडोरी। सूर श्याम चितवत गए मो तन तन मन लिये अजोरी ॥ ४६० ॥

श्रीराधाकृष्णजी का प्रथम मिलाप । राग टोडी

खेलन हरि निकसे व्रजखोरी । कटि कछनी पीतांबर ओढ़े हाथ लिए भौंरा चकडोरी ॥ मोर मुकुट कुंडल श्रवणन वर दशन दमक दामिनि छवि थोरी । गए श्याम रवितनया के तट अंग लसति चंदन की खोरी ॥ औचक ही देखी तहाँ राधा नयन विशाल भाल दिए रोरी । नील वसन फरिया कटि पहिरे बेनी पीठि रुचिर झकझोरी ॥ संग लरिकिनी चलि इत आवति दिन थोरी अति छवि जन गोरी । सूर श्याम देखत ही रीझे नैन नैन मिलि परी ठगोरी ॥ ४६२ ॥



राग टोडी

बूझत श्याम कौन तू गोरी । कहाँ रहति काकी है बेटी देखी नहीं कहूँ व्रज खोरी ॥ काहे को हम व्रजतन आवति खेलति रहति आपनी पौरी । सुनति रहति श्रवणनि नँद ढोटा करत रहत माखन दधि चोरी ॥ तुम्हरो कहा चोरि हम लैहैं खेलन चलौ संग मिलि जोरी । सूरदास प्रभु रसिक शिरोमणि बातन भुरइ राधिका भोरी ॥ ४६३ ॥



राग धनाश्री

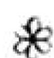
प्रथम सनेह दुहुँन मन जान्यो । सैन सैन कीनी सब बातैं गुप्त प्रीति शिशुता प्रगटान्यो ॥ खेलन कबहुँ हमारे आवहु

नंदसदन ब्रज गाँउ। द्वारे आइ टेरि मोहिं लीजो कान्ह है मेरो नाँउ ॥ जो कहिये घर दूरि तुम्हारो बोलत सुनिये टेर। तुमहि सौंह वृषभानु बबा की प्रात साँझ एक फेर ॥ सूधी निपट देखियत तुमकौं ताते करियत साथ। सूर श्याम नागर उत नागरि राधा दोउ मिलि गाथ ॥ ४६४ ॥



राग नट

सैननि नागरी समुझाई। खरिक आवहु दोहनी लै यहै मिस छल पाई ॥ गाइ गनती करन जैहैं मोहि लै नँदराइ। बोलि बचन प्रमाण कीने दुहुँन आतुरताइ ॥ कनक वदन सुढार सुंदरि सकुचि मुख मुसुकाइ। श्याम प्यारी नैन राचे अति विशाल चलाइ ॥ गुप्त प्रीति जु प्रगट कीन्ही हृदय दुहुँन छिपाइ। सूर प्रभु के वचन सुनि सुनि रही कुँवरि लजाइ ॥ ४६५ ॥



राग सारङ्ग

गइ वृषभानुसुता अपने घर। संग सखी सों कहति चली यह को जैहै खेलन इनके दुर ॥ वड़ी बेर भइ यमुना आए खीझति ह्वैहै मैया। वचन कहति मुख हृदय प्रेम सुख मन हरि लियो कन्हैया ॥ माता कही कहाँ हुती प्यारी कहाँ अबार लगाई। सूरदास तब कहति राधिका खरिक देखि मैं आई ॥ ४६६ ॥

राग रामकली

नागरि मनहिं गई अरुझाइ। अति विरह तनु भई व्याकुल घर न नेक सुहाइ ॥ श्याम सुंदर मदनमोहन मोहनी सी लाइ। चित्त चंचल कुँवरि राधा खान पान भुलाइ ॥ कबहुँ विलपति कबहुँ विहँसति सकुचि बहुरि लजाइ। मात पितु को त्रास मानति मन बिना भई बाइ ॥ जननि सों दोहनी मांगति बेगि दे री माइ। सुर प्रभु को खरिक मिलिहौं गए मोहिं बोलाइ ॥ ४६७ ॥



राग धनाश्री

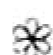
मोहि दोहनी दै री मैया। खरिक मोहि अबहीं ह्वै आई अहिर दुहत अपनी सब गैया ॥ ग्वाल दुहत तब गाइ हमारी जब अपनी दुहि लेत। घरिक मोहिं लगिहै खरिका में तू आवै जनि हेत। शोचति चली कुँवर घर ही ते खरिका गइ समुहाइ। कब देखौं वह मोहन मूरति जिन मन लियो चुराइ ॥ देखो जाइ तहाँ हरि नाहीं चकृत भई सुकुमारि ॥ कबहूँ इत कबहूँ उत डोलत लागी प्रीति खुम्हारि ॥ नंद लिए आवत हरि देखे तब पायो विश्राम। सूरदास प्रभु अंतर्यामी कीन्हों पूरण काम ॥४६८॥



राग धनाश्री

नंद गये खरिकै हरि लीन्हे। देखि तहा राधिका ठाढ़ी श्याम बुलाइ लई तहँ चीन्हे ॥ महर कह्यो खेलो तुम दोऊ दूरि

कहूँ जनि जैहो। गनती करत ग्वाल गैयन की मुहिं नियरे तुम रहियो ॥ सुनु बेटी वृषभानु महर की कान्हहि लिये खिलाइ। सूर श्याम को देखे रहिहौ मारै जनि कोउ गाइ ॥ ४६६ ॥



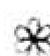
राग नट

नंद बबा की बात सुनो हरि। मोहिं छाँड़ि कै कबहुँ जाहुगे ल्याऊँगी तुमको धरि ॥ भली भई तुम्हैं सौंपि गये मोहिं जान न देहौं तुमको। बाँह तुम्हारी नेकु न छड़िहौं महरि खीझिहैं हमको ॥ मेरी बाँहैं छाँड़ि दे राधा करत उपर फट बातैं। सूर श्याम नागर नागरि सों करत प्रेम की घातैं ॥ ४७० ॥



राग नट

नीवी ललित गही यदुराई। जबहिं सरोज धरो श्रीफल पर तब यशुमति गई आई ॥ तत्क्षण रुदन करत मनमोहन मन में बुधि उपजाई। देखो ढीठ देति नहिं माता राखी गेंद चुराई ॥ काहे को झकझोरत नोखे चलहु न देउ बताई। देखि विनोद बाल सुत को तब महरि चली मुसिकाई ॥ सूरदास के प्रभु की लीला को जानै इहि भाई ॥ ४७१ ॥



राग धनाश्री

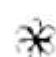
बातन में लइ राधा लाइ। चलहु जैयं विपिन वृन्दा कहत श्याम बुझाइ ॥ जब जहाँ तन भेष धारौं तहाँ तुम हित जाइ।

नेकहू नहिं करौं अंतर निगम भेद न पाइ ।। तुव परशि तन ताप मेटौं काम द्वंद्व बहाइ। चतुर नागरि हँसि रही सुनि चन्द्र वदन नवाइ ।। मदनमोहन भाव जान्यो गगनमेघ छिपाइ। श्याम श्यामा गुप्त लीला सूर क्यों कहै गाइ ।। ४७२ ।।



अथ सुख विलास। राग गौड मलार

गगन गरजि घहराइ जुरी घटा कारी। पौन झकझोर चपला चमकि चहूँ ओर सुवन तन चितै नंद डरत भारी ।। कह्यो वृषभानु की कुँवरि सों बोलि कै राधिका कान्ह घर लियें जा री। दोऊ घर जाहु संग नभ भयो श्याम रंग कुँवर गह्यो वृषभान वारी। गये वन घन ओर नवल नँदनंदकिशोर नवल राधा नए कुंज भारी। अंग पुलकित भए मदन तिन तन जए सूर प्रभु श्याम श्यामविहारी ।। ४७३ ।।



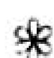
राग कामोद

नयो नेहु नयो गेहु नयो रस नवल कुँवरि वृषभानु किशोरी। नयो पीतांबर नई चूनरी नई नई बूँदनि भीजति गोरी ।। नए कुंज अति पुंज नए द्रुम सुभग यमुन जल पवन हिलोरी। सूरदास प्रभु नवलरस विलसत नवल राधिका यौवन भोरी ।। ४७४ ।।



राग कान्हरा

नवल गुपाल नवेली राधा नये प्रेमरस पागे। नव तरुवर बिहार दोऊ क्रीडत आपु आपु अनुरागे॥ शोभित शिथिल वसन मनमोहन सुखवत सुख के बागे। मानहुँ बुझी मदन की ज्वाला बहुरि प्रजा नर लागे। कबहुँक बैठि अंश भुज धरि कै पीक कपोलनि दागे। अति रसराशि लुटावत लूटत लालच लगे सभागे॥ मानहुँ सूर कल्पद्रुम की निधि लै उतरी फल आगे। नहि छूटति रति रुचिर भामिनी ता सुख में दोउ पागे॥४७५॥



राग मलार

उतारत है कंठनि ते हार। हरिहर मिलत होत है अंतर यह मन कियो विचार॥ भुजा वाम पर कर छवि लागति उपमा अंत न पार। मनहु कमल दल कमल मध्य ते यह अद्भुत आकार॥ चुंवत अंग परस्पर जनु युग चन्द करत हितवार। रसन दशन भरि चापि चतुर अति करत रंग विस्तार॥ गुण-सागर अरु रससागर निधि मानत सुख व्यवहार। सूर श्याम श्यामा नवसर मिलि रीझे नंदकुमार॥ ४७६ ॥



राग कान्हरा

नवल किशोर नवल नागरिया। अपनी भुजा श्याम भुज ऊपर श्याम भुजा अपने उर धरिया॥ क्रीड़ा करत तमाल तरुन

तर श्यामा श्याम उमँगि रस भरिया। यों लपटाइ रहे उर उर ज्यों मरकत मणि कंचन में जरिया॥ उपमा काहि देउँ को लायक मन्मथ कोटि वारने करिया। सूरदास बलि बलि जोरी पर नंदकुँवर वृषभानु कुँवरिया॥ ४७७॥



श्रीराधिकाजी का यशोदा-गृह-गवन। राग आसावरी

को जानै हरि की चतुराई। नयन सैन संभाषन कीनो प्यारी की उर तपनि बुझाई॥ मन ही मन दोउ रीझि मगन भए अति आनँद उर में न समाई। कर पल्लव हरि भाव बतावत एक प्राण द्वै देह बनाई॥ जननी हृदय प्रेम उपजायो कहति कान्ह सों लेहु बुलाई। सूर श्याम गहि बाँह राधिका ल्यायं महरि निकट बैठाई॥ ४९०॥



राग सूहा

देखि महरि मनहीं जु सिहानी। बोलि लई बूझति नँदरानी कुँवर कहति मधुरं मधुवानी॥ ब्रज में तोहि कहूँ नहिं देखी कौन गाउँ है तेरो। भली करी कान्हहि गहि ल्याई भूल्यो तो सुत मेरो॥ नयन विशाल वदन अति सुंदर देखत नीकी छोटी। सूर महरि सविता सों विनवति भली श्याम की जोटी॥ ४९१॥



राग नट

नामु कहा है तेरो प्यारी। बेटी कौन महर की है तू कहि सु कौन तेरी महतारी ॥ धन्य कोख जिहि तोको राख्यो धन्य घरी जिहि तू अवतारी। धन्य पिता माता धनि तेरी छवि निरखति हरि की महतारी ॥ मैं बेटी वृषभानु महर की मैया तुमको जानति। यमुना तट बहु बार मिलन भयो तुम नाहिन पहिचानति ॥ ऐसी कहि वाको मैं जानति वै तो बड़ी छिनारि। महर बड़ो लंगर सब दिन को हँसत देति मुख गारि ॥ राधा बोलि उठी बाबा कछु तुमसों ढीठ्यो कीनी। ऐसे समरथ कब मैं देखे हँसि प्यारी उर लीनी ॥ महरि कुँवरि सों यह करि भाषति आउ करों तेरि चोटी। सूरदास हरषी नँदरानी कहति महरि हम जोटी ॥ ४९२ ॥



राग गौरी

यशुमति राधाकुँवरि सँवारति। बड़े बार श्रीवंत शीश के प्रेम सहित लै लै निरवारति ॥ माँग पारि बेनीहि सँवारति गूँथी सुंदर भाँति। गोरे भाल बिंदु चंदन मनों इंदु प्रात रवि कांति ॥ सारी चीर नई फरिया लै अपने हाथ बनाइ। अंचल सों मुख पोंछि अंग सब आपुहि लै पहिराइ ॥ तिल चाँवरी बतासे मेवा दिये कुँवरि की गोद। सूर श्याम राधा तन चितवत यशुमति मन मन मोद ॥ ४९३ ॥

अथ श्याम राधा खेलन समय । राग कल्याण

खेलो जाइ श्याम सँग राधा । यह सुनि कुँवरि हरष मन कीन्हों मिटि गई अंतर बाधा ॥ जननी निरखि चकि रही ठाढ़ी दंपति रूप अगाधा । देखति भाव दुहुँन को सोई जो चित करि अवराधा ॥ संग खेलत दोउ झगरन लागे शोभा बढ़ी अबाधा । मनहु तड़ित घन इंदु तरनि है बाल करत रस साधा ॥ निरखत विधि भ्रम भूलि परयो तब मन मग करत समाधा । सूरदास प्रभु और रच्यो विधि शोच भयो तनदाधा ॥ ॥ ४९४ ॥



राग केदारा

विधि के आन विधि को शोचु । निरखि छवि वृषभानु तनया सकल मम कृत पोचु ॥ रमा गौरी उर्वशी रति इंदिरा विभव समेति । तुल्य दिनमनि कहा सारँग नाहिं उपमा देति ॥ चरण निरखि निहारि नख छवि अजित देखैं तोकि । चित्त गुण महिमा न जानत धीर राखति रोकि ॥ सूर आन विरंचि विरचे भक्त निज अवतार । अबल के बल सबल देखि अधीन सकल शृंगार* ॥ ४९५ ॥

---

* व्रज नव तरुणि कदम्ब मुकुटमणि श्यामा आजु बनी ।
नख शिख लौं अंग अंग माधुरी मोहे श्याम धनी ॥
यों राजत कबरी गूँथित कच कनक कञ्जवदनी ।
चिकुर चन्द्रिकनि बीच अरध विधु मानहुँ ग्रसत फनी ॥
हितहरिवंश ।

राधा गृहगवन । राग नट

राधे महरि सों कहि चली । आनि खेलौ रहसि प्यारी श्याम तुम हिलमिली ॥ बोलि उठे गुपाल राधा सकुच जिय कत करति । मैं बुलाऊँ नहीं आवति जननि को कत डरति ॥ मैया यशोदा देखि तोको करति कितनो छोहु । सुनत हरि की बात प्यारी रही मुख तन जोहु ॥ हँसि चली वृषभानु तनया भई बहुत अबार । सूर प्रभु चित ते टरत नहिं गई घर के द्वार ॥४९६॥

❀

राग विहागरो

बूझति जननी कहाँ हुती प्यारी । किन तेरे भाल तिलक रचि दीन्हों किहि कच गूँदि माँग सिर पारी ॥ खेलत रही नंद के आँगन यशुमति कही कुँवरि ह्याँ आरी । तिल चावरी गोद करि दीनी फरिया दई फारि नव सारी ॥ मेरो नाउँ बूझि बाबा को तेरो बूझि दई हँसि गारी । मो तन चितै चितै ढोटा तन कछु सविता सों गोद पसारी ॥ यह सुनि कै वृषभानु मुदित चित हँसि हँसि बूझति बात दुलारी । सूर सुनत रससिंधु बढ़्यो अति दंपति मन में यहै विचारी ॥ ४९७ ॥

❀

राग गौरी

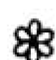
मेरे आगे महरि यशोदा मैया री तोहि गारी दीन्ही । बाको बात सबै मैं जानति वे जैसी तैसी मैं चीन्ही ॥ तोको कहि

पुनि कह्यो बबा को बड़ो धूर्त वृषभान। तब मैं कह्यो ठग्यो कब तुमको हँसि लागी लपटान॥ भली कही तैं मेरी बेटी लयो आपनो दाउ। जो मुहि कह्यौ सवै उनके गुण हँसि हँसि कहति सुभाउ॥ फेरि फेरि बूझति राधा सों सुनति हँसति सब नारि। सूरदास वृषभानु घरनि यशुमति को गावति गारि॥ ४९८॥



राग गौरी

कहत कान्ह जननी समुझाई। जहँ तहँ डारे रहत खिलौना राधा जनि लै जाइ चुराई॥ साँझ सवारे आवन लागी चितै रहति मुरली तन आइ। इनही में मेरो प्राण बसतु है तेरे भाए नेकु न माइ॥ राखि छपाइ कह्यो करि मेरो बलदाऊ को जनि पतिआइ। सूरदास यह कहति यशोदा को लैहै मोहि लगै बलाइ॥ ४९९॥



राग आसावरी

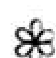
मेरे लाल के प्राण खिलौना ऐसो को लै जैहै री। नेक सुनन जो पैहैं ताको सो कैसे व्रज रैहै री॥ विन देखे तू कहा करैगी सो कैसे प्रगटैहै री। अजहुँ राखि उठाइ री मैया माँगे ते कहा दैहै री॥ आवत ही लै जैहै राधा पुनि पाछे पछितैहै री। सूरदास तव कहत यशोदा वहुरि श्याम विरुझैहै री॥ ५००॥



(कृष्ण और यशोदा की बातचीत)

अथ गोचारन । राग रामकली

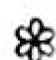
आज मैं गाइ चरावन जैहौं । वृन्दावन के भाँति भाँति फल अपने कर मैं खैहौं ।। ऐसी अबहिं कहौ जनि बारे देखौ अपनी भाँति । तनक तनक पाँइ चलिहौ कैसे आवत ह्वैहै राति ।। प्रात जात गैयाँ लै चारन घर आवत हैं साँझ । तुम्हरो कमल वदन कुम्हिलैहै रेंगत घामहिं माँझ ।। तेरी सौं मोहिं घामु न लागत भूख नहीं कछु नेक । सूरदास प्रभु कह्यो न मानत परे आपनी टेक ।। ५०६ ।।



(कृष्ण ने बहुत ज़िद की । सवेरे आंख बचाकर ग्वालों के साथ जाने लगे । यशोदा ने देख लिया और रोकना चाहा । पर वह न माने । तब यशोदा ने उनको जाने की आज्ञा दी और बलदाऊ के सुपुर्द कर दिया ।)

राग बिलावल

खेलत श्याम चले ग्वालन सँग । यशुमति कहति इहै घर आई देखौ हरि कीने जे जे रँग ।। प्रातहि ते लागे यहि ढँग अपनी टेक पर्‌यो है । देखौ जाइ आजु वन को सुख कहा परोसि धर्‌यो है ।। माखन रोटी अरु शीतल जल यशुमति दियो पठाइ । सूर नंद हँसि कहत महरि सों आवत कान्ह चराइ ।। ५०९ ।।



राग सारंग

हरिजू को ग्वालिनि भोजन ल्याई। वृंदा विपिन विशद यमुनातट शुचि ज्योंनार बनाई॥ सानि सानि दधि भातु लियो कर सुहृद सबनि कर देत। मध्य गुपाल मंडली मोहन छाँक बाँटि कै लेत॥ देवलोक देखत सब कौतुक बालकेलि अनुरागी। गावत सुनत सुनत सुख करि मनो सूर दुरित दुख भागी॥ ५१०॥



राग सारंग

वृंदावन देख नंदनंदन अतिहि परम सुख पायो। जहँ जहँ बाल गाइ सँग डोलत तहँ तहँ आपुन धायो॥ बलदाऊ मोको जिन छाँड़ो संग तुम्हारे ऐहों। कैसेहुँ आज यशोदा छाँड्यो काल्हि न आवन पैहों॥ सोवत मोको हेरि लेइँगे बाबा नंद दुहाई। सूर श्याम बिनती करै बल सों सखन समेत सुनाई॥ ५११॥

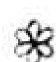


(वन में घूमते-घूमते कृष्ण और बलदाऊ ने धेनुक राक्षस और उसके परिवार को मारा और तब घर लौटे।)

राग गौरी

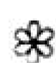
आजु हरि धेनु चराये आवत। मोर मुकुट वनमाल विराजत पीतांबर फहरावत॥ जिहि जिहि भाँति ग्वाल सब बोलत सुनि

श्रवणन मन राखत। आपुन टेरि लेत नान्हे सुर हरषत मुख पुनि भाषत॥ देखत नंद यशोदा रोहिणि अरु देखत ब्रजलोग। सूर श्याम गाइन सँग आये मैया लीनो रोग॥ ५१४॥



राग गौरी

यशुमति दौरि लए हरि कनियाँ। आजु गयो मेरो गाइ चरावन हौं बलि गई निछनियाँ॥ मो कारण कछु आन्यो है बलि बनफल तोरि कन्हैया। तुमहिं मिले मैं अति सुख पायो मेरे कुँवर कन्हैया॥ कछुक खाहु जो भावै मोहन देरी माखन रोटी। सूरदास प्रभु जीवहु युग युग हरि हलधर की जोटी॥५१५॥



(कंस ने कृष्ण को मारने का एक नया उपाय सोचा। उसने ब्रज में नन्द से जमुनाजी के कमल मँगाये जहाँ भयङ्कर कालिय साँप रहता था। उसने सोचा कि कृष्ण अवश्य कमल लेने जायगे और साँप अवश्य उन्हें डस लेगा। कंस का सन्देशा पाकर व्रज में हाहाकार मच गया। कृष्ण को भी पता लगा। एक दिन वह, बलदाऊ, श्रीदामा और बहुत से लड़के जमुना-किनारे गेंद खेलने गये। गेंद श्रीदामा की थी। कृष्ण के हाथ से वह कालीदह में जा गिरी जहाँ कमल थे और कालिय सर्प था। श्रीदामा अपनी गेंद के लिए कृष्ण का फेट पकड़कर ज़िद करने लगा। कृष्ण फेट छुड़ाकर कदम्ब के पेड़ पर चढ़ गये। श्रीदामा रोने लगा और यशोदा के पास शिकायत करने जाने लगा। कृष्ण ने कहा, "लो, अपनी गेंद लो" और यह कहकर कालीदह में कूद पड़े। कृष्ण को जल में डूबते देख सब ग्वाले हाहाकार करने लगे।)

राग गौरी

हाइ हाइ करि सखनि पुकारयो। गंद काज यह करी श्रीदामा नंदमहर कों ढोटा मारयो॥ यशुमति चली रसोई भीतर तबहिं ग्वालि इक छींकी। ठठकि रही द्वारे पर ठाढ़ी बात नहीं कछु नीकी॥ आइ अजिर निकसी नँदरानी बहुरो दोष मिटाइ। मंजारी आगे ह्वै निकसी पुनि फिरि आँगन आइ॥ व्याकुल भई निकसि गई बाहिर कहाँ धौं गयो कन्हाई। बायें काग दहिने खर शूकर व्याकुल घर फिरि आई॥ खन भीतर खन बाहिर आवति खन आँगन इहि भाँति। सूर श्याम को टेरत जननी नेक नहीं मन शांति॥ ५६१॥



राग गौरी

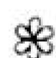
देखे नंद चले घर आवत। पैठत पौरि छींक भई बायें रोइ दाहिने धाह सुनावत॥ फटकत श्रवन श्वान द्वारे पर गगरी करत लराई। माथे पर ह्वै काग उड़ानो कुसगुन बहुतक पाई॥ आए नंद घरहि मन मारे व्याकुल देखी नारि। सूर नंद युवती सों बूझत बिन छवि वदन निहारि॥ ५६२॥



राग नट

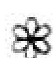
नंद घरनि सों बूझत बात। वदन झुराय गयो क्यों तेरो कहाँ गयो बल मोहन तात॥ भीतर चली रसोई कारण छींक

परी तब आँगन आइ। पुनि आगे ह्वै गई मंजारी और बहुत कुसगुन मैं पाइ॥ मोहि भए कुसगुन घर पैठत आजु कहा यह समुझि न जाइ। सूर श्याम गए आजु कहाँ धौं बार बार बूझत नँदराइ॥ ५६३॥



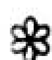
राग नट

महरि महर मन गए जनाइ। खन भीतर खन आँगन ठाढ़े खन बाहर देखत हैं जाइ॥ यहि अंतर सब सखा पुकारत रोवत आए ब्रज को धाइ। आतुर गए नंद घरही को महरि महर सों बात सुनाइ॥ चकित भई दोउ बूझन लागे कही बात हमको समुझाइ। सूर श्याम खेलतहि कदम चढ़ि कूदि परे काली दह जाइ॥ ५६४॥



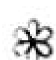
राग सोरठ

सपनो परगट कियो कन्हाई। सोवत ही निशि आजु डराने हम सों यह कहि बात सुनाई॥ धरणि परी मुरझाइ यशोदा नंद गए यमुना तट धाइ। बालक सब नंदहि सँग धाए ब्रज घर जहँ तहँ शोर मचाइ॥ त्राहि त्राहि करि नंद पुकारत देखत ठौर गिरे भहराई। लोटत धरणि परत जल भीतर सूर श्याम दुख दियो बुढ़ाई॥ ५६५॥



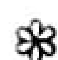
राग गौरी

व्रजबासी यह सुनि सब आए। कहाँ परयो गिरि कुँवर कन्हाई बालक लै सो ठौर दिखाए॥ सूनो गोकुल कियो श्याम तुम यह कहि लोग उठे सब रोइ। नंद गिरत सबहिन धरि राख्यो पोंछत वदन नीर लै धोइ॥ व्रजबासी तब कहत नंद सों मरण भयो सबही को आइ। सूर श्याम बिनु को बसि है व्रज धृग जीवन तिहुँ भुवन कहाइ॥ ५६६॥



राग गौरी

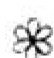
महरि पुकारति कुँवर कन्हाई। माखन धरयो तिहारेहि कारण आजु कहाँ अवसेर लगाई॥ अति कोमल तुम्हरे मुख लायक तुम जेंवहु मेरे नैन जुड़ाइ। धौरी दूध औटि है राख्यों अपने कर दुहि गए बनाइ॥ बरजति ग्वारि यशोदा को सब यह कहि कहि नीके यदुराइ। सूर श्याम सुत-विरह मात के यह वियोग वरण्यो नहिं जाइ॥ ५६७॥



राग गौरी

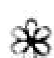
माखन खाहु लाल मेरे आई। खेलत आजु अबार लगाई॥ बैठहु आइ संग दोउ भाई। तुम जेंवहु मैया बलि जाई॥ सद माखन अति हित मैं राख्यो। आजु नहीं नेकहु तैं चाख्यो॥ प्रातहि ते मैं दियो जगाइ। दँतवनि करि जु गए दोउ भाइ॥

मैं बैठी तुव पंथ निहारों। आवहु तुम पर तनु मनु वारों॥
व्रज युवती सब सुनि यह बानी। रोवत धरणि परीं अकुलानी॥
शोकसिंधु बूड़ो नँदरानी। सुधि बुधि तन की सबै भुलानी॥
सूरश्याम लीला यह कीन्हो। सुख के हेत जननि दुख दीन्हो॥५६८॥



राग नट

चौंकि परी तन की सुधि आई। आजु कहा व्रज शोर मचायो तब जान्यो दह गिरयो कन्हाई॥ पुत्र पुत्र कहि कै उठि दौरी व्याकुल यमुना तीरहि धाई। व्रजवनिता सब संगहि लागीं आइ गए बल अग्रज भाई॥ जननी व्याकुल देखि प्रबोधत धीरज करि नीके यदुराई। सूर श्याम को नेक नहीं डर जिनि तू रोवै यशुमति माई॥ ५६९॥



राग बिलावल

व्रजवासी सब उठे पुकारी। जल भीतर कहा करत मुरारी॥
संकट में तुम करत सहाय। अब क्यों नहीं बचावत आय॥
मात पिता अति ही दुख पावत। रोइ रोइ सब कृष्ण बुलावत॥
हलधर कहत सुनहु व्रजवासी। वै अन्तर्यामी अविनासी॥
सूरदास प्रभु आनँदरासी। रमासहित जल ही के वासी॥५७०॥

(इधर कृष्ण अत्यन्त कोमल शरीर धारण कर सर्प के पास गये। ठोकर मारकर उसे जगाया। वह कृष्ण के शरीर पर लपट गया। कृष्ण

ने अपना शरीर इतना बढ़ाया कि सांप के अङ्ग टूटने लगे और वह त्राहि-त्राहि पुकारने लगा। आर्तनाद सुनकर कृष्ण ने फिर शरीर सकोड़ लिया। चकित होकर सर्पराज ने कृष्ण की स्तुति की और कमल-फूल ला दिये। दोपहर के बाद यमुना-तट पर खड़े व्रजवासियों को कृष्ण सर्प के फन पर नाचते हुए अगणित कमलों के साथ आते हुए दीख पड़े। व्रजवासियों के आनन्द का वारपार न रहा। देवताओं ने दुन्दुभी बजाई। कमल-फूल कंस के पास भेज दिये गये। इस प्रकार कृष्ण ने व्रज को कंस के क्रोध और आक्रमण से बचाया*।)



दावानल के पान की लीला। राग कान्हरा

दावानल व्रजजन पर धायो। गोकुल व्रज वृंदावन तृण द्रुम चाहत है चहुँ पास जरायो॥ घेरत आवत दसहुँ दिशा ते अति कीन्हे तनु क्रोध। नर-नारी सब देखि चकित भए दावा लग्यो चहुँ कोध॥ वह तो असुर घात किये आवत धावत पवन समाजु। सूरदास व्रज लोग कहत इह उर्यो दवा अति आजु॥ ६७७॥



राग कान्हरा

आइ गई दव अतिहि निकट ही। यह जानत अब व्रज न बांचिहै कहत सबै चलिए जलतट ही॥ करि विचार उठि चलन

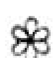
* कालियदह की कथा के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध, पूर्वार्ध, अध्याय १६—१७। लल्लूजीलाल कृत प्रेमसागर, अध्याय १७।

चहत हैं जो देखैं चहुँ पास। चकृत भए नर-नारि जहाँ तहाँ भरि भरि लेत उसास ॥ झरझरात भहरात लपट अति देखिअत नहीं उबार। देखत सूर अग्नि अधिकानी नभ लौं पहुँची झार ॥ ६७८ ॥



राग कान्हरा

दसहुँ दिसा ते वरत दवानल आवत है व्रजजन पर धायो। ज्वाला उठी अकाश बराबरि घात आपने करि सब पायो ॥ बीरा लै आयो सनमुख ते आदर करि नृप कंस पठायो। जारि करौं परलय छणभीतर व्रज बपुरो केतिक कहवायो ॥ धरणि अकाश भयो परिपूरण नेक नहीं कहुँ संधि बचायो। सूर श्याम बलरामहि मारन गर्व सहित आतुर ह्वै आयो ॥ ६७९ ॥



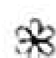
राग कान्हरा

व्रज के लोग उठे अकुलाइ। ज्वाला देखि अकाश बराबरि दशहुँ दिशा कहुँ पारु न पाइ ॥ झरहरात बनपात गिरत तरु धरणी तरकि तड़ाकि सुनाइ। जल बरषत गिरिवर तर बाचे अब कैसे गिरि होतु सहाइ ॥ लटकि जात जरि जरि द्रुम बेली पटकत बाँस काँस कुशताल। उचटत फर अंगार गगन लौं सूर निरखि व्रजजन बेहाल ॥ ६८० ॥



राग कान्हरा

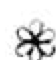
नंदघरनि यह कहति पुकारे। कोउ बरषत कोउ अगिनि जरावत दई परयो है खोज हमारे॥ तब गिरिवर कर धरयो कन्हैया अब न बाँचि है मारत जारे। जेंवन करन चली जब भीतर छींक परी तिय आजु सवारे॥ ताको फल तुरतहि यक पायो सो उबरयो भयो धर्म सहारे। अब सबको संहार होत है छींक किये ये काज विचारे॥ कैसेहु ए बालक दोउ उबरे पुनि पुनि सोचति परी खँभारे। सूर श्याम यह कहत जननि सों रहि री माँ धीरज उर धारे॥ ६८१॥



राग गौड़

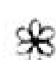
भहरात झहरात दावानल आयो। घेरि चहुँ ओर करि शोर अंधेर बन धरनि अकाश चहुँ पास छायो॥ बरत बन बाँस थरहरत कुश काँस जरि उड़त है भांस अति प्रबल धायो। झपटि झपटत लपट पटकि फूल फूटत फटि चटकि लट लटकि द्रुम नवायो॥ अति अगिनि झार भार धुंधार करि उचटि अंगार झंझार छायो। बरत बनपात भहरात झहरात अररात तरु महा धरणी गिरायो॥ भए बेहाल सब ग्वाल ब्रजबाल तब शरन गोपाल कहि कै पुकारयो। तृणा केशी शकट बकी बक अघासुर वाम कर गिरि राखि ज्यों उबारयो॥ नेक धीरज करौ जियहि कोऊ जिनि डरौ कहा यह सरे लोचन मुदायो। मुठी

भरि लियो सब ताय मुख ही दियो सूर प्रभु पियो दावा व्रजजन बचायो ॥ ६८२ ॥



राग गुंड

दावानल अचयो व्रजराज व्रजजन जरत बचायो। धरणि आकाश लौं ज्वाल माला प्रबल घेरि चहुँ पास व्रजवास आयो ॥ भये बेहाल सब देखि नंदलाल तब हँसत ही ख्याल तत्काल कीन्हों। सबनि मूँदे नयन ताहि चितये सैन तृपा ज्यों नीर दव अचै लीन्हों ॥ लखो अब नैन भरि बुझि गई अग्निझारि चितै नर नारि आनंद भारी। सूर प्रभु सुख दियो दवानल पी लियो कहत सब ग्वाल धनि धनि मुरारी ॥ ६८४ ॥



राग बिहागरा

चकित देखि यह कहि नर-नारी। धरणि अकास बराबरि ज्वाला झपटत लपट करारी ॥ नहिं बरष्यो नहिं छिरक्यो काहू कहुँ धौं गयो बिलाइ। अति आघात करत वन भीतर कैसे गयो बुझाइ ॥ तृण की आगि बरत ही बुझि गई हँसि हँसि कहत गुपाल। सुनहु सूर वह करनि कहनि यह ऐसे प्रभु के ख्याल* ॥ ६८५ ॥

---

* दावानल की कथा के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्द्ध, अध्याय १७।

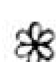
गौचारन (यशोदा कृष्ण को जगाती हैं)। राग बिलावल

जागिए गोपाललाल प्रगट भई हंसमाल मिट्यो अंधकाल उठौ जननि मुख दिखाई। मुकुलित भए कमलजाल कुमुदवृंद बन बिहाल मेटहु जंजाल त्रिविध ताप तन नसाई॥ ठाढ़े सब सखा द्वार कहत नंद के कुमार टेरत हैं बार बार आइए कन्हाई। गैयनि भई बड़ी बार भरि भरि पै थननि भार बछरागन करैं पुकार तुम बिनु यदुराई॥ ताते यह अटक परी दुहुँन काज सौंह करी उठि आवहु क्यों न हरी बोलत बलभाई। मुखते पट झटकि डारि चन्द्रवदन दे उघारि यशुमति बलिहारि वारिज-लोचन सुखदाई॥ धेनुदुहन चले धाइ रोहिणी तब लै बुलाइ दोहनी मुहिं दै मँगाइ तबहीं लै आई। बछरा थन दियो लगाइ दुहत बैठिकै कन्हाइ हँसत नंदराइ तहाँ मात दोउ आई॥ दोहनि कहुँ दूधधार सिखवत नंद बार बार यह छबि नहिं वार पार नंद घर बधाई। तब हलधर कह्यो सुनाइ गाइन बन चलौ लिवाइ मेवा लीनो मँगाइ विविधरस मिठाई॥ जेंवत बलराम श्याम संतन के सुखद धाम धेनुकाज नहिं विश्राम यशुदा जल ल्याई। श्याम राम मुख पखारि ग्वालबाल लिये हँकारि यमुना-तट मन विचारि गाइन हँकराई॥ शृंग वेणु नाद करत मुरली मुख अधर धरत जननी मन हरत ग्वाल गावत सुरसाई। वृंदा-वन तुरत जाइ धेनु चरति तृण अघाइ श्याम हरष पाइ निरखि सूरज बलि जाई॥ ७०५॥

❀

मुरली-स्तुति । राग सारंग

जब हरि मुरली अधर धरत। खग मोहे मृगयूथ भुलाने निरखि मदन छवि छरत ॥ पशु मोहे सुरभीहु थकीं तृण दंतहिं टेक रहत। शुक सनकादि सकल मन मोहे ध्यानिउ ध्यान वहत ॥ सूरदास भाग्य हैं तिनके जो या सुखहि लहत ॥७०६॥



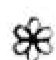
राग बिहागरा

कहौं कहा अंगन की सुधि बिसरि गई ; श्याम अधर मृदु सुनत मुरलिका चकृत नारि भई ॥ जो जैसे सो तैसे रहि गई सुख दुख कह्यो न जाइ। लिखी चित्रसी सूर सो रहि गई एकटक पल बिसराइ ॥ ७०७ ॥



राग मलार

सुनत वन मुरली ध्वनि की वाजन। पपिहा गुंज कोकिल वन कुंजत अरु मोरन के गाजन ॥ यही शब्द सुनिअत गोकुल में मोहन रूप विराजन। सूरदास प्रभु मिली राधिका अंग अंग करि साजन* ॥ ७०८ ॥



---

* हिन्दी के बहुत से कवियों ने कृष्ण-मुरली की महिमा गाई है। नन्ददास जिनके विषय में प्रसिद्ध है कि "और सब गढ़िया, नन्ददास जड़िया", कहते हैं—

कृष्ण के रूप का वर्णन। राग बिलावल

श्याम हृदय वर मोतिन माला। विथकित भईं निरखि व्रजबाला॥ श्रवण थके सुनि वचन रसाला। नैन थके दरशन

तब लीनी कर-कमल जोगमाया सी मुरली,
अघटत-घटना-चतुर बहुरि अधरन सुर जुरली।
जाकी धुनि ते निगम अगम प्रगटित बड़ नागर,
नाद ब्रह्म की जानि मोहनी सब सुख-सागर।
पुनि मोहन सों मिली कछू कलगान कियो अस,
वामविलोचन बालत्रियन मनहरन होय जस।
मोहन मुरली नाद स्रवन कीनो सब किनहूँ,
यथा यथाविधि रूप तथाविधि परस्यो तिनहूँ।
इत्यादि, रासपञ्चाध्यायी, पहिला अध्याय।

किती न गोकुल कुलवधू, काहि न केहि सिख दीन।
कौने तजी न कुल गली, ह्वै मुरली-सुर-लीन॥ बिहारी-सतसई।

मुरली सुनत वाम कामजुर लीन भईं,
धाईं धुर लीक सुनि विधी विधुरनि सों।
पावस न, दीसी यह पावस नदी सी,
फिरैं उमड़ी असंगत तरंगित उरनि सों॥
लाज काज सुख, सुखसाज, बंधन समाज,
नाँघि निकसीं निसंक, सकुचैं नहीं गुरनि सों;
मीन ज्यों अधीनी गुन कीनी खैंचि लीनी "देव",
बंसीवार बंसी डार बंसी के सुरनि सों॥

मंद, महामोहक, मधुर सुर सुनियत,
धुनियत सीस वधी बांसी है री बांसी है।

नँदलाला ॥ कंबु कंठ भुज नैन बिसाला । करके उर कंचन नग

गोकुल की कुलवधू को कुल सम्हारै नहीं,
दो कुल निहारै, लाज नासी है री नासी है ॥
इत्यादि इत्यादि ॥ देव ।

मोहन बसुरी सौं कछू मेरौ बस न बसाइ ।
सुर रसरी सौं श्रवन मगु बाँधि मनै लै जाइ ॥ २१४ ॥
अब लग वे धन मन हते दग अनियारे बान ।
अब बंसी बेधन लगी सप्त सुरन सौं प्रान ॥ २१६ ॥
करत त्रिभंगी मोह नहिं मुरली लग अधरान ।
क्यों न तजै ताके सुनै और सबै कुलकान ॥ २१६ ॥
रसनिधि (रतनहज़ारा) ।

कौन ठगोरी भरी हरि आज बजाई है बाँसुरिया रस-भीनी,
तान सुनी जिनहीं जिनहीं तिनहीं तिन लाज बिदा कर दीनी ।
घूमें खरी खरी नन्द के वार नवीनी कहा अरु बाल प्रवीनी,
या ब्रजमंडल में 'रसखान' सु कौन भटू जु लटू नहिं कीनी ॥
रसखान ।

सुन सखि, फिर वह मनोमोहिनी माधव-मुरली बजती है;
कोकिल अपनी कंठ-कला का गर्व सर्वथा तजती है ।
मलयानिल मेरे कानों में उस ध्वनि को पहुँचाती है;
सदा श्याम की दासी हूँ मैं, सुध बुध भूली जाती है ॥
बँगला कवि मधुसूदन दत्त कृत विरहिणी ब्रजाङ्गना ।
(अनुवादक—"मधुप")

सुन पड़ा स्वर ज्यों कलवेणु का, सकल ग्राम समुत्सुक हो उठा ।
हृदययन्त्र निनादित हो गया, तुरत ही अनियन्त्रित भाव से ॥ १२ ॥
वयवती युवती बहु बालिका, सकल बालक वृद्ध वयस्क भी ।
विवश से निकले निज गेह से, स्वदग का दुख मोचन के लिए ॥ १३ ॥
अयोध्यासिंह उपाध्याय कृत प्रियप्रवास, प्रथमसर्ग ।

जाला ।। पल्लव हस्त मुद्रिका भ्राजै । कौस्तुभमणि हृदयस्थल छाजै ।। रोमावली बरणि नहिं जाई । नाभिस्थल की सुंदरताई ।। कटि किंकिणी चन्द्रमणि संयुत । पीतांबर कटितट छवि अद्भुत ।। युगल जङ्घ की पटतर को है । तरुनी मन धीरज को जोहै ।। जान जानु की छवि न सँभारै । नारि निकर मन बुद्धि बिचारै ।। रत्न जटित कंचनकल नेपुर । मंद मंद गति चलत मधुर सुर ।। युगल कमल पद नखमणि आभा । संतनि मन संतत यह लाभा ।। जो जेहि अंग सो तहाँ भुलानी । सूर श्याम गति काहु न जानी ।। ७११ ।।



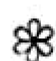
राग गौरी

नँदनंदन मुख देख्यौ माई । अंग अंग छवि मनहु उये रवि ससि अरु समर लजाई ।। खंजन मीन कुरंग भृंग वारिज पर अति रुचि पाई । श्रुतिमंडल कुंडल विवि मकर सु बिलसत सदन सदाई ।। कंठ कपोत कीर विद्रुम पर दारिम कननि चुनाई । दुइ सारंग बाहन पर मुरली आई देत दोहाई ।। मोहे थिर चर विटप विहंगम व्यौम विमान थकाई । कुसमंजुलि बरषत सुर ऊपर सूरदास बलि जाई ।। ७१२ ।।



राग कल्याण

बने विसाल हरि लोचन लोल। चितै चितै हरि चारु विलोकनि मानहुँ माँगत हैं मन ओल ॥ अधर अनूप नासिका सुंदर कुंडल ललित सुदेश कपोल। मुख मुसकात महा छबि लागत श्रवण सुनत सुठि मीठे बोल ॥ चितवत रहत चकोर चंद्र ज्यों नेक न पलक लगावत डोल। सूरदास प्रभु के वश ऐसे दासी सकल भई बिनु मोल ॥ ७१६ ॥



राग बिलावल

देखि सखी हरि अंग अनूप। जानु युगल युग जंध विराजत को वरणै यह रूप ॥ लकुट लपेटि लटकि भए ठाढ़े एक चरण धर धारे। मनहुँ नीलमणि खंभ काम रचि एक लपेटि सुधारे ॥ कबहुँ लकुट ते जानू हरि लै अपने सहज चलावत। सूरदास मानहु करभाकर वारंवार डोलावत ॥ ७१८ ॥



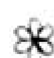
राग नटनारायण

कटि तटि पीत वसन सुदेप। मनहुँ नव घन दामिनी तजि रही सहज सुवेप ॥ कनक मणि मेखला राजत सुभग श्यामल अंग। मनो हंस रिसाल पंगति नारि बालक संग ॥ सुभग कटि काछनी राजत जलज केसरि खंड। सूर प्रभु अँग निरखि माधुरि मदन तनु पर्‌यो दंड ॥ ७१९ ॥

(कृष्ण के अंग-अंग को देखकर गोपियाँ विचारने लगीं)

राग नट

राजत रोम राजि रेष। नील घन मनों धूमधारा रही सूक्षम शेष ॥ निरखि सुंदर हृदय पर भृगुपद परम सलेष। मनहुँ शोभित अभ्रअंतर शंभु भूषण भेष ॥ मुक्तमाल नक्षत्र गणसम अर्धचंद्र विशेष। सजल उज्ज्वल जलद मलयज प्रबल बलनि अलेश ॥ केकि कच सुरचाप की छवि दशन तड़ित सपेष। सूर प्रभु अवलोकि आतुर तजे नैन निमेष ॥ ७२१ ॥



राग आसावरी

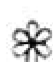
चतुर नारि सब कहति विचारि। रोमावली अनूप विराजति यमुना की अनुहारि। उर कलिंद ते धँसि जलधारा उदर धरणि परवाह। जाति चली अति ते जलधारा नाभि हृदय अवगाह ॥ भुजादंड तट सुभग घटा घन बनमाला तरुकूल। मोतिनमाल दुहूँघा मानो फेन लहरि रसफूल ॥ सूर श्याम रोमावलि की छवि देखति करति बिचारि। बुद्धि रचति तरि सकति न शोभा प्रेम विवश ब्रजनारि ॥ ७२३ ॥



राग नट

श्यामकर मुरली अतिहि विराजत। परसत अधर सुधारस प्रगटत मधुर मधुर सुर बाजत ॥ लटकत मुकुट भौंह छवि मट-

कत नैन सैन अति छाजत । ग्रीव नवाइ अटकि बंसी पर कोटि मदन छवि लाजत ॥ लोल कपोल झलक कुंडल की यह उपमा कछु लागत । मानहुँ मकर सुधारस क्रीड़त आप आप अनुरागत ॥ वृंदावन विहरत नँदनंदन ग्वालसखा सँग सोहत । सूरदास प्रभु की छवि निरखत सुर नर मुनि सब मोहत ॥ ७३१ ॥



राग सारंग

बंसी बन कान्ह बजावत । आइ सुनो श्रवणनि मधुरे सुर राग रागिनी ल्यावत ॥ सुर श्रुति तान बँधान अमित अति सप्तअतीत अनागत आवत । जनु युग जुरि वरवेष सजल मथि वदनपयोधि अमृत उपजावत ॥ मनो गोहनी भेप धरे धर मुरली मोहन मुख मधु प्यावत । सुर नर मुनि वश किये राग रस अधर सुधारस मदन जगावत ॥ महा मनोहर नाथ सूर थिर चर मोहे मिलि मरम न पावत । मानहु मूक मिठाई के गुन कहि न सकत मुख शीश डोलावत ॥ ७३४ ॥



(इसी ध्वनि में मुरली की और महिमा गाकर गोपियां कहती हैं—)

राग सारंग

ऐसो गुपाल निरखि तन मन धन वारौं । नवल किशोर मधुर मूरति शोभा उर धारौं ॥ अरुन तरुन कमलनैन मुरली कर राजै । व्रजजन मन हरन वेन मधुर मधुर वाजै ॥ ललित

त्रिभंग सो तन वनमाला सोहै। अति सुदेश कुसुमपाग उपमा को कोहै॥ चरणरुनित नेपुर कटि किंकिणीकल कूजै। मकराकृत कुंडल छबि सूर कौन पूजै॥ ७४६॥



राग सारंग

सुंदर मुख की बलि बलि जाउँ। लावनिनिधि गुणनिधि शोभानिधि निरखि निरखि जीवत सब गाउँ॥ अंग अंग प्रति अमित माधुरी प्रगटित रस रुचि ठाऊँ ठाउँ॥ तामें मृदु मुसुकानि मनोहर न्याय कहत कवि मोहन नाउँ। नैन सैन दैदै जब हेरत तापर हौं बिनमोल बिकाउँ। सूरदास प्रभु मदन मोहन छवि यह शोभा उपमा नहिं पाउँ॥ ७४७॥



राग सूही

मैं वलि जाउँ श्याम मुख छवि पर। बलि बलि जाउँ कुटिल कच विथुरी वलि बलि जाउँ भृकुटि लिलाटतर॥ बलि बलि जाउँ चारु अवलोकनि वलिहारी कुंडल की। वलि वलि जाउँ नासिका सुललित बलिहारी वा छवि की॥ बलि वलि जाउँ अरुन अधरन की विद्रुम बिंब लजावन। मैं वलि जाउँ दशन चमकन की वारौं तड़ित नसावन॥ मैं वलि जाउँ ललित ठोढ़ी पर वल मोतिन की माल। सूर निरखि तन मन वलिहारौं वलि वलि यशुमति लाल॥ ७४८॥

राग कनहरा

अलकन की छवि अलिकुल गावत। खंजन मीन मृगज लज्जित भए नैन नचावनि गतिहि न पावत ॥ मुख मुसकानि आनि उर अंतर अंबुज बुधि उपजावत। सकुचत अरु बिगसित वा छबि पर अनुदिन जनम गँवावत ॥ पूरण नहीं सुभग श्यामल को यद्यपि जलधर ध्यावत। वसन समान होत नहिं हाटक अग्निझाँपदे आवत ॥ मुकतादाम बिलोकि बिलखि करि अवलि बलाक वनावत। सूरदास प्रभु ललित त्रिभंगी मनमथ मनहि लजावत* ॥ ७४६ ॥

* नन्ददास ने कृष्ण के रूप का वर्णन इस प्रकार किया है—

नीलोत्पल दल श्याम अंग नवजोवन भ्राजै,
कुटिल अलक मुख कमल मनों अलि अवनि विराजै।
सुन्दर भाल विसाल दिपति मनों निकर निसाकर,
कृष्ण भक्ति प्रतिविम्ब तिमिर को कोटि दिवाकर।
कृपा रङ्ग रस अयन नयन राजत रतनारे,
कृष्णरसामृत पान अलस कछु घूम घुमारे।
स्रवण कृष्ण रस भरन गंड मंडल भल दरसे,
प्रेमानँद मिलि तासु मन्द मुसिकन मधु बरसे।
उन्नत नासा अधरबिम्ब सुक की छवि छीनी,
तिन बिच अद्भुत भाँति लसत कछु इक मसभीनी।
कम्बु कण्ठ की रेख देखि हरिधर्म्म प्रकासें,
काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह जिहि निरखत नासें।
उरवर पर अति छवि की भीरा बरनि न जाई,
जेहि भीतर जगमगति निरन्तर कुँवर कन्हाई।

(कृष्ण का रूप देख-देखकर, कृष्ण की मुरली सुन-सुनकर, राधा मोहित हो गई, सब गोपियां मोहित हो गईं, देवताओं से प्रार्थना करने लगीं कि कृष्ण हमारे पति हों।)



चीरहरण लीला। राग आसावरी

गौरीपति पूजति व्रजनारि। नेम धर्म सों रहति क्रियायुत बहुत करति मनुहारि॥ इहै कहति पति देहु उमापति गिरिधर

सुन्दर उदर उदार रोमावलि राजत भारी,
हिय सरवर रस भरी चली मनों उमगि पनारी।
ता रस की कुण्डिका नाभि सोभित अस गहरी,
त्रिवली तामें ललित भांति जनु उपजत लहरी।
अति सुदेस कटिदेस सिंह सोभित सघनन अस,
जोबनमद आकरसत बरसत प्रेम सुधारस।
गूढ़ जानु आजानु बाहु मदगज गति लोलैं,
गङ्गादिकन पवित्र करन अवनी में डोलैं।

रासपञ्चाध्यायी, पहिला अध्याय।

निम्नलिखित पद मेवाड़ की सुप्रसिद्ध भक्त मीराबाई का कहा जाता है—

बसो मेरे नैनन में नँदलाल।
मोहिनि मूरति सांवरि सूरत नैना बने बिसाल।
अधर सुधारस मुरली राजित उर वैजन्ती माल॥
क्षुद्र घंटिका कटि तटि सोभित नूपुर शब्द रसाल।
मीरा प्रभु संतन सुखदाई भक्तवछल गोपाल॥ इत्यादि इत्यादि।
दोउ कानन कुण्डल मोर पखा सिर सोहै दुकूल नयो चटको।
मनिहार गरे सुकुमार धरे नट भेस अरे पिय को टटको॥

नंदकुमार। शरन राखि लेवहु शिवशंकर तनहि नशावत मार॥ कमल पुहुप मातूल पत्र फल नाना सुमन सुवास। महादेव पूजति मन वच क्रम करि सूर श्याम की आस॥ ८०५॥

सुभ काछनी बैजनी पामन आमन में न लगै झटको।
वह सुन्दर को रसखान अली जु गलीन में आइ अबै अटको॥
जा दिन तें वह नन्द को छोहरो या वन धेनु चराइ गयो है।
मीठि हीताननि गोधन गावत बैन बजाइ रिझाइ गयो है।
वा दिन सों कछु टोना सो कै रसखानि हिये में समाइ गयो है।
कोउ न काहू की कानि करै सिगरो ब्रज बीर बिकाइ गयो है॥
मकराकृत कुण्डल गुञ्ज की माल वे लाल लसैं पग पाँवरियां।
बछरानि चरावन के मिस भावतो दै गयो भावती भांवरियां॥
रसखानि बिलोकत ही सिगरी भईं बावरियां ब्रज डांवरियां।
सजनी इहिं गोकुल में विष सों बिगरायो है नन्द के सांवरियां॥

रसखान।

तिलक भाल वनमाल, अधिक राजत रसाल छवि।
मोर मुकुट की लटक, छटक वरनत अटकत कवि॥
पीतांबर फहराय, मधुर मुसक्यान कपोलन।
रच्यो रुचिर मुख पान, तान गावत मृदु बोलन॥
रति कोटि काम अभिराम अति, दुष्ट निकंदन गिरिधरन।
आनन्दकन्द ब्रजचन्द प्रभु, जय जय जय अशरनशरन॥
मोर मुकुट नग जटित, कर्ण कुण्डल मणि झलकै।
मृगमद तिलक ललाट, कमल लोचन दल पलकै।
घूँघरवाली अलक, कंठ कौस्तुभ विराजै।
पीत वसन वनमाल, मधुर मुरली धुन बाजै॥

राग रामकली

शिव सों विनय करति कुमारि। जोरि कर मुख करति अस्तुति बड़े प्रभु त्रिपुरारि॥ शीत भीत न करत सुंदरि कृश भई सुकुमारि। छहौ ऋतु तप करति नीके गृह को नेह विसारि॥ ध्यान धरि कर जोरि लोचन मूँदि इक इक याम। विनय अंचल

करत कोटि शुभ आभरन, चन्द सूर्य देखत लजत।
ते ब्रह्मदेव दे भक्तजन, श्यामरूप प्रीतम सजत॥

केशवदास।

अति समुत्तम अंग समूह था, मुकुर मंजुल औ मनभावना।
सतत थी जिसमें सुकुमारता, सरसता प्रतिबिम्बित हो रही॥१७॥
विलसता कटि में पट पीत था, रुचिर वस्त्र विभूषित गात था।
लस रही उर में वनमाल थी, कल दुकूल अलंकृत कंध था॥१८॥
मकर-केतन के कलकेतु से, लसित थे वर कुण्डल कान में।
घिर रही जिनके सब ओर थी, विविध भावमयी अलकावली॥१९॥
मुकुट था शिर का शिखि-पुच्छ का, अति मनोहर मंडित माधुरी।
असित रत्न समान सुरंजिता, सतत थी जिसकी वरचन्द्रिका॥२०॥
विशद उज्ज्वल उन्नत भाल में, विलसती कलकेसर खौर थी।
असित पंकज के दल में लसे, रजसुरंजित पीत सरोज ज्यों॥२१॥

अयोध्यासिंह उपाध्याय कृत प्रियप्रवास, प्रथम सर्ग।

एक प्रकार से रसनिधि कृत लगभग सारा 'रतनहज़ारा' कृष्णरूप का वर्णन है। रघुराजसिंह ने रुक्मिणी-परिणय में कृष्णरूप का अच्छा वर्णन किया है। देखिए पृष्ठ ५८–६०।

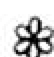
संस्कृत के एवं भारतवर्ष की सब प्रचलित भाषाओं के सैकड़ों कवियों ने इस विषय पर कविता की है।

छोरि रवि सों करति हैं सब वाम ॥ हमहिं होहु कृपालु दिनमणि तुम विदित संसार । काम अति तनु दहत दीजै सूर श्याम भतार ॥ ८०६ ॥



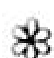
राग नटनारायण

रवि सों बिनय करति कर जोरैं । प्रभु अंतर्यामी यह जानी हम कारण जप तप जल खोरैं ॥ प्रगट भए प्रभु जल ही भीतर देखि सबन को प्रेम । मीजत पीठि सबनि की पाछे पूरण कीन्हे नेम ॥ फिरि देखै तो कुँवर कन्हाई रुचि सों मींजत पीठि । सूर निरखि सकुचीं ब्रज-युवती परी श्याम तनु डीठि ॥ ८०७ ॥



राग देवगंधार

अति तप देखि कृपा हरि कीन्हों । तन की जरनि दूरि भई सबकी मिलि तरुणिन सुख दीन्हों ॥ नवलकिशोर ध्यान युवती मन ऊहै प्रगट दिखायो । सकुचि गई अँग वसन सँभारति भयो सबनि मन भायो ॥ मन मन कहति भयो तप पूरण आनँद उर न समाई । सूरदास प्रभु लाज न आवति युवतिन माँझ कन्हाई ॥ ८०८ ॥



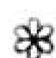
राग सारंग

हँसत श्याम ब्रजघर को भागे। लोगन को यह कहति सुनावति मोहन करन लँगरई लागे॥ हम अस्नान करत जल भीतर आपुन मींजत पीठि कन्हाई। कहा भयो जो नंदमहरसुत हमसों करत अधिक ढोठाई॥ लरिकाईं तबहीं लौं नीकी चारि वरष की पाँच। सूर जाइ कहिहैं यशुमति सों श्याम करत ए नाच॥ ८०९॥



राग सारंग

प्रेम-बिबस सब ग्वालि भईं। उरहन दैन चलीं यशुमति के मनमोहन के रूप रईं॥ पुलकि अंग अँगिया उर दरकी हार तोरि कर आपु लईं। अंचल चीर घात नख उर करि यहि मिष करि नँदसदन गईं॥ यशुमति माइ कहा सुत सिखयो हमको जैसे हाल कियो। चोली फारि हार गहि तोरयो देखो उर नखघात दियो॥ आँचर चीर अभूषण तोरे घेरि धरत उठि भागि गयो। सूर महरि मन कहति श्याम धौं ऐसे लायक कबहिं भयो॥ ८१०॥



(गोपियां यशोदा से शिकायत कर रही थीं कि बालक कृष्ण आ गये। वह लज्जित होकर घर लौट गईं। सब गोपियां देवताओं से प्रार्थना करती रहीं कि कृष्ण हमारे पति हों। एक दिन जब वह जमुनाजी में नहा रही थीं, कृष्ण उनके कपड़े उठाकर पेड़ पर जा बैठे। उनके

बहुत प्रार्थना करने पर और बाहर निकलकर हाथ उठाकर सूर्य को प्रणाम करने पर कृष्ण ने उनके वस्त्र उनको दिये। उनकी जैसी भावना थी बालक कृष्ण वैसे ही रूप में उनके सामने प्रगट हुए। कृष्ण गोपियों से छेड़छाड़ करने लगे। ऊपर से वह खीझती थीं, यशोदा से शिकायत करती थीं, पर मन में वह बहुत प्रसन्न होती थीं। जब वह पानी भरने जातीं तब कृष्ण मार्ग में खड़े हो जाते थे।*)

अथ पनघट का प्रस्ताव। राग अड़ाना

हौं गई ही यमुनजल लेन माई हो साँवरे से मोही। सुरंग केसरि खौरि कुसुम की दाम अभिराम कंठ कनक की दुलरी झलकत पीतांबर की खोही॥ नान्हीं नान्हीं बूँदन में ठाढ़ो री बजावै गावै मलार की मीठी तान मैं तो लाला की छबि नेकहु न जोही। सूर श्याम मुरि मुसकानि छवी री अँखियन में रही तब न जानो हो कोही॥ ८३८॥

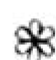


राग अड़ाना

चटकीलो पट लपटानो कटि बंसीवट यमुना के तट नागरनट। मुकुट लटकि अरु भ्रुकुटी मटक देखौ कुंडल की चटक सों अटकि

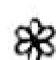
* चीरहरणलीला के लिए देखिए लल्लूजीलाल कृत प्रेमसागर, अध्याय २३। निम्न श्रेणी के बहुत से कवियों ने अतिशय शृङ्गार-रस-पूर्ण कविता में यह कथा कही है। परन्तु कुछ कवियों ने कहा है कि श्रीकृष्ण ने गोपियों को शिक्षा दी थी। जल में वरुण देवता का वास है। जो कोई जल में नंगा नहाता है उसका सारा धर्म बह जाता है।

परी दृगनि लपट ॥ आछी चरणनि कंचन लकुट ठटकीली बन-माल कर टेके द्रुमडार टेढ़े ठाढ़े नँदलाल छवि छाइ घट घट। सूरदास प्रभु की बानक देखे गोपी ग्वाल टारे न टरत निपट आवै सोंधे की लपट ॥ ८३९ ॥



राग सुघराई

बजावै मुरली की तान सुनावै यहि विधि कान्ह रिझावै। नटवर वेष बनाये चटक सों ठाढ़ो रहै यमुना के तीर नित नव मृग निकट बोलावै ॥ ऐसो को जो जाइ यमुन ते जल भरि ल्यावै। मोरमुकुट कुंडल बनमाला पीतांबर फहरावै ॥ एक अंग शोभा अवलोकत लोचन जल भरि आवै। सूर श्याम के अंग अंगप्रति कोटि काम छवि छावै ॥ ८४० ॥



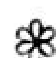
राग पूरवी

पनघट रोके रहत कन्हाई। यमुना जल कोउ भरन न पावत देखत ही फिरि जाई ॥ तबहिं श्याम इक बुद्धि उपाई आपुन रहे छुपाइ। तब ठाढ़े जे सखा संग के तिनको लिये बोलाइ ॥ बैठारे ग्वालन को द्रुमतर आपुन फिरि फिरि देखत। बड़ी बार भई कोउ न आई सूर श्याम मन लेखत ॥ ८४१ ॥



राग देवगंधार

युवति एक आवति देखी श्याम। द्रुम की ओट रहे हरि आपुन यमुनातट गई वाम ॥ जल हलोरि गागरि भरि नागरि जवहीं शीश उठायो ॥ घर को चली जाइ ता पाछे सिर ते घट ढरकायो ॥ चतुर ग्वालि कर गह्यो श्याम को कनक लकुटिआ पाई। औरनि सों करि रहे अचगरी मो सों लगत कन्हाई ॥ गागरि लै हँसि देत ग्वालि कर रीतो घट नहिं लैहौं। सूर श्याम ह्याँ आनि देहु भरि तवहिं लकुट कर दैहौं ॥ ८४२ ॥



राग कल्याण

लकुट कर की हौं तव देहौं घट मेरो जब भरि दैहौ। कहा भयो जो नंद बड़े वृषभानु आन हमहूँ तुमसी हैं समसरि मिलि करि कैहौ ॥ एक गाँव एक ठाँव को वास एक तुम कैहौ क्यों मैं सैहौं। सूर श्याम मैं तुम न डरैहौं जवाव को जवाव दैहौं ॥८४३॥



राग कल्याण

घट भरि देहु लकुट तव दैहौं। हमहूँ वड़े महर की वेटी तुमको नहीं डरैहौं ॥ मेरी कनक लकुटिआ दै री मैं भरि देहौं नीर। विसरि गई सुधि ता दिन की तोहि हरे सवन के चीर ॥ यह वाणी सुनि ग्वारि विवस भई तनु की सुधि बिसराइ। सूर लकुट कर गिरत न जानी श्याम ठगौरी लाइ ॥ ८४४ ॥

राग हमीर

घट भर दियो श्याम उठाइ। नेक तनु की सुधि न ताको चली व्रज समुहाइ॥ श्याम सुंदर नयन भीतर रहे आनि समाइ। जहाँ जहाँ भरि दृष्टि देखौं तहाँ तहाँ कन्हाइ॥ उतहि ते एक सखी आई कहति कहा भुलाइ। सूर अबहीं हँसत आई चली कहा गँवाइ॥ ८४५॥

❀

(इस प्रकार जब कृष्ण ने अनेक गोपियों को छेड़ा तब वह यशोदा के पास शिकायत लेकर पहुँचीं।)

राग बिलावल

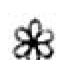
सुनहु महरि तेरो लाड़िलो अति करत अचगरी। यमुन भरन जल हम गई तहाँ रोकत डगरी॥ सिर ते नीर ढराइ देत फोरि सब गगरी। गेंडुरि दई फटकारि कै हरि करत है लँगरी॥ नित प्रति ऐसेई ढंग करै हमसों कहै धगरी। अब बस वास नहीं बनै यहि तुव व्रजनगरी॥ आपु गयो चढ़ि कदम हो चितवत रहि सिगरी। सूरश्याम ऐसेही सदा हमसों करै झगरी॥ ८५८॥

❀

राग रामकली

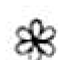
सुत को बरजि राखहु महरि। डगर चलन न देत काहुहि फोरि डारत ढहरि। श्याम के गुण कछु न जानति जाति हमसों

गहरि। इहै लालच गाइ दस लिए वसत है व्रज थहरि॥ यमुना तट हरि देखे ठाढ़े डरनि आवै वहरि। सूर श्यामहि नेकु बरजहु करत हैं अति चहरि॥ ८५९॥



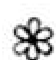
राग रामकली

तुमसों कहति सकुचति महरि। श्याम के गुण नहीं जानति जाति हमसों गहरि॥ नेकहूँ नहिं सुनति श्रवणनि करति है हम चहरि। जल भरन कोउ नहीं पावति रोकि राखत डहरि॥ अति अचगरी करत मोहन फटकि गेंडुरी दहरि। सूर प्रभु को कहा सिखयो रिसनि युवती झहरि॥ ८६०॥



राग धनाश्री

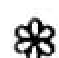
कहा करौं मोसों कहौ तुमहीं। जो पाऊँ तौ तुमहि देखाऊँ हाहा करिहौ अबहीं॥ तुमहूँ गुण जानति हो हरि के ऊखल बाँधे जबहीं। सँटिया लै मारन जब लागी तब बरज्यो मोहिं सबहीं॥ लरिकाई ते करत अचगरी मैं जाने गुण तबहीं। सूर हाल कैसे करिहौं घरि आवै धौं हरि अबहीं॥ ८६१॥



राग सारंग

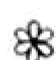
मैं जानति हौं ढोठ कन्हैया। आवन तौ घर देहु श्याम को जैसी करौं सजैया॥ मोसों करत ढिठाई मोहन मैं वाकी

हौं मैया। और न काहू को वह मानै कछु सकुचत बलभैया ॥ अब जो जाउँ कहाँ तेहि पावौं कासों देइ धरैया। सूर श्याम दिन दिन लंगर भयो दूरि करौं लँगरैया ॥ ८६२ ॥



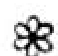
राग सूही

युवति बोधि सब घरहि पठाई। यह अपराध मोहिं बकसौ री इहै कहति हौ मेरी माई ॥ इतते चली घरनि सब गोपी उतते आवत कुँवर कन्हाई। बीचहि भेंट भई युवतिन हरि नैनन जोरत गए लजाई ॥ जाहु कान्ह महतारी टेरति बहुत बड़ाई करि हम आई। सूर श्याम मुख निरखि निरखि हँसि मैं कैहौं जननी समुझाई ॥ ८६३ ॥



राग नट

सकुचत गए घर को श्याम। द्वार ही ते निरखि देख्यो जननी लागी काम ॥ इहै बाणी कहति मुख ते कहाँ गयो कन्हाई। आप ठाढ़े जननि पाछे सुनत है चित लाई ॥ जल भरन युवती न पावैं घाट रोकत जाइ। सूर सबके फोरि गागरि श्याम गयो पराइ ॥ ८६४ ॥



राग नटनारायण

यशुमति यह कहि कै रिस पावति। रोहिणि करति रसोई भीतर कहि कहि तिनहि सुनावति ॥ गारी देत बहू बेटिन को

वै धाई ह्यां आवति। हा हा करति सबनि सों मैं ही कैसेहु छूँट छँड़ावति ॥ जाति पाति सों कहा अचगरी यह कहि सुतहि धिरावति। सूर श्याम को सिखवत हारी मारेहु लाज न आवति ॥ ८६५ ॥



राग सारङ्ग

तू मोहीं को मारन जानति। उनके चरित कहा कोउ जानै उनहि कही तू मानति ॥ कदम तीर ते मोहिं बुलायो गढ़ि गढ़ि बातैं बानति। मटकत गिरी गागरी सिर ते अब ऐसी बुधि ठानति ॥ फिर चितई तू कहाँ रह्यो कहि मैं नहिं तोको जानति। सूर सुतहि देखत ही रिस गई मुख चूमति उर आनति ॥ ८६६ ॥



राग गौरी

झूठहि सुतहि लगावति खोरि। मैं जानति उनके ढँग नीके बातैं मिलवति जोरि ॥ वे यौवनमद की सब माती कहाँ मेरो तनक कन्हाई। आपुहि फोरि गागरी सिर ते उरहन लीन्हे आई ॥ तू उनके ढिग जाति कितहि है वै पापिनि सब सारि। सूर श्याम अब कह्यो मानि तू हैं सब ढीठ गुवारि ॥ ८६७ ॥



राग मोहन

मोहन बाल गोविंदा माई मेरो कहा जानै चोरि। उरहन लै युवती सब आवति झूँठी बतियाँ जोरि॥ कोऊ कहति गेंडुरि मेरि लीन्हो कोऊ कहत गगरी गये फोरि। कोऊ चोली हार बतावति कान्हहु हये भोरि॥ अब आवे जो उरहन लैके तौ पठऊँ मुँह मोरि। सूर कहाँ मेरो तनक कन्हाई आपुन यौवन जोरि॥ ८६८॥



राग कान्हरो

ब्रज घर घर यह बात चलावत। यशुमति को सुत करत अचगरी यमुना जल कोउ भरन न पावत॥ श्याम वरन नटवर वपु काछे मुरली राग मलार बजावत। कुंडल छवि रवि किरनहुँ ते द्युति मुकुट इंद्र धनु ते शोभावत॥ मानत काहु न करत अचगरी गागरि धरि जल भुइँ ढरकावत। सूर श्याम को मात पिता दोउ ऐसे ढँग आपुनहिं पढ़ावत॥ ८६९॥



राग गौरी

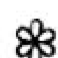
करत अचगरी नंदमहर को। सखा लिये यमुनातट बैठो निवहत नहिं सब लोग डहर को॥ कोऊ खिझो कोऊ कितने बरजो युवतिन के मन ध्यान। मन क्रम वचन श्यामसुंदर ते और न जानति आन॥ इह लीला सब श्याम करत हैं ब्रज

युवतिन के हेत। सूर भजे जेहि भाव कृष्ण को ताको सोइ फल देत ॥ यमुनाजल कोउ भरन न पावै। आपुन बैठे कदम डार चढ़ि गारी दै दै सबनि बोलावै ॥ काहू की गगरी गहि फोरत काहू सिर ते नीर ढरावै। काहू सों करि प्रीति मिलतु है नैनसैन दे चितहि चुरावै ॥ बरबस ही अँकवारि भरत धरि काहू सों अपनो मन लावै। सूर श्याम अति करत अचगरी कैसेहुँ काहू हाथ न आवै ॥ ८७० ॥



राग नट

राधा सखियन लई बोलाइ। चलहु यमुना जलहि जैये चलीं सब सुख पाइ ॥ सबनि एक एक कलस लीन्हों तुरत पहुँची जाइ। तहाँ देख्यो श्यामसुंदर कुँवरि मन हरषाइ ॥ नंद-नंदन देखि रीझे चिते रहे चितलाइ। सूर प्रभु की प्रिया राधा भरत जल मुसुकाइ ॥ ८७३ ॥



(घड़ा भर के राधा घर की ओर चली)

राग जयतश्री

गागरि नागरि लिये पनिघट ते चली घरहि आवै। ग्रीवा डोलत लोचन लोलत हरि के चितहि चुरावै ॥ ठठकति चलै मटकि मुँह मोरे बंकट भौंह चलावै। मनहु काम सैना अँग शोभा अंचल ध्वज फहरावै ॥ गति गयंद कुच कुंभ किंकिनी

मनहुँ घंट भहनावै। मोतिनहार जलाजल मानौं खुमीदंत भल-कावै॥ मानहु चंद महावत मुख पर अंकुश बेसरि लावै। रोमावली सूँड़ि तिरनीलौं नाभि सरोवर आवै॥ पग जे हरि-जंजीरनि जकरयो यह उपमा कछु पावै। घटजल भलकि कपोलनि किनुका मानों मदहि चुवावै॥ बेनी डोलति दुहुँ नितंब पर मानहुँ पूँछ हलावै। गज सिरदार सूर को स्वामी देखि देखि सुख पावै॥ ८७६॥



राग मलार

मेरी गैल न छाँड़े साँवरो मैं क्यों करि पनघट जाउँ री। यहि सकुचनि डरपति रहों मोहिं धरै न कोउ नाउँ री॥ जित देखों तित दीखे री रसिया नंदकुमार री। इत उत नैन चुराइ कै मोहिं पलकन करत जुहार री॥ लकुट लिये आगे चलै हो पंथ सँवारत जाइ री। मोहि निहोरो लाइ कै वह फिरि चितवै मुसुकाइ री॥ सौ कंचुकि अँचरा उचै मेरो हियरा तकि लल-चाइ री। यमुनाजल भरि गागरि लै जब सिर चलत उचाइ री॥ गागरि मारै कांकरी सों लागे मेरे गात री। गैल माँझ ठाढ़ो रहै मोहिं खुंवटै आवत जात री॥ हौं सकुचनि बोलों नहीं लोकलाज की शंक री। मो तन छ्वैवै हरि चलै वह छवि भरतु है अंक री॥ निकट आइ मुख निरखि के सकुचे बहुरि निहारि री। अब ढँग ओढ़ी ओढ़नी पीतांबर मोपै वारि

री ॥ जब कहुँ लग लागे नहीं तब वाको जिव अकुलाइ री । तब हठि मेरी छाँह सों वह राखै छाँह छुआइ री ॥ को जानै कित होत है री घर गुरुजन की शोर री । मेरो जिव गांठी बँध्यो पीतांबर की छोर री ॥ अब लौं सकुच अटक रही अब प्रगट करौं अनुराग री । हिलिमिलि कै सँग खेलिहौं मानि आपनो भाग री ॥ घर घर ब्रजवासी सबै कोउ किन करै पुकारि री । गुप्त प्रीति परगट करौं कुल की कान नियारि री ॥ जब लगि मन मिलयो नहीं तब नची चौप के नाच री । सूर श्याम सँग ही रहौं सब करौं मनोरथ साँच री ॥८८०॥



राग गौरी

परयो तब ते ठग मूरि ठगौरी । देख्यो मैं यमुना-तट बैठो ढोटा यशुमति को री ॥ अति साँवरो भरयो सो साँचै कीन्हे चन्दन खोरी । मन्मथ कोटि कोटि गहि वारौं ओढ़े पीत पिछोरी ॥ दुलरी कंठ नयन रतनारे मो मन चितै हरयो री । बिकट भ्रुकुटि की ओर कोर ते मन्मथ बाण धरयो री ॥ दमकत दशन कनककुण्डल मुख मुरली गावत गौरी । श्रवणन सुनत देह गति भूली भई विकल मति बौरी ॥ नहिं कल परत बिना दरशन ते नयननि लगी ठगौरी । सूर श्याम चित टरत न नेकहु निशि दिन रहत लगौरी ॥ ८८३ ॥



राग सारङ्ग

देखन दै पिय मदन गोपालहि। हा हा हो पिय पा लागति हौं जाइ सुनौं बन बेनु रसालहि॥ लकुट लिये काहे को त्रासत पति बिन मति बिरहनि बेहालहि। अति आतुर आराधि अतिक दुख तोहिं कहा डर तिन यम कालहि॥ मन तौ पिय पहिले ही पहुँच्यो प्राण तहीं चाहत चित चालहि। कहि तू अपने स्वारथ सुख को रोकि कहा करि है खल खालहि॥ लेहु सँभारि सु खेह देह की को राखै इतने जंजालहि। सूर सकल सखियन ते आगे अबहीं मूढ़ मिलति नँदलालहि॥८८८॥



(इस तरह सब गोपियाँ मोहित होकर कृष्ण के दर्शन और मिलाप के लिए लालायित रहती थीं॰। इस समय नन्द ने अपने कुल-देव इन्द्र की पूजा का महोत्सव किया और सब गोपों को निमन्त्रण दिया।)

राग सूही

बाजति नंद अवास बधाई। बैठे खेलत द्वार आपने सात बरष के कुँवर कन्हाई॥ बैठे नंद सहित वृषभानुहि और गोप बैठे सब आई। थापे देत घरन के द्वारे गावति मंगल नारि सुहाई॥ पूजा करत इन्द्र की जानी आए श्याम तहाँ अतुराई। बूझत बार बार हरि नंदहिं कौन देव की करत पुजाई॥ इन्द्र

॰ कृष्ण के प्रति गोपियों के प्रेम के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्ध अध्याय २१–२२। लल्लूजीलालकृत प्रेमसागर अध्याय २४। और बहुत से कवियों ने भी इस विषय पर रचना की है।

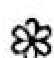
बड़े कुल देव हमारे उनते सब यह होत बड़ाई। सूर श्याम तुम्हरे हित कारण यह पूजा हम करत सदाई ॥ ९१२ ॥



(पर कृष्ण ने कहा कि मुझे एक बड़े अवतारी पुरुष ने स्वप्न में कहा है कि यह तुम किसकी पूजा करते हो। तुम गोवर्द्धन पर्वत की पूजा करो। तब व्रजवासियों ने बड़ी धूमधाम से गोवर्द्धन-पूजा का महोत्सव किया।)

राग केदारो

बिनती करत सकल अहीर। सकल भरि भरि ग्वाल लै लै सिखर डारत छीर ॥ चल्यौ बहि चहुँ पास ते पय सुरसरी जल टारि। बसन भूषन लै चढ़ाए भीर अति नर नारि ॥ मूँदि लोचन भोग अर्प्यो प्रेम सों रुचि भारि। सबनि देखी प्रगट मूरति सहस भुजा पसारि ॥ रुचि सहित गिरि सबनि आगे करनि लै लै खाइ। नंदसुत महिमा अगोचर सूर क्यों कहै गाइ ॥ ९२८ ॥



राग गौड़ मलार

गोपनंद उपनंद वृषभानु आए। बिनय सब करत गिरिराज सों जोरि कर गए तनु पाप तुव दरश पाए ॥ देवता बड़ो तुम प्रकट दरशन दियो प्रकट भोजन कियो सबनि देख्यो। प्रकट वाणी कही राजगिरि तुम सही और नहीं तिहूँ भुवन

कहूँ पेल्यो ॥ हँसत हरि मनहि मन तकत गिरिराज तन देव परसन भए करो काजा। सूर प्रभु प्रगट लीला कही सबनि सों चले घर घरनि अपने समाजा ॥ ९३९ ॥



(अपने स्थान पर गोवर्द्धन की पूजा देखकर इन्द्र ने विचार किया—)

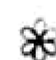
राग सारंग

ब्रज के वासिन मो विसरायो। भलो करी बलि मेरी जो कछु सो लै सब पर्वतहि जिमायो॥ मोसों गर्व कियो लघु प्राणी ना जानिये कहा मन आयो। त्रिदस कोटि अमरन को नायक जानि बूझि इन मोहिं भुलायो॥ अब गोपन भूतल नहिं राखौं मेरी बलि मोको न चढ़ायो। सुनहु सूर मेरे मारत धौं पर्वत कैसे होत सहायो॥ ९४२ ॥



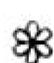
राग सोरठ

प्रथमहि देउ गिरिहि बहाइ। बज्रघातनि करौं चूरन देउ धरणि मिलाइ॥ मेरी इन महिमा न जानी प्रगट देउँ दिखाइ। जल बरषि ब्रज धोइ डारौं लोग देउँ बहाइ॥ खात खेलत रहे नीके करि उपाधि बनाइ। बरष दिवस मोहिं देत पूजा दई सोऊ मिटाइ॥ रिस सहित सुरराज लीन्हें प्रबल मेघ बुलाइ। सूर सुरपति कहत पुनि पुनि परौ ब्रज पर धाइ॥ ९४३ ॥



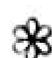
राग मेघ मलार

सुनत मेघ वर्तक साजि सैन लै आए। जलवर्त वारिवर्त पवनवर्त बज्रवर्त आगिवर्तक जलद संग ल्याए॥ घहरात तरतरात गररात हहरात पररात झहरात माथ नाये। कौन ऐसो काज बोले हम सुरराज प्रलय के साज हमको बुलाए॥ बरष दिन संयोग देत मोकों भोग क्षुद्रमति ब्रज लोग गर्व कीनो। मोहिं गए बिसराइ पूज्यो गिरिवर जाइ परौ ब्रज पर धाइ आयसु यह दीनो॥ कितक ब्रज के लोग रिस करत किहिं योग गिरि लियो भोगफल तुरत पैहैं। सूर सुरपति सुन्यो बयो जैसो लुन्यो प्रभु कहा गुन्यो गिरिसहित वैहैं॥ ९४४॥



राग मलार

विनती सुनहु देव मघवापति। कितिक बात गोकुल ब्रजवासी बार बार रिष करत जाहि अति॥ आपुन बैठि देखियो कौतुक बहुतै आयसु दीनों। छिन में बरषि प्रलय जल पाटौं खोजु रहै नहिं चीनो॥ महाप्रलय हमरे जल बरषै गगन रहे भरि छाइ। अछय वृक्ष बट बढ़तु निरंतर कहा ब्रज गोकुल गाइ॥ चले मेघ माथे कर धरि कै मन में क्रोध बढ़ाइ। उमड़त चले इन्द्र के पायक सूर गगन रहे छाइ॥ ९४५॥



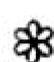
राग गौड़ मलार

मेघ दल प्रबल ब्रज लोग देखैं। चकित जहाँ तहाँ भए निरखि बादर नए ग्वाल गोपाल डरि गगन पेखैं ॥ ऐसे बादर सजल करत अति महाबल चलत घहरात करि अंधकाला। चकृत भये नंद सब महर चकृत भए चकृत नरनारि हरि करत ख्याला ॥ घटा घन घोर घहरात अररात दररात सररात ब्रज-लोग डरपै। तड़ित आघात तररात उतपात सुनि नर नारि सकुचि तनु प्राण अरपै ॥ कहा चाहत हौन भई न कवहूँ जौन कबहूँ आँगन भौंन विकल डोलै। मेटि पूजा इंद्र नंदसुत गोविंद सूर प्रभु करै आनंद कलोलै ॥ ९४६ ॥



राग गौड़ मलार

सैन साजि ब्रज पर चढ़ि धावहि। प्रथम वहाइ देउ गोवर्धन ता पाछे ब्रज खोदि बहावहि ॥ अहिरन करी अवज्ञा प्रभु की सो फल उन कहँ तुरत देखावहि। इंद्रहि पेलि करी गिरि पूजा सलिल बरषि ब्रज नाउँ मिटावहि ॥ वल समेत निशि वासर वरषहु गोकुल वोरि पताल पठावहि। सूरदास सुरपति आज्ञा यह भूतल कतहूँ रहन न पावहि ॥ ९४७ ॥



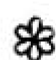
राग मेघ मलार

बादर घुमड़ि उमड़ि आए ब्रज पर बर्षत कारे धूमरे घटा अति ही जल। चपला अति चमचमाति ब्रजजन सब डरडरात टेरत शिशु पिता मात ब्रज गलबल ।। गर्जत ध्वनि प्रलयकाल गोकुल भयो अंधकार चकृत भए ग्वाल बाल घहरत नभ करत चहल। पूजा मेटि गोपाल इंद्र करत इहै हाल सूर श्याम राखहु अब गिरिवर बल ।। ६४८ ।।



राग गौड़ मलार

गिरि पर बरषन आये बादर। मेघवर्त जलवर्त सैन सजि आये लै लै आदर ।। सलिल अखंड धार धर टूटत कियो इंद्र मन सादर। मेघ परस्पर यहै कहत हैं धोइ करहु गिरि खादर ।। देखि देखि डरपत ब्रजबासी अतिहि भए मन कादर। यहै कहत ब्रज कौन उबारै सुरपति किये निरादर ।। सूरश्याम देखे गिरि अपने मेघनि कीनो दादर। देव आपनो नहीं सँभारत करत इंद्र सों ठादर ।। ६४९ ।।



राग मलार

गए बितताइ ब्रज नरनारि। धरत सँतत धाम बासन नाहिं सुरति सम्हारि ।। पूजि आए गिरि गोवर्धन देति पुरुषनि गारि। आपनो कुलदेव सुरपति धरयो ताहि बिसारि ।। दियो

फल यह गिरि गोबर्धन लेहु गोद पसारि। सूर कौन सम्हारि लैहै चढ़्यो इंद्र प्रचारि ॥ ९५० ॥



राग सोरठ

ब्रज के लोग फिरत बितताने। गैयन लै वन ग्वाल गए ते धाए आवत ब्रजहि पराने ॥ कोऊ चितवत नभतन चकृत ह्वै कोउ गिरि परत धरनि अकुलाने। कोऊ लै ओट रहत वृच्छन की अंध धुंध दिशि विदिशि भुलाने ॥ कोउ पहुँचे जैसे तैसे गृह कोउ ढूँढ़त गृह नहिं पहिचाने। सूरदास गोवर्धन पूजा कीने कर फल लेहु विहाने ॥ ९५१ ॥



राग नट

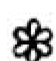
तरपत नभ डरपत ब्रज लोग। सुरपति की पूजा बिसराई लै दीनों पर्वत को भोग ॥ नंदसुवन यह बुधि उपजाई कौन देव कह्या पर्वत योग। सूरदास गिरि बड़ो देवता प्रगट होइ ऐसे संयोग ॥ ९५२ ॥



राग नट

ब्रज नर नारि नंद यशुमति सों कहत श्याम ए काज करे। कुल देवता हमारे सुरपति तिनको सब मिलि मेटि धरे ॥

इंद्रहि मेटि गोवर्धन थाप्यो उनकी पूजा कहा सरे। सैंतत फिरत जहाँ तहाँ बासन लरिकनु लै लै गोद भरे ॥ को करि लेइ सहाइ हमारो प्रलय काल के मेघ अरे। सूरदास प्रभु कहत नारि नर क्यों सुरपति पूजा बिसरे ॥ ९५३ ॥



राग बिलावल

राखि लेहु गोकुल के नायक। भीजत ग्वाल गाइ गोसुत सब विषम बूँद लागत जनु सायक ॥ बरषत मूसलधार सैना-पति महामेघ मघवा के पायक। तुम बिनु ऐसो कौन नंदसुत यह दुख दुसह मिटावन लायक ॥ अघ मर्दन बकवदन बिदा-रन बकी बिनाशन सब सुखदायक। सूरदास प्रभु ताकी यह गति जाके तुमसे सदा सहायक ॥ ९५४ ॥



राग मेघ मलार

गगनमेघ घहरात थहरात गात। चपला चमचमाति चमकि नभ भहरात राखि ले क्यों न ब्रजनंद तात ॥ सुनत करुणा बैन उठे हरि चले ऐन नैन की सैन गिरि तन निहारयो। सबनि धीरज दियो उचकि मंदर लियो कह्यो गिरिराज तुमको उबारयो ॥ करज के अग्र भुजवाम गिरिवर धरो नाम गिरिधर परयो भक्त काजै। सूर प्रभु कहत ब्रजवासिन सों राखि तुम लिए गिरिराज राजै ॥ ९६० ॥

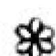
राग मलार

वाम कर जु टेक्यो व्रजराज। गोपी गाइ ग्वाल गोसुत सब दुख विसारयो सुख करत समाज॥ आनँद करत सकल गिरिवरतर दुख डारयो सब ही विसराइ। चकृत भये देखत यह लीला सबै परत हरि चरणन धाइ॥ गिरिवर टेकि रहे बायें कर दच्छिण कर लियो सखनि उठाइ। कान्ह कहत ऐसो गोवर्धन देख्यो कैसो कियो सहाइ॥ गोप बाल नंदादिक जहँ लों नंद सुअन लिए निकट बुलाइ। सूरदास प्रभु कहत सबनि सों तुमहूँ मिलि टेकौ गिरि आइ॥ ९६२॥



राग मलार

गिरि जनि गिरे श्याम के कर ते। करत विचार सबै व्रजबासी भय उपजत अति डरते॥ लै लै लकुट ग्वाल सब धाए करत सहाय उठे हैं तुरते। यह अति प्रबल श्याम अति कोमल रवकि रवकि उर परते॥ सप्त दिवस कर पर गिरि धारयो वर्षा बरषि हारयो अंबर ते। गोपी ग्वाल नंदसुत राख्यो बरषत मेघधार जलधर ते॥ यमलार्जुन दोउ सुत कुवेर के तेउ उखारे जर ते। सूरदास प्रभु इंद्रगवन कियो व्रज राख्यो है वर ते॥ ९६३॥



राग मलार

बरषत मेघवर्त ब्रज ऊपर। मूसल धार सलिल बरषतु है बूँद न आवत भू पर॥ चपला चमकि चमकि चकचौंधति करति शब्द आघात। अंधाधुंध पवनवर्तक घन करत फिरत उत्पात॥ निशि सम गगन भयो आच्छादित बरषि बरषि झर इंदु। ब्रजबासी सुख चैन करत हैं कर गिरिवर गोविंद॥ मेघ बरषि जल सबै बढ़ाने दिविगुन गये सिराइ। वैसोइ गिरिवर वैसोइ ब्रजबासी दूनो हरष बढ़ाइ॥ सात दिवस जल वर्षि निशा दिन ब्रज घर घर आनंद। सूरदास ब्रज राखि लियो धरि गिरिवर नँदनंद॥ ९६७॥

❀

राग धनाश्री

कहा होत जल महा प्रलय को। राख्यो सैंति सैंति जेहि कारज बचत नहीं बहुतन को॥ भुव पर एक बूँद नहिं पहुँची निझरि गए सब मेह। बासर सात अखंडित धारा बरषत हारे देह॥ बरुन भयो बिन नीर सबनि को नाम रह्योहै बादर। सूर चले फिरि अमरराज पर ब्रज ते भए निरादर॥९७१॥

❀

राग मलार

मघवनि हारि मानि मुख फेरेउ। नीके गोप बड़े गोबर्धन जब नीके ब्रज हेरेउ॥ नीके गाइ बच्छ सब नीके नीके बाल

गोपाल। नीको वन वैसी ये यमुना मन मन भयो बिहाल ॥ गोकुल व्रज वृंदावन मारग नेक नहीं जलधार। सूरदास प्रभु अगणित महिमा कहा भयो जलसार ॥ ९७२ ॥



(इन्द्र कृष्ण की शरण आया, पैरों पर गिर पड़ा और बहुत-बहुत स्तुति करने लगा। कृष्ण ने उसे क्षमा करके विदा कर दिया। कृष्ण ने तब पर्वत से हाथ हटा लिया और फिर धूमधाम से गोवर्द्धन-पूजा का समारोह किया। नन्द, यशोदा और सब गोप-गोपियाँ कृष्ण को प्रेम से बधाइयाँ देने लगे।)

राग सोरठ

गिरिवर कैसे लियो उठाई। कोमल कर चाँपति यशुदा यह कहि लेत बलाई ॥ महाप्रलय जल तापर राख्यो एक गोवर्धन भारी। नेक नहीं हाल्यो नख पर ते मेरो सुत अहँकारी ॥ कंचनथार दूध दधि रोचन सजि तमोर लै आई। हरषति तिलक करति मुख निरखति भुज भरि कंठ लगाई ॥ रिस करि कै सुरपति चढ़ि आयो देतो व्रजहि बहाई। सूर श्याम सों कहति यशोदा गिरिधर बड़ो कन्हाई ॥ १००१ ॥



राग सोरठ

धरणीधर क्यों राख्यो दिन सात। अतिहि कोमल भुजा तुम्हारी चाँपति यशुमति मात ॥ ऊँचो अति विस्तार भार बहु यह कहि कहि पछितात। वह अघात तेरे तनक तनक कर कैसे

राख्यो तात ॥ मुख चूमति हरि कंठ लगावति देखि हँसत बल भ्रात । सूर श्याम को केतिक बात यह जननी जोरति नात* ॥ १००२ ॥



(इसके बाद सूरदास ने यही गोवर्द्धन-लीला, अपनी रीति के अनुसार, दूसरे भजनों में गाई है । कुछ दिन बाद वरुण देवता नन्द को

---

* गोवर्द्धन-लीला के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध, पूर्वार्ध, अध्याय २४–२५ । सूरदास की कविता भागवत की कविता से कितनी बढ़ी-चढ़ी है यह सूरकृत वर्षा-वर्णन को निम्नलिखित वर्णन के साथ मिलाने से मालूम हो जायगा ।

श्रीशुक उवाच ॥ इत्थं मघवताऽऽज्ञप्ता मेघा निर्मुक्तबन्धनाः ।
नन्दगोकुलमासारैः पीडयामासुरोजसा ॥ ८ ॥
विद्योतमाना विद्युद्भिः स्तनन्त स्तनयित्नुभिः ।
तीव्रैर्मरुद्गणैर्नुन्ना ववृषुर्जलशर्कराः ॥ ९ ॥
स्थूणास्थूला वर्षधारा मुञ्चत्स्वभ्रेष्वभीक्ष्णशः ।
जलौघैः प्लाव्यमानाभूर्नादृश्यत नतोन्नतम् ॥ १० ॥
अत्यासारातिवातेन पशवो जातवेपनाः ।
गोपा गोप्यश्च शीतार्ता गोविन्दं शरणं ययुः ॥११॥
शिरः सुतांश्च कायेन प्रच्छाद्यासारपीडिताः ।
वेपमाना भगवतः पादमूलमुपाययुः ॥ १२ ॥
कृष्ण कृष्ण महाभाग त्वन्नाथं गोकुलं प्रभो ॥
त्रातुमर्हसि देवान्नः कुपिताद्भक्तवत्सल ॥ १३ ॥
दशम स्कन्ध पूर्वार्ध, अध्याय २५ ।

देखिए लल्लूजीलालकृत प्रेमसागर, अध्याय २४–२७ । हिन्दी के अनेक कवियों ने गोवर्द्धन-लीला का वर्णन किया है ।

हर ले गया। कृष्णजी उनको छुड़ा लाये। सब लोगों ने समझा कि यह कोई बड़े अवतार हैं।)

अथ दानलीला। राग रामकली

नँदनंदन इक बुद्धि उपाई। जे जे सखा प्रकृति के जाने ते सब लये बोलाई॥ सुबल सुदामा श्रादामा मिलि श्रौर महर सुत आए। जो कछु मंत्र हृदय हरि कीन्हों ग्वालन प्रगट सुनाए॥ व्रज युवती नित प्रति दधि बेचन बनि बनि मथुरा जाति। राधा चंद्रावलि* ललितादिक बहु तरुणी यक भाँति॥ कालिंदी तट कालि प्रात ही द्रुम चढ़ि रह्यो लुकाइ। गोरस लै जबहीं सब आवैं मारग रोकहु जाइ॥ भली बुद्धि इह रची कन्हाई सखनि कह्यो सुख पाइ। सूरदास प्रभु प्रीति हृदय की सब मन गए जनाइ॥ १०७३॥



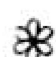
राग रामकली

प्रातहि उठी गोप कुमारि। परस्पर बोली जहाँ तहाँ यह सुनी बनवारि॥ प्रथम ही उठि सखा आये नंद के दरबार। आइये उठि कै कन्हाई कह्यो बारंबार॥ ग्वाल टेर सुनत यशोदा कुँवर दियों जगाइ। रहे आपुन मौन साधे उठे तब अकुलाइ॥ मुकुट शिर कटि कसि पीतांबर मुरली लीन्हीं हाथ। सूर प्रभु कालिंदी तट गए सखा लीने साथ॥ १०७४॥

* चन्द्रावली सखी पर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 'चन्द्रावली' नामक एक नाटक लिखा है।

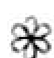
राग रामकली

भली करी उठि प्रातहि आए। मैं जानत सब ग्वारि उठी जब तब तुम मोहिं बोलाए ॥ अब आवति ह्वै हैं दधि लीन्हें घर घर ते ब्रजनारी। हँसे सबै करतारी दै दै आनँद कौतुक भारी ॥ प्रकृति प्रकृति अपने ढिग राखे संगी पाँच हजार। और पठाइ दिये सूरज प्रभु जे जे अतिहि कुमार ॥ १०७५ ॥



राग बिलावल

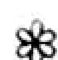
हँसत सखनि यह कहत कन्हाई। जाइ चढ़ौ तुम सघन द्रुमनि पर जहँ तहँ रहो छिपाई ॥ तब लौं बैठि रहौ मुँह मूदे जब जानहु अब आई। कूदि परोगे द्रुमनि द्रुमनि ते दै दै नंद दोहाई ॥ चकित होहिं जैसे युवतीगण डरनि जाहिं अकुलाई। बेनु बिषान मुरलि ध्वनि कीजो शंख शब्द घहनाई ॥ नित प्रति जाति हमारे मारग इह कहियो समुझाई। सूर श्याम माखन दधि दानी यह सुधि नाहिन पाई ॥ १०७६ ॥



राग बिलावल

श्याम सखन ऐसो समुझावत। ब्रज बनिता ललितादिक इनको देखि बहुत सुख पावत ॥ कालि जात यह मारग देखी तब यह बुद्धि उपाई। अब आवति ह्वै हैं बनि बनि सब मोही

सों चित लाई ॥ तुम सों कछू दुरावत नाहीं कहत प्रगट करि बात। सुनहु सूर लोचन मेरे विनु राधा मुख अकुलात ॥१०७७॥



राग बिलावल

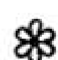
व्रजयुवती मिलि करति बिचार। चलो आजु प्रातहि दधि वेचन नित तुम करति अबार ॥ तुरत चलो अबहीं फिरि आवैं गोरस बेचि सवारैं। माखन दधि घृत साजति मटुकी मथुरा जान विचारैं ॥ षटदस सहस शृंगार करति हैं अंग अंग सब निरखि सँवारति। सूरदास प्रभु प्रीति सबनि की नेक न हृदय बिसारति ॥ १०७८ ॥



राग धनाश्री

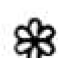
युवती अंग शृंगार सँवारति। वेनी गूँथि माँग मोतिन की शीशफूल सिर धारति ॥ गोरे भाल बिंद सेंदुर पर टीका धरयो जराउ। वदन चंद्र पर रवि तारागण मानों उदित सुभाउ ॥ सुभग श्रवण तरिवन मणि भूषित यह उपमा नहिं पार। मनहुँ काम रचि फंद वनाए कारण नंदकुमार ॥ नासा नथ मुकुता की शोभा रह्यो अधर तट जाई। दाड़िम कनशुक लेत बन्यो नहिं कनक फंद रह्यो आई ॥ दमकत दशन अरुण धरनी तर चिवुक डिठौना भ्राजत। दुलरी अरु तिलरी वँद तापर सुभग हमेलै विराजत ॥ कुच कंचुकी हार मोतिन अरु भुजन बिजयठे

सोहत । डारन चुरी करन फुंदनावनि कंज पास अलि जोहत ॥ क्षुद्रघंटिका कटि लहँगा रँग तन तनसुख की सारी । सूर ग्वालि दधि बेचन निकरी पग नूपुर ध्वनि भारी ॥ १०७९ ॥



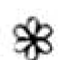
राग नट नारायणी

दधि बेचन चली ब्रजनारि । शीश धरि धरि माट मटुकी बड़ी शोभा भारि ॥ निकसि ब्रज के गईं गोंड़े हरप भई सुकुमारि । चलीं गावति कृष्ण के गुण हृदय ध्यान बिचारि ॥ सबन के मन जो मिलै हरि कोउ न कहति उघारि । सूर प्रभु घट घट के व्यापी जानि लई बनवारि ॥ १०८० ॥



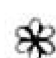
राग जयतश्री

हरि देखी युवती आवति जब । सखन कह्यो तुम जाइ चढ़ौ द्रुम बैठि रहौ दुरि जहाँ तहाँ सब ॥ चढ़े सबै द्रुम डार ग्वालगण सुनत श्याम मुख बानी । धोखे धोखे रहे सबै हम श्याम भली यह जानी ॥ नव सत साजि शृंगार युवति सब दधि मटुकी लिये आवत । सूर श्याम छबि देखत रीझे मन मन हरष बढ़ावत ॥ १०८१ ॥



राग धनाश्री

सखा और सँग लिये कन्हाई। आपुन निकसि गये आगे को मारग रोक्यो जाई॥ यहि अन्तर युवती सब आईं बन लाग्यो कछु भारी। पाछे युवति रहीं तिन टेरत अबहिं गई तुम हारी॥ तरुणी जुरि यक संग भईं सब इत उत चलीं निहारत। सूरदास प्रभु सखा लिये सँग ठाढ़े इहै विचारत॥ १०८२॥



राग गौरी

ग्वारिन तब देखे नँदनंदन। मोर मुकुट पीतांवर काछे खौरि किये तनु चंदन॥ तब यह कह्यो कहाँ अब जैहौ आगे कुँवर कन्हाई। यह सुनि मन आनंद बढ़ायो मुख कहैं बात डराई॥ कोउ कोउ कहति चलौ री जाई कोउ कहै फिरि घर जाइ। कोउ कोउ कहति कहा करि है हरि इनको कहाँ पराइ॥ कोउ कोउ कहति कालि ही हमको लूटि लई नँदलाल। सूर श्याम के ऐसे गुण हैं घरहि फिरौ ब्रजवाल॥ १०८३॥



राग सोरठ

ग्वालन सैन दियो तब श्याम। कूदि कूदि सब परहु द्रुमन ते जात चलो घर वाम॥ सैन जानि तब ग्वाल जहाँ तहँ द्रुम द्रुम डार हलाए। वेनु विषान शंख मुरली ध्वनि सब एक शब्द बजाए॥ चकृत भईं तरु तरु प्रति देखति डारनि

डारनि ग्वाल। कूदि कूदि सब परे धरणि में घेरि लई व्रजबाल॥ नित प्रति जात दूध दधि बेचन आजु पकरि हम पाई। सूर श्याम को दान देहु तब जैहौं नंद दोहाई॥ १०८४॥



राग नट

ग्वारिन यह भलो नहीं करति। दूध दधि घृत नितहि बेचति दान देते डरति॥ प्रात ही लै जाति गोरस बेचि आवति राति। कहौ कैसे जानिये तुम दान मारे जाति॥ कालिंदीतट श्याम बैठे हमहिं दियो पठाइ। यह कह्यो हरि दान माँगहु जाति नितहि चुराइ॥ तुम सुता वृषभानु की वै बड़े नंदकुमार। सूर प्रभु को नाहिं जानति दान हाट बजार॥ १०८५॥



राग कान्हरा

यह सुन हँसीं सकल व्रजनारी। आनि सुनहु री बात नई इक सिखये हैं महतारी॥ दधि माखन खैवे को चाहत माँगि लेहु हम पास। सूधे बात कहौ सुख पावैं बाँधन कहत अकास॥ अब समुझी हम बात तुम्हारी पढ़े एक चटसार। सुनहु सूर यह बात कहौ जिनि जानति नंदकुमार॥ १०८६॥



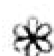
राग धनाश्री

बात कहति ग्वालिन इतराति। हम जानी अब बात तुम्हारी सूधे नहिं बतराति ।। इहै बड़ो दुख गाँव बास को चीन्हे कोउ न सकात। हरि माँगत हैं दान आपनो कहत माँगि किन खात ।। हाट बाट सब हमहिं उगाहत अपनो दान जगात। सूरदास को लेखो दीजै कोउ न कहै पुनि बात ।। १०८७ ।।



राग कान्हरा

कौन कान्ह को तुम कहा माँगत। नीके करि सबको हम जानति बातैं कहत अनागत ।। छाँड़ि देहु हमको जनि रोकहु वृथा बढ़ावति रारि ! जैहै बात दूरि लौं ऐसी परिहै बहुरि खँभारि ।। आजुहि दान पहरि ह्याँ आए कहा दिखावहु छाप। सूर श्याम वैसेहि चलौ ज्यों चलत तुम्हारो बाप ।। १०८८।।



राग कान्हरा

कान्ह कहत दधिदान न दैहौ। लैहौं छीन दूध दधि माखन देखत ही तुम रैहौ।। सब दिन को भरि लेहुँ आजु ही तब छाड़ौं मैं तुमको। उघटति है तुम मात पिता लौं नहिं जानो तुम हमको ।। हम जानति हैं तुमको मोहन लै लै गोद खिलाए। सूर श्याम अब भए जगाती वै दिन सब बिसराए ।। १०८९ ।।



राग कान्हरा

अजहूँ माँगि लेहु दधि दैहौं। दूध दही माखन जो चाहो सहज खाहु सुख पैहौं ॥ तुम दानी ह्वै आए हम पर यह हमको नहिं भावत। करौ तहीं लै निवहै जोइ जाते सब सुख पावत ॥ हमको जान देहु दधि बेंचन पुनि कोउ नाहि न लैहै। गोरस लेत प्रात ही सब कोउ सूर धरयो पुनि रैहै ॥ १०९० ॥

❀

राग कान्हरा

दान दियें विन जान न पैहौ। जब देहौं ढराइ सब गोरस तवहिं दान तुम दैहौ ॥ तुमसों बहुत लेन है मोको यह लै ताहि सुनावहु। चोरी आवति बेंचि जाति सब पुनि गोरस बहुरो कहँ पावहु ॥ माँगत छाप कहा दिखराऊँ को नहिं हमको जानत। सूर श्याम तब कह्यो ग्वारि सों तुम मोको क्यों मानत ॥ १०९१ ॥

❀

राग रामकली

कहा हमहिं रिस करत कन्हाई। इह रिस जाइ करौ मथुरा पर जहाँ है कंस बसाई ॥ हम अब कहा जाइ गुहरावैं बसत तुम्हारे गाउँ। ऐसे हाल करत लोगन के कौन रहै यहि ठाउँ ॥ अपने घर के तुम राजा हौ सबको राजा कंस। सूर श्याम हम देखत ठाढ़े अब सीखे ए गंस ॥ १०९२ ॥

❀

राग देवगंधारी

का पर दान पहिरि तुम आए। चलहु जु मिलि उनही में जैए जिन तुम रोकन पंथ पठाए॥ सखासंग लीन्हे जु सँति के फिरत रैनि दिन बन में धाए। नाहि न राज कंस को जान्यो बाट रोकते फिरत पराए॥ लीन्हे छीन बसन सबही के सबही लै कुंजनि अरुझाए। सूरदास प्रभु के गुण ऐसे दधि के माट भूमि ढरकाए॥ १०९३॥



राग सूही

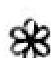
जाइ सबै कंसहि गुहरावहु। दधि माखन घृत लेत छँड़ाए आजुहि मोहि हजूर बोलावहु॥ ऐसे को कह मोहि बतावति पल भीतर गहि मारौं। मथुरापतिहि सुनोगी तुमही जब वाके धरि केस पछारौं॥ बार बार दिन हमहिं बतावत अपनो दिन न बिचारो। सूर इंद्र ब्रज तबहिं बहावत तब गिरि राखि उबारो॥ १०९४॥



राग गूजरी

गिरि वर धरयो अपने घर को; ताही के बल तुम दान लेत हौ रोंकि रहत हौ हमको॥ अपने ही मुख बड़े कहावत हमहू जानति तुमको। इह जानत पुनि गाइ चरावत नितप्रति जात हौ बन को॥ मोर मुकुट मुरली पीतांबर देखो आभूषन

सब बन को। सूरदास काँधे कामरिहू जानति हाथ लकुट कंचन को ॥ १०६५ ॥



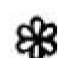
राग बिलावल

यह कमरी कमरी करि जानति। जाके जितनी बुद्धि हृदय में सो तितनी अनुमानति ॥ या कमरी के एक रोम पर वारों चीर नील पाटंबर। सो कमरी तुम निंदति गोपी जो तीन लोक आडंबर ॥ कमरी के बल असुर सँहारे कमरिहि ते सब भोग। जाति पाँति कमरी सब मेरी सूर सबहि यह योग ॥ १०६६ ॥



राग बिलावल

धनि धनि यह कामरि हो मोहन श्यामलाल की। इहै ओढ़ि जात बनहि इहै सेज करत हौ तुम मेह बूँद निरवारन इहै छाँह घाम की ॥ इहै उठि गुन करत है पुनि शिशिर शीत इहै हरति गहने लै धरति ओट कोट वाम की। इहै जाति इहै पाँति परिपाटी यह सिखवति सूरदास प्रभु के यह सब विशराम की ॥ १०६७ ॥



राग बिलावल

अब तुम साँची बात कही। एते पर युवतिन को रोकत माँगत दान दही ॥ जो हम तुमहि कह्यो चाहत ही सो श्रीमुख

प्रगटायो । नीके जाति उघारि आपनी युवतिन भले हँसायो ॥ तुम कमरी के ओढ़नहारे पीतांबर नहिं छाजत । सूरदास कारे तनु ऊपर कारी कमरी भ्राजत ॥ १०९८ ॥



राग बिलावल

मोसों बात सुनहु ब्रजनारि । एक उपखान चलत त्रिभुवन में तुमसों आजु उघारि ॥ कबहूँ बालक मुँह न दीजिए मुँह न दीजिए नारि । जोइ मन करै सोइ करि डारै मूँड़ चढ़त है भारि ॥ बात कहत अठिलात जाति सब हँसत देति करतारि । सूर कहा ए हमको जानै छाछिहि वेचनहारि ॥ १०९९ ॥



राग बिलावल

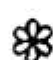
यह जानति तुम नंदमहरसुत । धेनु दुहत तुमको हम देखति जबहि जात खरिकहि उत ॥ चोरी करत रहौ पुनि जानति घर घर ढूँढ़त भाँड़े । मारग रोकि भये अब दानी वै ढँग कब ते छाँड़े ॥ और सुनहु यशुमति जब बाँधे तब हम कियो सहाइ । सूरदास प्रभु यह जानति हम तुम ब्रज रहत कन्हाइ ॥ ११०० ॥



राग आसावरी

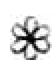
को माता को पिता हमारे । कब जनमत हमको तुम देख्यो हँसी लगत सुनि बात तुम्हारे ॥ कब माखन चोरी करि

खायो कब बाँधे महतारी। दुहत कौन की गैया चारत बात कही यह भारी॥ तुम जानति मोहिं नंद ढुटौना नंद कहाँ ते आए। मैं पूरन अविगति अविनाशी माया सबनि भुलाए॥ यह सुनि ग्वालि सबै मुसकानी ऐसेउ गुण हौ जानत। सूर श्याम जो निदरयो सबही मात पिता नहिं मानत॥ ११०१॥



राग सोरठ

तुमको नंदमहर भरुहाए। माता गर्भ नहीं तुम उपजे तौ कहौ कहाँ ते आये॥ घर घर माखन नहीं चुरायो ऊखल नहीं बँधाये। हाहाकरि यशुमति के आगे तुमको नाहिं छुड़ाये॥ ग्वालिन संग संग वृंदावन तुम नहिं गाइ चराये। सूर श्याम दस मास गर्भ धरि जननि नहीं तुम जाये॥ ११०२॥



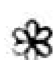
राग टोडी

भक्तहेतु अवतार धरयो। कर्म धर्म के बस मैं नाहीं योग जग्य मन मैं न करयो॥ दीन गुहारि सुनौ श्रवणनि भरि गर्व वचन सुनि हृदय जरौं। भाव अधीन रहौं सबही के और न काहू नेक डरौं॥ ब्रह्मकोटि आदिलौं व्यापक सब को सुख दै दुखहि हरौं। सूर श्याम तब कही प्रगट ही जहाँ भाव तहँ ते न टरौं॥ ११०३॥



राग धनाश्री

कान्ह कहाँ की बात चलावत। स्वर्ग पताल एक करि राखौ युवतिन को कहि कहा बतावत ॥ जो लायक तौ अपने घर को वन भीतर डरपावत। कहा दान गोरस को ह्वैहै सबै न लेहु देखावत ॥ रीती जान देहु घर हमको इतने ही सुखपावत। सूर श्याम माखन दधि लीजै युवतिन कत अरुझावत ॥११०४॥



राग धनाश्री

माखन दधि कह करौं तुम्हारो। मैं मन में अनुमान करौं नित मोसों कैहै बनिज पसारो ॥ काहे को तुम मोहिं कहत हौ जोबन धन ताको करि गारो। अब कैसे घर जान पाइहौ मोको यह समुझाइ सिधारो ॥ सूर बनिज तुम करत सदा लेखो करिहौं आजु तिहारो ॥

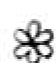


राग सूहवी

ऐसी कहौ बनिज को अटकी। मुख मुख हेरि तरुनि मुसकानी नैन सैन दै दै सब मटकी ॥ हमहू कह्यो दान दधि को कहा माँगत कुँवर कन्हाई। अबलौं कहा मौन धरि बैठे तबहीं नहीं सुनाई ॥ हँसि वृषभानुसुता तब बोली कहा बनिज हम पास। सूर श्याम लेखो करि लीजै जाहि सबै व्रजबास ॥ ११०५ ॥

राग बिलावल

कहौ तुमहि हमको कहा बूझति । लै लै नाम सुनावहु तुमहीं मोसों कहा अरूझति ॥ तुम जानति मैं हूँ कछु जानत जो जो माल तुम्हारे । डारि देहु जापर जो लागै मारग चलौ हमारे ॥ इतने ही को सोर लगायो अब समझी यह बात । सूर श्याम के बचन सुनहु री कछु समुझति हौ घात ॥ ११०६ ॥



राग बिलावल

इनहीं धौं बूझौ यह लेखो । कहा कहैंगे श्रवणनि सुनिए चरित नेक तुम देखो ॥ मन मन हरष भई सब युवती मुख ये बात चलावति । ज्यों ज्यों श्याम कहत मृदु बानी त्यों त्यों अति सुख पावति ॥ कोउ काहू को भेद न जानत लोग सकुच उर मानत । सूरदास प्रभु अंतर्यामी अंतर्गत की जानत ॥ ११०७ ॥



राग बिलावल

कहो कान्ह कहाँ गथहै हमसों । जा कारण युवती सब अटकीं सो बूझत हैं तुमसों ॥ लौंग नारियल दाख सुपारी कहा लादे हम आवैं । हींग मिरच पीपरि अजवाइनि ये सब बनिज कहावैं ॥ कूट काइफर सोंठि चिरैता कटजीरा कहुँ देखत । आलमजीठ लाख सेंदुर कहुँ ऐसे हि बुधि अवरेखत ॥ बाइबिरंग बहेरा हर्रे कहुँ बैल गोंद व्यापारी । सूर श्याम लरिकाई भूली जोवन भए मुरारी ॥ ११०८ ॥

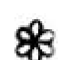
राग सूही

कवन वनिज कहि मोहिं सुनावति। तुम्हरो गथ लादो गयंद पर हींग मिरच पीपरि कहा गावति॥ अपनो बनिज दुरावत हौ कत नाउँ लियो यतनोही। कहा दुरावती हौ मो आगे सब जानत तुव गोही॥ बहुत मोल को बाबा तुम्हरो कैसे दुरत दुराए। सुनहु सूर कछु मोल लेहिंगे कछु इक दान भराए॥ ११०६॥



राग टोड़ी

दधि को दान मेटि यह ठान्यो। सुनहु श्याम अति चतुर भए हौ आजु तुमहि हम जान्यो॥ जो कछु दूध दह्यो हम देती लै खाते तुम ग्वाल। सोऊ खोइ हाथ ते बैठे हँसति कहति ब्रजबाल॥ यह सुनि श्याम सबनि कर ते दधि मटकी लई छँड़ाइ। आपन खाइ सखन को दीन्हों अति मन हरष बढ़ाइ॥ कछु खायो कछु भुँइ ढरकायो चितै रही ब्रजनारि। सूर श्याम वन भीतर युवती नए ढंग करत मुरारि॥ १११०॥



राग रामकली

प्यारी पीतांबर उर झटक्यो। हरि तोरी मोतिन की माला कछु गर कछु कर लटक्यो॥ ढीठो करन श्याम तुम लागे जाइ गही कटि फेट। आपु श्याम रिस करि अंकम भरि भई प्रेम की

भेट ॥ युवतिन घेरि लियो हरि को तब भरि भरि धरि अँकवारि। सखा परस्पर देखत ठाढ़े हँसत देत किलकारि ॥ हांक दियो करि नंद दोहाई आइ गए सब ग्वाल। सूर श्याम को जानत नाहीं ढीठ भई हैं बाल ॥ ११११ ॥



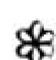
राग भैरव

हम भई ढीठ भले तुम्ह ग्वाल। दीन्हों ज्वाब दई को चैहौ देखौ री यह कहा जंजाल ॥ बनभीतर युवतिन को रोंकत हम खोटी तुम्हरे ये हाल। बात कहन को यों आवत है बड़े सुधर्मा धर्महिपाल ॥ साखि सखा की ऐसिय भरिहै तब आवहुगे जीति भुआल। आये हैं चढ़ि रिस करि हम पर सूर हमहि जानत बेहाल ॥ १११२ ॥



राग बिलावल

जानी बात तुम्हारी सबकी। लरिकाई के ख्याल तजौ अब गई बात वह तब की ॥ मारग रोंकत रहे यमुन को तेहि धोखे हौ आये। पावहुगे पुनि कियो आपनो युवतिन हाथ लगाये ॥ जो सुनिहैं यह बात मात पितु तब हमसे कहा कैहैं। सूर श्याम मोतिन लर तोरी कौन ज्वाब हम देहैं ॥ १११३ ॥



राग बिलावल नट

आपुन भई सबै अब भोरी। तुम हरि को पीतांबर झटक्यो उन तुम्हरी मोतिन लर तोरी॥ माँगत दान ज्वाब नहिं देती ऐसी तुम जोबन की जोरी। डर नहिं मानति नँदनंदन को करति आनि झकझोराझोरी॥ यक तुम नारि गँवारि भलीहौ त्रिभुवन में इनकी सरि को री। सूर सुनहु लेहैं छँड़ाइ सब अबहिं फिरौगी दौरी दौरी॥ ११११४॥



राग नट

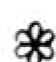
कहा बड़ाई इनकी सरि मैं। नंद यशोदा के प्रतिपाले जानति नीके करि मैं॥ तुम्हरे कहे सबन डर मान्यो हरिहि गई अति डरि मैं। बसुदेव डारि रातिही भागे आये हैं शुभ घरि मैं॥ अंग अंग को दान कहत हैं सुनत उठी रिस जरि मैं। तब पीतांबर झटकि लियो मैं सूर श्याम को धरि मैं॥ ११११५॥



राग गौरी

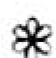
याते तुम को ढीठ कही। श्यामहि तुम भई झिरकनहारी एते पर पुनि हारि नहीं॥ तब ते हमहि देतहौ गारी हमको दोहति आपु दही। बनिज करति हमसों झगरतिहौ कहा कहैं हम बहुत सही॥ समुझि परी अब कछु जिय जान्यो ताते हौ

सब मौन रही। सूर श्याम व्रज ऊपर दानी यहि मारग अब तुम निबही ॥ १११६ ॥



राग कल्याण

तुम देखत रैहौ हम जैहैं। गारस बेंचि मधुपुरी ते पुनि येही मारग ऐहैं ॥ ऐसेही बैठे सब रैहौ बोले ज्वाव न दैहैं। धरि लेहैं यशुमति पै हरि को तब धौं कैसे कैहैं ॥ काहे को मोतिनलर तोरी हम पीतांबर लैहैं। सूर श्याम इतरात इते पर घर बैठे तब रैहैं ॥ १११७ ॥



राग कल्याण

मेरे हठ क्यों निबहन पैहौ। अब तो रोकि सबनि को राख्यो कैसे करि तुम जैहौ ॥ दान लेउँगो भरि दिन दिन को लेखो करि सब दैहौ। सौंह करत हौं नंदबबा की मैं कैहौ तब जैहौ ॥ आवत जात रहत येही पथ मोसों बैर बढ़ैहौ। सुनहु सूर हमसों हठ माँडति कौन नफा करि लैहौ ॥ १११८ ॥



राग कान्हरो

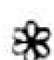
कौन बात यह कहत कन्हाई। समुझति नहीं कहा तुम माँगत डर पावत करि नंद दोहाई ॥ डरपावहु तिनको जे डरपहिं तुमते घटि हम नाहीं। मारग छाँड़ि देहु मनमोहन दधि बेचन

हम जाहीं ॥ भली करी मोतिनलर तोरी यशुमति सों हम लैहैं। सूरदास प्रभु इहै वनत नहिं इतनो धन कहा पैहैं ॥ १११९ ॥



राग कान्हरो

एक हार मोहिं कहा देखावति। नखशिख ते अँग अंगनि हारहु ए सब कतहि दुरावति ॥ मोतिन माँग जराइ को टीको कर्णफूल नकवेसर। कंठसिरी दुलरी तिलरी को और हार एक नवसर ॥ सुभग हमेल कनक अँगिया नग नगन जरित की चौकी। बाहुढाड कर कंकन बाजूबंद येते पर तौकी ॥ छुद्र-घंटिका पग नूपुर जेहरि बिछिया सब लेखौ। सहज अंग शोभा सब न्यारी कहत सूर ये देखौ ॥ ११२० ॥



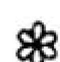
राग जयतश्री

याहू में कछु बाँट तुम्हारो। अचरज आइ सुनहु री माई भूषण देखि न सकत हमारो ॥ कहो ढिठाई हिए ते आपुन की यशुमति की नंद। बाट धरयो तुम इहै जानिकै करत ठगन के छंद ॥ जितनो पहिरि आपु हम आईं घर है याते दूनो। सूर श्याम हो बहुत लोभाने वन देख्यो धौं सूनो। ११२१ ॥



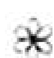
राग गौरी

बाँट कहा अब सबै हमारो । जब लौं दान नहीं हम पायो तब लौं कैसे होत तिहारो ॥ आभूषण की कौन चलावत कंचन घट काहे न उघारो । मदनदूत मोहिं बात सुनाई इनमें भरयो महारस भारो ॥ एक ओर यह अंग अभूषण सब एक ओर यह दान बिचारो । सुनहु सूर कहा बाट करैं हम दान देहु पुनि जहाँ सिधारो ॥ ११२२ ॥



राग कल्याण

श्याम भए ऐसे रस नागर । दिन द्वै घाट रोकि यमुना को युवतिन में तुम भए उजागर ॥ काँधे कामरि हाथ लकुटिया गाइ चरावन जाते । दही भात की छाक मँगावत ग्वालन सँग मिलि खाते ॥ अब तुम कर नवलासी लीने पीतांबर कटि सोहत । सूर श्याम अब नवल भए तुम नवल नारि मन मोहत ॥ ११२३ ॥



राग गौरी

दान देत की झगरो करिहौ । प्रथमहि यह जंजाल मिटावहु ता पाछे तुम हमहि निदरिहौ ॥ कहत कहा निदरेसेहौ तुम सहज कहति हम बात । आदि अन्यादि सबै हम जानति काहे को सतरात ॥ रिस करि करि मटुकी सिर धरि धरि डगरि चलीं

सब ग्वालिनि। सूर श्याम अंचल गहि झटकी जैहौ कहा बंजारिनि ॥ ११२४ ॥



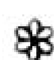
राग कल्याण

अब तुमको मैं जान न दैहौं। दान लेउँ कौड़ो कौड़ी करि बैर आपनो लैहौं ॥ गोरस खाइ बच्यो सो डारो मटुकी डारी फोरि। दै दै गारि नारि झकझोरी चोली के बँद तोरि॥ हँसत सखा कर तारी दै दै बन में रोकी नारि। सुनत लोग घर ते आवहिंगे सकिहौ नहीं सम्हारि ॥ घर के लोगनि कहा डरावत कंसहि आनि बुलाइ। सूर सबै युवतिन के देखत पूजा करौं बनाइ ॥ ११२५ ॥



राग गौरी

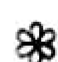
जो तुमही हौ सबके राजा। तो बैठो सिंहासन चढ़ि कै चमर छत्र सिर भ्राजा ॥ मोर मुकुट मुरली पीतांबर छाँड़ि देहु नटवर को साजा। बेनु विषान शृंग क्यों पूरत बाजै नौबति बाजा ॥ यह जो सुनै हमहू सुख पावै संग करै कछु काजा। सूर श्याम ऐसी बातें सुनि हमको आवति लाजा ॥११२६॥



राग कल्याण

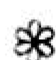
तुम्हारे चित रजधानी नीकी। मेरे दास दासनि के चेरे तिनको लागति फीकी ॥ ऐसी कहि मोहि कहा सुनावति तुमको

इहै अगाध। कंस मारि सिर छत्र धराओं कहा तुच्छ यह साध॥ तबहीं लौं यह संग तिहारो जब लगि जीवत कंस। सूर श्याम के मुख यह सुनि तब मन मन कीन्हों संस॥ ११२७॥



राग जयतश्री

भलो करी हरि माखन खायो। इहै मानि लीनी अपने शिर उबरो सो ढरकायो॥ राखी रही दुराइ कमोरी सो लै प्रगट देखायो। यह लीजै कछु और मँगावें दान सुनत रिस पायो॥ दान दिये बिनु जान न पैहौ कब मैं दान छुटायो। सूर श्याम हठ परे हमारे कहो न कहा लदायो॥ ११२८॥



राग धनाश्री

लैहौं दान इनन को तुमसों। मत्त गयंद हंस हमसों हैं कहा दुरावति तुमसों॥ केहरि कनक कलश अमृत के कैसे दुरै दुरावति। विद्रुम हेम बज्र के किनुका नाहिन हमहि सुनावति॥ खग कपोत कोकिला कीर खंजनहू शुक मृग जानति॥ मथि कंचन के चित्र जरे हैं एते पर नहिं मानति॥ सायक चाप तुरय बनिजति हौ लिये सबै तुम जाहू। चंदन चमरसुगंध जहाँ तहँ कैसे होत निबाहू॥ यह बनिजति वृषभानुसुता तुम हम सों बैर बढ़ावति। सुनहु सूर एते पर कहति हैं हम धौं कहा लदावति॥ ११२६॥



राग सोरठ

यह सुनि चकृत भईं ब्रजबाला। तरुणी सब आपुस में बूझति कहा कहत गोपाला ॥ कहाँ तुरग कहाँ गज केहरि कहाँ हंस सरोवर सुनिए। कंचन कलश गढ़ाये कब हम देखे धौं यह गुनिये ॥ कोकिल कीर कपोत बनन में मृग खंजन शुक संग। तिनको दान लेत है हमसों देखहुँ इनको रंग ॥ चंदन चौर सुगंध बतावत कहाँ हमारे पास। सूरदास जो ऐसे दानी देखि लेहु चहुँ पास ॥ ११३० ॥



राग गुनकरी

भूलि रहे तुम कहाँ कन्हाई। तिनको नाउ लेत हम आगे जो सपने कहुँ दृष्टि न आई ॥ हैवर गैवर सिंह हंसवर खग मृग कहँ हैं हम लीन्हें। सायक धनुष चक्र सुनि चकृत चमर न देखे चीन्हें ॥ चंदन और सुगंध कहत हौ कंचन कलश बतावहु। सूर श्याम ये सब जो द्वै हैं तबहिं दान तुम पावहु ॥११३१॥

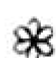


राग गूजरी

इतने सबै तुम्हारे पास। निरखि न देखहु अंग अंग अब चतुराई के गाँस ॥ तुरत ही निरुवारि डारहु करति कहत अबेर। तुम कहो कछु हमहुँ बोलैं घरहि जाहु सबेर। कनक तुम परतच्छ देखहु सजे नवसत अंग। सूर तुमसों रूप जोवन धरयो एकहि संग ॥ ११३२ ॥

राग बिलावल

प्रगट करौ सब तुमहि बतावैं। चिकुर चमर घूँघट है बरबर भुवमारंग देखावैं॥ बाण कटाक्ष नयन खंजन मृग नासा शुक उपमांउ। तरिवनचक्र अधर विद्रुम छवि दशन बज्र कन-ठांउ॥ ग्रीव कपोत कोकिला बाणी कुच घट कनक सुभाउ। जोवन मद रस अमृत भरे हैं रूप रंग झलकाउ॥ अंग सुगंध बसन पाटंवर गनि गनि तुमहि सुनाउ। कटि केहरि गयंद गति शोभा हंस सहित यकताउँ॥ फेरि किये कैसे निबहति है घरहि गए कहा पाउँ। सुनहु सूर यह बनिज तुम्हारे फिर फिर तुमहि मनाउँ॥ ११३३॥



राग नट

माँगत ऐसे दान कन्हाई। अब समुझी हम बात तुम्हारी प्रगट भई कछुधौं तरुनाई॥ यहि लालच अँकवारि भरत हौ हार तोरि चोली झटकाई। अपनी ओर देखि धौं लीजै ता पाछे करियै बरिआई॥ सखा लिये तुम घेरत पुनि पुनि बन भीतर सब नारि पराई। सूर श्याम ऐसी न बूझियै इनि बातनि मर्यादा जाई॥ ११३४॥



राग नट

हम पर रिस करति ब्रजनारि। बात सूधे हम बतावत आपु उठत पुकारि॥ कबहुँ मर्यादा घटावति कबहुँ देहै गारि। प्राततें

झगरो पसारो दान देहु निवारि ॥ बड़े घर की बहू बेटी करति वृथा झवारि। सूर अपनो अंश पावै जाहिं घर झखमारि ॥११३५॥



राग सारंग

तुमहि उलटि हम पर सतराने। जो कछु हमको कहन बूझिए सो तुम कहि आगे अतुराने ॥ यह चतुराई कहा पढ़ी हरि थोरे दिन अति भये सयाने। तुमको लाज होत की हमको बात परै जो कहुँ महराने ॥ ऐसो दान और पै माँगहु जो हम सों कहौ छबिछाने। सूरदास प्रभु जान देहु अब बहुरि कहौगे कालि बिहाने ॥ ११३६ ॥



राग सारंग

श्यामहि बोलि लियो ढिग प्यारी। ऐसी बात प्रगट कहुँ कहिये सखनि माँझ कत लाजन मारी ॥ एक ऐसेहि उपहास करत सब तापर तुम यह बात पसारी। जाति पाँति के लोग हँसिहिंगे प्रगट जानि है श्याम भतारी ॥ लाजन मारत हौ कत हमको हा हा करति जाति बलिहारी। सूर श्याम सर्वज्ञ कहावत मात पिता सों खावत गारी ॥ ११३७ ॥



राग सारंग

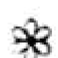
जबहि ग्वारि यह बात सुनाई। सखा सखनि तबहीं लखि लीन्हीं सदा श्याम की प्रकृति सुभाई ॥ सुनहुँ प्यारि इक

बात सुनावों जो तुम्हरे मन आवै। तुम प्रति अंग अंग की शोभा देखत हरि सुख पावै ॥ तुम नागरी नवल नागर वै दोऊ मिलि करौ विहार। सूर श्याम श्यामा तुम एकै कहा हँसि है संसार ॥ ११३८ ॥



राग नट

नंदसुवन यह बात कहावत। आपुन जोवन दान लेत हैं तापर जोइ सोइ सखन सिखावत ॥ वै दिन भूलि गए हरि तुमको चोरी माखन खाते। खीझत ही भरि नयन लेत है डर-डरात भजि जाते। यशुमति जब ऊखल सों बाँधति हमही छोरति जाइ। सूर श्याम अब बड़े भये हौ जोवनदान सुहाइ ॥११३९॥



राग टोडी

लरकाई की बात चलावति। कैसी भई कहा हम जानै नेकहु सुधि नहिं आवति ॥ कब माखन चोरी करि खायो कब बाँधे धौं मैया। भले बुरे को मात पिता तन हरषतही दिन जैया ॥ अपनी बात खबरि करि देखहु न्हात यमुन के तीर। सूर श्याम तब कहत सबनि के कदम चढ़ाए चीर ॥ ११४० ॥



राग गूजरी

सबै रही जलमाँझ उघारी। बार बार हा हा करि थाकी मैं तट लिये हँकारी ॥ आई निकसि बसन बिनु तरुनी बहुत करी

मनुहारी। कैसे हास भए तब सबके सो तुम सुरति बिसारी॥ हमहि कहति दधि दूध चुराये अरु बाँधे महतारी। सूर श्याम के भेद वचन सुनि हँसि सकुचीं व्रजनारी॥ ११४१॥

❀

राग गूजरी

कहा भए अति ढीठ कन्हाई। ऐसी बात कहत सकुचत नहि कह धौं अपनी लाज गवाई॥ जाहु चले लोगनि के आगे झूठी बानी कहत सुनाई। तुम हँसि कहत ग्वाल सुनिके सब घर घर कैहैं जाई॥ बहुत होहुगे दसहि बरस के बात कहत हौ बनै बनाई। सूर श्याम यशुमति के आगे इहै बात सब कैहैं जाई॥ ११४२॥

❀

राग हमीर

झूठी बात कहा मैं जानौं। जो हमको जैसेहि भजै री ताको तैसेहि मानौं। तुम पति कियो मोहिको मन दै मैं हौं अन्तर्यामी॥ योगी को योगी ह्वै दरसौं कामी को ह्वै कामी॥ हमको तुम झूठे करि जानति तौ काहे तप कीन्हों। सुनहु सूर अब निठुर भई कत दान जात नहि दीन्हों॥ ११४३॥

❀

राग गौरी

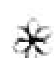
दान सुनत रिस होइ कन्हाई। और कहौ सो सब सहि लैहैं जो कछु भली बुराई॥ महतारी तुम्हरी के वै गुण उरहन

देत रिसाई। तुम नीके ढँग सीखे वन में रोकत नारि पराई॥ आव न जाव न पावत कोऊ तुम मग में घटवाई। सूर श्याम हमको विरमावत खीझत बहिनी माई॥ ११४४॥



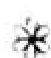
राग गौरी

काहे को तुम झेर लगावति। दान देहु घर जाहु बेंचि दधि तुमही को यह भावति॥ प्रीति करौ मोसों तुम काहे न बनिज करति व्रजगाउँ। आवहु जाहु सबै यहि मारग लेत हमारो नाउँ॥ लेखो करौ तुमहि अपने मन जोइ देहो सोइ लेहौं। सूर सुभाइ चलहुगी जब तुम पुनि धौं मैं कह कैहौं॥११४५॥



राग कान्हरो

सुनहु आइ हरि के गुण माई। हम भई बनिजारिनि आपुन दानि भए कुँवर कन्हाई॥ कहा बनिज लै आई धौं हम ताको माँगत दान। कालिहि के ढँग पुनि आयं हैं नहिं जानत कछु आन॥ तुम गवाँरि एही मग आवति जानि बूझि गुण इनिके। सूर श्याम सुंदर बहु नायक सुखदायक सबहिन के॥ ११४६॥



राग टोडी

काहे को हम सों हरि लागत। बातहि कछू खोल रस नाहीं को जानै कहा माँगत॥ कहा स्वभाव परयो अबहीं ते इनि

बातन कछु पावत। निपट हमारे ख्याल परे हरि बन में नितहि खिझावत ॥ पैंड़ो देहु बहुत अब कीनों सुनत हँसहिंगे लोग। सूर हमहिं मारग जिनि रोकहु घर ते लीजै श्रोग ॥ ११४७ ॥



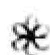
राग सूही

अब लों इहै करौ तुम लेखो। मोको ऐसी बुद्धि बतावत करकंकण दर्पण लै देखो ॥ आपुहि चतुरि आपु ही सब कछु हमको करति गवाँर। औगहै लेत फिरो इनके घर ठाढ़े हैं हैं द्वार ॥ घाट छाँड़ि जैहो तब लैहों ज्याब नृपति कहा दैहों। जा दिन ते यहि मारग आवति ता दिन ते भरि लेहों ॥ इनिको बुद्धि दान हम पहिरो काहे न घर घर जैहो। सूर श्याम तब कहत सखिन सों जान कौन विधि पैहो ॥ ११४८ ॥



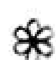
राग टोडी

भली भई नृप मान्यो तुमहू। लेखो करें जाइ कंसहि पै चले संग तुम हमहू। अब लों हम जानी ही घर ही पहिरयो है तुम दान। कालि कह्यो हो दान लेन को नंदमहर की आन ॥ तो तुम कंस पठाए हैं ह्यां अब जानी यह बात। सूर श्याम सुनि सुनि यह बानी भौंह मोरि मुसकात ॥ ११४९ ॥



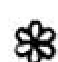
राग आसावरी

कहा हँसत मोरत हो भौंह । सोई कह्यो मनहि कहि आई तुमहि नंद की सौंह ॥ और सौंह तुमको गोधन की सौंह माइ यशुमति की। सौंह तुमहिं बलदाऊ की है कहो बात वा मन की ॥ बार बार तुम भौंह सकोर्‍यो कहा आपु हँसि रीझे। सूर श्याम हम पर सुख पायो की मन ही मन खीझे ॥११५०॥



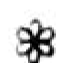
राग रामकली

हँसत सखन सों कहत कन्हाई । मैया की बाबा की दाऊ-जीकी सौंह दिवाई ॥ कहति कहा काहे हँसि हेर्‍यो काहे भौंह सकोर्‍यो। यह अचरज देखौ तुम इनिको कब हम वदन मरोर्‍यो ॥ ऐसी बातनि सौंह दिवावति अधिक हँसी मोहिं आवत। सूर श्याम कहि श्रीदामा सों तुम काहे न समुझावत ॥११५१॥



राग धनाश्री

श्रीदामा गोपिन समुझावत । हँसत श्याम के तुम कहा जान्यो काहे सौंह दिवावत ॥ तुमहूँ हँसो आपने सँग मिलि हम नहिं सौंह दिवावैं । तरुनिन की यह प्रकृति अनैसी थोरहि बात खिसावैं ॥ नान्हे लोगनि सौंह दिवावहु वै दानी प्रभु सबके। सूर श्याम को दान देहु री मांगत ठाढ़े कब के ॥ ११५२ ॥



राग जैतश्री

हम जानति वै कुँवर कन्हाई। प्रभु तुम्हरे मुख आजु सुनी हम तुम जानत प्रभुताई ॥ प्रभुता नहीं होति इनि बातनि मही दही के दान। वै ठाकुर तुम सेवक उनके जान्यों सबको ज्ञान ॥ दधि खायो मोतिन लर तोरयो घृत माखन सोउ लीजै। सूरदास प्रभु अपने सदका घरहि जान हम दीजै ॥११५३॥

❀

राग जैतश्री

तुम घर जाहु दान को दैहै। जेहि बीरा दै मोहिं पठायो सो मोसों कहा लैहै ॥ तुम गृह जाइ बैठि सुख करिहौ नृप गारी को खैहै। अबहीं बोलि पठावैं गोरी ता सन्मुख को जैहै ॥ जान कहै तुमको तुम जैहौ विधिना कैसे सैहै। सूर मोाह अटक्यो है नृपवर तुम बिनु कौन छँड़ैहै ॥ ११५४ ॥

❀

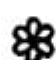
राग जैतश्री

नृप को नाँउ लेत तेही मुख जेहि मुख निंदा कालि करी। आपुन तौ राजनि के राजा आजु कहा सुधि मनहि परी ॥ भले श्याम ऐसी तुम कीनी कहा कंस को नाउँ लियो। जब हम सौंह दिवावन लागीं तबहिं कंस पर रोष कियो ॥ जाको निंदि बंदियै सो पुनि वह ताको निदरै। सूर सुनी वह बात कालि की तब जानी इनि कंस डरै ॥ ११५५ ॥

❀

राग आसावरी

कहा कहति कछु जानि न पायो। कब कंसहि धौं हम कर जोरयो कब वाको हम माथ नवायो॥ कबहूँ सौंह करत देख्यो मोहिं लेत कबहुँ मुख नाऊँ। निपटहि ग्वारि गँवारि भई तुम बसति हमारे गाऊँ॥ कहा कंस कितने लायक को जाको मोहिं देखावति। सुनहु सूर यहि नृप के हमहैं इह तुम्हरे मन आवति॥ ११५६॥



राग टोड़ा

कौन नृपति जाके तुमहौ। ताको नाउँ सुनावहु हमको यह सुनिकै अति पावभौ॥ यह संसार भुवन चौदह भरि कंसहि ते नहिं दूजो। सो नृप कहाँ रहत सुनि पावैं तव ताही को पूजो॥ कहाँ नाउँ केहि गाँउ बसत है ताही के ह्वै रहिए। सूरदास प्रभु कहै बनेगी झूठे हमहि निदरिए॥११५७॥



राग टोड़ी

मोसों सुनहु नृपति को नाउँ। तिहू भुवन भरि गम्य है जाको नर नारी सब गाउँ॥ गण गंधर्व वश्य वाही के अवर नहीं सरि ताहि; उनकी अस्तुति करौं कहाँ लगि मैं सकुचत हौं जाहि॥ तिनही को पठयो मैं आयो दियो दान को वीरा। सूर रूप जोवन धन सुनिकै देखत भयो अधीरा॥ ११५८॥



राग गौरी

पाई जाति तुम्हारे नृप की जैसे तुम तैसे वोऊ हैं। कहाँ रहे दुरिजाइ आजु लौं एई ढंग गुण के सोऊ हैं॥ यह अनुमान कियो मन में हम एकहि दिन जनमे दोऊ हैं। चोरी अपमारग बटपारयो इनि पटतर के नहिं कोऊ हैं॥ श्याम बनी अब जोरी नीकी सुनहु सखी मानत तेऊ हैं। सूर श्याम जितने अँग काछत युवती जन मन के गोऊ हैं॥ ११५९॥



राग गौरी

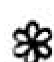
ठगति फिरति ठगिनी तुम नारि। जोइ आवति सोइ सोइ कह्य डारति जाति जनावति दै दै गारि॥ फँसिहारिनि बटपारिनि हम भईं आपुन भए सुधर्मा भारि। फंदाफाँसि कमानबानसों काहू डारत देख्यो मारि॥ जाके मन जैसोई बरतै मुखवानी कहिदेत उघारि। सुनहु सूर प्रभु नीके जान्यो व्रज युवती तुम सब बटपारि॥ ११६०॥



राग सूही

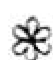
अपने नृप को इहै सुनायो। व्रजनारी बटपारिनि हैं सब चुगली आपुहि जाइ लगायो॥ राजा बड़े बात यह समुझो तुमको हम पर धौंस पठायो। फँसिहारिनि कैसे तुव जानी हम

कहुँ नाहिं न प्रगट देखायो ॥ व्रजबनिता फँसिहारी जो सब महतारी काहे न गनायो। फंदा फाँसि धनुष विष लाडू सूर श्याम नहिं हमहिं बतायो ॥ ११६१ ॥



राग भैरव

फंदा फाँसि बतावहु जो। अंगनि धरे छपाइ जहाँ जो प्रगट करौ सब दीन्हीं तो ॥ प्रथमहि शीश मोहिनी डारति ऐसे ताहि करत बसहै। विषलाडू दरसावति ले पुनि देह दसा पुनि बिसरति ज्यों ॥ ता पाछै फंदा गर डारति एहि भाँतिनि करि मारतिहै। सुनहु सूर ऐसे गुण तुम्हरे मोसों कहा उचारतिहै ॥ ११६२ ॥



राग भैरव

प्रगट करौ यह बात कन्हाई। बान कमान कहाँ केहि मारयो काके गर हम फाँसि लगाई ॥ काके सिर पढ़ि मंत्र दियो हम कहाँ हमारे पास दिनाई। मिलवत कहाँ कहाँ की बातैं हँसत कहति अति गइ सकुचाई ॥ तब मानै सब हमहुँ बतावहु कहो नहीं जो नंद दोहाई। सूर श्याम तब कह्यो सुनहुगी एक एक करि देउँ बताई ॥ ११६३ ॥



राग रागिनी

मोसों कहा दुरावति नारि। नयनसैन दै चितहि चुरावति इहै मंत्र टोना सिर डारि॥ भौंह धनुष अंजन गुन बान कटाच्छनि डारति मारि। तरिवन श्रवन फाँसि गर डारति कैसेहुँ नहीं सकत निरवारि॥ पीन उरोज मुख नैन चखावति इह विष-मोदक जात न झारि। घालति छुरी प्रेम की बानी सूरदास को सकै सँभारि॥ ११६४॥

❀

राग टोड़ी

अपनो गुण औरनि सिर डारत। मोहन जोहन मंत्र यंत्र टोना सब तुम पर वारत॥ तनु त्रिभंग अंग अंगमरोरनि भौंह वंक करि हेरत। मुरली अधर बजाइ मधुर सुर तरुनी मृगवन घेरत॥ नटवर भेष पीतांबर काछे छैल भए तुम डोलत। सूर श्याम रावरे ढँग ए अवरनि को ढँग बोलत॥ ११६५॥

❀

राग टोड़ी

जानी बात मौन धरि रहिए। इहै जानि हम पर चढ़ि आए जो भावै सो कहिए॥ हम नहिं बिलग तुम्हारो मान्यों तुम जनि कछु मन आनो। देखहु एक दोइ जनि भाषहु चारि देखि दुइगानो॥ दोवल देति सबै मोही को उन पठयो मैं आयो। सूर रूप जोबन की चुगली नैननि जाइ सुनायो॥ ११६६॥

❀

राग बिलावल

तब रिस करिकै मोहिं बोलायो। लोचन दूत तुमहिं इहि मारग देखत जाइ सुनायो॥ सोइ सब महलन ते सुनि बानी जोबन महलनि आयो। अपने कर वीरा मोहिं दीन्हों तुरत मोहि पहिरायो॥ बैठ्यो है सिंहासन चढ़िकै चतुराई उपजायो। मनतरंग आज्ञाकारी भृत तिनको तुमहि लगायो॥ तिनको नाम अनंग नृपतिवर सुनहु बात सुख पायो। सूर श्याममुख बात सुनत यह युवतिन तनु बिसरायो॥ ११६७॥



राग सूही

व्रज युवती सुन मगन भई। यह बानी सुनि नंदसुवन मुख मन व्याकुल तन सुधिहु गई॥ को हम कहाँ रहति कहाँ आई युवतिन के यह सोच पर्‍यो। लागी काम नृपति की साँटी जोबन रूपहि आनि अर्‍यो॥ तृषित भईं तरुनी अनंगडर सकुचि रूप जोबनहिं दियो। सूर श्याम अब शरन तुम्हारे हृदय सबनि यह ध्यान कियो॥ ११६८॥



राग जयतश्री

मन यह कहति देह बिसरायो। यह धन तुमही को सँचि राख्यो तेहि लीजै सुखपायो॥ जोबनरूप नहीं तुम लायक तुमको देत लजाति। ज्यों बारिध आगे जल किनिका विनय करति

एहि भाँति ॥ अमृत रस आगे मधुरंचक मनहिं करत अनुमान। सूर श्याम शोभा की सीवा को पटतर को आन ॥ ११६९ ॥



राग जयतश्री

अंतर्यामी जानिलई । मन में मिले सबनि सुख दीन्हों तब तनु की कछु सुरति भई ॥ तब जान्यो बन में हम ठाढ़ो तनु निरख्यो मन सकुचि गई । कहति परस्पर आपुस में सब कहाँ रहीं हम काहि रई ॥ श्याम विना ये चरित करै को यह कहि कै तनु सौंप दई । सूरदास प्रभु अंतर्यामी गुप्तहि जोबनदान लई ॥ ११७० ॥



राग रामकली

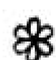
यह कहि उठे नंदकुमार । कहा ठगीसी रही बाला पर्यो कौन विचार ॥ दान को कछु कियो लेखो रही जहाँ तहाँ सोचि । प्रगट करि हमको सुनावहु मेटि जोरा दोचि ॥ बहुरि यहि मग जाहु आवहु राति साँझ सकार । सूर ऐसो कौन जो पुनि तुमहि रोकनहार ॥ ११७१ ॥



राग गूजरी

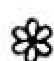
हमहिं और सो रोकै कौन । रोकनहारो नंदमहर सुत कान्ह नाम जाको है तौन ॥ जाके बल है काम नृपति को ठगत फिरत

युवतिन को जौन। टोना डारि देत सिर ऊपर आपु रहत ठाढ़ो ह्वै मौन॥ सुनहु श्याम ऐसी न बूझिए बानि परी तुमको यह कौन। सूरदास प्रभु कृपा करहु अब कैसेहु जाहि आपने भौन॥ ११७२॥



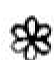
राग सूही

दान मानि घर को सब जाहु। लेखो मैं कहुँ कहुँ जानत हौं तुम समुझे सब होत निबाहु॥ पछिलो देहु निवारि आजु सब पुनि दीजौ जब जानौ कालि। अब मैं कहत भली हौं तुमसों जो तुम मोको मानौ ग्वालि॥ वृन्दावन तुम आवत डरपति मैं देहौं तुमको पहुँचाइ। सुनहु सूर त्रिभुवन बस जाके सो प्रभु युवतिन के बस आइ॥ ११७३॥



राग सूही

को जानै हरि चरित तुम्हारे। जब हूँ दान नहीं तुम पायो मन हरि लिये हमारे॥ लेखो करि लीजै मनमोहन दूध दह्यो कछु खाहु। सदमाखन तुम्हरेहि मुख लायक लीजै दान उगाहु॥ तुम खैहौ माखन दधि मोहन हम सब देखि देखि सुख पावैं। सूर श्याम तुम अब दधि दानी कहि कहि प्रगट सुनावैं॥ ११७४॥



राग गुंड

कान्ह माखन खाहु हम सब देखैं। सद्य दधि दूध ल्याई अवटि अबहिं हम खाहु तुम सफल करि जन्म लेखैं ॥ सखा सब बोलि बैठारि हरि मंडली बनहिं के पात दोना लगाये। देत दधि परुसि व्रजनारि जेंवत कान्ह ग्वाल सँग बैठि अति रुचि बढ़ाये ॥ धन्य दधि धन्य माखन धन्य गोपिका धन्य राधा वश्य है मुरारी। सूर प्रभु के चरित देखि सुरगन थकित कृष्ण सँग सुख करति घोषनारी ॥ ११७५ ॥



राग जैतश्री

माखन दधि हरि खात ग्वाल सँग। पातनि के दोना सबके कर लेत पतोखनि मुख मेलत रँग ॥ मटुकिन ते लै लै परुसति हैं हर्ष भरी व्रजनारि। यह सुख तिहूँ भुवन कहुँ नाहीं दधि जेंवत बनवारि ॥ गोपी धन्य कहति आपुन को धन्य दूध दधि माखन। जाको कान्ह लेत मुख मेलत कियो सबनि संभापन ॥ जो हम साध करति अपने मन सो सुख पायो नीके। सूर श्याम पर तन मन वारति आनँद जी सबही के ॥ ११७६ ॥



राग देवगंधार

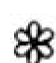
गोपिका अति आनंदभरी। माखन दधि हरि खात प्रेम सों निरखति नारि खरी ॥ कर लै लै मुख परस करावत उपमा बढ़ी

सुभाइ। मानहु कंज मिलतहूँ शशि को लिये सुधा करी कर-आइ॥ जा कारण शिव ध्यान लगावत शेष सहसमुख गावत। सोई सूर प्रगट ब्रजभीतर राधा मनहि चुरावत॥ ११७७॥



राग रामकली

राधा सों माखन हरि माँगत। औरनि की मटुकी को खायो तुम्हरो कैसो लागत॥ ले आई वृषभानुसुता हँसि सद-लोनी है मेरो। लै दीन्हों अपने कर हरिमुख खात अल्प हँसि हेरो॥ सबहिन ते मीठो दधि है यह मधुरे कह्यो सुनाइ। सूर-दास प्रभु सुख उपजायो ब्रजललना मन भाइ॥ ११७८॥



राम रामकली

मेरे दधि को हरि स्वाद न पायो। जानत इन गुजरिनि को सोहै लयो छिड़ाइ मिलि ग्वालनि खायो॥ धौरी धेनु दुहाइ छानि पय मधुर आँच में अवटि सिरायो। नई दोहनी पोंछ पखारी धरि निर्धूम खीरनि पर तायो॥ ता में मिलि मिश्रित मिश्री करि दै कपूर पुट जावन नायो। सुभग ढकनियाँ ढाँपि बाँधि पट जतन राखि छीकै समदायो॥ हौं तुम कारण लै आई गृह मारग में न कहूँ दरशायो। सूरदास प्रभु रसिक-शिरोमणि कियो कान्ह ग्वालिनि मन भायो॥ ११७९॥



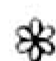
राग नट

गोपिन हेतु माखन खात। प्रेम के बस नंदनंदन नेक नहीं अघात॥ सबै मटुकी भरी वैसेहि प्रेम नहीं सिरात। भाव हृदये जान मोहन खात माखन जात॥ एकनि कर दधि दूध लीने एकनि कर दधि जात। सूर प्रभु को निरखि गोपी मनही मनहि सिहात॥ ११८०॥



राग बिहागरो

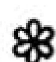
गोपी कहति धन्य हम नारि। धन्य दूध धनि दधि धनि माखन हम परुसति जेवत गिरिधारि॥ धन्य घोष धनि निशि धनि वह धनि धनि गोकुल प्रगटे बनवारि। धन्य सुकृत पाछिलो धन्य धनि धन्य नंद यशुमति महतारि॥ धनि धनि ग्वाल धन्य वृंदावन धन्य भूमि यह अति सुखकारि। धन्य दान धनि कान्ह मँगैया धन्य सूर तृण द्रुम बन डारि॥ ११८१॥



राग नट

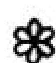
गण गंधर्व देखि सिहात। धन्य व्रजललनानि कर ते ब्रह्म माखन खात॥ नहीं रेख न रूप नहिं तनु वरन नहिं अनुहारि। मातु पितु दोऊ न जाके हरत मरत न जारि॥ आपु करता आपु हरता आपु त्रिभुवननाथ। आपही सब घट के व्यापी निगम गावत गाथ॥ अंग प्रति प्रति रोम जाके कोटि कोटि

ब्रह्मंड। कीट ब्रह्म पर्यन्त जल थल इनहि ते यह मंड॥ विश्व विश्वंभरन एई ग्वालसंग विलास। सोई प्रभु दधि दान माँगत धन्य सूरजदास॥ ११८२॥



राग रामकली

कंसहेतु हरि जन्म लियो। पापहि पाप धरा भई भारी तब हम सबनि पुकार कियो॥ शेषशैन जहँ रमा संग मिलि तहाँ अकाश भई यह बानी। असुर मारि भुवभार उतारौं गोकुल प्रगटौं आनी॥ गर्भ देवकी के तनु धरिहौं यशुमति को पय पीहौं। पूरब तप बहु कियो कष्ट करि इनि को बहुत ऋनी हौं॥ यह बानी कहि सूर सुरन को अब कृष्णावतार। कह्यो सबनि ब्रज जन्म लेहु सँग हमरे करहु बिहार॥ ११८३॥



राग गौरी

ब्रह्म जिनिहि यह आयसु दीन्हों। तिन तिन संग जन्म लियो ब्रज में सखी सखा करि परगट कीन्हों॥ गोपी ग्वालि कान्ह दोइ नाहीं एकहु नेक न न्यारे। जहाँ जहाँ अवतार धरत हरि ये नहिं नेक बिसारे॥ एकै देह बिहार करि राखे गोपी ग्वाल मुरारि। यह सुख देखि सूर के प्रभु को थकित अमर सँग नारि॥ ११८४॥



राग गौरी

अमरनारि अस्तुति करै भारी। एक निमिष व्रजवासिन को सुख नहिं तिहुँ भुवन विचारी ।। धन्य कान्ह नटवर बपु काछे धन्य गोपिका नारी। एक एक ते गुण रूप उजागरि श्याम भावती प्यारी ।। परुसति ग्वारि ग्वाल सब जेंवत मध्य कृष्ण सुखकारी। सूर श्याम दधि दानी कहि कहि आनँद घोषकुमारी ।। ११८५ ।।



राग टोड़ी

सुनहु सखी मोहन कहा कीन्हों। एक एक सों कहति बात यह दान लियो की मन हरि लीन्हों ।। यह तौ नाहिं बदी हम उनसों बूझहु धौं यह बात। चकृत भईं विचार करतु यह बिसरि गई सुधि गात ।। उमचि जाति तबहीं सब सकुचति बहुरि मगन ह्वै जाति। सूर श्याम सों कहौं कहा यह कहत न बनत लजाति ।। ११६० ।।



राग धनाश्री

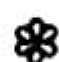
श्याम सुनहु एक बात हमारी। ढीठो बहुत कियो हम तुम सों सो वकसो हरि चूक हमारी ।। मुख जो कही कटुक सब बानी हृदय हमारे नाहीं। हँसि हँसि कहति खिझावति तुमको

अति आनँद मन माहीं ॥ दधि माखन को दान और जो जानो सबै तुम्हारो । सूर श्याम तुमको सब दीनों जीवनप्राण हमारो ॥ ११६१ ॥



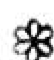
राग धनाश्री

नंदकुमार कहा यह कीन्हों । बूझति तुमहि कहौं धौं हमसों दान लियो की मन हरि लीन्हों ॥ कछू दुराव नहीं हम राख्यो निकट तुम्हारे आई । एते पर तुमही अब जानौं करनी भली बुराई ॥ जो जासों अंतर नहिं राखै सो क्यों अंतर राखै । सूर श्याम तुम अंतर्यामी वेद उपनिषद भाषै ॥ ११६२ ॥



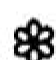
राग टोड़ी

सुनहु बात युवती इक मेरी । तुमते दूरि होत नहिं कतहूँ तुम राखौ मोहिं घेरी ॥ तुम कारण बैकुंठ तजत हौं जनम लेत व्रज आई । वृंदावन राधा सँग गोपी यह नहिं विसरयो जाई ॥ तुम अंतर अंतर कहा भाषति एक प्राण द्वै देह । क्यों राधा व्रज बसे विसारयो सुमिरि पुरातन नेह ॥ अब घर जाहु दान मैं पायो लेखो कियो न जाइ । सूर श्याम हँसि हँसि युवतिन सों ऐसी कहत बनाइ ॥ ११६३ ॥



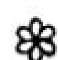
राग नट

घर तनु मनहिं बिना नहिं जात। आपु हँसि हँसि कहत हौ जू चतुरई की बात॥ तनहि पर है मनहि राजा जोइ करै सोइ होइ। कहौ घर हम जाहिं कैसे मन धर्यो तुम गोइ॥ नयन श्रवन विचार सुधि बुधि रहे मनहि लुभाइ। जाहि अबही तनहि लै घर परत नाहिन पाइ॥ प्रीति करि दुविधा करी कत तुमहि जानौ नाथ। सूर के प्रभु दीजिए मन जाइँ घर लै साथ॥ ११६४॥



राग कान्हरो

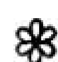
मन भीतर है वास हमारो। हमको लैकरि तुमहि छपायो कहा कहति यह दोष तुम्हारो॥ अजहुँ कहौ रैहैं हम अनतहि तुम अपनो मन लेहु। अब पछितानी लोकलाज डर हमहिं छाँड़ि तैं देहु॥ घटती होई जाहि ते अपनी ताको कीजै त्याग। धोखे कियो वास मनभीतर अब समुझे भइ जाग॥ मन दीन्हो मोको तब लीन्हों मन लैहो मैं जाउ। सूर श्याम ऐसी जनि कहिए हम यह कही सुभाउ॥ ११६५॥



राग कान्हरो

तुमहि विना मन धृक अरु धृक घर। तुमहि विना धृक धृक माता पितु धृक धृक कुलकानि लाजडर। धृक सुत पति धृक जीवन जग को धृक तुम बिन संसार। धृक सो दिवस

पहर घटिका पल धृक धृक यह कहि नंदकुमार ॥ धृक धृक श्रवण कथा विनु हरि के धृक लोचन विनरूप। सूरदास प्रभु तुम बिनु घर यौवन भीतर के कूप ॥ ११८६ ॥



(इसके बाद सूरदास ने अपनी रीति के अनुसार फिर यही विषय गाया है।)

(अन्त में गोपियाँ कृष्ण को छोड़कर घर की ओर चलीं।)

राग धनाश्री

मन हरि सों तनु घरहि चलावति। ज्यों गजमत्त जाल अंकुशकर घर गुरुजन सुधि आवति॥ हरिरसरूप इहै मद आवत डरडार्‍यो जु महावत। गेह नेह बंधन पग तोर्‍यो प्रेम सरोवर धावत॥ रोमावली सूँड़ विविकुच मनों कुंभस्थल छवि पावत। सूर श्याम केहरि सुनिके जोबन गज दर्प नवावत* ॥ १२७१ ॥



राग धनाश्री

युवती गईं घर नेक न भावत। मात पिता गुरुजन पूछत कछु औरै और बतावत॥ गारी देति सुनति नहिं नेकहु श्रवन

* यहाँ बाबू राधाकृष्णदास के संस्करण में पदों के नम्बर में बड़ा गड़बड़ है। अतएव संक्षिप्त सूरसागर के नम्बरों में कुछ भेद करना पड़ा है।

शब्द हरि पूरे। नैननहि देखत काहू को जो कहु होहिं अधूरे॥ बचन कहति हरिही के गुन को उतही चरण चलावै। सूर श्याम बिन और न भावै कोउ जितनो समुझावै॥ १२७२॥



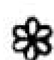
राग सोरठ

लोक सकुच कुलकानि तजी। जैसे नदी सिंधु को धावै तैसे श्याम भजी॥ मात पिता बहु त्रास दिखायो नेक न डरी लजी। हारि मानि बैठे नहिं लागति बहुतै बुद्धि सजी॥ मानत नहीं लोकमर्यादा हरि के रंग मजी। सूर श्याम को मिलि चूने हरदी ज्यों रंग रजी*॥ १२७३॥



राग सोरठ

वार बार जननी समुझावति। काहे को तुम जहँ तहँ डोलति हमको अतिहि लजावति॥ अपने कुल की खबरि करौ धौं सकुच नहीं जिय आवति। दधि बेचहु घर सूधे आवहु काहे भेर लगावति॥ यह सुनि कै मन हर्ष बढ़ायो तब इक बुद्धि बनावति। सुनि मैया दधि माट ढरायो तेहि डर बात न आवति॥ जान देहि कितनो दधि डार्यो ऐसे तब न सुनावति। सुनहु सूर यहि बात डरानी माता उर लै लावति॥ १२७४॥



* विहारी ने सतसई में इस विषय के अनेक दोहे कहे हैं।

राग सारंग

नेक नहीं घर मों मन लागत। पिता मात गुरुजन परबोधत नीके बचन बाणसम लागत॥ तिनको धृग धृग कहति मनहि मन इनको बनै भलेही त्यागत। श्यामविमुख नर नारि वृथा सब कैसे मन इनि सों अनुरागत॥ इनको बदन प्रात दरशै जिनि बार बार बिधि सों यह माँगत। यह तनु सूर श्याम को अर्प्यो नेक टरत नहिं सोअत जागत॥ १२७५॥



राग धनाश्री

पलक ओट नहिं होत कन्हाई। घर गुरुजन बहुतै बिधि त्रासत लाज करावत लाज न आई॥ नयन जहाँ दरशन हरि अटके श्रवण थके सुनि बचन सोहाई। रसना और नहीं कछु भाषत श्याम श्याम रट इहै लगाई॥ चित चंचल संगहि सँग डोलत लोकलाज मर्याद मिटाई। मन हरि लियो सूर प्रभु तबहीं तनु बपुरे की कहा बसाई॥ १२७६॥



राग बिलावल

चली प्रातही गोपिका मटुकिन लै गोरस। नयन श्रवन मन चित बुधि ये नहिं काहू के बस॥ तनु लीन्हें डोलत फिरैं रसना अटक्यो जस। गोरस नाम न आवई कोऊ लैहै हरि रस॥ जीव पर्यो या ख्याल में अरु गये दशादस। बझे जाइ

खग वृंद ज्यों प्रिय छवि लटकनि लस ॥ छाँड़ि देहु डरात नहिं कीन्हो पावै तस । सूर श्याम प्रभु भौंह की मोरनि फाँसी गस ॥ १२७७ ॥



राग कान्हरो

दधि वेचत व्रज गलिन फिरैं । गोरस लेन बोलावत कोऊ ताकी सुधि नेकहु न करैं ॥ उनकी बात सुनत नहिं श्रवणनि कहति कहा ये घर न जरैं । दूध दह्यो ह्यां लेत न कोऊ प्रातहि ते सिर लिये ररैं ॥ वोलि उठति पुनि लेहु गोपालहि घर घर लोक लाज निदरैं । सूर श्याम को रूप महारस जाके बल काहू न डरैं ॥ १२७८ ॥



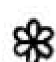
राग कान्हरो

गोरस को निज नाम भुलायो । लेहु लेहु कोऊ गोपालहि गलिन गलिन यह शोर लगायो ॥ कोऊ कहै श्याम कृष्ण कहै कोऊ आजु दरश नाहीं हम पायो । जाके सुधि तन की कछु आवति लेहु दही कहि तिनहि सुनायो ॥ एक कहि उठत दान माँगत हरि कहू भई की तुमहि चलायो । सुनहु सूर तरुणी जोबन मद तापर श्याम महारस पायो ॥ १२७९ ॥



राग कान्हरो

ग्वालिन फिरति बेहालहिसों। दधि मटुकी सिर लीन्हें डोलति रसना रटति गोपालहिसों॥ गेह नेह सुधि देह बिसारे जीव पर्‍यो हरिख्यालहिसों। श्याम धाम निज बास रच्यो रचि रहित भई जंजालहिसों॥ छलकत तक्र उफनि अँग आवत नहिं जानति तेहि कालहिसों। सूरदास चित ठौर नहीं कहुँ मन लाग्यो नँदलालहिसों॥ १२८०॥



राग मलार

कोऊ माई लैहै री गोपालहि। दधि को नाम श्याम सुंदर रस बिसरि गई ब्रजबालहि॥ मटुकी शीश फिरति ब्रज बीथिन बोलत वचन रसालहि। उफनत तक्र चहूँ दिश चितवति चित लाग्यो नँदलालहि॥ हँसति रिसाति बोलावति बरजति देखहु उलटी चालहि। सूर श्याम बिनु और न भावै या बिरहिन बेहालहि॥ १२८१॥



राग गौड़ मलार

ग्वालिनि प्रगट्यो पूरन नेहु। दधिभाजन सिर पर धरे कहति गुपालहि लेहु॥ बन बीथिन निजपुर गली जहीं तहीं हरिनाउँ। समुझाई समुझत नहीं सिख दै बिथक्यो गाउँ॥ कौन सुनै काके श्रवण काके सुरति सकोच। कौन निडर डर आपको को उत्तम को पोच॥ प्रेम पिये वर बारुनी बलकत बल न

सँभार। पग डगमग जित तित धरति मुकुलित अकल लिलार ॥ मंदिर में दीपक दिये बाहेर लखे न कोइ। तिन्हैं प्रेम परगट भए गुप्त कौन पै होइ ॥ लज्जा तरल तरङ्गिनी गुरुजन गहै री धार। दुहूँ कूल तरुनी मिली तिहि तरत न लागी वार॥ विधि-भाजन ओछो रच्यों शोभा सिंधु अपार। उलटि मगन तामें भई तव कौन निकास निहार॥ जैसे सरिता सिंधु में मिलो जु कूल विदारि। नाम मिट्यो सलिलै भई तब कौन निबेरै बारि ॥ चित आकर्ष्यो नंदसुत मुरली मधुर बजाइ। जिहि लज्जा जग लज्जियो सो लज्जा गई लजाइ ॥ प्रेम मगन ग्वालनि भई सूर सुप्रभु के संग। नैन बैन मुख नासिका ज्यों केंचुलि तजै भुजङ्ग ॥१२८२॥



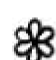
राग धनाश्री

माई री गोविंदा सों प्रीति करत तबहीं काहे न हट की री। यह तौ अब बात फैलि गई बई बीज वट की री ॥ घर घर नित इहै घेर बानी घटघट की। मैं तो यह सबै सही लोकलाज पटकी ॥ मद के हस्ती समान फिरति प्रेम लटकी। खेलत में चूकि जाति होती कला नट की ॥ जल रजु मिलि गाँठि परी रसना हरि रट की। छोरे ते नहीं छुटति कइक बेर झटकी ॥ मेटे क्योंहू न मिटति छाप परी टटकी। सूरदास प्रभु की छवि हिरदै मेरे अटकी ॥ १३०० ॥



राग आसावरी

मैं अपनो मन हरि सों जोर्यो। हरि सों जोरि सबनि सों तोर्यो॥ नाच कछ्यो तब घूँघुट छोर्यो। लोकलाज सब फटकि पिछोर्यो॥ आगे पाछे नीके हेर्यो। माँझबाट मटुकी सिर फोर्यो॥ कहि कहि कासों करति निहार्यो। कहा भयो कोऊ मुख मोर्यो॥ सूरदास प्रभु सों चित जोर्यो। लोक-वेद तिनुका सों तोर्यो॥ १३०१॥



(सब गोपियाँ कृष्ण से प्रीति करती थीं पर राधा का प्रेम अद्वितीय था। वह मानों कृष्ण में ही मिल गई। एक सखी राधा से कहती है—)

राग धनाश्री

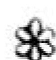
राधे तेरो बदन बिराजत नीको। जब तू इत उत वंक विलोकति होत निशापति फीको॥ भ्रुकुटी धनुष नैन शर साधे सिर केसरि को टीको। मनु घूँघटपट मैं दुरि बैठो पारधिपति रतिही को॥ गति मैं मत्त नाग ज्यों नागरि करे कहति हौ लीको। सूरदास प्रभु विविध भाँति करि मन रिझयो हरिपी को॥१३४१।



राग धनाश्री

चतुर सखी मन जानि लई। मो सों तौ दुराव यह कीन्हों याके जिय कछु त्रास भई॥ तब यह कह्यो हँसत री तोसों जिनि मन में कछु आनै। मानी बात कहाँ वै कहँ तू हमहूँ

उनहि न जानै ।। अबै तनक तू भई सयानी हम आगे की बारी। सूर श्याम ब्रज में नहिं देखे हँसत कह्यो घर जारी ।। १३४४ ।।



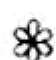
राग बिलावल

सकुचि सहित घर को गई वृषभानु दुलारी । महरि देखि तासों कह्यो कहँ रही री प्यारी ।। घर तोहि नैक न देखऊँ मेरी महतारी । डोलत लाज न आवई अजहूँ है बारी ।। पिता आजु रिस करत है दैदै कहै गारी । सुता बड़े वृषभानु की कुलखोवन-हारी ।। बंधव मारन कहत है तेरे ढंग कारी । सूर श्याम संग फिरति है जोवन मतवारी ।। १३४५ ।।



राग गुंडमलार

कहा री कहति तू मातु मोसों । ऐसे वहिगई को श्याम संग फिरे जो वृथा रिस करति कहा कहों तोसों ।। कही कौने बात बोलिये तेहि मात मेरे आगे कहै ताहि देखो । तात रिस करत भ्राता कहै मारिहैं भीति विन चित्र तुम करति रेखो ।। तुमहु रिस करति कछु कहा मोहिं मारिहो धन्य पितु भ्रात मात अरुनही । ऐसे लायक नंदमहर को सुत भयो तिनहि मोहि कहति प्रभु सूर सुनही ।। १३४६ ।।



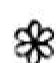
राग गूजरी

काहे को परघर छिन छिन जाति। गृह में डाटि देति शिख जननी नाहिंन नेक डराति॥ राधा कान्ह कान्ह राधा व्रज ह्वै रह्यो अतिहि लजाति। अब गोकुल को जैवो छाँडौ अपयशहू न अघाति॥ तू वृषभानु बड़े की बेटी उनके जाति न पाँति। सूर सुता समुझावति जननी सकुचत नहिं मुसकाति॥१३४७॥



राग कान्हरो

खेलन को मैं जाउँ नहीं। और लरिकनी घर घर खेलति मोही को पै कहति तुही॥ उनके मात पिता नहिं कोई खेलति डोलति जही तही। तोसी महतारी बहि जाई मैं रैहौं तुमही विनही॥ कबहूँ मोको कछू लगावति कबहुँ कहति जिन जाहु कही। सूरदास बातैं अनखोही नाहि न मोपै जात सही॥१३४८॥

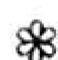


राग सारंग

मनही मन रीझति महतारी। कहा भई जो बाढ़ि तनक गई अबहीं तौ मेरी है बारी॥ झूठेही वह बात उड़ी है राधा कान्ह कहत नर नारी। रिस की बात सुता के मुख की सुनत हँसी मनही मन भारी॥ अबलौं नहीं कछू इहि जान्यो खेलत देखि लगावै गारी। सूरदास जननी उर लावति मुख चूमति पोछति रिस टारी॥ १३४९॥

राग सुहा

सुता लिये जननी समुझावति। संग बिटिनिअन के मिलि खेलौ श्याम साथ सुनि सुनि रिस पावति॥ जाते निंदा होइ आपनी जाते कुल को गारी आवति। सुनि लाड़िली कहति यह तासों तोको याते रिस करि धावति॥ अब समुझी मैं बात सबनकी झूठेही यह बात उठावति। सूरदास सुनि सुनि यह बातैं राधा मन अति हरष बढ़ावति॥ १३५०॥



राग नट

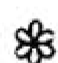
राधा विनय करति मनहीं मन सुनहु श्याम अंतर के यामी। मात पिता कुल कानिहि मानत तुमहि न जानत हैं जगस्वामी॥ तुम्हरो नाम लेत सकुचत हैं ऐसे ठौर रही हौं आनी। गुरु परिजन की कानि मानियो बारंबार कही मुख बानी॥ कैसे संग रहौं विमुखन के यह कहि कहि नागरि पछितानी। सूरदास प्रभु को हिरदय धरि गृहजन देखि देखि मुसकानी॥ १३५१॥



राग धनाश्री

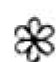
जब प्यारी मन ध्यान धरयो। पुलकित उर रोमांच प्रगट भए अंचर टरि मुख उघरि परयो॥ जननी निरखि रही ता छवि को कहन चहै कछु कहि नहिं आवै। चकृत भई अँग अंग विलोकत दुख सुख दोऊ मन उपजावै॥ पुनि मन कहति

सुता काहू की कीधौं यह मेरी है जाई। राधा हरि के रंगहि राची जननी रही जिये भरमाई॥ तब जानी मेरी यह बेटी जिय अपने तब ज्ञान कियो। सूरदास प्रभु प्यारी की छवि देखि चहति कछु शीख दियो॥ १३५२॥



राग सोरठ

राधा दधिसुत क्यों न दुरावति। हौंजु कहति वृषभानु-नन्दिनी काहेको तू जीव सतावति॥ जलसुत दुखी दुखी है मधुकर द्वै पंछी दुख पावत। सारँग दुखी होत सारँग विनु तोहि दया नहिं आवत॥ सारँग रिपु को नेक ओट कहि ज्यों सारँग सुख पावत। सूरदास सारँग केहि कारण सारँग कुलहि लजावत॥ १३५३॥



राग जयतश्री

राधा जल विहरत सखियन सँग। ग्रीवप्रयंत नीर में ठाढ़ी छिरकत जल अपने अपने रँग॥ मुख पर नीर परस्पर डारति शोभा अतिहि अनूप बढ़ी तब। मनहु चंद्र गन सुधा गई खनि डारत है आनंद भरे सब॥ आई निकसि जानु कटि लों सब अँजुरिन ते जल डारत। मानहुँ सूर कनकवल्ली जुरि अमृत पवन मिस झारत॥ १३९२॥



राग नट

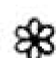
जमुनाजल बिहरत ब्रजनारी। तट ठाढ़े देखत नँदनंदन मधुर मुरलि करधारी॥ मोरमुकुट श्रवणन मणिकुंडल जलज-माल उर भ्राजत। सुंदर सुभग श्याम तनु नव घन बिच वगपाँति बिराजत॥ उर बनमाल सुभग बहुभाँतिनु श्वेत लाल सित पीत। मनों सूर सरितटि बैठे शुक बरन बरन तजि भीत॥ पीतांबर कटि में छुद्रावलि बाजत परम रसाल। सूरदास मनों कनक भूमि ढिग बोलत रुचिर मराल॥ १३९३॥



(इतने में श्रीकृष्ण प्रकट हो गये)

राग सारंग

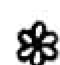
ऐसे गोपाल निरखि तिल तिल तनु वारौं। नवकिशोर मधुर मूरति शोभा उर धारौं॥ अरुण तरुण कंज नयन मुरली कर राजै। ब्रजजन मन हरन बेन मधुर मधुर बाजै॥ ललित-वर त्रिभंग सु तन बनमाला सोहै। अति सुदेश कुसुम पाग उपमा को कोहै॥ चरण रुनित नूपुर कटि किंकिनि कलकूजै। मकराकृत कुंडल छवि सूर कौन पूजै॥ १३९७॥



राग नटनारायण

राधे निरखि भूली अंग। नंदनंदन रूप पर गति मति भई तनुपंग॥ इत सकुचि अति सखिन को उत होत अपनी

हानि। ज्ञान करि अनुमान कीन्हों अबहि लैहै जानि॥ चतुर सखियन परखि लीन्हो समुझि भई गँवारि। सबै मिलि इत न्हान लागीं ताहि दियो बिसारि॥ नागरी मुख श्याम निरखत कबहुँ सखियन हेरि। सूर राधा लखति नाहीं इन दई अब टेरि॥ १३९९॥



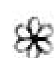
राग रामकली

चितवन राकेहू न रही। श्यामसुंदर सिंधु सन्मुख सरित उमंगि बही॥ प्रेम सलिल प्रवाह भँवरनि मिलि कबहुँ न थाह लही। लोभ लहरि कटाक्ष घूँघट पट करार ढही॥ थके पल पथ नाव धीरज परत नहिं न गही। हिल मिलि सूर स्वभाव श्यामहि फेरीहू न चही॥



राग जैतश्री

देखी हरि राधा उत अटकी। चितै रही एकटक हरिही तन ना जाइये कौन अँग लटकी॥ कालि हमैं कैसे निदरतिही मेरे चित वह टरति न खटकी। न्हात रही कैसे सँग मिलिकै चित चंचल विरहा की चटकी॥ बात करत तुलसी मुख मेलै नयन सयन दै मुँह मटकी। सूर श्याम के रूप भुलानी राधा के चित सुधि न घटी॥ १४०१॥



राग गूजरी

राधा चलन भवनही जाहि। कबही की हम यमुना आई कहहीं अरु पछिताहि॥ कियो दरशन श्याम को तुम चलोगी की नाहिं। बहुरि मिलिहो चीन्हि राखहु कहति सब मुसकाहिं॥ हम चली घर तुमहूँ आवहु सोच भयो मन माहि। सूर राधा सहित गोपी चलीं ब्रज समुहाहिं॥ १४०६॥

❀

राग बिलावल

कहि राधा हरि कैसे हैं। तेरे मन भाये की नाहीं की सुंदर की नैसे हैं॥ की पुनि हमहि दुराव करोगी की कैहौ वै जैसे हैं। की हम तुमसों कहत रही ज्यों साँच कहौ की तैसे हैं॥ नटवर भेष काछनी काछे अंगनि रतिपति सैसे हैं। सूर श्याम तुम नीके देखे हम जानति हरि ऐसे हैं॥ १४०७॥

❀

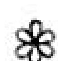
राग बिलावल

राधा मन में इहै विचारति। ये सब मेरे ख्याल परी हैं अबहीं बातनलै निरुवारति॥ मोहू ते ये चतुर कहावति ये मनही मन मोको नारति। ऐसे वचन कहौंगी इनको चतुराई इनकी मैं भारति॥ जाके नंदनंदन सिर समरथ बार बार तनु मन धन वारति। सूर श्याम के गर्व राधिका सूधे काहू तन न निहारति॥ १४०८॥

❀

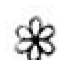
राग आसावरी

क्यों राधा फिरि मौन गह्यो री। जैसे नउआ अंध भँवर खर तैसेहि तैं यह मौन कह्यो री॥ बात नहीं मुख ते कहि आवति की तेरो मन श्याम हरयो री। जानि नहीं पहिचानि न कबहूँ देखतही चित तिनहि ठरयो री॥ साँची बात कहौ तुम हमसों कहा सोच सो जियहि परयो री। सूर श्याम तन देखि रही कहा लोचन इकटक ते न टरयो री॥ १४१०॥



राग धनाश्री

कहा कहति तुम बात अलेखं। मोसों कहति श्याम तुम देखे तुम नीकं करि देखे॥ कैसो बरन भेष है कैसो कैसे अंग त्रिभंग। मो आगे वह भेद कहौ धौ कैसो है तनु रंग॥ मैं देखे की नाहीं देखे तुम तो बार हजार। सूर श्याम द्वै अँखियन देखति जाको वार न पार॥ १४११॥



राग कान्हरो

हम देखे यहि भाँति कन्हाई। शीश श्रीखंड अलक बिथुरे मुख श्रवणनि कुंडल चारु सोहाई॥ कुटिल भ्रुकुटि लोचन अनियारे सुभग नासिका राजत। अरुन अधर दशनावलि की द्युति दाड़िम कन तन लाजत॥ ग्रीवहार मुक्ता बनमाला बाहु-दंड गजशुंड। रोमावली सुभग बगपंगति जात नाभि हद

झुंड ॥ कटि पट पीत मेखला कंचन सुभग जंघ युग जान। चरन कमल नखचंद्र नहीं सम ऐसे सूर सुजान ॥



राग बिलावल

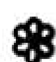
वने हैं विशाल कमल दल नैन। ताहू में अति चारु विलोकनि गूढ़भाव सूचत सखि सैन ॥ बदन सरोज निकट कुंचित कच मनहु मधुप आए मधुलैन। तिलक तरनि शशि कहत कछुक हँसि बोलत मधुर मनोहर बैन ॥ मदननृपति को देश महामद बुधि बल बसि न सकत उर चैन। सूरदास प्रभु दूत दिनहि दिन पठवत चरित चुनौती दैन ॥



राग देव गन्धार

मोहन बदन बिलोकत अँखियन उपजत है अनुराग। तरनि ताप तलफत चकोरगति पिवत पियूष पराग ॥ लोचन नलिन नये राजत रति पूरण मधुकर भाग। मानहु अलि आनंद मिले मकरंद पिवत रतिफाग ॥ भँवरिभाग भ्रकुटी पर कुमकुम चंदन बिन्दु विभाग। चातक सोम शक्र धनु घन में निरखत मनु बैराग ॥ कुंचित केश मयूर चंद्रिका मंडल सुमन सुपाग। मानहु मदन धनुष शर लीन्हें बरषत है वन बाग ॥ अधरबिंव विहँसान मनोहर मोहन मुरली राग। मानहु सुधा पयोधि घेरि घन व्रज पर बरषन लाग ॥ कुंडल मकर कपोलनि झल-

कत श्रम सीकर के दाग। मानहु मीन मकर मिलि क्रीड़त शोभित शरद तड़ाग ॥ नासा तिलक प्रसून पदविपर चिबुक चारु चित खाग। दाड़िम दशन मंदगति मुसकनि मोहत सुर नर नाग ॥ श्रीगोपाल रस रूप भरी है सूर सनेह सोहाग। ऐसी शोभा सिंधु विलोकत इन अँखियन के भाग ॥



राग बिलावल

सुनहु सखी मैं बूझति तुमको काहू हरि को देखे है। कैसो तन कैसो रँग देखियत कैसी विधि करि भेषे हैं ॥ कैसो मुकुट कुटिल कच कैसे सुभग भाल भ्रुव नीके हैं। कैसे नैन नासिका कैसी श्रवणनि कुंडल पी के हैं ॥ कैसे अधर दशन दुति कैसी चिबुक चारु चित चोरत हैं। कैसे निरखि हँसत काहू तन कैसे वदन सकोरत हैं ॥ कैसी उरमाला है शोभित कैसी भुजा विराजत हैं। कैसे कर पहुँची हैं कैसी कैसी अँगुरिश्रा राजत हैं ॥ कैसी रोमावली श्याम के नाभि चारु कटि सुनियत हैं। कैसी कनक मेखला कैसी कछनी यह मन गुनियत हैं ॥ कैसे जंघ जानु कैसे दोउ कैसे पद नख जानति हैं। सूर श्याम अँग अंग की शोभा देखे की अनुमानति हैं ॥१४१२॥



राग रामकली

ऐसे सुने नंदकुमार। नख निरखि शशि कोटि वारत चरण कमल अपार ॥ जानु जंघ निहारि रंभा करनि डारत वारि।

काछनी पर प्राण वारत देखि शोभाभारि ॥ कटि निरखि तनु सिंह वारत किंकिनी जु मराल । नाभि पर ह्रद आपु वारत रोमावली अलिमाल ॥ हृदय मुकुतामाल निरखत वारि अवलि वलाक । करज कर पर कमल वारत चलति जहाँ तहाँ साक ॥ भुजा पर वर नाग वारत गये भागि पताल । ग्रीव की उपमा नहीं कहुँ लखति परम रसाल ॥ चिबुक पर चित वारि हारत अधर अंबुज लाल । वंधूक विद्रुम बिंब वारत ते भये वेहाल ॥ वचन सुनि कोकिला वारत दशन दामिनि कांति । नासिका पर कीर वारत चारु लोचन भाँति ॥ कंज खंजन मीन मृग शावकनि डारति वार । भ्रुकुटि पर सुर चाप वारत तरनि कुंडल हारि ॥ अलक पर वारत अँध्यारी तिलक भाल सुदेश । सूर प्रभु सिर मुकुटधारे धरे नटवर भेष ॥ १४१३ ॥



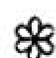
राग सारंग

ऐसी विधि नंदलाल कहत सुने माई री । देखे जो नैन रोम रोम प्रति सुभाई री ॥ विधि ने द्वै नैन रचे अंग ठानि ठान्यो । लोचन नहिं वहुत दिये जानिकै भुलान्यो ॥ चतुरता प्रवीनता विधाता को जानै । अब कैसे लगत हमहिं बातें न सयाने ॥ त्रिभुवनपति तरुन कान्ह नटवर वपु काछे । हमको द्वै नैन दियें तेऊ नहिं आछे ॥ ऐसो बिधि को बिवेक कहौं कहा वाको । सूर कबहुँ पाऊँ जो कर अपने ताको ॥ १४१४ ॥



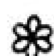
राग नट

मुख पर चंद्र डारौं वारि। कुटिल कच पर भौंर वारौं भौंह पर धनु वारि॥ भालकेसरि तिलक छवि पर मदन शत शर वारि। मनु चली वहि सुधा धारा निरखि मनधौं वारि॥ नैन खंजन मृग मीन वारौं कमल के कुलवारि। मनों सुरसति यमुन गंगा उपमा डारौं वारि॥ निरखि कुंडल तरुनि वारौं कूप श्रवननि वारि। झलक ललित कपोल छवि पर मुकुर शत शत वारि॥ नासिका पर कीर वारौं अधर विद्रुम वारि। दशन एकन वज्र वारौं बीज दाड़िम वारि॥ चिबुक पर चित वित्त वारौं प्राण डारौं वारि। सूर हरि की अंग शोभा को सकै निर-वारि॥ १४१५॥



राग सोरठ

श्याम उर सुधादह मानौ। मलय चंदन लेप कीन्हें बरन यह जानौ॥ मलय तनु मिलि लसति शोभा महाजल गंभीर। निरखि लोचन भ्रमत पुनि पुनि धरत नहिं मन धीर॥ उरज भँवरी भँवर मानों मीन मणि की कांति। भृगुचरण हृदय चिह्न ये सब जीव जल बहुभांति॥ श्यामबाहु विशाल केसरि खौरि बिबिध बनाइ। सहज निकसे मगर मानों कूल खेलत आइ॥ सुभग रोमावली की छवि चली दहते धार। सूर प्रभु की निरखि शोभा युवति बारंबार॥ १४१६॥



राग सोरठ

मनु मधुकर पद कमल लुभान्यो। चित्त चकोर चंद्र नख अटक्यो यकटक पल न भुलान्यो॥ विनही कहे गये उठि मोते जात नहीं मैं जान्यो। अब देखो तन में वे नाहीं कहा जियहि धौं आन्यो॥ तब ते फेरी तके नहिं मो तन नखचरणनहित मान्यो। सूरदास वे आपु स्वारथी परवेदन नहिं जान्यो॥१४१७॥



राग मारू

श्याम सखि नीके देखे नाहीं। चितवतही लोचन भरि आए बार बार पछिताहीं॥ कैसेहू करि यकटक राखति नैकहि में अकुलाहीं। निमिष मनो छबि पर रखवारे ताते अतिहि डराहीं॥ कहा करें इनको कहा दोष न इन अपनीसी कीन्हीं। सूर श्याम छवि पर मन अटक्यो उन सब शोभा कीन्हीं॥१४१८॥



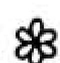
राग बिलावल

हरि दरशन की साध मुई। उडिये उड़ी फिरति नैननि सँग फर फूटै ज्यों आकरुई॥ जानों नहीं कहा ते आवति वह मूरति मन माहँ उई। बिन देखे की व्यथा विरहनी अति जुर जरति न जाति छुई॥ कछु वे कहत कछू कहि आवत प्रेम पुलकि श्रमस्वेद चुई। सूखति सूर धान अंकुर सी विनु वरषा ज्यों मूल तुई॥ १४३३॥



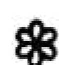
राग धनाश्री

सुन री सखी दशा यह मेरी। जब ते मिले श्याम घन सुंदर संगहि फिरति भई जनु चेरी॥ नीके दरश देत नहिं मोकों अंगनप्रति अनंग की टेरी। चपला ते अतिही चंचलता दशन चमक चकचौंधि घनेरी॥ चमकत अंग पीतपट चमकत चमकति माला मोतिनकेरी। सूर समुझि विधिना की करनी अतिरिस करति सौंह मुँह तेरी॥ १४३४॥



राग मारू

आजु के दिन को सखी अति नहीं जो लाख लोचन अंग अंग होते। पूरति साध मेरे हृदय माँझ देखत सबै छवि श्याम को ते॥ चित्त लोभी नैन द्वार अतिही सूक्ष्म कहा वह सिंधु छवि है अगाधा। रोम जितने अंग नैन होते संग रूप लेती निदरि कहति राधा॥ श्रवण सुनि सुनि दहै रूप कैसे लहै नैन कछु गहै रसना न ताके। देखि कोउ रहै कोउ सुनि रहै जीभ बिन सो कहै कहा नहिं नैन जाके॥ अंग बिनु है सबै नहीं एकौ फवे सुनत देखत जबै कहन लोरे। कहैं रसना सुनत श्रवन देखत नैन सूर सब भेद गुनि मनहिं तोरे॥ १४३५॥



राग धनाश्री

इनहुँ में घटिताई कीन्हीं; रसना श्रवण नैन के होते की रसनाही को नहिं दीन्हीं॥ बैर कियो विधना हमको रचि

याकी जाति अबै हम चीन्ही। निठुर निर्दयी याते और न श्याम बैर हमसों है लीन्हीं ॥ या रसही में मगन राधिका चतुर सखी तबहीं लखि भीनी। सूर श्याम के रंगहि राची टरत नहीं जल ते ज्यों मीनी ॥ १४३६ ॥



राग सोरठ

धन्य धन्य बड़भागिनि राधा। नीके भजी नंदनंदन को मेटि भवन जन बाधा ॥ नवल श्याम नवला तुमहूँ हो दोउ तुम रूप अगाधा। मैं जानी यह बात हृदय की रही नहीं कछु साधा ॥ संगहि रहति सदा पियप्यारी क्रीड़त करति उपाधा। कोककला वितपन्न भई हौ कान्हरूप तनु आधा ॥ प्रेम उमँगि तेरे मुख प्रगट्यो अरस परस अवलाधा। सूरदास प्रभु मिले कृपा-करि गये दुरति दुखदाधा ॥ १४३७ ॥



(इस प्रकार राधा और अन्य गोपियाँ कृष्ण का ध्यान करती थीं, कृष्ण के प्रेम में मग्न रहती थीं। कभी-कभी कृष्ण उनको दर्शन देकर आह्लादित करते थे।)

राग धनाश्री

श्याम अचानक आइ गये री। मैं बैठी गुरुजन विच सजनी देखतही मेरे नैन नये री ॥ तब इक बुद्धि करी मैं ऐसी बेंदी सों कर परस कियो री। आपु हँसे उत पाग मसकि हरि अंतर्यामी जानि लियो री ॥ लै कर कमल अधर परसायो देखि

हरषि पुनि हृदय धरयो री। चरण छुवै दोउ नैन लगाये मैं अपने भुज अंक भरयो री॥ ठाढ़े रहे द्वार अति हित करि तबही ते मन चोरि गयो री। सूरदास कछु दोष न मेरो उत गुरुजन इत हेतु नयो री॥ १४५५॥



राग काफी

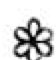
मेरो मन न रहै कान्ह विना नैन तपै माई। नवकिशोर श्याम वरन मोहनी लगाई॥ वन की धातु चित्रित तनु मोर चंद्र सोहै। वनमाला लुब्ध भँवर सुर नर मुनि मोहै॥ नटवर वपु भेष ललित कट किंकिनि राजै। मणि कुंडल मकराकृत तरुन तिलक भ्राजै॥ कुटिलकेश अति सुदेश गोरज लपटानी। तड़ित वसन कुंद दशन देखिहों भुलानी॥ अरुन श्वेत कुंभ वज्र खचित पदिक शोभा। मणिकौस्तुभ कंठ लसत चितवत चित लोभा॥ अधर सधर मधुर बोल मुरली कलगावै। भ्रुव-विलास मंद हास गोपिन्ह जिय भावै॥ कमलनैन चित के चैन निरखि मन वारों। प्रेम अंश अरुझि रहो उर ते नहिं टारों॥ गोप भेष धरि सखी री संग संग डोलौं। तन मन अनुराग भरी मोहन सँग बोलौं॥ नवकिशोर चित के चोर पलकओट न करिहौं। सुभग चरन कमलअरुन अपने उर धरिहौं॥ असन वसन शयन भवन हरिविनु न सुहाइ। बिनु देखे कल न परै कहा करौं माइ॥ यशोमति सुत सुन्दर तनु निरखि हो लोभानी। हरिदरशन अमल परयो लाजन लजानी॥ रूपराशि सुख

विलास देखत बनि आवै। सूर प्रभु रूप की सीवा उपमा नहिं पावै ॥ १४६५ ॥



राग अड़ाना

व्रज की खोरि ठाढ़ो साँवरो ढोटौना तबहीं मोही री हौं मोही री। जब ते मैं देखे श्यामसुंदर री चलि न सकत पगदइहै काम नृप द्रोही री ॥ कोलै आइ कौने चरन चलाइ कौने बहियाँ गही सोधों कोही री। सूरदास प्रभु देखे सुधि रही नहिं अति विदेह भई अब मैं बूझति ताही री ॥



राग सुघराई

आँखिन में बसै जियरे में बसै हियरे में बसत निशि दिन प्यारो। मन में बसै तन में बसै रसना में बसै अंग अंग में बसत नंदवारो ॥ सुधि में बसै बुधिहू में बसै उरजन में बसत पिय प्रेम दुलारो। सूर श्याम बनहूँ में बसत घरहू में बसत संग ज्यों जलरंग न होत न्यारो ॥ १४६४ ॥



राग बिलावल

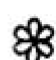
इत ते राधा जाति यमुनतट उत ते हरि आवत घर को। कछि काछिनी भेप नटवर को बीच मिली मुरलीधर को ॥ चितै रही मुख इंदु मनोहर वा छवि पर वारति तन को। दूरिहु तें देखतही जाने प्राणनाथ सुंदर घन को ॥ रोम पुलकि

गद्गद बाणी कहि कहा जात चोरे मन को। सूरदास प्रभु चोरी सीखे माखन ते चितवित धन को॥ १५०५॥



राग बिलावल

इह न होइ जैसे माखन चोरी। तब वह मुख पहिचानि मानि सुख देती जान हानि हुती थोरी॥ उनहिं दिननि सुकुँवार हते हरि हौं जानत अपनो मन भोरी। ब्रजबसि बास वड़े के ढांटा गोरसकारण कानि न तोरी॥ अब भए कुशल किशोर नंदसुत हौं भई सजग समान किशोरी। जात कहा बलि बाँह छड़ाए मूसे मन संपति सब मोरी॥ नख शिख लौं चितचोर सकल अँग चीन्हें पर कत करत मरोरी। एक सुनि सूर हरयो मेरो सर्वस अरु उलटी डोलों सँगडोरी॥१५०६॥



राग गौरी

भुजा पकरि ठाढ़े हरि कीन्हे। बाँह मरोरि जाहुगे कैसे मैं तुमको नीके करि चीन्हें॥ माखनचोरी करत रहे तुम अबतो भए मनुचोर। सुनत रही मन चोरत हैं हरि प्रगट लियो मन मोर॥ ऐसे ढीठ भए तुम डोलत निदरे ब्रज की नारि। सूर श्याम मोहू निदरौगे देत प्रेम की गारि॥ १५०७॥



राग सारंग

बहु बल कितकु जानौ यदुराइ। तुम जो तरकि मो अबला पै तौ चलेहौ भुजा छड़ाइ॥ कहिअत हो अति चतुर सकल अँग आवत बहुत उपाइ। तौ जानो जो अबके ए ढँग कोस कै देते जाइ॥ सूरदास स्वामी श्रीपति को भावत अंतर भाइ। सहि न सके रति वचन उलटि हँसि लीनी कंठ लगाइ॥ १५०८॥



(राधा के प्रेम में कृष्ण बिलकुल मग्न हो गये।)

राग आसावरी

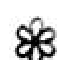
श्याम भए वृषभानु सुतावस और नहीं कुछ भावै हो। जो प्रभु तिहूँ भुवन को नायक सुर मुनि अंत न पावै हो॥ जाको शिव ध्यावत निशि वासर सहसानन जेहि गावै हो। सो हरि राधा वदन चंद को नैन चकोर त्रसावै हो॥ जाको देखि अनंग अनागत नागरि छवि भरमावे हो। सूर श्याम श्यामावस ऐसे ज्यों सँग छाँह डुलावै हो॥ १५९०॥



राग जैतश्री

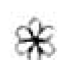
कबहूँ श्याम यमुनतट जात। कबहूँ कदम चढ़त मग देखत मन राधा बिन अति अकुलात॥ कबहूँ जात वन कुंज धाम को देखि रहत कुछ नहीं सुहात। तब आवत वृषभानु-पुरा को अति अनुराग भरं नँदतात॥ प्यारी हृदय प्रगटही

जानति तब मन माँझ सिहात। सूरदास प्रभु नागरि के उर नागर श्यामल गात ॥ १५९१ ॥



राग गूजरी

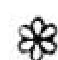
राधा श्याम श्याम राधारँग। पियप्यारी को हृदये राखत प्यारी रहति सदा हरि के सँग ॥ नागरि नैन चकोर वदन शशि पिय मधुकर अंबुज सुंदरि मुख। चाहत अरस परस ऐसे करि हरि नागर नागरि नागर सुख ॥ सुख दुख सोचि रहत मनही मन तव जानत तन को यह कारन। सुनहुँ सूर कुलकानि जीय दुख दोऊ फल दोउ करत विचारन ॥ १५९२ ॥



(कृष्ण का विरह होने पर राधा अत्यन्त व्याकुल होती थीं; चारों ओर उन्हें ढूँढ़ती फिरती थीं।)

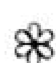
राग विहागरो

श्याम विरह बन माँझ हेरानी। संगी गये संग सब तजिकै आपु भई देवानी ॥ श्याम धाम में गर्वहि राखति दुराचारिनी जानी। ता ते त्याग गये आपुहि सब अंग अंग रति मानी ॥ अहंकार लंपट अपकाजी संग न रह्यो निदानी। सूर श्याम बिन नागरि राधा नागर चित्त भुलानी ॥ १६४७ ॥



राग बिहागरो

महाविरह वन माँझ परी। चकृत भई ज्यों चित्र पूतरी हरि मारग बिसरी॥ संगवटपार गर्व जब देख्यो साथी छोंड़ि पराने। श्याम सहज अँग अंग माधुरी तहाँ वै जाइ लुकाने॥ यह बन माँझ अकेली व्याकुल संपति गर्व छँड़ाये। सूर श्याम सुधि टरत न उर ते यह मनो जीव बचाये॥१६४८॥



राग मारू

विरहवन मिलन सुधि त्रास भारी। नैन जल नदी पर्वत उरज येइ मनो सुभग बेनी भइ अहिनि कारी॥ नैन मृग श्रवन वन कूप जहाँ तहाँ मिले भ्रम गली सघन नहिं पार पावै। सिंह कटि व्याघ्र अंग अंग भूषन मनो दुसह भये भार अतिही डरावै॥ शरनकरि अत्रडरि डर लहत कोउ नहीं अंग सुख श्याम बिन भये ऐसे। सूर प्रभु नाम करुनाधाम जाउ क्यों कृपा मारग बहुरि मिलैं कैसे॥ १६४९॥



राग टोड़ी

राधा भवन सखी मिलि आई। अति व्याकुल सुधि बुधि कछु नाहीं देहदशा बिसराई॥ बाँह गही तेहि बूझन लागी कहा भयो री माई। ऐसी विवश भई तुम काहे कहो न हमहि सुनाई॥ कालिहि और बरन तोहि देखी आजु गई मुरझाई। सूर श्याम देखे की बहुरो उनहि ठगौरी लाई॥ १६५०॥



राग हमीर

श्याम नाम चकृत भई श्रवन सुनत जागी। आये हरि यह कहि कहि सखिन कंठ लागी॥ मोते यह चूक परी मैं बड़ी अभागी। अबकै अपराध क्षमहु गये मोहिं त्यागी॥ चरण कमल शरन देहु बार बार माँगी। सूरदास प्रभु के वस राधा अनुरागी॥ १६५१॥



राग विहागरो

सखी रही राधा मुख हेरी। चकृत भई कछु कहत न आवै करन लगी अवसेरी॥ वार वार जल परसि वदन सों वचन सुनावत टेरी। आजु भई कैसी गति तेरी व्रज में चतुर निवेरी॥ तव जान्यो यह तौ चंद्रावलि लाज सहित मुख फेरी। सूर तवहिं सुधि भई आपनी मेटी मोह अँधेरी॥१६५२॥



राग जैतश्री

कहा भयो तू आजु अयानी। अतिही चतुर प्रवीन राधिका सखियन में तू बड़ी सयानी॥ कहिधौं बात हृदय की मोसों ऐसी तू काहे वितत्तानी। मुखमलीन तनु की गति औरै वूझति वार वार सो वानी॥ कहा दुराव करौं री तोसों मैं तो हरि के हाथ विकानी। सूर श्याम मोको परत्यागी जा कारण मैं भई देवानी॥ १६५३॥



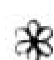
राग जैतश्री

अब मैं तोसों कहा दुराऊँ। अपनी कथा श्याम की करनी तो आगे कहि प्रगट सुनाऊँ॥ मैं बैठीही भवन आपने आपुन द्वार दियो दरशाऊँ। जानि लई मेरे जिय की उन गर्व प्रहारन उनको नाऊँ॥ तबहीं ते व्याकुल भई डोलति चित न रहै कितनो समुझाऊँ। सुनहु सूर गृह वन भयो मोको अब कैसे हरि दरशन पाऊँ॥ १६५४॥



राग नटनारायण

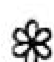
सखी मिलि करौ कछु उपाउ। मार मारन चढ़यो बिर-हिनि निदरि पायो दाँउ॥ हुताशन धुजजात उन्नत बह्यो हरिदिशवाउ। कुसुमसर रिपुनंद बाहन हरषि हरषित गाउ॥ वारि भव सुत तासु भावरि अब न करिहौं काउ। बार अब की प्राण प्रीतम बिजै सखी मिलाउ॥ ऋतुविचारि जु मान कीजै सोउ वहि किन जाउ। सूर सखी सुभाउ रैहौं संग शिरोमणि राउ॥ १६५५॥



(अन्य गोपियों ने भी राधा से सहानुभूति प्रकट की और अपनी दशा का वर्णन किया।)

हमारी सुरति बिसारी बनवारी हम सरबस दै दै हारी। सखी पै वै न भये अपने सपनेहू वै मुरारी गिरधारी॥ वे

मोहन मधुकर समान अनबोली मनलावत री। धावत हम व्याकुल विरह व्यापि दिन प्रति नीरज नैना ढारि ढारी ॥ हम तन मन दै हाथ बिकानी वै अति निठुर रहत हैं मुरारी। सूरदास प्रभु सुनहु सखी वहु रवनि रवन पिय हम यक व्रत-धरि मदन अगिनि तनु जरि जारी ॥ १६६३ ॥



राग गौरी

मैं अपनी सी बहुत करी री। मोसों कहा कहति तू माई मन के संग मैं बहुत लड़ी री ॥ राखैं अटकि उतहि को धावै उनको वैसियैं परन परी री। मोसों वैर करै रति उनसों मोको छाँड़ी द्वार खड़ी री ॥ अजहूँ मान करौ मन पाऊँ यह कहि इत उत चितै डरी री। सुनहु सूर पाँच मत एकै मोमैं मैंही रही परी री ॥ १६६४ ॥



राग गौरी

मन जिनि सुनै बात यह माई। कौरै लग्यो होइगो कितहूँ कहि दैहै को जाई ॥ ऐसे डरति रहति हैं वाको चुगुली जाइ करैगो। उनसों कहि फिरि ह्याँ आवैगो मोसों आनि लरैगो ॥ पंच संग लीन्हें वह डोलत कोऊ मोहिं न मानै। सूर श्याम कोउ उनहिं सिखायो वै इतनो कह जानै ॥ १६६५ ॥



राग बिलावल

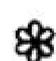
अबकै जो पिय पाऊँ तो हृदय माँझ दुराऊँ। हरि को दरशन पाऊँ आभूषण अंग बनाऊँ। ऐसो को जो आनि मिलावै ताहि निहाल कराऊँ। जो पाऊँ तो मंगल गाऊँ मोतिनचौक पुराऊँ॥ रसकरि नाचों गाऊँ बजाऊँ चंदन भवन लिपाऊँ। जो मोहन बस मेरे होवहिं हीरा लाल लुटाऊँ॥ मणि माणिक न्यवछावरि करिहौं सो दिन सुदिन कहाऊँ। केतकि करनवेलि चम्मेली फूलन सेज विछाऊँ॥ तापर पिय को पौढ़ाऊँ मैं अचरा वायु डुलाऊँ। चंदन अगर कपूर अरगजा प्रभु के खौरि बनाऊँ॥ जो विधना कबहूँ यह करतो काम को काम पुराऊँ। सूर श्याम विन देखे सजनी कैसे मन अपनाऊँ॥१६७८॥



(राधा की एक प्यारी सखी ललिता कृष्ण को लाने के लिए चली और कृष्ण के पास पहुँच गई।)

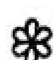
राग टोड़ी

ललिता मुख चितवत मुसुकाने। आपु हँसी पिय मुख अवलोकत दुहुँनि मनहिं मन जाने॥ अति आतुर धाई कहाँ आई काहे वदन भुराये। बूझत है पुनि पुनि नँदनंदन चितवत नैन चुराये॥ तब बोली वह चतुर नागरी अचरज कथा सुनाऊँ। सूर श्याम जो चलौ तुरत ही नैनन जाइ दिखाऊँ॥१६७९॥



राग सारंग

अद्भुत एक अनूपम बाग। युगल कमल पर गज क्रीड़त है तापर सिंह करत अनुराग॥ हरि पर सरवर सर पर गिरिवर गिरि पर फूले कंज पराग। रुचिर कपोत बसे ता ऊपर ता ऊपर अमृत फल लाग॥ फल पर पुहुप पुहुप पर पल्लव ता पर शुकपिक मृग मद काग। खंजन धनुष चंद्रमा ऊपर ता ऊपर इक मणिधर नाग॥ अंग अंग प्रति और और छवि उपमा ताको करत न त्याग। सूरदास प्रभु पिवहु सुधारस मानो अधरनि के बड़भाग॥ १६८०॥



राग रामकली

पद्मनि सारँग एक मझारि। आपुहि सारंग नाम कहावै सारंग बरनी वारि॥ तामें एक छबीलो सारंग अर्ध सारंग उनहारि। अर्ध सारंग परि सकलई सारंग अधसारंग विचारि॥ तामहि सारंग सुत शोभित है ठाढ़ी सारंग सँभारि। सूरदास प्रभु तुमहूँ सारंग बनी छबीली नारि॥ १६८१॥



राग रामकली

बिराजत अंग अंग इति वात। अपने कर करि धरे विधाता षट खग नव जलजात॥ द्वै पतंग शशि बीस एक फनि चारि विविध रंग धात। द्वै पिक बिंब बतीस बज्रकन एक जलज पर थात॥ इक सायक इक चाप चपल अति चिबुक में चित्त

विकात। दुइ मृणाल मातुल ऊभे द्वै कदली खंभ बिन पात॥ इक केहरि इक हंस गुप्त रहै तिनहि लग्यो यह गात। सूर-दास प्रभु तुम्हरे मिलन को अति आतुर अकुलात॥ १६८२॥

❀

(सखी ने कृष्ण को लाकर राधा से मिला दिया।)

राग केदारो

यद्यपि राधिका हरि संग। हावभाव कटाक्ष लोचन करत नाना रंग॥ हृदय व्याकुल धीर नाहीं वदन कमल विलास। तृषा में जल नाम सुनि ज्यों अधिक अधिकहि प्यास॥ श्यामरूप अपार इत उत लोभ पट्ट विस्तार। सूर मिलत नहिं लहत कोऊ दुहुँनि बल अधिकार॥ १६८३॥

❀

राग केदारो

राधेहि मिलेहु प्रतीत न आवति। यद्यपि नाथ विधु वदन विलोकति दरशन को सुख पावति॥ भरि भरि लोचन रूप परमनिधि उर में आनि दुरावति। बिरह विकल मति दृष्टि दुहूँ दिशि सचि सरधा ज्यों धावति॥ चितवत चकित रहति चित अंतर नैन निमेष न लावति। सपनो अहि कि सत्य ईश इह बुद्धि वितर्क बनावति॥ कबहुँक करत विचार कौनहो को हरि केहि यह भावति। सूर प्रेम की बात अटपटी मनतरंग उपजावति॥ १६८४॥

❀

(कृष्ण ने गोपियों की मनोकामना पूरी की और अनेक रासलीलाएँ कीं।)

राग गुंडमलार

सुनत मुरली अलि न धीर धरिकै। चलीं पित मात अपमान करिकै॥ लरत निकसीं सबै तोरि फरिकै। भई आतुर वदन दरश हरिकै॥ जाहि जो भजै सो ताहि रातै। कोऊ कछु कहै सब निरस बातै॥ ता बिना ताहि कछु नहीं भावै। और तो जोरि कोटिक दिखावै॥ प्रीति कथा वह प्रीतिहि जानै। और करि कोटि बातैं बखानै॥ ज्यों सलिल सिंधु विनु कहुँ न जाई। सूर वैसी दशा इनहुँ पाई* ॥

❀

राग मलार

रासरस रीति नहिं बरणि आवै। कहाँ वैसी बुद्धि कहाँ वह मन लहौं कहाँ इह चित्त जिय भ्रम भुलावै॥ जो कहौं कौन मानै निगम अगम जो कृपा बिन नहीं यह रसहि पावै। भाव सों भजै विन भाव में ए नहीं भावही माहँ भाव यह बसावै॥ यहै निज मंत्र यह ज्ञान यह ध्यान है दरश दंपति भजन सार गाऊँ। इहै माँग्यो वार वार प्रभु सूर के नैन द्वौ रहैं नर देह पाऊँ॥

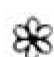
❀

राग सूही बिलावल

देखि श्याम मन हरष बढ़ायो। तैसिय शरद चाँदनी निर्मल तैसोई रासरंग उपजायो॥ तैसिय कनकवरन सब

* बाबू राधाकृष्णदास के संस्करण में यहाँ फिर नम्बरों में गड़बड़ है।

सुंदरि यह शोभा पर मन ललचायो। तैसी हंस सुता पवित्र तट तैसेइ कल्पवृच्छ सुख दायो॥ करौं मनोरथ पूरण सबके इहि अंतर इक खेद उपायो। सूर श्याम रचि कपट चतुरई युवतिन के मन यह भरमायो* ॥ १६९६ ॥



* गोपियों के विरह का वर्णन बहुत से कवियों ने किया है। हिन्दी में सूरदास से उतरकर सर्वोत्तम वर्णन नन्ददास का है। यथा—

कहन लगीं यह कुँवर कान्ह व्रज प्रगटे जब तें,
अवध भूति इन्दिरा अलंकृत हो रहीं तब तें।
सबको सब सुख बरसत ससि जों बढ़त बिहारी,
तिनमें पुनि ये गोपवधू प्रिय निपट तिहारी।
नैन मूँदबो महा अस्त्र लै हाँसी हांसी,
मारत हो कित सुरतनाथ बिन मोल की दासी।
विष तें जल तें व्याल अनल तें दामिनिझरतैं,
क्यों राखी नहिं मरन दई नागर नगधर तैं।
जसुदा-सुत जनु तुम न भये पिय अति इतराने,
विश्व कुसल कारन विधना बिनती करि आने।
अहो मित्र अहो प्राणनाथ यह अचरज भारी,
अपने जन को मारि करौ काकी रखवारी।
जब पशु चारन चलत चरन कोमल धरि वन में,
सिल तृण कण्टक अटकत कसकत हमरे मन में।
इहि विधि प्रेम-सुधानिधि बढ़ि गई अधिक कलोलैं,
विह्वल होगईं बाल लाल सों अलबल बोलैं।
तब तिनही में प्रगट भये नद-नन्दन पिय यों,
दृष्टि बन्द करि दुरै बहुरि प्रगटै नटवर जों।

राग बिहागरो

निशि काहे वन को उठि धाई। हँसि हँसि श्याम कहत हैं सुन्दरि की तुम ब्रजमारगहि भुलाई॥ गई रही दधि बेचन

पीत-बसन बनमाल धरें मंजुल मुरली हथ,
मन्द मधुर मुसिक्यान निपट मन्मथ के मन्मथ।
पियहिँ निरखि तियवृन्द उठीं सब एक बार यों,
फिरि घट आये प्रान बहुरि उझकत इन्द्री जों।
महा छुधित को भोजन सों जों प्रीति सुनी है,
ताहू तें सतगुनी सहस पुनि कोटि गुनी है।
कोउ चटपट सों झपटि कोउ पुनि उरवर लपटी,
कोउ गर लपटी कहत भले जू कान्हर कपटी।
कोउ नागर नगधर की गहि रहि दोउ कर पटकी,
मनों नव घन तें सटकी दामिनि दामन अटकी।
दौरि लिपटि गई ललित लाल सुख कहत न आवै,
मीन उछलिके पुलिन परे पुनि पानी पावै।
कोउ पिय भुज सों लटकि मटकि रहि नारि नवेली,
मनो सुन्दर सिङ्गार विटप लपटी छवि वेली।
कोउ कोमल पद कमल कुचन बिच राखि रही यों,
परम निधन धन पाय हिये सों लाय रहत जों।
कोऊ पिय को रूप नैन भरि उर धरि आवत,
मधुमाखी ज्यों देखि दसों दिस अति छवि पावत।
कोउ दसनन दिये अधर विंब गोविन्दहिं ताड़त,
कोउ एक नैन चकोर चारु मुखचन्द निहारत।
कहुँ काजल कहुँ कुमकुम कहुँ एक पीक लगी बर,
तहँ राजत ब्रजराज कुँवर कन्दर्प-दर्प हर।

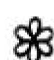
मथुरा तहाँ आजु अवसेर लगाई। अति भ्रम भयो विपिन क्यों आई मारग वह कहि सबनि बताई॥ जाहु जाहु घर

बैठे पुनि तिहिं पुलिनहि परमानन्द भयो है,
छविलिन अपनो छादन छवि सुबिछाय दयो है॥ इत्यादि

आनन्दघन ने अपनी विरहलीला में यही चरित्र गाया है। यथा—

सलोने श्याम प्यारे क्यों न आवो।
दरस प्यासी मरें तिनको जिवावो॥ १॥
कहाँ हो जू कहाँ हो जू कहाँ हो।
लगे ये प्रान तुम सों हैं जहाँ हो॥ २॥
रहो किन प्रानप्यारे नैन आगे।
तिहारे कारने दिन रात जागें॥ ३॥
सजन हित मान कै ऐसी न कीजै।
भई हैं बावरी सुध आप लीजै॥ ४॥
कहाँ तव प्यार सों सुख दैन बातें।
करो अब दूर तें दुख दैन घातें॥ ५॥
बुरे हौ जू बुरे हौ जू बुरे हौ।
अकेली कै हमें ऐसे दुरे हौ॥ ६॥
सुहाई है तुम्हें यह बात कैसें।
सुखी हौ स्यांवरे हम दीन ऐसें॥ ७॥
दिखाई दीजिए हा हा अमोही।
सनेही ह्वै रुखाई क्यों बसोही॥ ८॥
तुम्हें बिन स्यांवरे ये नैन सूने।
हिये में लै दिए बिरहा अजूने॥ ९॥
उजारो जो हमें काको बसैहो।
हमें औराय के औरन हँसैहो॥ १०॥

तुरत युवति जन खीझत गुरुजन कहि डरवाई। की गोकुल ते गमन कियो तुम इन बातन है नहीं भलाई॥ यह सुनि कै ब्रजवाम कहत भई कहा करत गिरधर चतुराई। सूर नाम लै लै जन जन के मुरली बारंबार लगाई॥ १६९७॥



कहैं अब कौन सो विरहा कहानी।
न जानी ही न जानी ही न जानी॥ ११॥
लिखैं कैसे पियारे प्रेम पाती।
लगे अँसुवन झरी वैट्रक छाती॥ १२॥
परयो है आन कै ऐसो अँदेसो।
जरावे जीव अरु कानन सँदेसो॥ १३॥
दसा है अटपटी पिय आय देखो।
न देखो तो परेखो ही परेखो॥ १४॥
अजू ऐसे कहो कैसे बितइये।
अवध बिन हूँ सदा पैंड़ो चितइये॥ १५॥
अनोखी पीर प्यारे कौन पावे।
पुकारो मौन में कहि वे न आवे॥ १६॥
अचम्भे की अगिन अन्तर जरों हों।
परोसी री मरो नाहीं मरों हों॥ १७॥
कहा जानो तुम्हारे जी कहा है।
असोची मोही तोसी सो महा है॥ १८॥
तिहारे मिलन की आसा न छूटे।
लग्यो मन बावरो तोरे न टूटे॥ १९॥
अजों धुन बाँसरी की कान बोले।
छबीली छैल डोलन संग डोले॥ २०॥

राग बिहागरो

यह जिनि कहौ घोषकुमारि। हम चतुरई नहीं कीन्हीं तुम चतुर सब ग्वारि॥ कहाँ हम कहाँ तुम रही व्रज कहाँ मुरली नाद। करति हौ परिहास हमसों तजौ यह रस वाद॥ बड़े की तुम बहू बेटी नामले क्यों जाइ। ऐसे ही निशि दौरि आई हमहिं दोष लगाइ॥ भली यह तुम करी नाहीं अजहुँ घर फिरि जाहु। सूर प्रभु क्यों निडरि आई नहीं तुम्हारे नाहु॥ १६९८॥

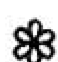


राग रामकली

अब तुम कही हमारी मानो। बन में आइ रैनि सुख देख्यो इहै लह्यो सुख जानो॥ अब ऐसी कीजो जिनि कबहूँ जानति हौ मन तुमहूँ। यह ध्वनि सुनै कहूँ जो कोऊ तुमहिं लाज अरु हमहूँ॥ हम तौ आज बहुत सरमाने मुरलो टेरि बजायो। जैसो कियो लह्यौ फल तैसो हमही तोपन आयो॥

सलोनी स्याम मूरत फिरै आगे।
कटाछैं बान सी उर आन लागें॥ २१॥
मुकट की लटक हिय में आय हाले।
चितौनी बंक जिय में आय साले॥ २२॥
हसन में दसन दुति की होत कौधैं।
वियोगी नैन चेटक चाय चौधैं॥ २३॥
अधर को देख प्यासी नैन दौरैं।
श्रमके प्रान विनु ह्वै विवस बौरैं॥ २४॥ इत्यादि

अब तुम भवन जाहु पति पूजहु परमेश्वर की नाहीं। सूर-श्याम युवतिन सों कहि कहि सब अपराध छमाहीं ॥ १७०० ॥



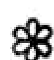
राग सूही बिलावल

यह युवतिन को धर्म न होई। धृग सो नारि पुरुष जो त्यागै धृग सो पति जो त्यागै जोई॥ पति को धर्म रहै प्रति-पालै युवती सेवा ही को धर्म। युवती सेवा तऊ न त्यागै जो पति कोटि करै अपकर्म॥ बन में रैनि बास नहिं कीजै देख्यो वन वृंदावन आई। विविध सुमन शीतल यमुना जल त्रिविध समीर परसि सुखदाई॥ घर ही में तुम धर्म सदा ही सुत पति दुखित होत तुम जाहु। सूर श्याम यह कहि परबोधत सेवा करहु जाइ घरनाहु॥ १७०१ ॥



राग मारू

श्याम उर प्रीति मुख कपट वानी। युवति व्याकुल भई धरणि सब गिरि गईं आस गई टूटि नहिं भेद जानी॥ हँसत नँदलाल मन मन करत ख्याल ए भईं बेहाल व्रजबाल भारी। रुदन जल नदी सम बहिचल्यो उरज विच मनों गिरी फोरि सरिता पनारी॥ अंग थकि पथिक नहिं चलत कोऊ पंथ नाव-रस भाव हरी नहीं आनै। सूर प्रभु निठुर करि कहा ह्वै रहे हौ उनहिं विन और को खेइजानै॥ १७०५ ॥



राग जैतश्री

निठुर वचन जिनि बोलहु श्याम। आस निरास करौ जिनि हमरी व्याकुल वचन कहति हैं वाम॥ अंतर कपट दूरि करि डारौ हम तनु कृपा निहारो। कृपासिंधु तुमको सब गावत अपनो नाम सँभारो॥ हमको शरण और नहिं सूझै का पै हम अब जाहिं। सूरदास प्रभु निज दासिन को चूक कहा पछताहिं॥ १७०६॥



राग गौरी

तुम पावत हम घोष न जाहिं। कहा जाइ लैहैं व्रज में यह दरशन त्रिभुवन में नाहिं॥ तुमहूँ ते व्रजहितू कोउ नहिं कोटि कहौ नहिं मानै। काके पिता मात हैं काके काहू हम नहिं जानै॥ काके पति सुत मोह कौन को घर हैं कहाँ पठावत। कैसो धर्म पाप है कैसो आस निरास करावत॥ हम जानै केवल तुमहीं को और वृथा संसार। सूर श्याम निठुराई तजिए तजिय वचन बिनसार॥ १७०७॥



राग जैतश्री

तुम हौ अंतर्यामि कन्हाई। निठुर भए कत रहत इते पर तुम नहिं जानत पीर पराई॥ पुनि पुनि कहत जाहु व्रजसुंदरि दूरि करौ पिय यह चतुराई। आपुहि कही करौ पति-सेवा ता सेवा को हैं हम आई॥ जो तुम कही तुमहिं सब छाजै कहा

कहैं हम प्रभुहि सुनाई। सुनहु सूर इहँई तनु त्यागैं हम पै घोष गयो नहिं जाई ॥ १७०८ ॥



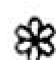
राग विहागरो

कैसे हमको ब्रजहि पठावत। मन तौ रह्यो चरण लपटानो जो एतनी यह देह चलावत ॥ अटके नैन माधुरी मुसकनि अमृत वचन श्रवणन को भावत। इन्द्री सवै मनहि के पाछे कहो धर्म कहि कहा बतावत ॥ इनको करी आपनो लायक तौ क्यों हम नाहीं जिय भावत। सूर सैन दै सरवस लूट्यो मुरली लै लै नाम बुलावत ॥ १७०९ ॥



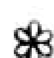
राग कान्हरो

भवन नहीं अब जाहिं कन्हाई। सुजन बंधु ते भईं बाहिरी अब कैसे वे करत बड़ाई ॥ जो कबहूँ वे लेहिं कृपाकरि धृग वै धृग हम नारि। तुम बिछुरत जीवन धृग राखैं कहौं न आपु बिचारि ॥ धृग वह लाज विमुख की संगति धनि जीवन तुम हेत। धृग माता धृग पिता गेह धृग धृग सुत पति को चेत ॥ हम चाहति मृदु हँसनि माधुरी जाते उपज्यो काम। सूर श्याम अधरन रस सींचहु जरति विरह सब वाम ॥ १७१० ॥



राग गुंडमलार

तजौ नँदलाल अति निठुरई गहि रहे कहा पुनि पुनि कहत धर्म हमको। एक ही ढँग रहे वचन सब कटु कहे वृथा युवतिन दहे मेटि प्रन को ॥ बिमुख तुमते रहे तिनहि हम क्यों गहैं तहाँ कह लहैं दुख देहिं भारी। कहा सुत पति कहा मात पित कुल कहा कहा संसार वन वन विहारी ॥ हमहि समुझाइ यह कहो मूरख नारि कहो तुम कहाँ नहिं धर्म जानै। सुनहु प्रभु सूर तुम भले की वे भले सत्य करि कहौ हम अबहिं मानैं ॥ १७१४ ॥



राग रामकली

तुमहि विमुख धृग धृग नर नारि। हम तौ यह जानति तुव महिमा को सुनिए गिरिधारि ॥ साँची प्रीति करी हम तुमसों अंतर्यामी जानो। गृह जन की नहिं पीर हमारे वृथा धर्म हम ठानो ॥ पाप पुण्य दोऊ परित्यागे अब जो होइ सुहोई। आश निराश सूर के स्वामी ऐसी करै न कोई ॥ १७१५ ॥



राग जैतश्री

आस जिनि तोरहु श्याम हमारी। नैन नाद ध्वनि सुनि उठि धाई प्रगटत नाम मुरारी ॥ क्यों तुम निठुर नाम प्रगटायो काहे विरद भुलाने। दीन आजु हमते कोउ नाहीं जानि

श्याम मुसकाने ॥ अपने भुजदंडन कर गहिए विरह सलिल में भासी। बार बार कुलधर्म बतावत ऐसे तुम अबिनासी ॥ प्रीति वचन नवका करि राख्यो अंकम भरि बैठावहु। सूर श्याम तुम बिनु गति नाहीं युवतिन पार लगावहु ॥ १७१६ ॥



राग बिहागरो

श्याम हँसि बोले प्रभुता डारि। बारंवार विनय कर जोरत कटिपट गोद पसारि॥ तुम सन्मुख मैं विमुख तुम्हारो मैं असाध तुम साध। धन्य धन्य कहि कहि युवतिन को आप करत अनुराग॥ मोको भजी एक चित ह्वै कै निदरि लोक कुलकानि। सुत पति नेह तोरि तिनुका सों मोही निजकरि जानि॥ जाके हाथ पेट फल ताको सो फल लह्यो कुमारि। सूर कृपा पूरण सों बोले गिरिगोवर्धन धारि॥१७१९॥



राग सूही बिलावल

कहत श्याम यह श्रीमुखबानी। धन्य धन्य दृढ़ नेम तुम्हारो विन दामन मो हाथ बिकानी॥ निर्दय वचन कपट के भाषे. तुम अपने जिय नेक न आनी। भजी निसंक आय तुम मोको गुरु जन की शंका नहिं मानी॥ सिंह रहै जंबुक शरणागत देखी सुनी न अकथ कहानी। सूर श्याम अंकम भरि लीन्हीं विरह अग्नि झर तुरत बुझानी॥ १७२०॥



राग मारू

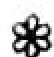
कियो जेहि काज तप घोषनारी। देउँ फल हौं तुरत लेहु तुम अब घरी हरष चित करहु दुख देहु डारी॥ रासरस रचौ मिलि संग बिलसहु सबै बिहँसि हरि कह्यो यों निगमवानी। हँसत मुख मुख निरखि वचन अमृत बरषि प्रिया रस भरे सारंगपानी॥ ब्रजयुवती चहुँ पास मध्य सुंदर श्याम राधिका वाम अति छवि बिराजै। सूर नव जलद तनु सुभग श्यामल-कांति इंद्रबधु पांति बिच अधिक छाजै॥ १७२१॥



(यहां सूरदास ने रासलीला का विस्तार से वर्णन किया है।)

राग बिहागरो

गति सुगंध नृत्यत ब्रजनारी। हाव भाव नैन सैन दै दै रिझवति गिरिधारी॥ पग पग पटकि भुजनि लटकावति फंदा करनि अनूप। चंचल चलत भूमि ये अंचल अद्भुत है वह रूप॥ दुरि निरखत अँगरूप परस्पर दोउ मनहि मन रिझवत। हँसि हँसि वदन बचन रस प्रगटत स्वेद अंग जलभीजत॥ बेनी छूटि लटैं वगरानी मुकुट लटकि लटकानो। फूल खसत सिर ते भए न्यारे सुभग स्वातिसुत मानो॥ गान करति नागरि रीझे पिय लीन्हीं अंकम लाइ। रसवस ह्वै लपटाइ रहे दोउ सूर सखी बलिजाइ॥ १७४३॥



राग केदारो

उघटत श्याम नृत्यत नारि। धरे अधर उपंग उपजै लेत है गिरिधारि॥ ताल मुरज रबाब बीना किन्नरी रस सार। शब्द संग मृदंग मिलवत सुघर नंदकुमार॥ नागरी सब गुणनि आगरि मिलि चलति पिय संग। कबहुँ गावति कबहुँ नृत्यति कबहुँ उघटति रंग॥ मंडली गोपाल गोपी अंग अँग अनुहारि। सूर प्रभु धनि नवल भामिनी दामिनी छविडारि॥ १७४५॥



राग विहागरो

नृत्यत हैं दोउ श्यामा श्याम। अंग मगन पिय ते प्यारी अति निरखि चकित व्रजवाम॥ तिरप लेति चपलासी चमकति झमकति भूषण अंग। या छवि पर उपमा कहुँ नाहीं निरखत विवस अनंग॥ आराधिका सकल गुणपूरण जाके श्याम अधीन। संग ते होत नहीं कहुँ न्यारी भए रहति अतिलीन॥ रस समुद्र मानों उछलत भयो सुंदरता की खानि। सूरदास प्रभु रीझि थकित भये कहत न कछू बखानि* ॥ १७४६॥

---

* नन्ददास ने भी रासपञ्चाध्यायी में रासलीला का सुमधुर वर्णन किया है—

सो पिय भये अनुकूल तूल कोउ नाहिं भयो अब,
सब विधि सुख को सूल-मूल उनमूल किये सब।
तब वा रातहिं तेहि सुरतरु-तर सुन्दर गिरधर,
आरंभित अद्‌भुत सुरास वहि कमल चक्र पर।

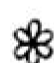
(अब सूरदासजी श्रीकृष्ण के गन्धर्व विवाह का विस्तार-पूर्वक वर्णन करते हैं।)

राग छंद

मोर मुकुट रचि मौर बनायो। माथे पर धरि हरि वरु आयो॥ तनु श्यामल पट पीत दुकूले। देखत घन दामिनि मन

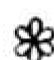
एक काल ब्रजबाल लाल तहँ चढ़े जोरि कर,
तिमसन इत उत होत सबै निर्तत विचित्र वर।
मनि-दर्पन सम अवनि रमनि तापर छबि देहीं,
बिलुलित कुण्डल अलक तिलक झुकि झाईं लेहीं।
कमल-कर्णिका मध्य जु स्यामास्याम बनी छबि,
द्वै द्वै गोपिन बीच जु मोहन लाल रहे फबि।
मूरत एक अनेक देखि अद्भुत सोभा अस,
मंजु-मुकुर-मंडल मधि बहु प्रतिबिम्ब बधू जस।
सकल तियन के मध्य साँवरो पिय सोभित अस,
रत्नावलि मधि नीलमणी अद्भुत झलकै जस।
नव-मरकत-मनि स्याम कनक-मणिगण ब्रजबाला,
वृन्दावन कों रीझि मनों पहिराई माला।
नूपुर कङ्कन किङ्किन करतल मञ्जुल मुरली,
ताल मृदङ्ग उपङ्ग चङ्ग ऐकै सुर जु रली।
मृदुल मधुर टंकार ताल झङ्कार मिली धुनि,
मधुर जन्त्र की तार भँवर गुञ्जार रली पुनि।
तैसिय मृदुपद पटकनि चटकनि कटतारन की,
लटकनि मटकनि झलकनि कल कुण्डल हारन की।
साँवरे पिय के संग नृतत यों ब्रज की बाला,
जनु घनमण्डल-मञ्जुल खेलति दामिनि माला।

भूले ॥ दामिनी घन कोटि वारौं जब निहारौं वह छवी। कुण्डल विराजत गंड मंडल नहीं शोभा शशि रवी॥ और कौन समान त्रिभुवन सकल गुण जेहि माहिआँ। मनो मोर नाचत सँग डोलत मुकुट की परछाहिआँ॥



राग छंद

गोपीजन सब नेवते आईं। मुरली ध्वनि ते पठइ बुलाईं॥ बहु बिधि आनँद मंगल गाए। नवफूलन के मंडप छाए॥ छाए जु फूलन कुञ्ज मंडप प्रीति ग्रन्थि हिए परी। अति रुचिर रूप प्रवीण राधा निकट वृंदा शुभ घरी॥ गाए जु गीत पुनीत बहु बिधि वेद रवि सुंदर ध्वनी। नंदसुत बृषभानुतनया रास में जोरी बनी॥



छबिलि तियन के पाछें आछें बिलुलित वेनी,
चञ्चल रूप लसत सँग डोलत जनु अलिसेनी।
मोहन पिय की मुसकनि ढलकनि मोर मुकुट की,
सदा बसौ मन मेरे फरकनि पियरे पट की।
बदन कमल पर अलक छुटी कछु श्रम की झलकनि,
सदा रहौ मन मेरे मोर मुकुट की ढलकनि।
कोऊ सखी कर पकरत निरतत यों छबिली तिय,
मानो करतल फिरत देखि नट लट्टू होत पिय।

राग छंद

मिलि मनहै सुख आसन वैसे। चितवनि वार किये सब तैसे॥ तापरि पाणिग्रहण विधि कीन्हो। तब मंडल भरि भाँवरि दीन्हो॥

देत भाँवरि कुंज मंडप पुलिन में वेदी रची। बैठे जु श्यामा श्याम वर त्रैलोक की शोभा खची॥ उत कोकिला गण कर कोलाहल इत सकल व्रजनारियाँ। आई जु निवती दुहुँ दिशि मनों देति आनँद गारियाँ॥



राग छंद

भए जो मन्मथ सैन्य बराती। द्रुम फूले वन अनवन भाँती॥ सुर बंदीजन सब यश गाए। मघवा जे मृदंग बजाए॥

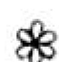
बाजहिं जे बाजन सकल नभ सुर पुहुप अंजलि वरषहीं। थकि रहे व्योम विमान मुनिगन जै शबद करि हर्षहीं॥ सूरदासहि भयो आनँद पुजी मन की साधा। श्रीलाल गिरिधर नवल दुलहै दुलहिन श्रीराधा॥



राग विहागरो

प्रथम व्याह विधि ह्वै रह्यो कंकन चार विचारि। रचि रचि पचि पचि गूँथि बनायो नवल निपुन व्रजनारि॥ बड़े होवहु तव छोरियो हो ये गोकुल के राइ। की कर जोरि करौ विनती कै छुवौ श्रीराधाजी के पाइ॥ इह न होइ गिरि

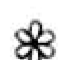
को धरिबो हो सुनहु कुँवर गोपीनाथ। आपुन को तुम बड़े कहावत काँपन लागे हैं दोउ हाथ ॥ बहुरि सिमिटि ब्रजसुंदरी मिलि दीन्ही गाँठि बनाइ। छोरहु वेगि कि आनहु अपनी यसुमति माइ बोलाइ ॥ सहज सिथिल पल्लव ते हरिजू लीन्हों छोरि सवारि। किलकि उठीं सब सखी श्याम की अब तुम छोरौ सुकुमारि ॥ पचिहारी कैसेहु नहिं छूटत बँधो प्रेम की डोरि। देखि सखी यह रीति दुहुँन की मुदित हँसी मुख मोरि ॥ अब जिनि करहु सहाय सखी री छोड़हु सकल सयान। दुलहिन छोरि दुलह को कंकन की बोलि बबा वृषभान ॥ कमल कमल करि वरनिएहो पानि पिय गोपाल। अब कवि कुल साँचे से लागे रोमकटीले नाल ॥ लीला रास गोपाललाल की जो रस रसिक बखान। सदा रहो इह अविचल जोरी बलि बलि सूर समान ॥ १७५८ ॥



राग काफी

सनकादिक नारद मुनि शिव विरंचि जान। देव दुंदुभी मृदंग वाजे वर निसान ॥ वारने तोरन बँधाए हरि कीन्हों उछाह। ब्रज की सव रीति भई बरसाने व्याह ॥ डोरन कर छोरन को आईं सकल धाइ। फूली फिरैं सहचरी आनँद उर न समाइ ॥ गजवर गति आवनि पग धरनि धरत पाँव। लटकत सिर सेहरो मनो शिखि श्रीखंड सुभाव ॥ शोभित सँग नारि अंग सबै छबि विराज। गज रथ वाजी बनाइ चँवर छत्र

साज ॥ दुलहिनि वृषभानु-सुता अंग अंग भ्राज। सूरदास प्रभु दुलह देखो श्रीव्रजराज ॥ १७६० ॥



राग बिहागरो

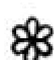
वृषभानुनंदिनी अति छबि बनी। श्रीवृन्दावन चंद राधा निर्मल चाँदनी ॥ श्याम अलक बिच मोती दुति मंगा। मानहु झलमलित शीश गंगा ॥ श्रवण ताटंक सोहै चिकुर की कांति। उलटि चल्यो है राहु चक्र की भाँति ॥ गोरे लिलाट सोहै सेंदुर को बिंद। शशि की उपमा देत कवि को है निंद ॥ चपल उनींदे नैन लागत सोहाये। नासिका चंपकली को द्वै अलि धाये ॥ वदन मंजन ते अंजन गयो दूरि। कलंक रहित शशि पुनि कला पूरि ॥ गिरि ते लता भई यह हम सुनि। कंचन लता ते द्वै गिरि भए पुनि ॥ कंचन से तनु सोहै नीलांबरसारी। कुहुनिसामध्य जनु दामिनि उजियारी ॥ नख शिख शोभा मोपै वरणि न जाई। तुमसी तुमही राधा श्याम मन भाई ॥ यह छवि सूरदास सदा रहै वानी। नँद नंदनराजा राधिका देरानी ॥ १७६२ ॥



राग देवगंधार

दोउ राजत श्यामा श्याम। व्रजयुवती मंडली विराजत देखति सुरगन वाम ॥ धन्य धन्य वृंदावन को सुख सुरपुर कौने काम। धनि वृषभानु सुता धनि मोहन धनि गोपिन को

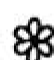
नाम ॥ इनकी को दासी सरि ह्वै है धन्य शरद की याम। कैसेहु सूर जनम ब्रज पावै यह सुख नहिं तिहुँ धाम ॥१७६३॥



(यहाँ सूरदास ने फिर श्रीकृष्ण के रास का वर्णन किया है।)

राग बिहागरो

रीझे परस्पर बरनारि। कंठ भुज भुज धरे दोऊ सकत नहिं निरवारि॥ गौर श्याम कपोल सुललित अधर अमृत सार। परस्पर दोउ पियरु प्यारी रीझि लेत उगार॥ प्राण इक द्वै देह कीन्हें भक्त प्रीति प्रकास। सूर स्वामी स्वामिनी मिलि करत रंग बिलास॥ १७७५॥



राग बिहागरो

गावत श्याम श्यामा रंग। सुघर गति नागरि अलापति सुर धरति पिय संग॥ तान गावति कोकिला मनो नाद अलि मिलि देत। मोर संग चकोर डोलत आप अपने हेत॥ भामिनी अंग जोन्ह मानो जलद श्यामलगात। परस्पर दोउ करत क्रीड़ा मनहि मनहि सिहात॥ कुचनि बिच कच परम शोभा निरखि हँसत गोपाल। सूर कंचन गिरि बिचनि मनों रह्यो है अंधकाल* ॥ १७७६ ॥



---

* रासलीला के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशमस्कन्ध पूर्वार्ध अध्याय २६ ॥ लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ३० ॥

(श्रीकृष्ण ने और भी रासलीलाएँ कीं। राधा को अभिमान हो गया कि मैंने कृष्ण को अपने बस में कर लिया है, मेरे ही लिए यह सब रासलीला हो रही है, मेरे समान कोई स्त्री नहीं है। राधा का गर्व मिटाने के लिए कृष्ण उसे वन में अकेली छोड़कर अन्तर्धान हो गये।

राग बिहागरो

तब हरि भए अंतर्धान। जब कियो मन गर्व प्यारी कौन मोसी आन॥ अति थकित भई चलत मोहन चलि न मोपै जाइ। कंठ भुज गहि रही यह कहि लेहु जबहि चढ़ाइ॥ गए संग बिसारि रिस में बिरस कीन्हों बाल। सूर प्रभु दुरि चरित देखत तुरत भई बेहाल* ॥ १७९१ ॥

❀

राग टोड़ी

श्याम गए युवती सँग त्यागि। चकित भई तरुणिन सँग जागि॥ प्यारी संग लगाइ बिहारी। कुंजलता तर कतहूँ डारी॥ संग नहीं तहँ गिरिवर धारी। दसहु दिशा तन दृष्टि पसारी॥ परी मुरुछि धरनी सुकुमारी। कामवैर लीन्हों शरमारी॥ त्राहि त्राहि कहि कहुँ बनवारी। भई व्याकुल तनुदशा बिसारी॥ नैन सलिल भीजी सब सारी। सूर संग तजि गए मुरारी॥ १७९२ ॥

❀

* कृष्ण के अन्तर्धान के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशमस्कन्ध पूर्वार्ध अध्याय २९॥ लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ३०॥

(कृष्ण के विरह से गोपियाँ व्याकुल हो गईं, राधा की तो सब सुध-बुध जाती रही, वह वन में पेड़ के नीचे अकेली सूखी लता की तरह पड़ी रही।)

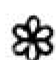
गोपीविरह ॥ राग विहागरो

व्याकुल भई घोषकुमारि। श्याम तजि सँग ते कहाँ गए यह कहति व्रजनारि॥ दशौदिश नभ द्रुम न देखति चकित भई बेहाल। राधिका नहिं तहाँ देखी कह्यो वा के ख्याल॥ कछुक दुख कछु हरष कीन्हों कुंज लेगई श्याम। सूर प्रभु-सँग मही देखो करे ऐसे काम॥ १७९३ ॥



राग विलावल

जो देखे द्रुम के तरे मुरछी सुकुमारी। चकित भई सब सुंदरी यह तौ राधा नारी॥ याही को खोजति सबै यह रही कहाँ री। धाइ परी सब सुंदरी जो जहाँ तहाँ री॥ तन की तनकहु सुधि नहीं व्याकुल भई बाला। यह तौ अति बेहाल है कहाँ गए गोपाला॥ बार बार बूझति सबै नहिं बोलति बानी। सूर श्याम काहे तजी कहि सब पछितानी॥१७९४॥



राग सारंग

राधे कत निकुंज ठाढ़ी रोवति। इंदु ज्योति मुखारविंद की चकित चहूँ दिशि जोवति॥ द्रुमशाखा अवलंब बेलि गहि नख सों भूमि खनोवति। मुकुलित कच तन घनकि ओट ह्वै

अँसुवनि धार निचोवति ॥ सूरदास प्रभु तजी गर्व ते भये प्रेम गति गावति ॥ १८०० ॥

❀

राग भैरव

क्यों राधा नहिं बोलति है। काहे धरणि परी व्याकुल ह्वै काहे नैन न खोलति है ॥ कनक बेलि सी क्यों मुरझानी क्यों वनमाँझ अकेली है। कहाँ गए मनमोहन तजिकै काहे बिरह दहेली है ॥ श्याम नाम श्रवणनि ध्वनि सुनिकै सखियन कंठ लगावति है। सूर श्याम आए यह कहि कहि ऐसे मन हरषावति है ॥ १८०१ ॥

❀

राग विहागरो

कहाँ रहे अब लौं तुम श्याम। नैन उघारि निहारि रही तहाँ जो देखै ब्रजबाम ॥ लागी करन विलाप सबनसों श्याम गए मोहिं त्यागि। तुमको नहीं मिले नँदनंदन बूझति है तब जागि ॥ निरखि बदन वृषभानु कुँवरि को मनो सुधा बिन चंद। राधा बिरह देखि बिरहानी यह गति बिन नँदनंद ॥ या वन में कैसे तुम आई श्याम संग है नाहीं। कछु जानति कहाँ गए कन्हाई तहाँ तोहिं लै जाहीं ॥ मैं हठ कियो वृथा री माई जिय उपज्यो अभिमान। सूर श्याम ऊपर मोहिं आनी ह्वै गए अंतर्धान ॥ १८०२ ॥

❀

राग बिहागरो

मैं अपने मन गर्व बढ़ायो। इहै कह्यो पिय कंध चढ़ौंगी तब मैं भेद न पायो॥ यह वाणी सुनि हँसे कंठभरि भुजनि उछंगि लई। तब मैं कह्यो कौन है मोसी अंतर जानि लई॥ कहाँ गए गिरिधर मोको तजि ह्याँ कैसे मैं आई। सूर श्याम अंतर भए मोते अपनी चूक सुनाई॥ १८०३॥



राग कल्याण

राधिका सों कह्यो धीर मन धरि री। मिलैंगे श्याम व्याकुल दशा जिनि करै हरष जिय करौ दुख दूर करि री॥ आपु जहँ तहँ गई विरह सब पगिरईं कुँवरि सों कहि गई श्याम ल्यावै। फिरति बन बन विकल सहस सोरह सकल ब्रह्म-पूरन अकल नहीं पावै॥ कहाँ गए यह कहति सबै मग जोवही कामतनु दहति ब्रजनारि भारी। सूर प्रभु श्याम दुरि चरित देखहिं सकल गर्व अंतर हृदय हेत नारी॥ १८०६॥



राग बिलावल

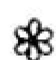
श्याम सबनि को देखहीं वै देखति नाहीं। जहाँ तहाँ व्याकुल फिरैं तनु धीरज नाहीं॥ कोउ वंशीवट को चली कोउ बन घन ज्याहीं। देखि भूमि वह रास की जहँ तहँ पगछाहीं॥ सदा हठीली लाड़िली कहि कहि पछिताहीं। नैन सजल जल ढारिकै

व्याकुल मन माहीं ॥ एक एक ह्वै ढूँढ़हीं तरुनी बिकलाहीं । सूरज प्रभु कहुँ नहिं मिले ढूँढ़ति द्रुम पाहीं ॥ १८०७ ॥



राग रामकली

कहिधौं री बन वेलि कहूँ तुम देखे है नँदनंदन । बूझहु धौं मालती कहूँ तैं पाए हैं तनुचंदन ॥ कहिधौं कुंद कदम बकुल वट चंपक लता तमाल । कहिधौं कमल कहाँ कमलापति सुंदर नैन विशाल ॥ श्याम श्याम कहि कहति फिरति यह ध्वनि वृंदावन छायो री । गर्व जानि पिय अंतर ह्वै रहे सो मैं वृथा बढ़ायो री ॥ अब विन देखे कल न परत छिन श्यामसुँदर गुण गायो री । मृग मृगनि द्रुम बन सारस खग काहू नहीं बतायो री ॥ मुरली अधर सुधारस लै तरु रहे यमुन के तीर । कहि तुलसी तुम सब जानति हौ कहँ घनश्याम शरीर ॥ कहिधौं मृगी मयाकरि हमसों कहि धौं मधुप मराल । सूरदास प्रभु के तुम संगी हौ कहाँ परम दयाल ॥ १८०८ ॥



राग रामकली

कहूँ न देख्यो री मधुबन में माधो । कहाँ धौं मृग गमन कीन्हों कहाँ धौं बिलमि रहे नैन भरत दरशन की साधौ ॥ जब ते बिछुरे श्याम तब ते रह्यो न जाइ सुनो सखी मेरोइ अपराधौ । सूरदास प्रभु विनु कैसे जीवहिं माई घटत घटत घटि रह्यो प्राण आधो ॥ १८०९ ॥

वागेसरी ॥ राग कान्हरो

मोहन मोहन कहि कहि टेरै कान्ह हवौ यहि बन मेरे। कहियत हो तुम अंतर्यामी पूरण कामी सब केरे ॥ ढूँढ़ति है द्रुम बेली बाला भई बेहाल करति अवसेरें। सूरदास प्रभु रासबिहारी श्रीबनवारी वृथा करत काहे झेरें ॥ १८१३ ॥



राग परागी

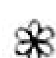
केहि मारग मैं जाउँ सखी री मारग मुहिं बिसर्यो। ना जानो कित ह्वै गए मोहिं जात न जानि पर्यो ॥ अपनो पिय ढूँढ़त फिरौं री मोहिं मिलबे को चाव। काँटो लाग्यो प्रेम को पिय यह पायो दाव ॥ बन डोंगरे ढूँढ़ति फिरी घर-मारग तजि गाउँ। बूझों द्रुम प्रति रूख राय कोउ कहै न पिय को नाउँ ॥ चकित भई चितवत फिरी व्याकुल अतिहि अनाथ। अबकै जो कैसेहुँ मिलौ तौ पलक न तजिहौं साथ ॥ हृदय माहँ पिय घर करौं री नैनन बैठक देउँ। सूरदास प्रभु सँग मिलौ बहुरि रास रस लेउँ ॥ १८१५ ॥



राग बिहागरो

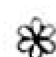
हो कान्ह मैं तुम्हैं चाहौं तुम काहे ना आवो। तुम धन तुम तन तुम मन भावो ॥ कियो चाहों अरस परस करौ नहिं माना। सुन्यो चाहौं श्रवण मधुर मुरली की ताना ॥ कुंज

कुंज जपति फिरी तेरे गुणन की माला। सूरदास प्रभु वेगि मिलो मोहिं मोहन नँदलाला ॥ १८१७ ॥



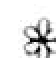
राग काफी

सखी मोहिं मोहन लाल मिलावै। ज्यों चकोर चंदा को इकटक भृंगी ध्यान लगावै ॥ बिनु देखे मोहिं कल न परै री यह कहि सबन सुनावै। विन कारण मैं मान कियो री अपनेहि मन दुख पावै ॥ हाहा करि करि पाँइन परि परि हरि हरि टेर लगावै। सूर श्याम बिनु कोटि करौ जो और नहीं जिय आवै ॥ १८१८ ॥



राग बिलावल

मिलहु श्याम मोहिं चूक परी। तेहि अंतर तनु की सुधि नाहीं रसना रट लागी न टरी ॥ धरणि परी व्याकुल भई बोलति लोचन धारा अंसु झरी। कबहूँ मगन कबहुँ सुधि आवति शरन शरन कहि बिरह जरी ॥ कृष्ण कृष्ण करि टेरि उठति है युग सम बीतत पलक घरी। सूर निरखि ब्रजनारि दशा यह चकित भई जहँ तहाँ खरी ॥ १८२० ॥



राग बिलावल

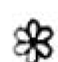
देखि दशा सुकुमारि की युवती सब धाईं। तरु तमाल बूझति फिरें कहि कहि मुरझाईं ॥ नँदनंदन देखे कहूँ

मुरली करधारी। कुंडल मुकुट विराजई तनु कुंडल भारी ॥ लोचन चारु बिलास हैं नासा अति लोनी। अरुण अधर दशनावली छवि बरणै कोनी ॥ बिंब पँवारे लाजहीं दामिनि द्युति थोरी। ऐसे हरी हमको कहौ कहुँ देखेहौ री ॥ अंग अंग छवि कहा कहै देखे बनि आवै। सूर सुगूँगै खाइ ऊख क्यों स्वाद बतावै ॥ १८२१ ॥



राग बिलावल

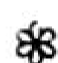
अति व्याकुल भई गोपिका ढूँढ़ति गिरिधारी। बूझति है वन बेलिसों देखे बनवारी ॥ जाही जूही सेवती करना कनिश्चारी। बेलि चमेली मालती बूझति द्रुमडारी ॥ खूभा मरुश्रा कुंद सों कहै गोद पसारी। वकुल बहुलि वट कदम पै ठाढ़ीं व्रजनारी ॥ बार बार हाहा करैं कहुँ हौ गिरिधारी। सूर श्याम को नाम लै लोचन जल ढारी ॥ १८२२ ॥



राग बिहागरो

राधे भूल रही अनुराग। तरु तरु रुदन करत मुरझानी ढूँढ़ि फिरी बनवाग ॥ कुँवरि असित श्रीखंड अहित भ्रम चरण शिलीमुख लाग। बाणी मधुर जानि पिक बोलत कदम करारत काग ॥ कर पल्लव किसलय कुसुमाकर जानि असित भए कीर। राका चंद्र चकोर जानकै पिवत नैन को नीर ॥ व्याकुल

दशा देख जगजीवन प्रगट भए तेहि काल। सूर श्यामहित प्रेम अंकुर उर लाइ लई भुज बाल ॥ १८२९ ॥



राग कल्याण

न्याय तजी श्यामा गोपाल। थोरी कृपा बहुत करि मानी पाँवर बुधि व्रजबाल ॥ मैं कछु कपट सबन सों कीन्हों अपयश ते न डेरानी। हम एकही संग एकहि मत सब कोउ नहिं विलगानी ॥ हम चातक घन नँदनंदन बरपन लागे हित कीन्हों। तु बड़ी प्रबल पवन सम सजनी प्रेमबीच दुख दीनो ॥ जानि दीन दुखी सब सुख के निधि मोहन वेनु बजायो। सूर श्याम तब दरश परश करि मिलि संताप नशायो ॥ १८३० ॥*



---

* गोपियों की कृष्ण-सम्बन्धी खोज और विलाप के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्ध अध्याय ३० और ३१। लल्लूजी-लाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ३१ और ३२।

जैसा कह चुके हैं, विरहलीला बहुतेरे कवियों ने गाई है। आनन्द-घन की विरहलीला से कुछ दोहे उद्धृत करते हैं—

भई सूधी सुनो बांके बिहरी।
न करहैं मान फिर सोंहै तुमारी ॥ २१ ॥
चढ़ाई मूड़ अब पायन परेंगी।
कहो जोई अजू सोई करेंगी ॥ २२ ॥
दई कों मान कें अब आन ज्यावो।
प्यासी हैं पियारे सुरस पियावो ॥ २३ ॥
तिहारी हैं कहू क्यों हूँ जियेंगी।
विरह घायल हियो ज्यों त्यों सियेंगी ॥ २४ ॥

(गोपियों की भक्ति से मोहित होकर कृष्ण प्रकट हुए; उन्होंने प्रेमपूर्वक मिलकर राधा का सारा दुख दूर कर दिया। फिर उन्होंने रासलीला की और जलक्रीड़ा की।

राग सूही

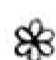
अंतर ते हरि प्रगट भए। रहत प्रेम के वश्य कन्हाई युवतिन को मिलि हर्ष दए॥ वैसहि सुख सबको फिरि दीन्हों उहै भाव सब मानि लियो। वह जानति हरिसंग तबहि ते उहै बुद्धि सब उहै हियो॥ उहै रासमंडल रस जानति बिच गोपी बिच श्याम धनी। सूर श्याम श्यामा मधि नायक उहै परस्पर प्रीति बनी॥ १८३२॥



बिसासिन बाँसुरी फिरिहूँ सुनैंगी।
कियो ही सीस ऐसे रन धुनैंगी॥ ५५॥
न तेरो जू कहो क्यों हूँ बजोरी।
निगोड़ी प्रीत की दुख दैन डोरी॥ ५६॥
करी तुम तो अजू नप खान हाँसी।
परी गाढ़ैं गरे बिसवास फाँसी॥ ५७॥
न छूटे जू न छूटे जू न छूटे।
टगोरी रावरी बिरहा बलूटे॥ ५८॥
हमारी एक तुमसों टेक प्यारे।
मिलन मैं कै कपट ह्वै गये न्यारे॥ ५९॥
चकोरी बापुरी ये दीन गोपी।
अहो व्रजचन्द क्यों पहिचान लोपी॥ ६०॥
छबीली छैल तुम को पीर काकी।
बिथा की कथा तें छतिया जो पाकी॥ ६१॥

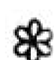
अथ जलक्रीड़ा ।। राग गुंडमलार

रैनि रस रास सुख करत बीती । भोर भए गए पावन यमुन के सलिल न्हात सुख करत अति बढ़ी प्रीती ।। एक इक मिलति हँसि एक हरि संग रसि एक जल मध्य इक तीर ठाढ़ी। एक इक डरति एक इक भरि कै चलति एक सुख लरति अति नेह वाढ़ो ।। काहु नहिं डरति जल थलहु क्रीड़ा करति हरति मन निडरि ज्यों कंत नारी। सूर प्रभु श्याम श्यामा संग गोपिका मिटी तनुसाध भई मगन भारी ।। १८४० ।।



राग गौरी

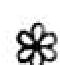
यमुनाजल क्रीड़त हैं नँदनंदन । गोपीवृंद मनोहर चहुँ दिश मध्य अरिष्ट निकंदन ।। पकरे पाणि परस्पर छिरकत शिथिल सलिल भुजचंदन। मानों युवति पूजि अहिपति को लग्यो अंक दै वंदन।। कुच भरि कुटिल सुदेश अंशुकनि चुवति अग्रगति मंदन। मानहु भरि गंडूष कमलते डारत अलि आनंदन ।। भुज भरि अंक अगाध चलत लै ज्यों लुब्धक खग फंदन। सूरदास प्रभु सुयश बखानत नेति नेति श्रुति छंदन ।। १८४१ ।।



राग कान्हरो

बिहरत हैं यमुनाजल श्याम। राजत हैं दोउ बाँहाँ जोरी दंपति अरु व्रजवाम ।। कोउ ठाढ़ी जल जानु जंघ लों

कोउ कटि हिरदै ग्रीव। यह सुख बरणि सकै ऐसो को सुंदरता की सींव॥ श्याम अंग चंदन की आभा नागरि केसरि अंग। मलयज पंक कुमकुमा मिलि कै जल यमुना इक रंग॥ निशि श्रम मिट्यो मिट्यो तनु आलस परसि यमुन भई पावन। सूर श्याम जल मध्य युवतिगन जन जन के मनभावन॥१८४२॥



(रास और जलक्रीड़ा गाकर सूरदास कहते हैं—)

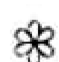
राग बिलावल

गोपी पदरज महिमा बिधि भृगु सों कही। बरष सहस्रन कियो तप मैं ताऊ न लही॥ इह सुनकै भृगु कह्यो नारद आदिक हरि भक्ता। माँगे तिनकी चरण रेणु तोहिं यह जुगता॥ सो निज गोपी चरण रज वांछित हौ तुम देव। मेरे मन संशय भयो कहौ कृपा करि भेव॥ ब्रज सुंदरि नहिं नारि ऋचा श्रुति की सब आहिं। मैं अरु शिव पुनि लक्ष्मी तिनसम कोऊ नाहिं॥ अद्भुत है तिनकी कथा कहौं सो मैं अब गाइ। ताहि सुनै जो प्रीति कै सो हरिपदहि समाइ॥ प्राकृत लै भए पुरुष जगत सब प्राकृत समाइ। रहै एक वैकुंठ लोक जहाँ त्रिभुवन राइ॥ अक्षर अच्युत निर्विकार है निरंकार है जोई। आदि अंत नहिं जानअत आदि अंत प्रभु सोई॥ श्रुति विनती करि कह्यो सर्व तुमही हौ देवा। दूरि निरंतर तुमहिं हौ तुम निज जानत भेवा॥ या विधि बहुत अस्तुति करी तब भइ गिरा

अकास। माँगो वर मनभावते पुरवो सो तुम आस॥ श्रुतिन कह्यो कर जोरि सने आनंद देह तुम। जो नारायण आदि रूप तुम्हरो सो लखो हम॥ निर्गुण रहित जो निज स्वरूप लख्यो न ताको भेव। मन वाणी ते अगम अगोचर देखरावहु सो देव॥ बृंदावन निजधाम कृपा करि तहाँ देखायो। सब दिन जहाँ वसंत कल्पवृक्षन सों छायो॥ कुंज अद्भुत रमणीक तहाँ बेलि सुभग रही छाइ। गिरि गोवर्धन धात में झरना झरत सुभाइ॥ कालिंदीजल अमृत प्रफुल्लित कमल सुहाइ। नगन जटित दोउ कूल हंस सारस तहँ छाइ॥ क्रीड़त श्याम किशोर तहाँ लिये गोपिका साथ। निरखि सो छवि श्रुति थकित भए तव बोले यदुनाथ॥ जो मन इच्छा होइ कहो सो मोहिं प्रगट कर। पूरण करों सो काम देउँ तुमको मैं यह बर॥ श्रुतिन कह्यो ह्वै गोपिका केलि करें तुम संग। एवमस्तु निज मुख कह्यो पूरण परमानंद॥ कल्पसार सतब्रह्मा जब सब सृष्टि उपावै। अरु तेहि लोग न वर्ण आश्रम के धर्म चलावै॥ बहुरि अधर्मी होहिं नृप जग अधर्म बढ़ि जाइ। तब बिधि पृथ्वी सुर सकल करैं विनय मोहिं आइ॥ मथुरामंडल भरत-खंड निजधाम हमारो। धरौं तहाँ मैं गोप भेप सो पंथ निहारो॥ तब तुम होइकै गोपिका करहो मोसों नेह। करौं केलि तुमसों सदा सत्य वचन मम येह॥ श्रुति सुनिकै हरि-बचन भाग्य अपनी बहु मानी। चितवन लागे समय दिवस सो जात न जानी॥ भार भयो जब पृथ्वी पर तब हरि लियो

अवतार। वेद-ऋचा होइ गोपिका हरि सों कियो बिहार ॥ जो कोइ भरता भाव हृदय धरि हरिपद ध्यावै। नारि पुरुष कोउ होइ श्रुति ऋचा गति सो पावै ॥ तिनके पद रज जो कोई वृंदावन भू माहिं। परसै सोऊ गोपिका गति पावे संशय नाहिं ॥ भृगु ताते मैं चरण रेणु गोपिन की चाहत। श्रुति मति वारंबार हृदय अपने अवगाहत ॥ यह महिमा रज गोपिका की जब विधि दई सुनाइ। तब भृगु आदिक ऋषि सकल रहे हरिपद चितलाइ ॥ बंदन रज विधि सबै कह्यो विधि दियो ऋषिन्ह बताइ। व्यास त्रिपद वामनपुराण कह्यो सूर सोइ अब गाइ ॥ १८६१ ॥

(कृष्ण को अन्य गोपियों से प्रीति करते देखकर राधा ने मान किया। पर कृष्ण ने उनको मना लिया फिर वही मानलीला होने लगी *। परन्तु फिर राधा ने कृष्ण को दूसरी गोपिकाओं से रमते देखा। फिर वह मान करके बैठ रहीं।)

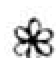


राग बिलावल

यह कहि कै त्रिय धाम गई। रिसनि भरी नख शिख लौं प्यारी जोवन गर्व मई ॥ सखी चली गृह देखि दशा यह हठ करि बैठी जाइ। बोलत नहीं मान करि हरि सों हरि अंतर रहे आइ ॥ यहि अंतर युवती सब आईं जहाँ श्याम घर द्वारे।

* यहाँ सूरदास ने रासलीला अत्यन्त प्रतिभाशाली पदों में गाई है पर उनमें अश्लीलता का स्पर्श है। इसलिए उनको संग्रह में स्थान नहीं दिया।

प्रिया मान करि बैठि रही है रिस करि क्रोध तुम्हारे ॥ तुम आवत अतिही झहरानी कहा करी चतुराई। सुनत सूर ए बात चकित पिय अतिहि गए मुरझाई ॥ २०१९ ॥



राग विहागरो

बहुरि नागरी मान कियो। लोचन भरि भरि डारि दिए दोउ अतितनु बिरह हियो ॥ देखत ही देखत भए व्याकुल त्रिय कारण अकुलाने। वै गुन करत होत अब काचे कहियत परम सयाने ॥ यह सुनि कै दूती हरि पठई देखि जाय अनुमान। सूर श्याम यह कहतहि पठई तुरत तजहि जेहि मान ॥ २०२० ॥



राग केदारो

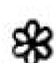
दूती दई श्याम पठाइ। और मुख कछु बात न आवै तहाँ बैठी जाइ ॥ प्रिया मन परवाह नाहीं कोटि आवै जाहिं। सौति शाल सलाइ बैठी डुलति इत उत नाहिं ॥ भीति बिन कह चित्र रेखै रही दूती हेरि। सूर प्रभु आतुर पठाई करत मन अवसेरि ॥ २०२१ ॥



राग कान्हरो

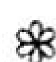
दूती मन अवसेर करै। श्याम मनावन मोहिं पठाई यह कबहुँ चितवै न टरै ॥ तब कहि उठी मान अति कीन्हों बहुत

करी हरि कहौ करौ। ऐसे विनवै नहीं जाति हैं अब कबहूँ जनि उनहिं ठरौ॥ मैं आवति यमुना तट ते ब्रज सखी एक यह बात कही। सुनहु सूर मैं रहि न सकी गृह कही श्याम की प्रकृति सही॥ २०२२॥



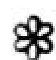
राग बिहागरो

अब द्वारे ते टरत न श्याम। अब पर घर की सौंह करत है भूलि करौ नहिं ऐसे काम॥ अब तू मान तजै जिनि उनसों इहै कहन आई तेरे धाम। अब समुझो औरौं समुझ्यो वै हम जब कहैं करैं तब ताम॥ अब मोको यह जानि परी है काहू के न बसे कहुँ याम। सूरदास दूती की वाणी सुनति धरति मनही मन वाम॥ २०२३॥



राग सूही

जब दूती यह वचन कह्यो। तब जाने हरि द्वारे ठाढ़े उर उमँग्यो रिस नहीं रह्यो॥ काहे को हरि द्वार खड़े हैं किन राखे कहि जीभ गरै। मौन गहैं मैंही कहि आवौं तू काहे को रिसनि जरै॥ चतुर दूतिका जान लई जिय अब बोली गयो मान सबै। सूर श्याम पै आतुर आई कहत आन की आन फबै॥ २०२४॥



राग केदारो

काहि मनाऊँ श्यामलाल बाल जोरैं नहिं डीठि। मुखहूँ जो बोलै तौ ममही की लहिये ऐसी तिहारी अहीठि॥ अपनी सी बहुत कही सुनि सुनि उन सबै सही वारू की बूँद ताको कहा करै बसीठि। सूरदास के पिय प्यारी आपुहीं जाइ मनाय लीजै जैसी बयारि बहै तैसी ओढ़िए जू पीठि ॥२०२५॥



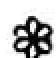
राग केदारो

ललन तुम्हारी प्यारी आजु मनायो न मानति। बूझि न परति जानि का वैठी कियो जु इत रीस तुमही लै कोटि अवगुण गानति॥ भरि भरि अँखियन नीर लेति पै ढारति नाहीं अति रिस कँपति अधर फरकि करि भ्रुकुटी तानति। सूरदास प्रभु रसिक शिरोमणि आपुनि चलिए तौ भली वाँनति॥ २०२६॥



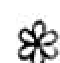
राग बिहागरो

यह सुनि श्याम विरह भरे। कहुँ मुकुट कहुँ कटि पीतांवर मुरछि धरणि परे॥ युवति भरि अँकवारि लीन्हों है कहा गिरि-धारि। आपुही चलि वाँह गहिये अंक लीजै नारि॥ अतिहि व्याकुल होत काहे धरौ धीरज श्याम। सूर प्रभु तुम बड़े नागर विवश कीन्हें काम॥ २०२९॥



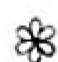
राग रामकली

श्यामहि धीरज दै पुनि आई। वाणी इहै प्रकासत मुख में व्याकुल बड़े कन्हाई॥ बारंबार नैन दोउ ढारत परे मदन जंजाल। धरणि रहे मुरझाइ बिलोके कहा कहीं बेहाल॥ बैठी आइ अनमनी ह्वैकै बारबार पछतानी। ·सूर श्याम मिलि कै सुख देहिन जो तुम बड़ी सयानी॥ २०३०॥



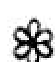
राग रामकली

तुही प्रिया भावती नाहिन आन। निशि दिन मन मन करत मनोहर रसवस केलि निदान॥ ध्यान विलास दरश संभ्रम मिलि मानत मानिनि मान। अनुनय करत विवस बोलत हैं दै परिरंभन दान॥ प्रथम समागम ते नानाविधि चरित तिहारे गान। सूर श्याम कह वर अंतर सुनि सुयश आपने कान॥ २०३१॥



राग केदारो

तेई नैन सुहावने हो नेक न भावत न्यारे री। पलक ओट प्राण जाते तेरे री ध्यान चकोर चंदा मेरे नैन चितवनि पर चेरे री॥ कमल कुरंग जु मधुप उपमा नहिं आवै चंचल रहत चितेरे री। सूरदास प्रभु की तुहि जीवनि कतहि करत त्रिय भेरे री॥ २०३४॥



राग सारंग

राधे हरि तेरो नाम बिचारै। तुम्हरेइ गुण ग्रंथित करि माला रसना कर सों टारै॥ लोचन मूँदि ध्यान धरि दृढ़ करि नेक न पलक उघारै। अंग अंग प्रति रूप माधुरी उर ते नहीं बिसारै॥ ऐसो नेम तुम्हारो पिय के कह जिय निठुर तिहारे। सूर श्याम मनकाम पुरावहु उठि चलि कहे हमारे॥ २०३९॥



राग केदारो

जाके दरशन को जग तरसत ताहि दरश नेक दै री। जाकी मुरली की ध्वनि सुर मुनि मोहे ता तन नेक चितै री॥ शिव विरंचि जाको पार न पावत सो तो तेरे चरणन परसतु है री। सूरदास वस तीनि लोक जाके है सो तो बस माई री तू मुख ध्वनि सुनाइ मोहि लै री॥ २०४१॥

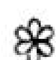


राग सारंग

अति हठ न कीजै री सुनि ग्वारि। हौं जु कहति तू सुन याते शठ सरै न एको द्वारि॥ एक समय मोतियन के धोखे हंस चुनत है ज्वारि। कीजै कहा काम अपने को जीति मानिए हारि॥ हौं जो कहति हौं मान सखी री तन को काज सँवारि। कामी कान्ह कुँवर के ऊपर सरवस दीजै वारि॥ यह जोवन वर्षा की नदी ज्यों वोरति कतहि करारि। सूरदास प्रभु अंत मिलहुगी ए वीते दिन चारि॥ २०४३॥

राग देवगंधार

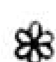
प्रिय पिय नाहिं मनायो मानै। श्रीमुख वचन मधुर मृदु वाणी मादक कठिन कुलिशहू ते जाने ॥ शोभित सहित सुगंध श्याम कच कलकपोल अरुझाने। मनहु विध्वंसज ग्रस्यो कलानिधि तजत नहीं विनदाने ॥ वालभाव अनुसरति भरति दृग अग्र अंशुकन आनै। जनु खंजरीट युगल जठरातुर लेत सुभष अकुलानै ॥ गोरेगात लसत जो असितपट और प्रगट पहिचानै। नैन निकट ताटंक की शोभा मंडल कविन बखानै ॥ मानो मन्मथ फंद त्रास ते फिरत कुरंग सकानै। नासापुटनि सकोचति लोचति विकट भ्रुकुटि धनु तानै ॥ जनु शुक निकट निपट शर साये षटपट सुभट पराने। जनु खद्योत चमक चलि शंकित कुहु निशि तिमिर हिराने ॥ यह सुनिकै अकुलाइ चले हरि कृत अपराध छमानै। सूरदास प्रभु मिले परस्पर मानिनि मिलि मुसुकाने ॥ २०५३ ॥



राग धनाश्री

मानि मनायो मोहन री सकुच समेति चली उठि आतुर वन की गैल गही। विधिमुख निरखि विमुख करि लोचन पुनि विधुवदन चही ॥ दरशत परसत रूप आज निज भूमिनख लेखि कही। पुहुप सुरंग सारंग रिपु ओट देखी तब चतुर लही ॥ पानि सुपरसत शीश परस्पर मुसकाने तबही। तृण

तोर्यो गुनजात जिते गुन काढ़ति रेख मही। सूर श्याम बहुरो मिलि विलसहु जाति अवधि अबही ॥ २०५४ ॥



राग सारंग

चली बन मान मनायो मानि। अंचल ओट पुहुप दिखरायो धर्यो शीश पर पानि ॥ शुचितन चितै नैन दोउ मूँदे मुख महँ अँगुरी आनि। यह तौ चरित गुप्त की बातैं मुसकाने जियजानि ॥ रेखा तीनि भूमि पर खाँची तृण तोर्यो करतानि। सूरदास प्रभु रसिक-शिरोमणि विलसहु श्याम सुजानि ॥ २०५५ ॥



राग गुंड

सैन दै कह्यो बनधाम चलिए श्याम इहै करिकाम अब आनि मिलिहैं। भावही कह्यो मन भाव दृढ़ राखिवो दे सुख तुमहिं सँग रंग रलिहैं ॥ जानि पिय अतिहि आतुर नारि आतुरी गई वन तीर शुद्धि हेती। सूर प्रभु हरष भए कुंजवन तहाँ गए सजत रतिसेज जे निगम नेती ॥ २०५६ ॥



राग गुंडमलार

श्याम वन धाम मग वाम जोवै। कवहुँ रचि सेज अनुमान जिय जिय करत लता संकेत तर कवहुँ सोवै ॥ एक छिन

इक घरी घरी इक याम सम याम वासर हुते होत भारी। मनहिं मन साध पुरवत अंग भावकरि धन्य भुज धनि हृदय मिले प्यारी ॥ कबहिं आवैं साँझ सोच अति जिय माँझ नैन खग इंदु ह्वै रहे दोऊ। सूर प्रभु भामिनी वदन पूरण चन्द्र रस परस मनहिं अकुलात वोऊ ॥ २०५७ ॥



राग नटनारायणी

दूती संग हरि के रही। श्याम अति आधीन ह्वैकै जाहु तासों कही ॥ वेगि आनि मिलाइ मोको परम प्यारी नारि। देखि हरि तनुकाम व्याकुल चली मनहिं बिचारि ॥ गई तहँ जहँ करति राधा अंग अंग शृङ्गार। सूर के प्रभु नवल गिरि-धर संग जानि विहार ॥ २०५८ ॥



राग विहागरो

राधा सखी देखि हरपानी। आतुर श्याम पठाई याको अंतर्गति की जानी ॥ वह शोभा निरखत अँग अँग की रही निहारि निहारि। चकित देखि नागरि मुख वाको तुरत शृङ्गार निसारि ॥ ताहि कह्यो सुख दै चलि हरि को मैं आवति हौं पाछे। वैसहि फिरी सूर के प्रभु पै जहाँ कुंज गृह काछे ॥ २०५९ ॥



राग केदारा

दूती देखि आतुर श्याम। कुंजगृह ते निकसि धाए काम कीन्हों ताम॥ बोलि उठी रसाल बानी धन्य तुव बड़भाग। अबहि आवति बनी बाला किए मन अनुराग॥ कहा बरनौं अंग शोभा नैनन देखों आज। सूर प्रभु नेक धरो धीरज करौ पूरण काज॥ २०६०॥



राग काफी

सुनिहां मोहन तेरी प्राण प्रिया को बरणौं नंदकुमार। जो तुम आदि अंत मेरो गुण मानहु यह उपकार॥ चंद्रमुखी भौंहैं कलंक बिच चंदन तिलक लिलार। मनु बेनी भुवंगिनि के परसत स्रवत सुधा की धार॥ नैन मीन सरवर आनन में चंचल करत बिहार। मानों कर्णफूल चारा को रवँकत बारंबार॥ बेसरि बनी सुभग नासा पर मुक्ता परम सुढार। मनों तिल फूल अधर बिंबाधर दुहुँ बिच बूँद तुषार॥ सुठि सुठान ठोढ़ी अति सुंदर सुंदरता को सार। चितवत चुअत सुधारस मानों रहि गई बूँद मँझार॥ कंठशिरी उर पदिक बिराजत गजमोतिन को हार। दहिनावर्त्त देत मनो ध्रुव को मिलि नक्षत्र की मार॥ कुच युग कुंभ शुंडिरोमावलि नाभि सु हृदय अकार। जनु जल सोखि लयो से सबिता जोवन गज मतवार॥ रत्नजटित गजरा बाजूबँद शोभा भुजन अपार। फूँदा सुभग फूल फूले मनो मदन बिटप की डार॥ छीन

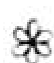
लंक कटि किंकिणी ध्वनि बाजत अति झनकार। मौर बांधि बैठो जनु दूलह मन्मथ आसन तार॥ युगल जंघ जेहरि जराव की राजत परम उदार। राजहंस गति चलति किशोरी अति नितंब के भार॥ छिटकि रह्यो लहँगा रँग ता सँग तन सुखवत सुकुमार। सूर सुअंग सुगंध समूहनि भँवर करत गुंजार॥ २०६२॥



(श्रीकृष्ण ने राधा तथा अन्य गोपियों के साथ अनेक रासलीलाएँ कीं*)

राग मारू

वृंदावन श्यामलघन नारि संग सोहै जू। ठाढ़े नवकुंजनतर परमचतुर गिरिधर वर राधापति अरस परस राधा मन मोहै जू॥ नीपछाँह यमुनतीर व्रजललना सुभगभीर पहिरे अंग विविध चीर नवसत सव साजै। वार वार विनय करति मुख निरखति पाँइ परति पुनि पुनि कर धरति हरति पिय के मन काजै॥ विहँसति प्यारी समीप घनदामिनि संग रूप कंठ गहति कहति कंत झूलन की साधा। यमुन पुलिन अति पुनीत पिय इहाँ हिंडोर रचौ सूरज प्रभु हँसति कहति व्रज तरुनी राधा॥ २२७७॥



* रासलीला और तदन्तर्गत मानलीला का वर्णन अत्यन्त प्रतिभाशाली कविता में हुआ है पर अश्लीलता का स्पर्श होने से यहां उद्धृत नहीं किया॥

(तब श्रीकृष्ण ने हिंडोरलीला की ।)

राग मलार

यमुना पुलिनहि रच्यो रंग सुरंग हिंडोरनो । रमत राम श्यामसंग ब्रजबालक सुख पावत हँसि बोलनो ॥ द्वै खंभ कंचन के मनोहर रत्नजड़ित सुहावनो । पटली बिच विद्रुम लागे हीरा लाल खचावनो ॥ सुंदर डाँड़ी चुनी बहुत लायो कोटिक मदन लजावनो । मरुवा मयारि पिरोजालाल लटकत सुंदर सुढिर ढरावनो ॥ मोतिनहिं झालरि झूमका राजत बिच नीलमणि बहुभावनो । पंच रंग पाट कनक मिलि डोरी अतिही सुघर बनावनो ॥ स्फटिक सिंहासन मध्य राजत हाटक सहित सजावनो । हीरा लाल प्रवाल पिरोजा पंगति बहु मणि पचित पचावनो ॥ मनो सुरपुर तेहि सुरपति पठइ दियो पठावनो । विश्वकर्मा सुतिहार श्रुतिधरि सुलभ सिलप दिखावनो ॥ तेहि देखे त्रय ताप नाशै ब्रजबधू मन भावनो । सुनि श्यामा नवसत संग सखी लै बरसाने तेहि आवनो ॥ जब आवत बलराम देख्यो मधु मंगल तन हेरनो । तब मधुमंगल कहि ग्वाल सों गैया हो भैया फेरनो ॥ उठे संकर्षण करि शृंग वेणु ध्वनि धौरी काजरी धेनु टेरनो । गैया गईं बगराइ सघन वृंदावन बंसीवट यमुनातट घेरनो ॥ पहिरे चीर सुही सुरंग सारी चुहचुहु चूनरी बहु रंगनो । नील लहँगा लाल चोली कसि उबटि केसरि सुरंगनो ॥ नवसत साज शृंगार नागरि मणिमय भूषण मंगनो । सादर मुख गोपाल लाल को चित्त चकोर

रस संगनो ॥ श्यामा श्याम मिले ललितादिहि सुख पावत मनमोहनो । गावत मलारी सुराग रागिनी गिरिधरन लाल छबि सोहनो ॥ पचरंग वरन पाटहि पवित्रा बिच बिच फोंदा गोहनो । नाचति सखी संगीत परस्पर पहिरि पवित्रा सोहनो ॥ माथे मोर मुकुट चंद्रिका राजहिं वृंदा वैजंती माल कंज प्रसावनो । कुंडल लोल कपोलन के ढिग मानो रवि प्रकाश करावनो ॥ अधर अरुण छबि कोटि व्रज द्युति शशि गुण रूप समावनो । मणिमय भूषण कंठ मुक्तावलि देखत कोटि अनंग लजावनो ॥ सखि हरषि भूले वृषभानु नंदिनी शोभित सँग नंदलालनो । मणिमय नूपुर कुनित कंकन किंकिनी झनकारनो ॥ ललिता विशाखा व्रजवधू भुलावै सुरुचि सार सार को सारनो । गोर श्यामल नील पीत छवि मानो गन दामिनि संचारनो ॥ तैसोइ नन्हीं नन्हीं बूँदनि वरपै मधुर मधुर ध्वनि घोरनो । जैसिहि हरी हरी भूमि हुलसावनी मोर मरालसुख होत न घोरनो ॥ जहाँ त्रिविध मंद सुगंध शीतल पवन गवन सुहावनो । तहँ विहरत उठत सुवासु उड़त मधुप सुहावनो ॥ चढ़ि विमानन सुर सुमन वरषैं जै जै ध्वनि नभ पावनो । श्यामा श्याम विहरत वृंदावन सुरललना ललचावनो ॥ शुक शेष शारद नारदादिक विधि शिव ध्यान न पावनो । सूर श्याम सुप्रेम उमँग्यो हरि यश सुलीला गावनो ॥ २२८० ॥

❀

राग मलार

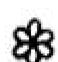
गोपी गोविंद के हिंडोरे झूलन आय। रंगमहल में जहँ नँदरानी खेलति सावनी तीज सुहाय॥ श्रीखंड खंभ मयारि सहित सु समर मरुवा बनाइ। तापर कितिक जू भ्रमत भँवरा डाँड़ी जटित जराइ॥ हेम पटुली मध्य हीरा पृजि रोचन लाइ। सखी विविध विचित्र राग मलार मंगल गाइ॥ नंद-लाल पावसकाल दामिनि नागरी नव संग। बोलत जु दादुर अरु पपीहि करति कोकिल रंग॥ तहँ वरहा नृत्यत वचन मुख दुति अलिचकोर त्रिहंग। बलि भाइ सहित गोपाल झूलत राधिका अर्धंग॥ जलभरित सरवर सघन तरुवर इंद्रधनुप सुदेश। घन श्याम मध्य सफेद बग जुरि हरित महि चहुँ देश॥ गगन गर्जत बीजु तरपति मधुर मेह असेश। झूलहिं ते विट्ठल श्याम श्यामा शीश मुकुलित केश॥ ताटंक तिलक सुदेश झलकत खचित चूनीलाल। अकृत विकृत वदन प्रहसित कमल नैन विशाल॥ करजु मुद्रिका किंकिनी कटि चाल गजगति बाल। सूर मुररिपु रंग रंगे सखी सहित गोपाल॥ २२९० ॥



राग कान्हरो

विहरत कुंजन कुंजविहारी। बग शुक विहंग पवन थकि थिर रह्यो तान अलापत जब गिरिधारी॥ सरिता थकित

थकित द्रुमवेली अधर धरति मुरली जब प्यारी। रवि अरु शशि देखो दोउ चोरन शंका गहि तब वदन उज्यारी ॥ आभूषण सब साजि आपने थकित भईं व्रज की कुलनारी। सूरदास स्वामी की लीला अब जोवै वृषभानुकुमारी ॥ २२९५ ॥

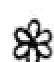


(कृष्ण ने वृन्दावन का विहार करते-करते विद्याधर को शाप से मुक्त किया शंखचूड़ नामी राक्षस का वध किया। ❊)

(सबेरे जसोदा कृष्ण को जगाती हैं।)

राग विलावल

जागिए गोपाल लाल ग्वाल द्वार ठाढ़े। रैनि अंधकार गयो चंद्रमा मलीन भयो तारागण देखियत नहिं तरणि किरणि बाढ़े ॥ मुकुलित भए कमलजाल गुंज करत भृंगमाल प्रफुलित वन पुहुप डार कुमुदिनि कुँभिलानी। गंधर्व गुण गान करत स्नान दान नेम धरत हरत सकल पाप वदत विप्र वेद वानी ॥ बोलत नंद बार बार मुख देखें तुव कुमार गाइन भई बड़ी बार वृंदावन जैबे। जननी कहति उठो श्याम जानत जिय रजनि ताम सूरदास प्रभु कृपालु तुमको कछु खैबे ॥ २३२० ॥



❊ शंखचूड़ के वध के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्ध अध्याय ३४।

लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ३५ ॥

(ग्वालों के साथ श्रीकृष्ण वन में गाय चराने गये। मुरली बजाने लगे। मुरली की तान पर मोहित होकर ग्वालों ने कहा—)

राग गौरी

छबीले मुरली नेक बजाउ। बलि बलि जात सखा यह कहि कहि अधर सुधारस प्याउ॥ दुर्लभ जन्म दुर्लभ वृन्दावन दुर्लभ प्रेम तरंग। ना जानिये बहुरि कब ह्वै है श्याम तुम्हारो संग॥ बिनती करहिं सुबल श्रीदामा सुनहु श्याम दै कान। जा रस के सनकादि शुकादिक करत अमर मुनि ध्यान॥ कब पुनि गोप भेष ब्रज धरिहौ फिरिहौ सुरभिन साथ। कब तुम छाक छीनि कै खैहो हो गोकुल के नाथ॥ अपनी अपनी कंध कमरिया ग्वालन दई डसाइ। सौंह दिवाइ नंदबाबा की रहे सकल गहि पाइ॥ सुनि सुनि दीन गिरा मुरलीधर चितये मुख मुसकाइ। गुण गंभीर गोपाल मुरलि कर लीन्हों तबहिं उठाइ॥ धरि कर बेनु अधर मनमोहन कियो मधुर ध्वनि गान। मोहे सकल जीव जल थल के सुनि वारो तन प्रान॥ चपल नयन भृकुटी नासापुट सुनि सुंदर मुख बैन। मानहु नृत्यक भाव दिखावत गति लिये नायक मैन॥ चमकत मोर चंद्रिका माथे कुंचित अलक सुभाल। मानहु कमलकोशरस चाखत उड़ि आए अलिमाल॥ कुंडल लोल कपोलन झलकत ऐसी शोभा देत। मानहु सुधासिंधु में क्रीड़त मकर पान के हेत॥ उपजावत गावत गति सुंदर अनाघात के ताल। सरवस दियो मदनमोहन को प्रेम हरषि सब ग्वाल॥

शोभित वैजंती चरणन पर श्वासा पवन झकोरि। मनहु ग्रीव सुरसरि बहि आवत ब्रह्मकमंडलु फोरि॥ डुलति लता नहिं मरुत मंदगति सुनि सुंदर मुख बैन। खग मृग मीन अधीन भये सब कियो यमुन जल सैन॥ झलमलात भृगु की पदरेखा सुभग साँवरे गात। मानो षट्‌विधु एकै रथ बैठे उदय कियो अधरात॥ बाँके चरण कमल भुज बाँके अवलोकनि जु अनूप। मानहु कल्पतरोवर बिरवा आनि रच्यो सुरभूप॥ आयसु दियो गुपाल सबन को सुखदायक जिय जान। सूरदास चरणनरज माँगत निरखत रूपनिधान॥ २३२४॥



(इधर गोपियों ने मुरली का स्वर सुना।)

राग टोड़ी

मुरली सुनत देहगति भूली। गोपी प्रेम-हिंडोरे झूली॥ कबहूँ चकृत होहिं सयानी। स्वेद चलै द्रवै जैसे पानी॥ धीरज धरि इक इकहि सुनावहि। यह कहिकै आपुहि बिसरावहि॥ कबहूँ सुधि कबहूँ बिसराई। कबहूँ मुरली नाद समाई॥ कबहूँ तरुणी सब मिलि बोलैं। कबहूँ रहैं धीर नहिं डोलैं॥ कबहूँ चलैं कबहूँ फिरि आवैं। कबहूँ लाज तजि लाज लजावैं॥ मुरली श्याम सुहागिनि भारी। सूरदास प्रभु की बलिहारी॥ २३२७॥



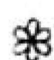
राग मलार

बाँसुरी विधिहू ते प्रवीन। कहिए काहि आहि को ऐसो कियो जगत आधीन ॥ चारि वदन उपदेश विधाता थापी थिर चरनीति। आठ वदन गर्जित गर्वीलो क्यों चलिए यह रीति ॥ विपुल विभूति लई चतुरानन एक कमल करि थान। हरिकर कमल युगल पर बैठी बाढ़्यो यह अभिमान ॥ एक बेर श्रीपति के सिखये उन लियो सब गुण गान। इनके तौ नँदलाल लाड़िलो लग्यो रहत नित कान ॥ एक मराल पीठि आरोहण विधि भयो प्रबल प्रशंस। इन तौ सकल विमान किये गोपीजन मानस हंस ॥ श्रीवैकुंठनाथ उर वासिनि चाहत जापद रेन। ताको मुख सुखमय सिंहासन करि बैसी यह ऐन ॥ अधर-सुधा पी कुल-व्रत टार्‍यो नहीं सिखा नहिं नाग। तदपि सूर या नंदसुवन को याही सों अनुराग ॥ २३४० ॥



राग सारंग

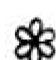
वंसी बैर परी जु हमारी। अधर पियूष अंश तिनहीं को इन पियो सब दिन निज निज प्यारी ॥ इकधों हरि मन हरति माधुरी दूजे वचन हरत अन्यारी। बाँस बंश हरि बेध महाशुभ अपने छेद न जानत कारी ॥ सुन्यो सुपति जानी व्रज के पति सो अपनाइ लियो रखवारी। सुने अनीत सूरज प्रभु केरी अधर गोपाल जे अपने धारी ॥ २३४१ ॥



(मुरली इस उलहने का जवाब देती है।)

राग मलार

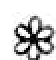
ग्वालिनि तुम कत उरहन देहु। पूछहु जाइ श्यामसुन्दर को जिहि बिधि जुरयो सनेहु॥ वारे ही ते भई विरत चित तज्यो गाँउ गुणगेह। एकहि चरण रही हो ठाढ़ी हिम ग्रीषम ऋतु मेह॥ तज्यो मूल शाखा सो पत्रनि सोच सुखानी देहु। अगिनि सुलाकत मुरयो न अँग मन बिकट बनावत वेहु॥ वकती कहा बाँसुरी कहि कहि करि करि तामस तेहु। सूर श्याम इहि भाँति रिझैकै तुमहु अधर-रस लेहु॥ २३४३॥



(श्रीकृष्ण वन से ब्रज को आये।)

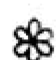
राग गौरी

नटवर भेष धरे व्रज आवत। मोर मुकुट मकराकृत कुंडल कुटिल अलक मुख पर छवि पावत॥ भ्रुकुटी विकट नैन अति चंचल यह छवि पर उपमा इक धावत। धनुष देखि खंजन विवि डरपत उड़ि न सकत उठिवे अकुलावत॥ अधर अनूप मुरलि सुर पूरत गौरी राग अलापि बजावत। सुरभीवृंद गोप बालक सँग गावत अति आनंद बढ़ावत॥ कनक मेखला कटि पीताम्बर नृत्यत मंद मंद सुर गावत। सूर श्याम प्रति अंग माधुरी निरखत व्रजजन के मन भावत॥ २३४६॥



राग कान्हरो

व्रज युवती सब कहत परस्पर बन ते श्याम बने व्रज आवत। ऐसी छवि मैं कबहुँ न पाई सखी सखी सों प्रगट देखावत॥ मोर मुकुट सिर जलजमाल उर कटि तट पीतांवर छवि पावत। नव जलधर पर इंद्रचाप मनो दामिनि छवि बलाक घन धावत॥ जेहि जु अंग अवलोकन कीन्हों सो तन मन तहँहीं बिरमावत। सूरदास प्रभु मुरली अधर धरे आवत राग कल्याण बजावत॥ २३४७॥



राग गुणसारंग

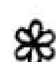
मेरे नयन निरख सचुपावैं। बलि बलि जाउँ मुखारविंद की बनते पुनि व्रज आवैं॥ गुंजाफल अवतंस मुकुटमणि वेणु रसाल बजावैं। कोटि किरणि मुख में जो प्रकाशत उडुपति बदन लजावैं॥ नटवर रूप अनूप छबीलो सवहिन के मन भावैं। सूरदास प्रभु चलन मंदगति बिरहिन ताप नसावैं॥ २३४८॥



राग गौरी

बलि बलि मोहन मूरति की बलि बलि कुंडल बलि नैन विशाल। बलि भृकुटी बलि तिलक विराजत बलि मुरली बलि शब्द रसाल॥ बलि कुंडल बलि पाग लटपटी बलि कपोल बलि उर बनमाल। बलि मुसुकानि महामुनि मोहत बलि

उपरैना गिरिधर लाल ॥ बलि भुज सखा अंग पर मेले बलि कुलही बलि सुंदर चाल। बलि काछनी चोलना की बलि सूरदास बलि चरण गोपाल ॥ २३४६ ॥



राग कल्याण

माधो जू के तन की शोभा कहत नाहिं बनि आवै। अचवत आदर लोचन पुट दोउ मनु नहिं तृपिता पावै ॥ सघन मेघ अति श्याम सुभग वपु तड़ित वसन बनमाल। सिर शिखंड बनधातु बिराजत सुमन सुरंग प्रवाल ॥ कछुक कुटिल कमनीय सघन अति गोरज मंडित केश। अंबुज रुचिर पराग पर मानो राजत मधुप सुदेश ॥ कुंडल लोल कपोल किरणि गण नैन कमल दल मीन। अधर मधुर मुसकानि मनोहर करत मदन मन हीन ॥ प्रति प्रति अंग अनंग कोटि छवि सुन सखी परम प्रवीन। सूर दृष्टि जहँ जहँ परति तहीं तहीं रहति है लीन ॥ २३६० ॥



राग देवगंधार

इक दिन हरि हलधर सँग ग्वालन। प्रात चले गोधन वन चारन ॥ कोउ गावत कोउ वेणु बजावत। कोउ सिंगी कोउ नाद सुनावत ॥ खेलत हँसत गए वन महियां। चरन

लगीं जित कित सब गैयाँ ॥ हरि ग्वालन मिलि खेलन लाये । सूर अमंगल मन के भाये ॥ २३६७ ॥



वृषभासुर-वध ॥ राग सोरठ

यहि अंतर वृषभासुर आयो । देखे नंदसुवन बालक सँग इहै घात है पायो ॥ गयो समाइ धेनुपति ह्वै कै मन में दाउँ विचारे । हरि तबहीं लखि लियो दुष्ट को डोलत धेनु बिडारे ॥ गैयाँ बिडरि चलीं जित तित को सखा जहाँ तहाँ घेरैं । वृषभ शृंग सों धरणि उकासत बल मोहन तन हेरैं ॥ आवत चल्यो श्याम के सन्मुख निदरि आपु अंग सारी । कूदि पर‍्यो हरि ऊपर आयो कियो युद्ध अति भारी ॥ धाइ परे सब सखा हाँक दै वृषभ श्याम को मार‍्यो । पाउँ पकरि भुज सों गहि फेर‍्यो भूतल माँह पछार‍्यो ॥ पर‍्यो असुर पर्वत समान ह्वै चकित भए सब ग्वाल । वृषभ जानिकै हम सब धाए यह कोऊ विकराल ॥ देखि चरित्र यशोमतिसुत के मन में करत बिचार । सूरदास प्रभु असुर-निकंदन संतन प्राण-अधार ॥ २३६८ ॥



राग गौरी

धन्य कान्ह धनि धनि ब्रज आए । आजु सबनि धरिके यह खातो धनि तुम हमहिं बचाए ॥ यह ऐसो तुम अतिहि तनक से कैसे भुजन फिरायो । पलकहि माँझ सबन के देखत मार‍्यो धरणि गिरायो ॥ अब लौं हम तुमको नहिं जान्यो

तुमहिं जगत प्रतिपालक। सूरदास प्रभु असुर-निकंदन ब्रज जन के दुख दालक* ॥ २३६९ ॥



(इसके बाद कंस ने केशी और भौमासुर दो अन्य राक्षसों को कृष्ण को मारने के लिए भेजा। पर कृष्ण ने उन दोनों को मार डाला† ।)

(श्रीकृष्ण और गोपियां वसन्त का उत्सव मनाती हैं।)

राग वसन्त

सुंदरवर संग ललना हो बिहरत वसंत समय ऋतु आइ। सकल श्रृंगार बनाइ व्रजसुंदरि कमलनयन पै लाइ ॥ सरित शीतल वहत मंदगति रवि उत्तर दिशि आयो। अति रसभरी कोकिला वोली विरहिनि विरह जगायो ॥ द्वादश वन रतनारे देखियत चहुँ दिशि टेसू फूले। मौरे अँबुवा अरु द्रुम बेली मधुकर परिमल भूले ॥ इत श्रीराधा उत श्रीगिरिधर इत गोपी उत ग्वाल। खेलत फागु रसिक व्रजवनिता सुन्दर श्यामतमाल ॥ खावासाखि जवार। कुमकुमा छिरकत भरि केसरि पिचकारी। उड़त गुलाल अवीर जोर तहँ विदिशदोप उजियारी ॥ ताल पखावज बीन बाँसुरी डफ गावत गीत सुहाये। रसिक गोपाल नवल व्रजवनिता निकसि चौहटे आये ॥ झूमि झूमि झूमक सब गावति बोलत मधुरी बानी। देति परस्पर गारि मुदित-

* वृषभासुर के वध के लिए देखिए लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ३७ ॥

† देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्ध अध्याय ३७ ॥

मन तरुनी बाल सयानी ॥ सुरपुर नरपुर नागलोकपुर सबही अति सुख पायो । प्रथम वसन्तपंचमी लीला सूरदास यश गायो ॥ २३९१ ॥



राग वसन्त

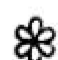
सुंदरवर संग ललना विहरी वसंत सरस ऋतु आई । लै लै छरी कुँवरि राधिका कमलनयन पर धाई ॥ द्वादश वन रत-नारे देखियत चहुँदिशि टेसू फूले । मौरे अँबुवा अरु द्रुम वेली मधुकर परिमल भूले ॥ सरिता शीतल बहत मंदगति रवि उत्तरदिशि आयो । प्रेम उमँगि कोकिला बोली विरहिनी विरह जगायो ॥ ताल मृदंग वीन बाँसुरि डफ गावत मधुरी वानी । देति परस्पर गारि मुदित ह्वै तरुनी बाल सयानी ॥ सुरपुर नरपुर नागलोक जल थल क्रीड़ारस पावै । प्रथम वसन्तपंचमी बाला सूरदास गुण गावै ॥ २३९२ ॥



राग वसन्त

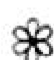
खेलत नवलकिशोर किशोरी । नँदनंदन वृषभानुसुता चित लेत परस्पर चोरी ॥ औरौ सखी जाल विन शोभित सकल ललित तनु गावति होरी । तिनकी नख-शोभा देखत ही तरनिनाथहू की मति भोरी ॥ एक गोपाल अवीर लियें कर इक चंदन एक कुमकुमा रोरी । उपरा उपर छिरकि रस सर भरि बहु कुल क्रीड़ा परमिति फोरी ॥ देति अशीश सकल व्रज

युवती युग युग अविचर जोरी। सूरदास उपमा नहिं सूझत जो कछु कहो सु थोरी ॥



राग आसावरी

यमुना के तट खेलति हरि सँग राधा सहित सब गोपी हो। नंद को लाल गोवर्द्धनधारी तिनके नख-मणि ओपी हो॥ चलहु सखी जैये तहाँ छिन जियरा न रहाय हो। वेणु शब्द मन हरि लियो नाना राग बजाइ हो॥ सजल जलद तनु पीतांबर छवि करमुख मुरली धारी हो। लटपटी पाग बने मनमोहन ललना रही निहारी हो॥ नैन सों नैन मिले कर सों कर भुजा ठये हरि ग्रीवा हो। मध्य नायक गोपाल विराजत सुन्दरता की सींवा हो॥ करत केलि कौतूहल माधव मधुरी वाणी गावै हो। पूरण चंद्र शरद की रजनी संतन सुख उपजावै हो॥ सकल शृंगार कियो ब्रजवनिता नख शिख लोभलटानी हो। लोक वेद कुल धर्म केतकी नेक न मानत कानी हो॥ बलि जाउँ बल के वीर त्रिभङ्गी गोपिन के सुखदाई हो। सकल व्यथा जु हरी या तनु की हरि हँसि कंठ लगाई हो॥ माधव नारि नारि माधव की छिरकत चोवा चन्दन हो। ऐसो खेल मच्यो उपरापरि नँदनंदन जगवंदन हो॥ ब्रह्मा इन्द्र देवगण गंधर्व सबै एक रस बरषै हो। सूर-दास गोपी बड़भागिन हरि सुख क्रीड़ा करषै हो॥ २४०० ॥



(इस प्रकार वसन्त का उत्सव हुआ। कृष्ण के रूप पर मुग्ध होकर एक गोपी दूसरी से कहती है—)

राग काफी

अरी माई मेरो मन हरि लियो नंद के ढुटोना। चितवन में वाके कछु टोना॥ निरखत सुंदर अंग सलोना। ऐसी छबि कहूँ भई न होना॥ काल्हि रहे यमुनातट जौना। देख्यो खोरि साँकरी तौना॥ बोलत नहीं रहत वह मौना। दधि लै छीनि खात रह्यो दौना॥ घर घर माखन चोरत जौना। वाटन धावन देत है वौना॥ खेलत फाग ग्वाल सँग छौना। मुरली बजाय विसरावत भौना॥ मो देखत अबहीं कियो गौना। नटवर अंग सुभ सजे सजौना॥ त्रिभुवन में वस कियो न कौना। सूर नंदसुत मदन लजौना॥२४२१॥

❀

(इसके बाद सूरदास ने बहुत विस्तार से होली के फाग का अत्यन्त सरस वर्णन किया है।)

(कृष्ण की बढ़ती हुई प्रभुता को देखकर कंस को बड़ी चिन्ता हुई।)

राग सारंग

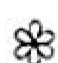
मथुरा के निकट चरति हैं गाई। दुष्ट कंस भय करत मनहि मन ज्यों ज्यों सुनै कृष्ण प्रभुताई॥ शीश धुनै नृप रिस न मनै मन बहुत उपाइ करै। घर बैठेहि दशन अधरन धरि चंपै श्वास भरै॥ जानो असुर बाढ़िवो गोकुल ज्यों जन दीप पतंग परै। समुझै वचन कहे जे देवी अरु पहिले आकास

परै ॥ नारद गिरा सम्हारी पुनि पुनि सिर धुनि आपु खरै । कालरूप देवकीनंदन प्रगट भयो वसुधा के माहीं । कासों कहौं सूर अंतर की सुफलकसुत को वचन सु कही ॥२४६२॥



राग सोरठ

महर ढोटौना शालि रहै । जन्महि ते अपडाव करत हैं गुणि गुणि हृदय कहै ॥ दनुजसुता पहिले संहारी पय पीवत दिन सात । गयो प्रतिज्ञा करि कागासुर आइ गिरयो मुख छात ॥ तृणा शकट छिन में संहारे केशी हतो प्रचारि । जे जे गए वहुरि नहिं देखे सवहिन डारे मारि ॥ ज्यों त्यों करि इन दुहुँन सँहारौं वात नहीं कछु और । सूर नृपति अति सोच परो जिय यहै करत मन दौर ॥ २४६३ ॥



राग रामकली

नंदसुत सहज वुलाइ पठाऊँ । श्याम राम अतिसुंदर कहियत देखन काज मँगाऊँ ॥ जैहै कौन प्रेमकरि ल्यावै भेद न जानै कोइ । महर महरि सों हितकरि ल्यावै महाचतुर जो होइ ॥ इहि अंतर अक्रूर वुलायो अति आतुर महराज । सूर चलौ मन सोच बढ़ायो कौन है ऐसो काज ॥२४६४॥



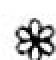
राग धनाश्री

अति आतुर नृप मोहि बोलायो। कौन काज ऐसो अटक्यो है मन मन सोच बढ़ायो ॥ आतुर जाइ पँवरि भयो ठाढ़ो कह्यो पँवरिआ जाइ। सुनत बुलाइ महलई लीनो सुफलकसुत गयो धाइ ॥ कछु डर कछु जिय धीरज धारै गयो नृपति के पास। सूर सोच मुख देखि डेरानो ऊरध लेत उसाँस ॥ २४६५ ॥



राग मारू

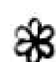
सोच मुख देखि अक्रूर भरमै। माथ कर नाइ कर जोरि दोऊ रहे बोलि लीन्हों निकट वचन नरमै ॥ आपुही कंस तहाँ दूसरो कोउ नहीं त्रास अक्रूर जिय कहा कैहै। नृपति जिय सोच जान्यो हृदय आपने कहत कछु नहीं धौं प्राण लैहै ॥ निकट बैठारि सब बात तेई कही गये जे भाषि नारद सवारैं। सूर सुत नंद के हृदय शालत सदा मंत्र यह उनहि अब बनै मारैं ॥ २४६६ ॥



राग मारू

सुनो अक्रूर यह बात साँची करौ आजु मोहिं भोर ते चेत नाहीं। श्याम बलराम यह नाम सुनि ताम मोहिं काहि पठवहुँ जाइ तिनहि पाहीं ॥ प्रीति करि नंद सों सहज बातैं कहै तुरत लै आइ तुहुँ नृपति बोले। पेखिबे की साध बहुत सुनि गुण विपुल अतिहि सुंदर सुने दोउ अमोले ॥ कमल

जब ते उरग पीठि ल्याये सुने वैहैं वकशीश अब उनहिं देहैं। सूर प्रभु श्याम बलराम को डर नहीं वचन इनके सुनत हरष पैहैं ॥ २४६७ ॥



राग सोरठ

यह वाणी कहि कंस सुनाइ। तब अक्रूर हिए भयो धीरज डर डारयो विसराय ॥ मन मन कहत कहा चित बैठी सुनि सुनि वैसी बानी। अपनो काल आपुही बोल्यो इनकी मीचु तुलानी ॥ हरषि वचन अक्रूर कहे तब तुरत काज यह कीजै। सूर जाहि आयसु करि पाऊँ भोर पठै तेहि दीजै ॥ २४६८ ॥



राग बिलावल

तब अक्रूर कहत नृप आगे धन्य धन्य नारद मुनि ज्ञानी। बड़े शत्रु व्रज में दोउ हमको सुनहु देव नीकी चित आनी ॥ महाराज तुम सरि को ऐसो जाते जगत यह चलत कहानी। अब नहिं बचै क्रोध नृप कीन्हों जैहै छनकि तवा ज्यों पानी ॥ यह सुनि हर्ष भयो गर्वानो जबहि कही अक्रूर सयानी। कालि बुलाइ सूर दोउ मारौं बार बार यह भाषत बानी ॥ २४६९ ॥



राग बिलावल

इहै मंत्र अक्रूर सों नृप रैनि विचारी। प्रात नंदसुत मारिहौं यह कह्यो प्रचारी॥ करि विचार युग याम लौं मंदिरहि पधारे। कह्यो जाहु अक्रूर सों भए आलस भारे॥ तुरत जाइ पलका परयो पलकनि झपकानो। श्याम राम स्वपने खड़े तहाँ देखि डरानो॥ अति कठोर दोउ काल से भरम्यो अति झझक्यो। जागि परयो तहँ कोउ नहीं जियही जिय सुसक्यो॥ चौंकि परयो सँग नारि के रानी सब जागीं। उठीं सबै अकु-लायकै तब बूझन लागीं॥ महाराज झझके कहा सपने कह शंके। सूर अतिहि व्याकुल भए घर घर उर दंके॥ २४७० ॥



राग बिलावल

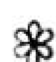
महाराज क्यों आजुही स्वप्ने झझकाने। पौढ़े जबहीं आनिकै देखे बिलखाने॥ कहा सोच ऐसो परयो ऐसे भूमि को। का की सुधि मन में रही कहिय अपजी को॥ रानी सब व्याकुल भईं कछु भेद न पावैं। तब आपुन सहजहि कह्यो वह नहीं जनावैं॥ सावधान करि पौरिआ प्रतिहार जगायो। सूर त्रास बल श्याम के नहिं पलक लगायो॥२४७१॥



नन्दस्वप्न॥ राग बिलावल

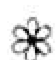
उत नंदहि स्वप्नो भयो हरि कहूँ हिराने। बल मोहन कोउ लै गयो सुनिकै बिलखाने॥ ग्वाल बाल रोवत कहैं

हरि तौ कहुँ नाहीं। संगहि सँग खेलत रहे यह कहि पछि-ताहीं॥ दूत एक सँग लै गयो बलराम कन्हाई। कहा ठगौरीसी करी मोहनी लगाई॥ वाही के दोउ ह्वै गये हम देखत ठाढ़े। सूरज प्रभु वै निठुर ह्वै अतिही गये गाढ़े॥ २४७२॥



राग सोरठ

व्याकुल नंद सुनत हैं बानी। धरणी मुरछि परे अति व्याकुल विवस यशोदा रानी॥ व्याकुल गोप ग्वाल सब व्याकुल व्याकुल व्रज की नारी। व्याकुल सखा श्याम बल के जे व्याकुल अति जिय भारी॥ धरणी परत उठत पुनि धावत इहि अंतर नँद जागे। धकधकात उर नयन स्रवत जल सुत अँग परसन लागे॥ सुसुकत सुनि यशुमति अतुराई कहा महर भ्रम पायो। सूर नंद घरनी के आगे यह भ्रम नहीं सुनायो॥ २४७३॥



राग कल्याण

एक याम नृप* को निशि युगवत भई भारी। आपुनहूँ जाग्यो सँग जागीं सब नारी॥ कबहुँ उठत बैठत पुनि कबहूँ सेज सोवै। कबहुँ अजिर ठाढ़े ह्वै ऐसे निशि खोवै॥ बार बार जोतिक सोँ घरी बूझि आवै। एक जाइ पहुँचै नहीं अरु

* नृप को अर्थात् कंस को।

एक पठावै ॥ जोतिक जिय त्रास परयो कहा प्रात करिहै । सूर कोध भरयो नृपति काके सिर परिहै ॥ २४७४ ॥



राग कल्याण

व्याकुल ते रैनि कटी बची घरी बाकी । एक-एक छिन याम याम ऐसी गति ताकी ॥ को जैहै ब्रज को मन करै केहि पठाऊँ । जासों कहि नंदसुअन आजु ही मँगाऊँ ॥ अब नहिं राखौं उठाइ वैरी नहिं नान्हों । मारौं गज पै रुँदाइ मनहि यह अनुमान्हो ॥ पठऊँ तौ अक्रूरहि को ऐसो नहिं कोऊ । सूर जाइ गोकुल ते ल्यावै ढिग दोऊ ॥ २४७५ ॥



राग बिलावल

अरुणोदय उठि प्रात ही अक्रूर बोलाए । आपु कह्यो प्रतिहारसों इकसनि शत धाये ॥ सोवत जाइ जगाइकै चलिए नृप पासा । उहै मंत्र मन जानिकै उठि चले उदासा ॥ नृपति द्वार ही पै खरो देखत सिर नायो । कहि खवास को सैन दै सिर पाँव मँगायो ॥ अपने कर करिकै दियो सुफलक-सुत लीन्हों । लै आवहु सुत नंद के यह आयसु दीन्हों ॥ मुख अक्रूर हर्षित भयो हृदय बिलखानो । असुरत्रास अति जिय परयो कह कहै सयानो ॥ तुरतहि रथ पलना इकै अक्रूरहि दीन्हों । आयसु सिर पर मानिकै आतुर ह्वै लीन्हों ॥

बिलम करौ जिनि नेकहूँ अबहीं ब्रज जाहू। सूर काज करि आवहू जिनि रैनि बसाहू ॥ २४७६ ॥



राग कल्याण

तुम बिन मेरे हितू न कोऊ। सुन अक्रूर तुरत नृप भाषित नंदमहर सुत ल्यावहुँ दोऊ ॥ सुनि रुचि बचन रोम हरषित गात प्रेमपुलकि मुख कछू न बोल्यो। यह आयसु पूरव सुकृत वस सो काहूपै जाहि न तोल्यो ॥ मौन देखि परिहँसि नृप भीनो मनहुँ सिंह गो आय तुलानो। वहि क्रम बिनु द्वै सुत अहीर के रे कातर कत मन शंकानो ॥ आयसु पाइ सुष्ट रथ कर गहि अनुपम तुरंग साजि धृत जोह्यो। सूर श्याम की मिलनि सुरति करि मनु निरधन धन पाइ विमोह्यो ॥ २४७८ ॥



(अक्रूर ने कंस से कहा—) राग बिलावल

सुनहु देव इक बात जनाऊँ। आयसु भयो तुरत लै आवहु ताते फिरिहि सुनाऊँ ॥ बल मोहन बन जात प्रात ही जो उनको नहिं पाऊँ। रैहौं आजु नंदगृह बसिकै कालि प्रात लै आऊँ ॥ यह कहि चल्यो नृपतिहू मान्यो सुफलकसुत रथ हाँक्यो। सूरदास प्रभु ध्यान हृदय धरि गोकुल तनको ताक्यो ॥ २४७९ ॥



(अक्रूर गोकुल को चले ।) राग टोड़ी

सुफलकसुत* मन पर्यो विचार। कंस निर्वंश होइ हत्यार ॥ डगर माँझ रथ कीन्हों ठाढ़ो। सोच पर्यो मन मन अति गाढ़ो ॥ मंत्र कियो निशि मेरे साथ। मोहिं लेन पठयो व्रजनाथ ॥ गज मुष्टिक चाणूर निहार्यो। व्याकुल नयन नीर दोउ ढार्यो ॥ अति बालक बलराम कन्हाई। कहा करों नहिं कछू बसाई ॥ कैसे आनि देउँ मैं जाई। मो देखत मारैं दोउ भाई ॥ मारैं मोहिं वंदि लै बोलै। आगे को रथ नेक न ठेलै ॥ सूरदास प्रभु अंतर्यामी। सुफलकसुत मन पूरणकामी ॥ २४८० ॥



राग कल्याण

सुफलकसुत हृदय ध्यान कीन्हो अविनासी। हरन करन समरथ वै सब घट के वासी ॥ धन्य धन्य कंसहिं कहि मोहिं जिनि पठायो। मेरो करि काज मीच आपु को बोलायो ॥ यह गुणि रथ हाँकि दियो नगर पर्यो पाछे। कछु सकुचत कछु हरष चल्यो स्वाँग काछे ॥ बहुरि सोच पर्यो दरश दक्षिण मृगमाला। हरष्यो अक्रूर सूर मिलिहो गोपाला ॥ २४८१ ॥



---

* अक्रूर के पिता का नाम सुफलक था।

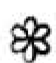
राग टोड़ी

दक्षिण दरश देखि मृगमाला। अति आनंद भयो तेहि काला॥ बहु दिन के मेटौं जंजाला। यहि वन मिलिहैं मोहिं गोपाला॥ श्याम जलद तनु अंग रसाला। ता दरशन ते होउँ निहाला॥ बहुदिन के मेटो जंजाला। मुख शशि नैन चकोर विहाला॥ तनु त्रिभंग सुंदर नँदलाला। विविध सुमन हृदये शुभमाला॥ सारसहू ते नैन विशाला। निहचै भयो कंस को काला॥ सूरज प्रभु त्रिभुवन प्रतिपाला॥ २४८२॥



राग कान्हरो

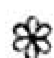
आजु वै चरण देखिहौं जाय। जे पद कमल प्रिया श्रीउर से नेक न सके भुलाइ॥ जे पद-कमल सकल मुनि-दुर्लभ मैं देखों सतिभाव। जे पद-कमल पितामह ध्यावत गावत नारद जाव॥ जे पद-कमल सुरसरी परसे तिहूँ भुवन यश छाव। सूर श्याम पद-कमल परसिहौं मन अति वढ़्यो उछाव॥ २४८४॥



राग नट

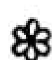
जब सिर चरण धरिहौं जाइ। कृपा करि मोहिं टेकि लेहैं करन हृदय लगाइ॥ अंग पुलकित वचन गदगद मनहि मन सुख पाइ। प्रेम घट उच्छलित ह्वैहैं नैन अंश वहाइ॥ कुशल

बूझत कहि न सकिहौं बार बार सुनाइ। सूर प्रभु गुण ध्यान अटक्यो गयो पंथ भुलाइ ॥ २४८६ ॥



राग बिलावल

मथुरा ते गोकुल नहिं पहुँचे सुफलकसुत को साँझ भई। हरि अनुराग देह सुधि बिसरी रथवाहन की सुरति गई ॥ कहाँ जात किन मोहिं पठायो को हों मैं यहि सोच परयो। दशहूँ दिशा श्याम परिपूरण हृदय हरष आनंद भरयो ॥ हरि अंतर्यामी यह जानी भक्तवछल बानो जिनको। सूर मिले जो भाव भक्त के गहर नहीं कीन्हों तिनको ॥ २४८७ ॥



राग कल्याण

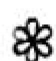
वृंदावन ग्वालन सँग गैयन हरि चारैं। अपने जनहेत काज व्रज को पग धारैं ॥ यमुना करि पार गाय श्याम देत हेरी। हलधर सँग सखा लए सुरभी गण घेरी ॥ धेनु दुहन सखन कह्यो आपु दुहन लागे। वृंदावन गोकुल बिच यमुना के आगे ॥ भक्त हेतु श्रीगोपाल यह सुख उपजायो। सूरज प्रभु को दरशन सुफलकसुत पायो ॥ २४८८ ॥



राग कल्याण

सुफलकसुत हरि दर्शन पायो। रहि न सक्यो रथ पर सुख व्याकुल भयो उहै मन भायो ॥ भू पर दौरि निकट हरि

आयो चरणन चित्त लगायो। पुलक अंग लोचन जलधारा भोगृह सिर परसायो॥ कृपासिंधु करि कृपा मिले हँसि लियो भक्त उर लाइ। सूरदास यह सुख सो जानै कहाँ कहा मैं गाइ॥ २४८६॥



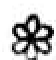
राग गुंडमलार

हरषि अक्रूर हरि हृदय लगायो। मिले तेहि भाव जो भाव चितवनि चित्त भक्तवत्सल नाम तो कहायो॥ कुशल बूझत प्रसन वचन अमृत रस श्रवण सुनि पुलकि अंग अंग कीन्हों। चितै आनन चारु बुद्धि उर विस्तार दनुज अब दलौं यह ज्वाब दीन्हों॥ भेदही भेद सब दई वाणी कही तुरत बोले हेतु इहै वाके। सूर संग श्याम बलराम अक्रूर सह निपट अति प्रेम के पंथ थाके॥ २४९०॥



राग बिलावल

श्याम इहै कहिकै उठे नृप हमैं बोलाए। अतिहि कृपा हम पर करी जो कालि मंगाए॥ संग सखा यह सुनतही चकृत मन कीन्हों। कहा कहत हरि सुनतहीं लोचन भरि लीन्हों॥ श्याम सखन मुख हेरिकै तब करी सयानी। कालि चलौ नृप देखिए शंका जिय आनी॥ हर्ष भए हरि यह कहे मन मन दुख भारी। सूर संग अक्रूर के हरि व्रज पग धारी॥ २४९१॥



राग रामकली

अति कोमल बलराम कन्हाई। दुहुँनि गोद अक्रूर लिये हँसि सुमनहु ते हरुवाई॥ ग्वाल संग रथ लीन्हों आए पहुँचे ब्रज की खोरी। देखत गोकुल लोग जहाँ तहँ नंद उठे सुनि शोरी॥ निशि सपने को तृषित भए अति सुन्यो कंस को दूत। सूर नारि नर देखन धाए घर घर शोर अकूत॥२४९२॥

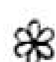


राग गुंडमलार

कंस नृप अक्रूर ब्रज पठाए। गए आगे लेन नंद उपनंद मिलि श्याम बलराम उन हृदय लाए॥ उतरि सदन मिल्यो देखि हरष्यो हियो सोच मन यह भयो कहा आयो। राज के काज को नाम अक्रूर यह किधौं कर लेन कौ नृप पठायो॥ कुशल तेहि बूझि लै गए ब्रज निजधाम श्याम बलराम मिलि गए वाको। चरण पखराइ कै सुभग आसन दियो विविध भोजन तुरत दियो ताको॥ कियो अक्रूर भोजन दुहुँन संग लै नर नारि ब्रज लोग सबै देपै। मनो आए संग देखि ऐसे रंग मनहि मन परस्पर करत मेपै॥ सारि जेवनार अचवन कै भए शुद्ध दियो तंमोर नँद हर्ष आगे। सेज बैठारि अक्रूर सों जोरि कर कृपा करी तव कहन लागे॥ श्याम बलराम को कंस बोले हेत सों नंद लै सुतन हम पास आवैं। सूर प्रभु दरश की साध अतिही करत आजुही कह्यो जिनि गहरु लावैं॥ २४९३॥

राग कान्हरो

सुन्यो व्रज लोग कहत यह बात। चकृत भए नारि नर ठाढ़े पांच न आवै सात॥ चकित नंद यशुमति भई चकृत मनहीं मन अकुलात। दै दै सैन श्याम बलरामहि सबै बुलावत जात॥ पारब्रह्म अविगति अविनाशी माया-रहित अतीत। मनों नहीं पहिचानि कहूँ की करत सबै मन भीत॥ बोलत नहीं नेक चितवत नहिं सुफलकसुत सों पागे। सूर हमहिं नृप हित करि बोले इहै कहत ता आगे॥ २४६४॥



राग बिहागरो

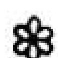
व्याकुल भए व्रज के लोग। श्याम मन नहिं नेक आनत ब्रह्म पूरण योग॥ कौन माता पिता को है कौन पति को नारि। हँसत दोउ अक्रूर के सँग नवल नेह बिसारि॥ कोउ कहत यह कहाँ आयो क्रूर याको नाम। सूर प्रभु लै प्रात जैहै और संग बलराम॥ २४६५॥



गोपिका-विरह-अवस्था-वर्णन। राग बिहागरो

चलन चलन श्याम कहत कोउ लेन आयो। नंदभवन भनक सुनी कंस कहि पठायो॥ ब्रज की नारि गृह बिसारि व्याकुल उठि धाईं। समाचार बूझन को आतुर ह्वै आईं॥ प्रीति जानि हेतु मानि बिलखि वदन ठाढ़ो। मानहु वै अति

विचित्र चित्र लिखित काढ़ो ॥ ऐसी गति ठौर ठौर कहत न बनि आवै । सूर श्याम बिछुरे दुख विरह काहि भावै ॥२४९६॥



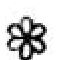
राग कान्हरो

चलत जानि चितवत व्रज युवती मानहु लिखी चितेरे। जहाँ सू तहाँ यकटक मग जोवत फिरत न लोचन कोरे ॥ विसरि गई गति भाँति देह की सुनत न श्रवणन टेरे। मिलि जु गए मनो पय पानी है नित्ररत नहीं निवेरे ॥ लागे संग मतंग मत्त ज्यों घिरत न कैसेहु घेरे। सूर प्रेम अंकुर आशा जिय दै नहिं इत उत हेरे ॥ २४९७ ॥



राग सारंग

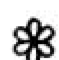
सब मुरझानी री चलिबे की सुनत भनक। गोपी ग्वाल नैन जल ढारत गोकुल ह्वै रह्यो मूँदचनक ॥ यह अक्रूर कहाँ ते आयो दाहन लाग्यो देह दनक। सूरदास स्वामी के बिछु-रत घट नहिं रैहैं प्राण तनक ॥ २४९८ ॥



राग रामकली

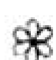
अनल ते विरह अग्नि अति ताती। माधो चलन कहत मधुवन को सुने तपै अति छाती ॥ न्याइहि नागरि नारि विरहवस जरत दिया ज्यों बाती। जे जरि मरे प्रगट पावक परि ते त्रिय अधिक सुहाती ॥ ढारति नीर नयन भरि भरि

सब व्याकुलता मद माती। सूर व्यथा सोई पै जानै श्याम सुभग रँगराती ॥ २४९९ ॥



राग आसावरी

श्याम गए सखि प्राण रहैंगे। अरसपरस ज्यों बातैं कहियत तैसेहि बहुरि कहैंगे॥ इंदुवदन खग नैन हमारे जानति और चहैंगे। वासर निशि कहुँ होत न न्यारे बिछु-रन हृदय सहैंगे॥ एक कहौ तुम आगे वाणी श्याम न जाहिं रहैंगे। सूरदास प्रभु यशुमति को तजि मथुरा कहा लहैंगे ॥ २५०० ॥



राग मलार

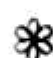
हरि मोसों गौन की कथा कही। मन गह्वर मोहिं उतर न आयो हौं सुनि सोच रही॥ सुनि सखि सत्यभाव की बातैं विरह बेलि उलही। करवत चिह्न कहै हरि हमकों ते अब होत सही॥ आजु सखी सपने मैं देख्यो सागर पालि ढही। सूरदास प्रभु तुम्हरो गवन सुनि जल ज्यों जाति बही ॥ २५०१ ॥



राग मारू

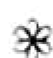
बहुत दुख पैयतु है यह बात। तुम जु सुनत हौ माधो मधुबन सुफलकसुत सँग जात॥ मनसिज व्यथा दहति दावा-

नल उपजी है या गात। सूधौ कहौ तब कैसे जीहै निज चलिहौं उठि प्रात॥ जो पै यही क्रियो चाहत है मीचु विरह शरघात। सूर श्याम तौ तत्र कत राखी गिरिकर लै दिन सात॥ २५०२॥



अक्रूरवचन। राग रामकली

देखि अक्रूर नरनारि बिलख्यो। धनुर्भजन यज्ञहेत बोले इनहि और डर नहीं सबन कहि संतोख्यो॥ महरि व्याकुल दौरि पाँइ गहि लै परी नंद उपनंद संग जाहु लेकै। राज को अंश लिखि लेउ दूनो देउँ मैं कहा करौं सुत दुहुँनि देकै॥ कहति ब्रजनारि नैनन नीर ढारिकै इनन को काज मथुरा कहा है। सूर नृप क्रूर अक्रूर क्रूरै भयो धनुप देखन कहत कपटी महा है॥ २५०३॥



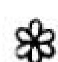
यशोदाविनय अक्रूर प्रति। राग सारंग

मेरे कमलनयन प्राण ते प्यारे। इनको कौन मधुपुरी बैठत राम कृष्ण कोऊ जन वारे॥ यशुदा कहै सुनहु सुफलक-सुत मैं पयपान जतन करि पारे। ए कहा जानहिं सभा राज की ए गुरु जन विप्रौ न जुहारे॥ मथुरा असुर-समूह बसत हैं करकृपाण योधा हथियारे। सूरदास स्वामी ए लरिका इन कब देखे मल्ल अखारे॥ २५०४॥



राग सारंग

ब्रजवासिन के सरवस श्याम। रे अक्रूर क्रूर बड़वारे जी को जी मोहन बलराम॥ अपनो लाग लेहु लेखो करि जो कछु राज अंश को दाम। और महरलें संग सिधारो नगर कहा लरिकन को काम। संतत साध परम उपकारी सुनियत बड़ो तुम्हारो नाम॥ २५०५॥



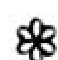
यशोदावचन सखी प्रति। राग मलार

सखी री हौं गोपालहि लागी। कैसे जियें वदन विन देखे अनुदिन खिन अनुरागी॥ गोकुल कान्ह कमल दल लोचन हरि सबहिन के प्रान। कौन न्याव अक्रूर कहत है कहै मथुरा लै जान॥ २५०६॥



राग मलार

तुम अक्रूर बड़े के ढोटा अति कुलीन मतिधीर। बैठत सभा बड़े राजन के जानत हो परपीर॥ लीजै लागु यहाँ ते अपनो जो कछु राज को अंश। नगर बोलि ग्वालन के लरिका कहा करैगो कंस॥ मेरे तो रामै धन माई माधोई सब अंग। बहुरि सूर हौं का पै माँगों पैठि पराए संग॥ २५०७॥



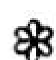
राग रामकली

मेरो माई निधनी को धन माधो। बारम्बार निरखि सुख मानत तजत नहीं पल आधो॥ छिन छिन परसत अंग मिलावत प्रेम प्रगट ह्वै लाधौ। निसि दिन चंद्र चकोर की छबि जनु मिटै न दरश की साधौ॥ करिहै कहा अक्रूर हमारो दैहै प्राण अगाधौ। सूर श्याम धनहीं नहिं पठऊँ अबहिं कंस किन बाँधौ॥ २५०८॥



राग सारंग

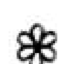
मनहु प्रीति अति भई पात री। अनुज सहित चले राम हमारे कमलनैन देखौं मिलि न जात री॥ अरस परस कछु समुझत नाहीं या ब्रजपोच भलौ की बात री। कंचन काँच कपूर कपट खरी हीरा सम कैसे पोनि बिकात री॥ वे दोउ हंस मानसरवर के छील रे छुद्र मलीन कैसे न्हात री। सूर श्याम मुक्ताफल भोगी को रति करत उवारिकन खात री॥ २५०९॥



राग सोरठ

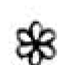
नहिं कोई श्यामहि राखै जाइ। सुफलकसुत वैरी भयो मोको कहति यशोदा माइ॥ मदनगुपाल बिना घर आँगन गोकुल काहि सुहाइ। गोपी रही ठगीसी ठाढ़ी कहा ठगोरी

लाइ ॥ सुंदर श्याम राम भरि लोचन बिन देखे दोउ भाइ। सूर तिनहि लै चले मधुपुरी हिरदय शूल बढ़ाइ ॥ २५१० ॥



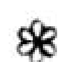
यशोदावचन श्रीकृष्णप्रति । राग सोरठ

गोपालराइ केहि अवलंबौ प्रान। निठुर वचन कठोर कुलिश से कहत मधुपुरी जान ॥ क्रूर नाम गति क्रूर क्रूर मति काहे को गोकुल आयो। कुटिल कंस नृप वैर जानिकै हरि को लेन पठायो ॥ जिहि मुख तात कहत ब्रजपति सों मोहिं कहत है माइ। तिहि मुख चलन सुनत जीवतिहौं विधि सों कहा वसाइ ॥ को करकमल मथानी धरिहै को माखन अरि खैहै। वर्षत मेघ बहुरि ब्रज ऊपर को गिरिवर कर लैहै ॥ हों वलि वलि इन चरण कमल की इहँई रहौ कन्हाई। सूरदास अवलोकि यशोदा धरणि परी मुरझाई ॥ २५१२ ॥



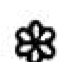
राग सोरठ

मोहन इतनो मोहि चित धरिए। जननी दुखित जानिकै कबहूँ मथुरागमन न करिए ॥ यह अक्रूर क्रूर कृत रचिकै तुमहि लेन है आयो। तिरछे भए कर्म कृत पहिले विधि यह ठाट बनायो ॥ वार वार जननी कहि मोसों माखन माँगत जौन। सूर तिनहिं लेबे को आए करिहौ सूनो भौन ॥२५१३॥



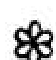
राग सूही

सुफलकसुत के संग ते कहुँ हरि होत न न्यारे। बार बार जननी कहै मोहिं न तजौ दुलारे ॥ कहा ठगोरी यहि करी मेरे बालक मोह्यो। हाहा करि करि मरतिहैं मो तन नहि जोह्यो ॥ नंद कह्यो परबोधिकै सँग मैं लै जैहैं ॥ धनुपयज्ञ देख- राइकै तुरतहि लै ऐहैं। घर घर गोपन सों कह्यो करभार जुरा- वहु। सूर नृपति के द्वार को उठि प्रात चलावहु ॥ २५१४ ॥



नंदवचन यशोदा प्रति। राग मलार

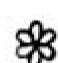
भरोसो कान्ह को है मोहिं। सुन यशोदा कंस-भय ते तू जनि व्याकुल होहि ॥ पहिले पूतना कपट करि आई स्तननि विष पोहि। वैसी ज्यों प्रबल दुदिन के बालक मारि देखा- वत तोहि ॥ अघ बक धेनु तृणावर्त केशी को बल देख्यो जोहि। सात दिवस गोबर्धन राख्यो इंद्र गयो द्रपुछोहि ॥ सुनि सुनि कथा नंदनंदन की मन आयो अवरोहि। सूरदास प्रभु जा कहिए कछु सो आवै सब सोहि ॥ २५१५ ॥



राग बिहागरो

यशुमति अतिही भई बेहाल। सुफलकसुत यह तुमहि बूझिए हरत हौ मेरो बाल ॥ ए दोउ भैया ब्रज के जीवन कहति रोहिणी रोई। धरणी गिरति दुरति अति व्याकुल कहि राखत नहिं कोई ॥ निठुर भए जब ते यह आयो घरहू

आवत नाहिं। सूर कहा नृप पास तुम्हारो हम तुम बिनु मरिजाहिं ॥ २५१६ ॥



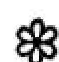
राग सोरठ

कन्हैया मेरी छोह बिसारी। क्यों बलराम कहत तू नाहीं मैं तुम्हरी महतारी ॥ तब हलधर जननी परबोधत मिथ्या यह संसारी। ज्यों सावन की बेलि प्रफुलिकै फूलति है छिन-चारी ॥ हम बालक तुमको कहा सिखवैं कहूँ तुमहिते जात। सूर हृदय धीरज अब धारौ काहे को बिलखात ॥ २५१७ ॥



राग सोरठ

यह सुनि गिरि धरणि झुकि माता। कहा अक्रूर ठगोरी लाई लिये जात दोउ भ्राता ॥ बिरध समय की हरत लकुटिया पाप पुण्य डर नाहीं। कछू नफा तुमको है यामें सो शोधो मन माहीं ॥ नाम सुनत अक्रूर तुम्हारो क्रूर भए हौ आइ। सूर नंद घरनी अति व्याकुल ऐसेहि रैनि बिहाइ ॥ २५१८ ॥



गोपिकावचन परस्पर। राग रामकली

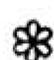
सुने हैं श्याम मधुपुरी जात। सकुचति कहि न सकति काहू सों गुप्त हृदय की बात ॥ शंकित वचन अनागत कोऊ कहि जु गई अधरात। नींद न परै घटै नहिं रजनी कब उठि

देखैां प्रात ॥ नँदनंदन तो ऐसे लागे ज्यों जल पुरइन पात। सूर श्याम सँग ते बिछुरत हैं कब ऐहैं कुशलात ॥ २५१९ ॥



राग भैरव

भोर भयो व्रजलोगन को। ग्वाल सखा सखि व्याकुल सुनिकै श्याम चलत हैं मधुवन को ॥ सुफलकसुत स्यंदन पलनावत देखैं तहाँ बल मोहन को। यह सुनि घर घर ते उठि धाईं नंदसुवन मुख जोवन को ॥ रोरि परी गोकुल में जहँ तहँ गाइ फिरत पय दोहन को। सूर बरस कर भार सजावत महर चलत हरि गोहन को ॥ २५२१ ॥



राग रामकली

चलन को कहियत है री आजु। अबहीं गई श्रवण सुनि आई करत गमन को साजु ॥ कोउ एक कंस कपट कर पठयो कछु सँदेश दै हाथ। सो लै चल्यो हमारी जीवननिधि को अपने साथ ॥ अब यहि शूल न जाति समुझि सहि रही हिए करि लाज। धीरज अवधि आश दै जननिहि जात चले व्रजराज ॥ करिए विनती कमलनयन सों सूर समो पहिचान। कौने कर्म भयो दुखदारुण रहत न मेरो कान ॥ २५२२ ॥



राग रामकली

चलत हरि धृग जु रहत ए प्रान। कहाँ वह सुख अब सहौं दुसह दुख उर करि कुलिश समान॥ कहाँ वह कंठ श्यामसुंदर भुज करति अधररस पान। अचवत नयन चकोर सुधा विधु देखहु मुख छवि आन॥ जाको जग उपहास कियो तब छाँड्यो सब अभिमान। सूर सुनिधि हमतें हैं बिछुरत कठिन है करम निदान॥ २५२३॥



राग कल्याण

हौं साँवरे के सँग जैहौं। होनी होइ सु होइ उभै लै हठ यश अपयश कहूँ न डरैहौं॥ कहा रिसाइ करैगो कोऊ जो रोकिहै प्राण ताहि दैहौं। दैहौं छाँड़ि राखिहौं यह व्रत हरि हितु बीजु बहुरिको बैहौं॥ करिहौं सूर अजर अवनी तन मिलि अकास पिय भौन समैहौं। वायवीज वापी जलक्रीड़ा तेज मुकुर मुख सब सुख लैहौं॥ २५२४॥



राग कल्याण

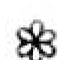
श्याम चलन चहत कह्यो सखी एक आई। बल मोहन रथ बैठे सुफलकसुत चढ़न चहत यह सुनि चकित भई विरहदौं लगाई॥ धुकि धुकि सब धरणि परीं ज्वाला भर लता गिरीं मनो तुरत जलद बरषि सुरति नीर परसी। धाईं सब नंदद्वार बैठे रथ दोउ कुमार यशुमति लोटति भुव पर निठुर

रूप दरसी ॥ कौन पिता कौन माता आपु ब्रह्म जगधाता राख्यो नहीं कछू नाता नेक माहीं । आतुर अक्रूर चढ़े रसना हरि नाम रटे सूरज प्रभु कोमल तनु देखि चैन नाहीं ॥२५२५॥



गोपीवचन मनमोहन प्रति । राग सारंग

विनती एक सुनौ श्रीश्याम । चलन न देत चलो चाहत मन चलन कहो सो सुनिए श्याम ॥ तुम सर्वज्ञ सकल घट व्यापक जीवन पद सबके विश्राम । संतत रहत कहत ढीठो है करते सब सोवत सुखधाम ॥ बाहर सरल प्रीति गोपिन को लिये रहत लै लै गुणग्राम । सूरदास प्रभु सकल सुख-दाता तिनते न्यारे न ग्राम ॥ २५२६ ॥



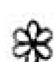
राग सारंग

विनु परवहि उपराग आजु हरि तुम है चलन कह्यो । को जानै इहि राहु रमापति कत ह्वै शोध लह्यो ॥ वैतकिचुनित नीच नैनन मिलि अंजन रूप रह्यो । विरह संधि वल पाइ मैन अति है तिय वदन गह्यो ॥ दुसह दशन मनो धरत अमित अति परस परत न सह्यो । देखो देव अमृत अंतर ते ऊपर जात वह्यो ॥ अव यह शशि ऐसो लागत ज्यों विन माखनहि मह्यो । सूर सकल गुण पति दरशन विनु मुखछवि अधिक दह्यो ॥ २५२७ ॥



राग धनाश्री

मिलि किन जाहु वटाऊनाते। नंद यशोदा के तुम बालक विनती करति हौं ताते॥ तुम्हरी प्रीति हमारी सेवा गनियत नाहिन काते। रूप देखि तुम कहा भुलाने भीत भए वन याते॥ तुम विछुरत घनश्याम मनोहर हम अबला सर-घाते। कहा करौं जु सनेह न छूटे रूप ज्योति गई ताते॥ जव उठि दान माँगते हँसिकै संग गात लपटाते। सूरदास प्रभु कौन प्रबल रिपु बीच परयो धौं जाते॥ २५२८॥



राग धनाश्री

हरि की प्रीति उर माहिं करकै। आय क्रूर लै चले श्याम को हित नाहीं कोउ हरिकै॥ कंचन को रथ आगे कीन्हों हरिहि चढ़ाए वरकै। सूरदास प्रभु सुख के दाता गोकुल चले उजरकै॥ २५२९॥



राग सारंग

सव ब्रज की शोभा श्याम। हरि के चलत भई हम ऐसी मनहु कुसुम निरमायल दाम॥ देखियत हौ तुम क्रूर विषम केसे सुनियत है अक्रूरहि नाम। विचरत हौ न आन गृह गृह को ते शिशु लायक नृप को कह काम॥ २५३०॥



यशोदाविलाप। राग बिलावल

गोपालहि राखहु मधुवन जात। लाज गए कछु काज न सरिहै बिछुरत नँद के तात॥ रथ आरूढ़ होत बलि बलि गई होइ आयो परभात। सूरदास प्रभु बोलि न आयो प्रेम-पुलकि सब गात॥ २५३१॥



राग बिलावल

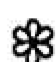
मोहन नेक वदन तन हेरो। राखो मोहिं नात जननी को मदनगुपाललाल मुख फेरो॥ पाछे चढ़ो विमान मनोहर वहुरो यदुपति होत अँधेरो। बिछुरत भेंट देहु ठाढ़े ह्वै निरखो घोष जन्म को खेरो॥ माधो सखा श्याम इन कहि कहि अपने गाइ ग्वाल सब घेरो। गए न प्राण सूर ता औसर नंद जतन करि रहे घनेरो॥ २५३२॥



अथ श्रीकृष्ण-मथुरागमनहेतु अक्रूर साथ। राग सोरठ

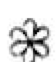
जबहीं रथ अक्रूर चढ़े। तब रसना हरि नाम भाषिकै लोचन नीर बढ़े॥ महरि पुत्र कहि शोर लगायो तरु ज्यों धरनि लुटाइ। देखत नारि चित्रसी ठाढ़ी चितए कुँवर कन्हाइ॥ इतनेहि में सुख दियो सबनको मिलिहैं अवधि बताइ। तनक हँसे मन दै युवतिन को निठुर ठगोरी लाइ॥

बोलत नहीं रहीं सब ठाढ़ी श्याम ठगी ब्रजनारी। सूर तुरत मधुवन पग धारे धरणी के हितकारी ॥ २५३३ ॥



राग बिहागरो

चलत हरि फिरि चितए ब्रज पास। इतनेहि धीरज दियो सबनको अवधि गए है आस॥ नंदहि कह्यो तुरत तुम आवहु ग्वाल सखा लै साथ। माखन मधु मिष्टान्न महर लै दियो अक्रूर के हाथ॥ आतुर रथ हाँक्यो मधुवन को ब्रज-जन भए अनाथ। सूरदास प्रभु कंस-निकंदन देवन करनि सनाथ ॥ २५३४ ॥



राग नटी

रही जहाँ सो तहाँ सब ठाढ़ी। हरि के चलत देखिअत ऐसी मनहुँ चित्र लिखि काढ़ी॥ सूखे वदन स्रवत नैनन ते जलधारा उर बाढ़ी। कंधनि बाँह धरे चितवति द्रुम मनहु बेलि दव डाढ़ी॥ नीरस करि छाँड़ी सुफलकसुत जैसे दूध बिन साढ़ी। सूरदास अक्रूर कृपा ते सही विपति तनु गाढ़ी ॥ २५३५ ॥



राग सारंग

चलतहु फेरि न चितए लाल। रथ बैठे दूर ते देखे अंबुज नैन विशाल॥ मीड़त हाथ सकल गोकुल जन विरह विकल

बेहाल। लोचन पूरि रहीं जल महियाँ दृष्टि परी जो काल॥ सूरदास प्रभु फिरिकै चितयो अंबुज नैन रसाल॥ २५३६॥



राग बिलावल

बिछुरे श्रीब्रजराज आजु तौ नैनन ते परतीति गई। उठि न गई हरिसंग तबहि ते ह्वै न गई सखी श्याममई॥ रूपरसिक लालची कहावत सो करनी कछु वै न भई। साँचे क्रूर कुटिल ए लोचन व्यथा मीन छवि छीनि लई॥ अब काहे जल मोचत सोचत समौ गए ते शूल नए। सूरदास याही ते जड़ भए इन पलकन ही दगा दए॥ २५३७॥



(सखियां आपस में कहती हैं—)

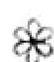
राग धनाश्री

केतिक दूरि गयो रथ माई। नँदनंदन के चलत सखी हे तिनको मिलन न पाई॥ एक दिवस हों द्वार नंद के नहीं रहति बिनु आई। आजु विधाता मति मेरी गई भौन-काज बिरमाई॥ जब हरि ऐसो ख्याल करत है काहु न बात चलाई। ब्रजही बसत विमुख भई हरि सों शूल न उर ते जाई॥ सूरदास प्रभु बिनु ब्रज ऐसो एको पल न सोहाई॥ २५३८॥



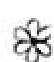
राग मलार

सखी री वह देखौ रथ जात। कमलनैन काँधे पर न्यारो पीत बसन फहरात॥ लई जाइ जब ओट अटन की चीर न रहत कृशगात। छत्र पत्र ध्वज कनकदल मानो ऊपर पवन विहात॥ मधु छुड़ाइ सुफलकसुत लै गए ज्यों माछी भयहीन। सूरदास प्रभु बिनु देखियत हैं सकल बिरह आधीन॥ २५३९॥



राग सारंग

पाछे ही चितवत मेरे लोचन आगे परत न पाँइ। मन लै चली माधुरी मूरति कहा करौं ब्रज जाइ॥ पवनन भई पताका अंबर भई न रथ के अंग। धूरि न भई चरण लपटाती जाती वहँ लौं संग॥ ठाढ़ी कहा करौ मेरी सजनी जिहि विधि मिलहिं गोपाल। सूरदास प्रभु पठै मधुपुरी मुरझि परी ब्रजबाल॥ २५४०॥



राग नट

तब न विचारी री यह बात। चलत न फेंट गही मोहन की अब ठाढ़ी पछितात॥ निरखि निरखि मुख रही मौन ह्वै थकित भई पल पात। जब रथ भयो अदृष्ट अगोचर लोचन अति अकुलात॥ सबै अजान भईं वहि औसर धिगहि

यशोमति मात। सूरदास स्वामी के बिछुरे कौड़ी भरि न बिकात ॥ २५४१ ॥



राग सारंग

अब वै बातैं इह्याँ रही। मोहन मुख मुसकाइ चलत कछु काहू नहीं कही ॥ सखी सुलाज वस समुझि परस्पर सन्मुख सवै सही। अब वै शालति हैं उर महियाँ कैसेहु कढ़ति नहीं ॥ त्यों ज्यों सलिल करन को सजनी काहे को फिरति वही। हर चुंबक जहाँ मिलहि सूर प्रभु मो लै जाउँ तही ॥ २५४२ ॥



राग नट

मेरी वज्र की छाती विदरि करि नहिं जाति। हरिहि चलत चितवत मग ठाढ़ी पछिताति ॥ विद्यमान विरह शूल उर में जु समाति। आवन की आश लागि अवधि ही पत्याति॥ प्रेमकथा प्रगट भई शरद रासराति। प्राणनाथ बिछुरे सखी जीवत न लजाति॥ एकै पै सुरति रही वदन कमल कांति। ज्यों ठग निधिहि हरत की रंचक गुर दै केहू भाँति॥ इमि फिरि मुसकानि सूर मनसा गई माति। चितवनि मन मादक भई जागत अकुलाति ॥ २५४३ ॥



राग गौरी

आजु रैनि नहिं नींद परी। जागत गनत गगन के तारे रसना रटत गोविंद हरी॥ वह चितवन वह रथ की बैठन जब अक्रूर की बाँह गही। चितवत रही ठगी सी ठाढ़ी कह न सकति कछु काम दही॥ इतने मान व्याकुल भई सजनी आरज पंथहु ते बिडरी। सूरदास प्रभु जहाँ सिधारे कितिक दूरि मथुरा नगरी॥ २५४४॥



राग सारंग

हरि बिछुरत फाट्यो न हियो। भयो कठोर बज्र ते भारी रहिकै पापी कहा कियो॥ घोरि हलाहल सुन री सजनी औसर तेहि न पियो। मन सुधि गई सँभारति नाहिंन पूरो दाँव अक्रूर दियो॥ कछु न सुहाइ गई सुधि तब ते भवन काज को नेम लियो। निशि दिन रटत सूर के प्रभु बिनु मरिबो तऊ न जात जियो॥ २५४५॥



राग अडानो

सुंदर बदन री सुखसदन श्याम को निरखि नैन मन थाक्यो। वारक इन बीथिन ह्वै निकसे मैं दूरि झरोखनि झाँक्यो॥ उन कछु नेक चतुरई कीनी गेंद उछारि गगन मिस ताक्यो। वारों लाज भई मोको बैरनि मैं गँवारि मुख ढाक्यो॥ कछु करि गए तनक चितवनि में याते रहत प्रेम-

मद छाक्यो। सूरदास प्रभु सर्वसु लै गए हँसत हँसत रथ हाँक्यो ॥ २५४६ ॥



राग सारंग

अरी मोहिं भवन भयानक लागे माई श्याम बिना। देखहिं जाइ काहि लोचन भरि नंद महर के अँगना ॥ लै जु गए अक्रूर ताहि को ब्रज के प्राणधना। कौन सहाय करै घर अपने मेटै बिधिन घना ॥ काहि उठाइ गोद करि लीजै करि करि मन मगना। सूरदास मोहन दरशन बिनु सुख संपति सपना ॥ २५४७ ॥



राग मलार

सब कोउ कहत गोपाल दोहाई। गोरस बेचन गई बबा की सो हों मथुरा ते आई ॥ जब ते कह्यो कंस सों मनमोहन जीवत मृतक करि लेखो। जागत सोवत आस देवन की कृष्ण कला सब देखो ॥ करत अोध प्रजा लांगै सब नृपति के शंक न मानी। ठकुराई तकियो गिरिधर की सूरदास जन जानी ॥ २५४८ ॥



यशोदाविलाप। राग धनाश्री

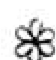
है कोइ ऐसी भाँति देखावै। किंकिणि शब्द चलत ध्वनि रुन भुन ठुमुक ठुमुक गृह आवै ॥ कछुक विलाप वदन की

शोभा अरुण कोटि गति पावै। कंचन मुकुट कंठ मुक्तावलि मोरपंख छबि छावै॥ धूसर धूरि अंग सँग लीने ग्वाल बाल सँग लावै। सूरदास प्रभु कहति यशोदा भाग्य बड़े ते पावै॥ २५४९॥



राग सोरठ

मनों हो ऐसे ही मरि जैहौं। इहि आँगन गोपाललाल को कबहुँक कनियाँ लैहौं॥ कब वह मुख बहुरौं देखोंगी कब वैसो सचु पैहौं। कब मो पै माखन माँगैंगे कब रोटी धरि दैहौं॥ मिलन आस तनु प्राण रहत हैं दिन दस मारग चैहौं। जो न सूर कान्ह आइहै तौ जाइ यमुन धँसि लैहौं॥ २५५०॥



(इधर अक्रूर अपने मन में पश्चात्ताप करने लगा।)

राग गुंडमलार

इहै सोच अक्रूर परयो। लिए जात इनको मैं मथुरा कंसहि महा डरयो॥ धृग मोको धृग मेरी करनी तबहीं क्यों न मरयो। मैं देखों इनको अब हाति है अति व्याकुल हहरयो॥ यहि अंतर यमुनातट आए स्नान दान कियो खरयो। सूरदास प्रभु अंतर्यामी भक्त संदेह हरयो॥ २५५२॥



राग धनाश्री

सुफलकसुत दुख दूरि करयो। यमुनातीर कियो रथ ठाढ़ो आपुहि प्रगट हरयो॥ तिनहि कह्यो तुम स्नान करौ ह्याँ हमहिं कलेऊ देहु। भूख लगी भोजन करिहैं हम नेम सारि तुम लेहु॥ तब लौं नंद गोप सब आवैं संग मिले सब जैहैं। सूरदास प्रभु कहत हैं पुनि पुनि तब अति ही सुख पैहैं॥२५५३॥



राग गुंडमलार

सुनत अक्रूर यह वात हरषे। श्याम वलराम को तुरत भोजन दियो आपु स्नान को नीर परषे॥ गए कटि नीर लौं नित्य संकल्प करि करत स्नान इक भाव देख्यो। जैसोई श्याम वलराम श्रीस्यंदन चढ़े वहै छवि कुँवर सर माँझ पेख्यो॥ चकृत मन भए कवहुँ तीर पुनि जल निरखि घोष अक्रूर जिय भयो भारी। सूर प्रभु चरित में थकित अति ही भयो तहाँ दरशे नित स्थल बिहारी॥ २५५४॥



राग कान्हरो

कमल पर वज्र धरति उर लाइ। राजति रमा कुंभरस अंतर पति निज स्थल जलसाइ॥ वैनतेइ संपुट सनकादिक चतुरानन जय विजय सखाइ। औसर वाग विशारद हाहा जित गुण गाइ॥ कनक दंड सारंग विविध रव कीरति निगम

सिद्ध सुर धाइ। तिनके चरण सरोज सूर अब किए गुरु कृपा सहाइ॥ २५५५॥



राग धनाश्री

हरष अक्रूर हृदय नमाइ। नेम भूल्यो ध्यान श्याम बलराम को हृदय आनंद मुख कहि न जाइ॥ ब्रह्म पूरण अकल कला ते रहित ए हरता करता समर्थ और नाहीं। कहा बपुरा कंस मिस्यो तव मन संस करत है जी को करत है गंग निर्वंश जाहीं॥ हाँकि रथ चढ़ि चल्यो विलम अब कहा प्रभु गयो संदेह अक्रूर जी को। नंद उपनंद सँग ग्वाल बहु भार लै आइ सदनहि मिले सूर पी को॥ २५५६॥



अक्रूर श्रीकृष्णस्तुति। राग कल्याण

बार बार श्याम राम अक्रूरहि गानै। अबहीं तुम हरष भए तबहीं मन मारि रहे चले जात रथहि बात बूझत हैं बानै॥ कहौ नहीं साँची सो हमसों जिनि गोप करौ सुनिकै अक्रूर विमल स्तुति मानै। सूरज प्रभु गुण अथाह धन्य धन्य श्रीप्रियानाह निगमन कों अगाध सहसानन नहि जानै॥ २५५७॥



राग बिलावल

बार बार मोसों कहा बूझत तुम हौ पूरण ब्रह्म गुसाईं तुम हर्ता तुम कर्ता एकै तुम हौ अखिल भुवन के साईं॥

महामल्ल चाणूर कुवलिया अव जिय त्रास नहीं तिन नैको। सूरदास प्रभु कंस निपातहु गहरु न कीजै अब वैसेन को ॥२५५८॥



राग धनाश्री

बूझत हैं अक्रूरहि श्याम। तरनि किरनि महलनि पर झाँई इहै मधुपुरी नाम॥ श्रवणन सुनत रहत जाको नित सो दरशन भए नैन। कंचन कोट कँगूरन की छवि मानहु वैठे मैन॥ उपवन बन्यो चहूँघा पुर के अति ही मोको भावत। सूर श्याम बलरामहिं पुनि पुनि कर पल्लवनि देखावत॥ २५५९॥



श्रीकृष्णवचन अक्रूर प्रति। राग कल्याण

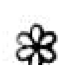
वार वार बलराम को मधुपुरी बतावत। छज्जे महलन देखिकै मन हरप वढ़ावत॥ जन्म थान जिय जानिकै ताते सुख पावत। वन उपवन छाये सघन रथ चढ़े जनावत॥ नगर शोर अकनत सुनत अति रुचि उपजावत। सुनत शब्द घरियार के नृप द्वार बजावत॥ वरन वरन मंदिर वने लोचन ठहरावत। सूरज प्रभु अक्रूर सों कहि देखि सुनावत॥२५६०॥



अक्रूरवचन श्रीकृष्णप्रति। राग कल्याण

श्री मथुरा ऐसी आजु वनी। देखहु हरि जैसे पति आगम सजति शृंगार घनी॥ मानहु कोटि कसी कटि किंकिणि उप-

वन वसन सुरंग। भूषण भवन विचित्र देखियत शोभित सुंदर अंग॥ सुनत श्रवण घरियार घोर ध्वनि पाँयन नूपुर बाजत। अति संभ्रम अंचल चंचल गति धामन ध्वजा विराजत॥ ऊँच अटन पर छत्रन की छवि शीशन मानों फूली। कनक कलश कुच प्रगट देखियत आनँद कंचुकि भूली॥ विद्रुम फटिक पची परदा छवि लाल रंध्र की रेख। मनहुँ तुम्हारे दरशन कारन भूले नैन निमेष॥ चित दै अवलोकहु नँदनंदन पुरी परम रुचि रूप। सूरदास प्रभु कंस मारिकै होउ यहाँ के भूप॥ २५६१॥



राग कल्याण

मथुरा हरषित आजु भई। ज्यों युवती पति आवत सुनिकै पुलकित अंग मई॥ नव-सत साजि शृंगार बनी सुंदरि आतुर पंथ निहारति। उड़त ध्वजा तनु सुरति बिसारे अंचल नहीं सँभारति। उरज प्रगट महलन पर कलसा लसति पास बन सारी। ऊँचे अटनि छाज की शोभा शीश ऊँचाइ निहारी॥ जालरंध्र इकटक मग जोवति किंकिणि कंचन दुर्ग। बेनी लसति हैाक छवि ऐसी महलन चित्रे उर्ग॥ बाजत नगर बाजने जहँ तहँ और बजत घरिआर। सूर श्याम वनिता ज्यों चंचल पग नूपुर झनकार॥ २५६२॥



(श्रीकृष्ण का आना सुनकर कंस घबरा गया।)

राग धनाश्री

मथुरापुर में शोर परयो। गर्जत कंस वंश सब साजे मुख को नीर हरयो॥ पीरो भयो फेफरी अधरन हृदय अतिहि डरयो। नंद महर के सुत दोउ सुनिकै नारिन हर्ष भरयो॥ इंदु वदन नव जलद सुभग तनु दोउ खग नैन कह्यो। सूर श्याम देखत पुर नारी उर उर प्रेम भरयो॥ २५६४॥

❀

राग रामकली

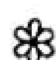
रथ पर देखि हरि बलराम। निरखि कोमल चारु मूरति हृदय मुकुता-दाम॥ मुकुट कुंडल पीत पट छबि अनुज भ्राता श्याम। रोहिणीसुत एक कुंडल गौरतनु सुखधाम॥ जननि कैसे धरयो धीरज कहति सब पुरवाम। बोलि पठए कंस इनको करै धौं कहा काम॥ जोरि कर विधि सों मनावति लै अशीशै नाम। न्हात बार न खसै इनको कुशल पहुँचै धाम॥ कंस को निर्वंश ह्वैहै करत इन पर ताम। सूर प्रभु नंदसुवन दोऊ हंस बाल उपाम॥ २५६५॥

❀

राग कल्याण

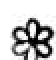
देख री आजु नैन भरि हरिजू के रथ की शोभा। योग यज्ञ जप तप तीरथ व्रत कीजत है जेहि लोभा॥ चारु चक्र मणि खचित मनोहर चंचल चमर पताका। श्वेत छत्र मनो

शशि प्राची दिशि उदय कियो निशि राका ॥ घन तन श्याम सुदेश पीत पट शीश मुकुट उर माला। जनु दामिनि घन रवि तारागण प्रगट एक ही काला ॥ उपजत छवि कर अधर शंख मिलि सुनियत शब्द प्रशंसा। मानहु अरुण कमल मंडल में कूजत हैं कलहंसा ॥ मदन गोपाल देखियत हैं सब अब दुख शोक बिसारी। पैठे हैं सुफलकसुत गोकुल लेन जो इहाँ सिधारी ॥ आनंदित चित जननि तात हित कृष्ण मिलन जिय भाए। सूरदास यदुकुल हित कारण माधो मधुपुरी आए ॥ २५६६ ॥



राग मलार

वे देखो आवत हैं ब्रज ते वने वनमाली। घन तन श्याम सुदेह पीत पट सुंदर नैन विशाली ॥ जिनि पहिले पलना पौढ़े पय पीवत पूतना दाली। अघ बक बच्छ अरिष्ट केशी मथि जल ते काढ़यो काली ॥ जिन हति शकट प्रलंब तृणावृत इंद्र प्रतिज्ञा टाली। एते पर नहिं तजत अघोड़ी कपटी कंस कुचाली ॥ अब विधु वदन विलोकि सुलोचन श्रवण सुनत ही आली। धन्य सुगोकुल नारि सूर प्रभु प्रकट प्रीति प्रतिपाली ॥ २५६७ ॥



राग भैरव

एई माधो जिन मधु मारे री। जन्मत ही गोकुल सुख दीन्हों नंददुलार बहुत सारे री॥ केशी तृणावर्त्त वृषभासुर हती पूतना जब वारे री। इंद्र कोप वर्षत गिरि धारयो महा-प्रबल ब्रज के टारे री॥ बल समेत नृप कंस बोलाए रचे ंग अति भारे री। सूर अशीश देति सब सुंदरि जीवहिं अपनी माँ प्यारे री॥ २५६८॥



राग विहागरो

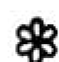
भए सखि नैन सनाथ हमारे। मदनगोपाल देखत ही सजनी सब दुख शोक विसारे॥ पठए हैं सुफलकसुत गोकुल लेन जो इहाँ सिधारे। मल्लयुद्ध प्रति कंस कुटिल मति छल करि इहाँ हँकारे॥ मुष्टिक अरु चाणूर शैल सम सुनियत हैं अति भारे। कोमल कमल समान देखियत ये यशुमति के वारे॥ ह्वै यह जीति विधाता इनकी करहु सहाय सवारे। सूरदास चिरजीवहु युग युग दुष्ट दलै दोउ नंददुलारे॥ २५६९॥



राग भैरव

भोर भयो जागे नंदलाल। नंदराइ निरखत मुख हरषे पुनि आए सब ग्वाल॥ देखि पुरी अति परम मनोहर कंचन

कोट विशाल। कहन लगे सब सूर प्रभू सों होउ इहाँ भूपाल ॥ २५७१ ॥



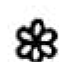
राग परज

हरि बल सोभित यों अनुहार। शशि अरु सूर उदय भए मानो दोऊ एकहि वार॥ ग्वालवाल सँग करत कौतुहल गवन पुरी मंझार। नगर नारि सुनि देखन धाईं रति पति गेह बिसार॥ उलटि अंग आभूषण साजत रही न देह सँभार। सूरदास प्रभु दरश देखिकै भईं चकृत न विचार॥ २५७२ ॥



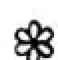
राग धनाश्री

वै देखो आवत दोऊ जन। गौर श्याम नट नील पीत पट जनु दामिनी मिली घन॥ लोचन बंक विशाल चितैकै हरत तबै सबके मन। कुण्डल श्रवण कनक मणि भूषित जड़ित लाल अति लोल मीन तन॥ वन्दन चित्र विचित्र अङ्ग सिर कुसुम सुवास धरे नँदनन्दन। वलि बलि जाऊँ चलहि जेहि मारग सङ्ग लगाइ लेत मधुकरगन॥ धन्य सु भूमि जहाँ पग धारे जीतहिगे रिपु आजु रङ्गरन। सूरदास वै नगर नारि सब लेत वलाइ वारि अंचल सन॥ २५७३ ॥



अथ रजकवध-हेतु। राग रामकली

नृपति रजक अंबर नृप धोवत। देखे श्याम राम दोउ आवत गर्व सहित तिन जोवत॥ आपुस ही में कहत हँसत हैं प्रभु हिरदय यह शालत। तनक तनक से ग्वाल छोहरन कंस अबहिं वधि घालत॥ तृणावर्त प्रभु आहि हमारो इनहीं मार्यो ताहि। बहुत अचगरी यहि करि राखी प्रथम मारिहैं याहि॥ जाको नाम श्याम सोइ खोटो तैसेइ हैं दोउ वीर। सूर नन्द विनु पुत्र कहाए ऐसे जाए हीर॥ २५७४॥



राग बिलावल

अंतर्यामी जानिकै सब ग्वाल बोलाए। परखि लिये पाछेन को तेऊ सब आए॥ सखावृंद लै तहाँ गए बूझन तेहि लागे। नृपति पास हम जाहिंगे अम्बर कछु माँगे॥ हँसे श्याम मुख हेरिकै धोवत गरवानो। मारत मारत सात के दोउ हाथ पिरानो॥ अबहीं देहैं आइकै कछु हम लै रैहैं। पहिरावन जो पाइहैं सो तुमहूँ दैहैं॥ की पहिले ही लेहुगे हम इहै विचारें। देहु बहुत गुण मानिहैं आधीन तुम्हारे॥ मार मार कहि गारि दै दै धृग गाइ चरैया। कंस पास ह्वै आइए कामरी वोढ़ैया॥ अरस नाम है महल को जहाँ राजा बैठे। गारी दैदै सब उठे भुज निजकर ऐंठे॥ पहिरावन को जुरि चले पैहैा मल्लन सों। सूर अजा के भोग ए सुनि लेहु न मोसों॥ २५७५॥



राग बिलावल

हम माँगत हैं सहज सों तुम अति रिस कीन्हों। कहा कहैं तो जाहिंगे जो तुम हमहिं न दीन्हों॥ रिस करियत क्यों सहज हो भुज देखत ऐसे। करि आए नट स्वाँग से मोको तुम वैसे॥ हमहिं नृपति सों नात है ताते हम माँगे। बसन देहु हमको सबै कहैं नृप के आगे॥ नृप आगे लौं जाहुगे बीचहि मरि जैहौ। नेक जीवन की आस है ताहू बिन ह्वैहौ॥ नृप काहे को मारिहै तुमहीं अब मारत। गहर करत हमको कहा मुख कहा निहारत॥ सूर दुहुँन में मारि हौं अति करत अचगरी। बसत तहाँ बुधि तैसिये वह गोकुल नगरी॥ २५७६॥



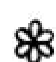
राग बिलावल

श्याम गह्यो भुज सहज ही क्यों मारत हमको। कंस नृपति की सौंह हैं पुनि पुनि कही तुमको॥ पहुँचा कर सों गहि रहे जिय सङ्कट मेल्यो। डारि दियो ताहि शिला पर बालक ज्यों खेल्यो॥ तुरत गयो उड़ि स्वर्ग को ऐसे गोपाला। जन्म मरन ते रहि गयो वह कियो निहाला॥ रजक भजे सब देखिकै नृप जाइ पुकार्‌यो। सूर छोहरन नंद के नृपसेठिहि मार्‌यो॥ २५७७॥



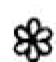
राग गौरी

यह सुनिकै नृप त्रास भर्‌यो। सबन सुनाइ कही यह बाणी इह नँदनंद कह्यो॥ मारो श्याम राम दोउ भाई गोकुल देउ बहाइ। आगे देकै रजक मरायो स्वर्गहि देहु पठाइ॥ दिन दिन इनकी करौं वड़ाई अहिर गए इतराइ। तौ मैं जो वाही सों कहिकै उनकी खाल कढ़ाइ॥ सूर कंस इह करत प्रतिज्ञा त्रिभुवननाथ कहाइ॥ २५७८॥



राग बिलावल

रजक मारि हरि प्रथमही नृप बसन लुटाए। रंग रंग बहु भाँति के गोपन पहिराए॥ आए नगर लगार को सब बने बनाए। इकटक रही निहारिकै तरुणिन मन भाए॥ जैसी जाके कल्पना तैसेहि दोउ आए। सूर नगर नर नारि के मन चित्त चोराए॥ २५७९॥



राग बिलावल

एइ वसुदेव के दोउ ढोटा। गौर श्याम नट नील पीत पट कलहंसन के जोटा॥ कुंडल एक काम श्रुति जाके श्रीरोहिणी को अंस। उर वनमाल देवकी को सुत जाहि डरत है कंस॥ लै राखे व्रज सखा नंद गृह बालक भेष दुराइ। सम बल बैस विराट मैन से प्रगट भए हैं आइ॥ केशी अघ पूतना

निपाती लीला गुणनि अगाध। सूर श्याम खलहरन करन सुख अभयकरन सुरसाध* ॥ २५८० ॥



(श्रीकृष्ण और बलराम धनुपशाला में गए। कंस के योद्धा उनसे कहने लगे कि लो इस महाधनुप को तोड़ो। कृष्ण ने कहा—)

राग विहागरो

हमको नृप यहि हेतु बोलाए। कहाँ धनुप कहँ हम अति बालक कहि आश्चर्य सुनाए॥ ठाढ़े शूर वीर अवलोकत तिनसों कहौ न तोरैं। हमसों कहौ खेल कछु खेलैं यह कहि कहि मुख मोरैं॥ कंस एक तहाँ असुर पठायो इहै कहत वह आयो। बनै धनुप तोरे अब तुमको पाछे निकट बोलायो॥ बालक देखि गहन भुज लाग्यो ताहि तुरतही मार्यो। तोरि कोदंड मारि सब योधा तब बल भुजा निहार्यो॥ जाके अस्त्र तिनहि तेहि मार्यो चले सामुही खौरी। सूर सु कुबरी चंदन लीन्हें मिली श्याम को दौरी॥ २५८६ ॥



राग धनाश्री

प्रभु तुमको चंदन मैं ल्याई। गह्यो श्याम कर कर अपने सों लिये सदन को आई॥ धूप दीप नैवेद्य साजिकै मंगल

* अक्रूर के गोकुल जाने के लिए, कृष्ण के मथुरा आने के लिए और रजक को मारने के लिए देखिए, श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्ध, अध्याय ३८–४१। लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ३७–४२।

करे बिचारी। चरण पखारि लियो चरणोदक धनि धनि कहि दैत्यारी॥ मेरो जनम कल्पना ऐसी चंदन परसौं अंग। सूर श्याम जन के सुखदायक बँधे भाव रजु रंग॥ २५८७॥



राग गुंडमलार

कुबरी नारि सुंदरी कीन्ही। भाव में वास बिन भाव नहिं पाइए जानि हृदय हेतु मानि लीन्हो॥ ग्रीव कर परसि पग पीठि ता पर दियो उर्वशी रूप पटतरहि दीन्हो। चित्त वाके इहै श्याम पति मिलैं मोहिं तुरत सोई भई नहिं जात चीन्हो॥ ताहि अपनी करि चले आगे हरी गए जहाँ कुवलिया मल्ल द्वार्यो। वीच माली मिल्यो दौरि चरणन पर्यो पुहुपमाला श्याम कंठ धार्यो॥ कुशल प्रसन्ननि कहे तुरत मन काम लहि भक्तवत्सल नाम भक्त गावैं। ताहि सुख दै चले पौरिही ह्वै खरे सूर गजपाल सों कहि सुनावैं *॥ २५८८॥



कुवलिया हस्ती वा मुष्टिक-चाणूर-वध।

राग कान्हरो

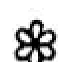
सुनहु महावत बात हमारी। बार बार संकर्षण भाषत लेत नहीं ह्याँ ते गज टारी॥ मेरो कह्यो मानि रे मूरख गज

---

* कुब्जा नारी को सुन्दरी बनाने की लीला के लिए देखिए श्रीमद्-भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्ध, अध्याय ४२।

लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर, अध्याय ४१।

समेत तोहि डारौं मारी। द्वारे खड़े रहे हैं कबके जिनि रे गर्व करै जिय भारी॥ न्यारो करि गयंद तू अजहूँ जान देहि का अंकुश मारी। सूरदास प्रभु दुष्टनिकंदन धरणी भार उतारन-कारी॥ २५८९॥



(कृष्ण के बहुत कहने पर भी महावत ने हाथी नहीं हटाया। उलटी बकझक करने लगा। हलधर बोले—)

राग गुंडमलार

कहत हलधर कह्यो मानि मेरो। अखिल ब्रह्मण्ड के नाथ हैं ह्याँ खड़े गज मारि जीव अब लेहुँ तेरो॥ यह सुनत रिस भर्‍यो दौरिबे को पर्‍यो सूँड़ि झटकत पटकि कूक पार्‍यो। घात मन करत लै डारिहौं दुहुँनि पर दियो गज पेलि आपुन हँकार्‍यो॥ लपकि लीन्हौं धाइ दबकि उर रहे दोउ भ्रम भयो गजहि कहाँ गए वैधौं। अर्‍यो दे दशन धरनी कढ़े बीर दोउ कहत अब ही याहि मारै कैधौं॥ खेलिहैं संग दै हाँक ठाढ़े भए श्याम पाछे राम भए आगे। उतहि वै पूँछ गहि जात ए शुंडि क्वै फिरत गज पास चहुँ हँसन लागे॥ नारि महलन खड़ीं सबै अति ही डरीं नंद के नंद गज दोउ खिलावैं। सूर प्रभु श्याम बलराम देखति तृषित वचैं इक बेर विधि सों मनावैं॥ २५९२॥



राग गुंडमलार

खेलत गज सँग कुँवर श्याम बलराम दोऊ। क्रोध द्विरद व्याकुल अति इनको रिस नेक नहीं चकृत भए योधा तहँ देखत सब कोऊ।। श्याम झटकि पूछ लेत हलधर कर शुंडि देत महल महल नारि चरित देखत यह भारी। ऐसे आतुर गोपाल चपल नैन मुख रसाल लिये करन लकुट लाल मनो नृत्य-कारी।। सुरगण व्याकुल विमान मन मन यह करत ज्ञान बोलत यह वचन अजहुँ मार्यो नहिं हाथी। सूरज प्रभु श्याम राम अखिल लोक के विश्राम सुर पूरनकाम करन नाम लेत साथी।। २५९३।।



(महावत ने अत्यन्त क्रोध करके हाथी बढ़ाया पर कृष्ण ने हँसते-हँसते उसे मार डाला।)

राग कल्याण

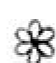
हँसत हँसत श्याम प्रबल कुवलया मार्यो। तुरत दाँत लिये उपारि कंध पर चले धारि निरखत नर नारि मुदित चकृत गज सँहार्यो।। अति ही कोमल अजान सुनत नृपति जिय सकान तनु बिनु जनु भयो प्राण मल्लनि पै आए। देखत ही शंकि गए काल गुण विहाल भए कंस डरन घेरि लिए दोउ मन मुसुकाए।। असुर वरी चहूँ पास जिनके वश भुव अकास मल्लन पै आए न करि नास जिय बिचारै। सब कहत भिरहु श्याम सुनत रहत सदा नाम हारि जीति घर ही की कौन काहि

मारै ॥ हँसि बोले श्याम राम कहा सुनत रहे नाम खेलन को हमहिं काम बालक सँग डोले । सूर नन्द के कुमार यह है राजस विचार कहा कहत बार बार प्रभु ऐसे बोले ॥२६००॥



राग कल्याण

रङ्गभूमि आए अति नन्दसुवन बारे । निरखति व्रजनारि नेह उर ते न विसारे ॥ देखो री मुष्टिक चाणूरन इनि हँकारे । कैसे ये बचै नाथ साँस ऊरध डारे ॥ रजक धनुष जोधा हति दंतगज उपारे । निर्दय इह कंस इनहिं चाहत है मारे ॥ कहाँ मल्ल कहाँ अतिहि कोमल ए भारे । कैसी जननी कठोर कीन्हें जिन न्यारे ॥ वार वार इहै कहति भरि भरि दोउ तारे । सूरज प्रभु वल मोहन उर ते नहिं टारे ॥ २६०१ ॥

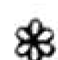


(कंस ने धमकी और भर्त्सना करके मुष्टिक और चाणूर नामी अत्यन्त वलशाली मल्लों को कृष्ण से लड़ने की आज्ञा दी ।)

राग धनाश्री

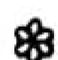
कहति पुर नर नारि यह मन हमारे । रजक मार्‌यो धनुष तोरि द्वै खंड करे हत्यो गजराज त्यों इनहु मारे ॥ तृषित अति नारि सबै मल्ल ज्यों ज्यों कहै लरत नहिं श्याम हम संग काहे । परस्पर मत करत मारि डारौं इनहिं लखत ए चरित निमिषौ न चाहै ॥ कहा ह्वैहै दई होन चाहति कहा

अवहि मारत दुहुँन हमहि आगे। सूर कर जोरि अंचल छोरि विनवै वचैं ए आजु विधि इहै माँगे ॥ २६०३ ॥



राग कल्याण

देखो री मल्ल इनहि मारन को लोरैं। अति ही सुंदर कुमार यशुमति रोहिणि वार विलखति यह कहति सवैं लोचन जल ढोरैं ॥ कैसेहुँ ए वचैं आजु पठए धौं कौन काज निठुर हियो वाम ताको लोभ ही पठाए। एतो बालक अजान देखौ उनके सयान कहा कियो ज्ञान इहां काहे को आए ॥ कहा मल्ल मुष्टिक से चाणूर शिला भंजन कहत भुजा गहि पटकन नंदसुवन हरपैं। नगर नारि व्याकुल जिय जानत प्रभु सूर श्याम गर्व हतन नाम ध्यान करि करि वै हरपैं ॥ २६०४ ॥



श्रीकृष्णवचन मल्लप्रति। राग गुंडमलार

सुनौ हो वीर मुष्टिक चाणूर सवै हमहिं नृप पास नहि जान दैहौ। घेरि राखे हमहिं नहिं वूझै तुमहि जगत मैं कहा उपहास लैहौ॥ सवै कैहैं इहै भली मति तुम यहै नंद के कुँवर दोउ मल्ल मारे। इहै यश लेहुगे जान नहिं देहुगे खोज ही परे अब तुम हमारे ॥ हम नहीं कहैं तुम मनहिं जो यह वसी कहत हौ कहा तो करै तैसी। सूर हम तन निरखि देखिए आपु को वात तुम मन हो यह वसी जैसी ॥ २६०५ ॥



राग तोड़ी

जब ही श्याम कही यह बानी। यह सुनिकै युवती बिलखानी॥ मल्लन कह्यो हमहिं तुम देखो। अपनो बल अपनो तनु पेषो॥ चितए मल्ल नंदसुत क्रोधा। काल रूप वज्रांगी जोधा॥ भुजा ऐठि रज अंग चढ़ायो। गाँस धरे हरि ऊपर आयो॥ श्याम सहज पीताम्बर बाँधे। हलधर निरखत लोचन आधे॥ तब चाणूर कृष्ण पर धायो। भुजभुज जोरि अंग बल पायो॥ प्रथम भए कोमल तन ताको। शिथिल रूप मन मेलत वाको॥ तब चाणूर गर्व मन लीन्हों। दुर्गप्रहार कृष्ण पर कीन्हों॥ फूलहु ते अति सम करि मान्यो। तेहि अपने जिय मारयो जान्यो॥ हरष्यो मल्ल मारि भयो न्यारो। कहन लग्यो मुख अहो बिचारो॥ हँसत श्याम जब देखत ठाढ़े। सोच परयो तब प्राणनि गाढ़े॥ फिरि कहि कहि हरि मल्ल हकारयो। मनहुँ गुहा तें सिंह पुकारयो॥ हाँक सुनत सब कोउ भुलान्यो। थरथराइ चाणूर सकान्यो॥ सूर श्याम महिमा तब जान्यो। निहचै मीचु आपनो आन्यो॥ २६०६॥



राग धनाश्री

भिरयो चाणूर सों नंदसुत बाँधि कटि पीत पट फेंट रण रङ्ग राजैं। द्विरदरद कर कलित भेष नटवर ललित मल्ल उर सल्लि तल ताल बाजैं॥ पीन भुज लीन जे लच्छि रञ्जित

हृदय नील घन शीत तनु तुंग छाती। देखि रही भेष अति प्रेम नर नारि सब वदति तजि भीर रति रीति राती॥ मत्त मातङ्ग बल अंग दंभोलि दल काछनी लाल गलमाल सोहै। कमल-दलनैन मृदुबैन वंदित वदन देखि सुरलोक नरलोक मोहै। बाहु सों बाहु उर जानु सों जानु की चरणन सों चरण धरि प्रगट पेलैं। धमक दै घूँघरनि भीर भइ बंधुजन सुभट पद पाणि धरि धरनि मेलैं॥ चित्त सों चित्त मनवंधु मनवंधु सों दृष्टि सों दृष्टि धरि सिर चपैया। जानि रिपुहानि तजि कानि यदुराज की बवकि उठि फूलि वसुदेव रैया॥ ऐसे ही राम अभिराम सुरशेष वपु गहि वमुष्टिक महामल्ल मारयो। तोरि निज जनक उर केश गहि कंसनर सूर हरि मंच ते दुष्ट डारयो॥ २६०७॥



राग भैरव

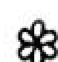
श्याम बलराम रंगभूमि आए। बली लखै रूप सुंदर परम देखियो प्रवल बल जानि मन में सकाए॥ कह्यो गज कुवलिया हयो भयो गर्व तुम जानि परिहै भिरत सँग हमारे। काल सों भिरैं हम कौन तुम बापुरे पै हृदय धर्म रहियो विचारे॥ श्याम चाणूर बलवीर मुष्टिक भिरे शीश सों शीश भुज भुज मिलावैं। वे उनै गहत वे दौरि उनको गहत करत बल छल नहीं दाँव पावैं॥ धरि पछारयो दोउ वीर दुहुँन मल्ल को

हरषि कह्यो सुर ए नंद दोहाई। सूर प्रभु परस लहि लह्यो निर्वान तेहि सुरन आकास जयति ध्वनि सुनाई॥ २६०८॥



राग गुंडमलार

गह्यो कर श्याम भुज मल्ल अपने धाइ झटकि लीन्हों तुरत, पटकि धरनी। भटक अति शब्द भयो खुटक नृप के हिए अटक प्रानन पर्‌यो चटक करनी॥ लटकि निरखन लग्यो मटक सब भूलि गयो हटक ह्वैकै गयो गटक शिल सो रह्यो मीचु जागी। मुष्टकौ गद मरदिके चाणूर चुरकुट कर्‌यो कंस को नुकंप भयो उई रंगभूमि अनुरागरागी॥ मल्ल जे जे रहे सबै मारै तुरत असुर जोधा सबै तेउ संहारे। धाइ दूतन कह्यो मल्ल कोउ नहिं रहे सूर बलराम हरि सब पछारे*॥ २६०९॥



राग गुंडमलार

नंद के नंद सब मल्ल मारे। निदरि पौंरिया जाय नृप पै पुकारे॥ सुनत ठाढ़ो भयो हाँक तिनको दयो दनुज कुल दहन तातन निहारे। सुभट बोले सबै आइहै पुनि कबै मारि डारे सबै मल्ल मेरे॥ अचगरी करि रहे बचन एई कहे

* कुवलयापीड़ हाथी और चाणूर-मुष्टिक आदि के वध के लिए देखिए श्रीमद्‌भागवत दशम स्कंध, पूर्वार्ध अध्याय ४३। लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ४४।

डर नहीं करत सुत अहिर केरे ॥ रंग महलनि खरयो कहा रे तुम करयो कहा रे तुम करयो ढाल कर खड्ग तहाँ ते चलावै। जिवत अब जाहुगे वहुरि करिहौ राज नहीं जानत सूर कहि सुनावै ॥ २६११ ॥



राग मारू

कंध दंत धरि डोलत रंगभूमि बलहरि। उज्ज्वल साँवल वपु शोभित अंग फिरत फरि ॥ द्वारे पैठत कुंजर मारयो डुलाय धरनी डारयो। मुष्टिक चाणूर शिल्प सौशील संहारयो ॥ जिहिं ज्यों जीय रूप विचारयो तैसोई रूप धारयो। देवकी वसुदेव जीय को संताप निवारयो ॥ मल्ल सुभट परे भगार कृष्ण कोप रिसाने। देखि यह पराक्रम तब कंस जिय विलखाने ॥ दु:ख-दलन अभय दान करै करन दाने। जो जिहि जवहिं कहैं सबै गोवर्धन राने ॥ कंस सुनि अचेत भयो बजन लगे बाजा। कहि अशीश गगन उठे सिद्ध सुर समाजा ॥ सुभट रहे देखत ही रोके दरवाजा। सूर नंदनंदन गए जहाँ कंस राजा ॥ २६१३ ॥



राग मारू

नवल नंदनंदन रंगभूमि राजै। श्याम तन पीत पट मनों घन में तड़ित मोर के पंख माथे विराजै ॥ श्रवण कुंडल

झलक मनों चपला चमकि दृग अरुन कमलदल से विशाला। भौंह सुंदर धनुष बाण सम सिर तिलक केश कुंचित शोभित भृंग माला॥ हृदय वनमाल नूपुर चरण लोल चलत गजचाल अति बुद्धि विराजै। हंस मानों मानसर अरुन अंबुज सुथल निरखि आनंद करि हरषि गाजै॥ ढाल तलवारि आगे धरी रहि गई महल को पंथ खोजत न पावत। लात के लगत सिर ते गयो मुकुट गिरि केश धरि लै चले हरषि सावंत॥ चारि भुज धारि तेहि चारु दरशन दियो चारि आयुध चहुँ हाथ लीन्हें। असुर तजि प्राण निर्वाणपद को गयो विमल गति भई प्रभु रूप चीन्हें॥ देखि यह पुहुप-वर्षा करी सुरन मिलि सिद्धि गंधर्व जै धुनि सुनाई। सुर प्रभु अगम महिमा न कछु कहि परत सुरन की गति तुरत असुर पाई॥ २६१४॥



राग मारू

देखि नृप तमकि हरि चमकि तहाँई गए दमकि लीन्हों गिरहवाज जैसे। धमकि मारयो घाउ गुमकि हृदय रह्यो झमकि गहि केश लै चले ऐसे॥ ठेलि हलधर दियो झेलि तब हरि लियो महल के तरे धरणी गिरायो। अमर जय-ध्वनि भई धाक त्रिभुवन भई कंस मारयो निदरि देवरायो॥ धन्य वाणी गगन धरणि पाताल धनि धन्य हो धन्य वसुदेव

ताता। धन्य अवतार सुर धरनि उपकार को सूर प्रभु धन्य बलराम भ्राता *॥ २६१५॥



राग बिलावल

जय जय ध्वनि तिहुँ लोक भई। मारयो कंस धरणि उद्धारयो ओक ओक आनंदमई॥ रजक मारिकै दंड विभंज्यो खेल करत गज प्राण लियो। मल्ल पछारि असुर संहारे तुरत सवनि सुरलोक दियो॥ पुर-नर-नारी को सुख दीन्हों जो जैसो फल सोई लह्यो। सूर धन्य यदुवंश उजागर धन्य धन्य ध्वनि घुमरि रह्यो॥ २६१६॥



राग गुंडमलार

हरष नर नारि मथुरा पुरी के। सोच सबको गयो दनुज-कुल सब हयो तिहुँ भुवन जै भयो हरष कूवरी के॥ निदरि मारयो कंस प्रगट देखत सवै अतिहि दिन अल्प के नंद भए ढोटा। नैन दोऊ ब्रह्म से परम सोभात से भक्त को जैसे शुभ हंस जोटा॥ देवदुंदुभी बजी अमर आनंद भए पुहुपगण वरष ही चैन जान्यो। सूर वसुदेवसुत रोहिणी नंद धनि धनि मिल्यो भुव भार अखिल जान्यो॥ २६१७॥

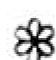


---

* कंस के वध के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्ध अध्याय ४४। लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ४५।

राग रामकली

निदरि तुरत मारयो कंस देवनाथा। निदरि मारयो असुर पूतना आदि ते धरणि पावन करी भई सनाथा॥ लोक लोकन विदित कथा तुरत ही गई करन स्तुतिहि जहाँ तहाँ आए। देव दुंदुभी पुहुपवृष्टि जैध्वनि करें दुष्ट यह मारि सुर-पुर पठाए॥ केश गहि करषि यमुना धार डारि दै सुन्यो नृप-नारि पति कृष्ण मारयो। भईं व्याकुल सबै हेतु रोवन लगीं मरन को तुरत जोहत विचारयो॥ गए तहाँ श्याम बलराम बोधी सबै कहति तब नारि तुम करी जैसी। नृप सुनहु वाम इह काम ऐसोई रह्यो जानि यह बात क्यों कहति ऐसी॥ मरति काहे कहा तुमहि को यह भई जानि अज्ञान तुम होति काहे। सूर नृपनारि हरि वचन मान्यो सत्य हरष ह्वै श्याम मुख सबनि चाहे॥ २६१८॥



राग कल्याण

रानिन परबोधि श्याम महलद्वारे आए। कालनेमि वंश उग्रसेन सुनत धाए॥ झुकि चरणन परयो आइ त्राहि त्राहि नाथा। बहुतै अपराध परे छिनहु में सनाथा॥ महाराज कहि श्रीमुख लियो उर लाई। हमको अपराध छमहुँ करी हम ढिठाई॥ तबहीं सिंहासन पाउँ उग्रसेन धारे। छत्र सिर धराइ चमर अपने कर ढारे॥ ठाढ़े आधीन भए देव देव भाषै। अपने जन को प्रसाद सारी सिर राखै॥ मो कों प्रभु

इती कहा विश्वंभर स्वामी। घट घट की जानत हो तुम अंत-र्यामी॥ तौ नृप कहत कहा तुम को यह केती। सेवा तुम जेती करी पुनि देहौ तेती॥ रजक धनुष गज मल्लन कंस मारि काजा। सूरज प्रभु कीन्हों तब उग्रसेन राजा॥ २६१६॥



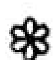
राग बिलावल

उग्रसेन को दियो हरि राज। आनंद मगन सकल पुरवासी चमर दुरावत श्रीब्रजराज॥ जहाँ तहाँ ते यादव आए डरे डरे जे गए पराइ। मागध सूर करत सब अस्तुति जै जै जै श्रीयादवराइ॥ युग युग विरद इहै चलि आयो भए बलि के द्वारे प्रतिहार। सूरदास प्रभु अज अविनासी भक्तन हेतु लेत अवतार॥२६२०॥



राग बिलावल

मथुरा लोगनि बात सुनी यह उग्रसेन को राज दियो। सिंहासन वैठारि कृपा करि आपु हाथ सों चमर लियो॥ मात पिता को मङ्कट हरिहैं देवन जैध्वनि शब्द कियो। रानी सबै मरत ते राखीं उनतें प्रभु नहिं और वियो॥ अबही सुनि वसुदेव देवकी हरपित ह्वै है दुहुँनि हियो। सूरदास प्रभु आइ मधुपुरी दरशन ते पुरलोग जियो* ॥ २६२१॥



* उग्रसेन के राज्याभिषेक के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्ध अध्याय ४५। प्रेमसागर अध्याय ४६।

(इधर कृष्ण के पिता वसुदेव ने, जो बन्दीगृह में बंद थे, कुछ समाचार सुना और स्वप्न देखा ।)

राग रामकली

सुन्यो वसुदेव दोउ नंदसुवन आए। त्रिया सों कहत कछु सुनति हैं री नारि रातिहू सुपन कछू ऐसे पाए ॥ गए अक्रूर तिहि नृपति माँग बोलि तुरत आए आनि कंस मारे। कहा पिय कहत सुनिहै बात पौरिया जाय कैहै रही मष्ट धारे ॥ दियो लोचन ढारि नारि पति परस्पर कहा हम पाप करि जन्म लीन्हों। सात देखत बधे एक व्रज दुरि बच्यो इते पर बाँधि हम पंगु कीन्हों ॥ मारि डारै कहा बंदि को जीवन धृग मीच हम को नहीं मनन भूल्यो। मरै वह कंस निर्वंश विधना करै सूर क्यों हूँ होइ निर्मूल्यो ॥ २६२४ ॥



राग जैतश्री

इहै कहत वसुदेव त्रिया जिनि रोवहु हो। भाग्य विवस सुख दुख सकल जग जोवहु हो ॥ जल दीन्है कर आनि कहत मुख धोवहु नारी। कहियत है गोपाल हरन दुख गर्वप्रहारी ॥ कबहुँ प्रगट वै होइँगे कृष्ण तुम्हारे तात। आजु काल्हि हरि आइहैं यह सपने की बात ॥ अब जिनि होहि अधीर कंस यम आइ तुलानो। देखत जाइ बिलाइ झार तिनुका करि जानो ॥ ऐसो सपनो मोहिं भयो त्रिया सत्य करि मानि। त्रिभुवनपति तेरे सुवन हैं तोहिं मिलेंगे आनि ॥ यहि अंतर

हरि कह्यो मात पितु कहाँ हमारे। तहाँ लै गए अक्रूर श्याम वलराम पधारे॥ बज्र शिला द्वारे दियो दरशन ते गयो छूटि। सहज कपाट उघरि गए ताला कूँची टूटि॥ जो देखे वसुदेव कुँवर दोउ काके ढोटा ए आए। दरश दियो तेहि प्रेम प्रथम जो दरश दिखाए॥ धाइ मिले पितु मात को यह कहि मैं निजु तात। मधुरे दोउ रोवन लगे जिनि सुनि कंस डरात॥ तुरत वंदि ते छोरि कह्यो मैं कंसहि मार्यो। योधा सुभट संहारि मल्ल कुबलया पछार्यो॥ जिय अपने जिनि डर करौ मैं सुत तुम पितु मात। दुख विसरौ अब सुख करौ अब काहे पछतात॥ निहचै जननी जानि कंठ धरि रोवन लागी। तब बोले वलराम मातु तुमते को भागी॥ बार बार देवै कहे कबहूँ गोद खिलाए नाहिं। द्वादस बरसै कहाँ रहे मात पिता बलि जाहिं॥ पुनि पुनि बोधत कृष्ण लिखौ नाहिं मेटै कोई। जोइ जोइ मन की साध कहौ मैं करिहौं सोई॥ जे दिन गए सु ते गए अब सुख लूटहु मात। तात नृपति रानी जननि जाके मोसों तात॥ जो मन इच्छा होइ तुरत देओ मैं करिहौं। गगन धरणि पाताल जात कतहूँ नहिं डरिहौं॥ मात हृदय की जब कही तब मन बढ़्यो आनंद। महर सुवन मैं तौ नहीं मैं वसुदेव को नंद॥ राज करौ दिन बहुत जानि को कहै अब तुम को। अष्ट सिद्धि नवनिद्धि देहुँ मथुरा घर घर को॥ रमा सेवकिनी देउँ करि कर जोरैं दिन याम। अब जननी दुख जिनि करौ करौ जु पूरनकाम॥ धनि यदुवंशी श्याम चहुँ युग चलत

बड़ाई। शेष रूप मैं राम कहत नहिं बात बनाई। सूरज प्रभु दनुकुलदहन हरन करन संसार। ते पाए सुत तुमहिं करि करौ जु सुख विस्तार॥ २६२५॥



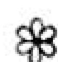
राग देवगंधार

मेरे माथे राखो चरन। दीनदयालु कंस दुखभंजन उग्रसेन दुखहरन॥ परम मुदित वसुदेव देवकी गई पाइन परन। मेरो दोष मेटि करुणा करि लै चल गोकुल धरन॥ ते जन पार भए मनमोहन जे आए तुव शरन। आए सूरदास के जीवन भवजल नवका तरन॥ २६२६॥



राग रामकली

तब वसुदेव हरषित गात। श्याम रामहिं कंठ लाए हरषि देवै मात॥ अमर देव दुंदुभि शब्द भयो जैजैकार। दुष्ट दलि सुख दियो संतन ए वसुदेवकुमार॥ दुख गयो वहि हरष पूरन नगर के नर नारि। भयो पूरब फल संपूरन लह्यो सुत दैतारि॥ तुरत विप्रन बोलि पठए धेनु कोटि मँगाइ। सूर के प्रभु ब्रह्म पूरण पाइ हरषे राइ॥ २६२७॥



राग काफी

आजु हो निसान बाजे वसुदेवराइ कै। मथुरा के नर नारि उठे सुख पाइकै॥ अमर विमान सब कहैं हरपाइकै। फूले

मात पिता दोऊ आनंद बढ़ाइकै ॥ कंस को भँडार सब देत हैं लुटाइकै। धेनु जे संकल्प राखीं लईं ते गनाइकै ॥ ताँवे रूपे सोने सजि राखीं वै वनाइकै। तिलक विप्रन वंदि दई वै दिवाइकै ॥ मागध मंगन जन लेत मन भाइकै। अष्टसिद्धि नव निधि आगे ठाढ़ी आइकै ॥ सब पुर नारि आईं मंगलन गाइकै। अंबर भूषण पठै दईं पहिराइकै ॥ अखिल भुवन जन कामना पुराइकै। पुरजन धनु देत हैं लुटाइकै ॥ सूर जन दीन द्वारे ठाढ़ो भयो आइकै। कछु कृपा करि दीजै मोहू कौं दिवाइकै ॥ २६२८ ॥



(कंसलीला के बाद कृष्ण और बलदाऊ का यज्ञोपवीत हुआ। मथुरा में बड़ा आनंद-मंगल हुआ। कृष्ण वहीं पर रहने और राज-कार्य करने लगे मानों वहीं के निवासी हो गये। नंद ने कृष्ण से गोकुल चलने का अनुरोध किया। कृष्ण किसी तरह न मानते थे। नंद और कृष्ण में बहुत उत्तर-प्रत्युत्तर हुआ।)

राग बिलावल

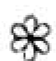
तब बोले हरि नंद सों मधुरे करि बानी। गर्ग वचन तुम सों कही नहिं निहचै जानी ॥ मैं आयो संसार में भुव भार उतारन। तिनको तुम धनि धन्य हो कीन्हों प्रतिपारन ॥ मातु पिता मेरे नहीं तुम ते अरु कोऊ। एक बेर ब्रज लोग को मिलि हौ सुनौ सोऊ ॥ मिलन हिलन दिन चारि को तुम तो सब जानौ। मो को तुम अति सुख दियो सो कहा बखानौं ॥

मथुरा नर नारी सुनै व्याकुल व्रजवासी। सूर मधुपुरी आइकै ए भए अविनासी ॥ २६४८ ॥



राग टोड़ी

निठुर वचन जिनि कहौ कन्हाई। अतिही दुसह सह्यो नहिं जाई ॥ तुम हँसिकै बोलत ए बानी। मेरे नयन भरत है पानी ॥ अब ए बोल कबहुँ जिनि बोलौ। तुरत चलौ व्रज आँगन डोलौ ॥ पंथ निहारत यशुमति ह्वै है। तुम बिन मो को देखि सुखैहै ॥ तब हलधर नंदहि समुझावत। कछु करि काज तुरत व्रज आवत ॥ जननि अकेली व्याकुल ह्वै है। तुमहिं गए कछु धीरज लैहै ॥ बहुत कियो प्रतिपाल हमारो। जाइ कहाँ उर ध्यान तुम्हारो ॥ व्याकुल होन जननि जिनि पावै। बार बार कहि कहि समुझावै ॥ व्याकुल नंद सुनत ए बानी। डसि मानों नागिनी पुरानी ॥ व्याकुल सखा गोप भए व्याकुल। अंतक दशा भयो भय आकुल ॥ सूर श्याम मुख निरखत ठाढ़े। मनों चितेरे लिखि सब काढ़े ॥ २६४९ ॥



राग सोरठ

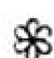
गोपालराइ हौं न चरण तजि जैहौं। तुमहिं छाँड़ि मधुवन मेरे मोहन कहा जाइ व्रज लैहौं ॥ कैहौं कहा जाइ यशुमति सों जब सन्मुख उठि ऐहैं। प्रात समय दधि मथत छाँड़िकै काहि कलेऊ दैहैं ॥ बारह वर्ष दयो हम ठाढ़ो

यह प्रताप बिनु जाने। अब तुम प्रगट भए वसुदेवसुत गर्ग-वचन परमाने॥ कत हम लागि महारिपु मारे कत आपदा बिनासी। डारि न दियो कमल कर ते गिरि दबि मरते ब्रज-वासी॥ वासर संग सखा सब लीन्हें टेरि न धेनु चरैहौ। क्यों रहिहैं मेरे प्राण दरश बिनु जब संध्या नहिं ऐहौ॥ अब तुम राज्य करौ कोटिक युग मातपिता सुख दैहौ। कबहुँक तात तात मेरे मोहन या सुख मो सों कैहौ॥ ऊरध श्वास चरण गति थाक्यो नैनन नीर न रहाइ। सूर नंद बिछुरे की वेदन मो पै कहिय न जाइ॥ २६५०॥



राग बिलावल

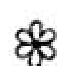
बेगि ब्रज को फिरिए नंदराइ। हमहिं तुमहि सुत तात को नातो और परयो है आइ॥ बहुत कियो प्रतिपाल हमारो सो नहिं जीते जाइ। जहाँ रहै तहँ तहाँ तुम्हारे डारो जिनि बिसराइ॥ माया मोह मिलन अरु बिछुरन ऐसे ही जग जाइ। सूर श्याम के निठुर वचन सुनि रहे नयन जल छाइ॥ २६५१॥



राग नट

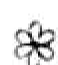
यह सुनि भए व्याकुल नंद। निठुर वाणी कही जब हरि परि गए दुखफंद॥ निरखि मुख मुख रहे चकृत सखा अरु सब गोप। चरित ए अक्रूर कीन्हें करत मन मन कोप॥

धाइ चरणन परे हरि के चलहु व्रज को श्याम। कंस असुर समेत मारे सुरन के करि काम ॥ मोचि बन्धन राज दीनों हर्ष भए वसुदेव। सूर यशुमति बिनु तुम्हारे कौन जानै देव ॥२६५२॥



राग सोरठ

नंद बिदा ह्वै घोष सिधारो। बिछुरन मिलन रच्यो विधि ऐसो यह संकोच निवारो ॥ कहियो जाइ यशोदा आगे नैन नीर जिनि ढारौ। सेवा करी जानि सुत अपने कियो प्रतिपाल हमारौ ॥ हमैं तुम्हें कछु अंतर नाहीं तुम जिय ज्ञान विचारौ। सूरदास प्रभु यह विनती है उर जिनि प्रीति बिसारौ ॥२६५३॥



राग सोरठ

मेरे मोहन तुमहिं बिना नहिं जैहौं। महरि दौरि आगे जब ऐहै कहा ताहि मैं कैहौं ॥ माखन मथि राख्यो ह्वै है तुम हेतु चलौ मेरे बारे। निठुर भए मधुपुरी आइकै काहे असुरन मारे ॥ सुख पायो वसुदेव देवकी अरु सुख सुरन दियो। यहै कहत नँद गोप सखा सब बिदरत चहत हियो ॥ तब माया जड़ता उपजाई ऐसो प्रभु यदुराई। सूर नंद परबोधि पठावत निठुर ठगोरी लाई ॥ २६५४ ॥



राग नट

नंदहि कहत हरि ब्रज जाहु। कितिक मथुरा ब्रजहि अंतर जिय कहा पछिताहु॥ कहा व्याकुल होत अतिही दूरिहूँ कहुँ जांत। निठुर उर में ज्ञान बरत्यो मानि लीन्हों बात॥ नंद भए कर जोरि ठाढ़े तुम कहे ब्रज जाउ। सूर मुख यह कहत वाणी चित नहीं कहुँ ठाउ॥ २६५५॥



राग बिलावल

तुम मेरी प्रभुता बहुत करी। परम गँवार ग्वाल पशु-पालक नीच दशा लै उच्च धरी॥ रोग दोष संताप जनम के प्रगटत ही तुम सबै हरी। अष्ट महासिधि और नवो निधि कर जोरे मेरे द्वार खरी॥ तीनि लोक अरु भुवन चतुर्दश वेद पुराणन सही परी। सूरदास प्रभु अपने जन को देत परम सुख घरी घरी॥ २६५६॥



राग रामकली

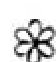
उठं कहि माधौ इतनी बात। जेते मान सेवा तुम कीन्हीं बदलो दयो न जात॥ पुत्र हेतु प्रतिपाल कियो तुम जैसे जननी तात। गोकुल बसत खवावत खेलत दिवस न जान्यो जात॥ होहु विदा घर जाहु गुसाईं माने रहिए नात। ठाढ़ो थक्यो उतर नहिं आवै लोचन जल न समात॥ भए बलहीन

खीन तनु कंपित ज्यों बयारि बस पात। धकधकात मन बहुत सूर उठि चले नंद पछितात ॥ २६५७ ॥



राग नट

फिरि करि नंद न उत्तर दीन्हों। रोम रोम भरि गयो वचन सुनि मनहुँ चित्र लिखि कीन्हों ॥ यह तो परंपरा चलि आई सुख दुख लाभ अरु हानि। हम पर बबा मया करि रहियो सुत अपनो जिय जानि ॥ को जलपै काके पल लागे निरखि वदन सिर नायो। दुख समूह हृदये परिपूरण चलत कंठ भरि आयो ॥ अध अध पद भुव भई कोटि गिरि जौ लगि गोकुल पैठो। सूरदास अस कठिन कुलिशहु ते अजहुँ रहत तनु बैठो ॥ २६५८ ॥



राग धनाश्री

चले नंद व्रज को समुहाइ। गोप सखा हरि बोधि पठाए सबै चले अकुलाइ ॥ काहू सुधि न रही तन की कछु लट-पटात परे पाँइ। गोकुल जात फिरत पुनि मधुवन मन पुनि उतहि चलाइ ॥ विरह सिन्धु में परे चेत बिनु ऐसेहि चले बहाइ। सूर श्याम बलराम छाँड़िकै व्रज आए नियराइ ॥ २६५९ ॥



राग भैरव

वार बार मग जोवति माता। व्याकुल बिन मोहन बल भ्राता ॥ आवत देखि गोप नँद साथा। विवि वालक बिनु भई अनाथा ॥ धाई धेनु बच्छ ज्यों ऐसे। माखन बिना रहैं धौं कैसे ॥ ब्रजनारी हरषित सब धाईं। महरि जहाँ तहँ आतुर आईं ॥ हरषित मात रोहिणी धाई। उर भरि हलधर लेहुँ कन्हाई ॥ देखे नंद गोप सब देखे। बल मोहन को तहाँ न पेखे ॥ आतुर मिलन काज ब्रजनारी। सूर मधुपुरी रहे मुरारी ॥ २६६० ॥



राग कल्याण

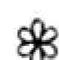
श्याम राम मथुरा तजि नंद ब्रजहि आए। बार बार महरि कहति जनम धृग कहाए ॥ कहूँ कहति सुनी नहीं दशरथ की करनी। यह सुनि नंद व्याकुल ह्वै परे मुरछि धरनी ॥ टेरि टेरि पुहुमि परति व्याकुल ब्रजनारी। सूरज प्रभु कौन दोष हम को जु बिसारी ॥ २६६२ ॥



राग सारंग

उलटि पग कैसे दीन्हों नंद। छाँड़े कहाँ उभय सुत मोहन धृग जीवन मति मंद ॥ कै तुम धन यौवन मदमाते कै तुम छूटे बंद। सुफलकसुत वैरी भयो हम को लै गयो आनँदकंद ॥

राम-कृष्ण बिन कैसे जीजै कठिन प्रीति के फंद। सूरदास प्रभु भई अभागिनि तुम बिनु गोकुल चंद ॥ २६६३ ॥



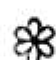
राग मलार

दोउ ढोटा गोकुल नायक मेरे। काहे नंद छाँड़ि तुम आए प्राण जीवन सब केरे ॥ तिनके जात बहुत दुख पायो रौरि परी यहि खेरे। गोसुत गाइ फिरत हैं दह दिश बने चरित्र न थोरे॥ प्रीति न करी राम-दशरथ की प्राण तजे बिन हेरे। सूर नंद सों कहति यशोदा प्रबल पाप सब मेरे ॥ २६६४ ॥



राग सोरठ

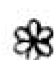
यशोदा कान्ह कान्ह कै बूझै। फूटि न गईं तिहारी चारौ कैसे मारग सूझै ॥ इक तनु जरो जात बिन देखे अब तुम दीने फूक। यह छतियाँ मेरे कुँवर कान्ह बिनु फटि न गए द्वै टूक ॥ धृग तुम धृग वै चरण अहो पति अधबोलत उठि धाए। सूर श्याम बिछुरन की हम पै देन बधाई आए ॥ २६६६ ॥



राग सोरठ

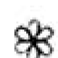
नंद हरि तुमसों कहा कह्यो। सुनि सुनि निठुर वचन मोहन के क्यों करि हृदय रह्यो। छाँड़ि सनेह चले मंदिर कत दौरि न चरन गह्यो। फाटि न गई वज्र की छाती कत यहि

शूल सह्यो ॥ सुरति करत मोहन की बातैं नैनन नीर बह्यो। सुधि न रही अति गलित गात भयो जनु डसि गयो अह्यो ॥ कृष्ण छाँड़ि गोकुल कत आए चाखन दूध दह्यो। तजे न प्राण सूर दशरथ लौं हुतौ जन्म निबह्यो ॥ २६६७ ॥



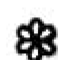
राग सोरठ

मेरो अति प्यारो नँदनंद। आए कहाँ छाँड़ि तुम उनको पोच करी मति मंद ॥ बल मोहन दोउ पीड़ नयन की निरखत ही आनंद। सरवर घोष कुमोदिनि ब्रज जन श्याम वदन बिन चंद ॥ काहे न पाँइ परे वसुदेव के घालि पाग गरे फंद। सूरदास प्रभु अबके पठवहु सकल लोक मुनिवंद ॥ २६६८ ॥



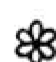
अथ नंदवचन यशोदाप्रति। राग रामकली

तब तू मारिबोई करति। रिसनि आगें कहि जो आवत अब लै भाँड़े भरति ॥ रोसकै कर दाँवरी लै फिरति घर घर धरति। कठिन हिय करि तब जो बाँध्यो अब वृथा करि मरति ॥ नृपति कंस बुलाइ पठयो बहुत कै जिय डरति। इह कछू विपरीत मो मन माँझ देखी परति ॥ होनहारी होइहै सोइ अब यहाँ कत अरति। सूर तब किन फेरि राखेइ पाइ अब केहि परति ॥ २६६९ ॥



यशोदावचन नंदप्रति। राग अडानो

कहा ल्यायो तजि प्राण जिवन धन। राम कृष्ण कहि मुरछि परी घर यशुदा देखत लोगन॥ विद्यमान हरि वचन श्रवण सुनि कैसे गए न प्राण छूटि तन। सुनी यह दशरथ की तऊ नहिं लाज भई तेरे मन॥ मन्द हीन अति भयो नंद अति होत कहा पछिताने छिन छिन। सूर नंद फिरि जाहु मधुपुरी ल्यावहु सुत करि कोटि जतन॥ २६७० ॥



समूह व्रज लोग वचन। राग केदारो

कहो नंद कहाँ छाँड़े कुमार। कैसे प्राण रहे सुत बिछुरत पूछैं गोपी ग्वार॥ करुणा करै यशोदा माता नैनन नीर बहै असरार। चितवत नंद ठगे से ठाढ़े मानो हारयो हेम जुआर॥ मुरली नहिं सुनिअत व्रज में सुर नर मुनि नहिं करत है बार। सूरदास प्रभु के बिछुरे ते कोऊ नहीं झाँकते द्वार॥ २६७१ ॥



अथ ग्वालवचन। राग नट

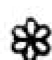
ग्वालन कही ऐसी जाइ। भए हरि मधुपुरी राजा बड़े वंश कहाइ॥ सूत मागध वदत विरदहि वरणि वसुद्यो तात। राजभूषण अंग भ्राजत अहिर कहत लजात॥ मात पितु वसुदेव देवै नंद यशुमति नाहिं। यह सुनत जल नैन ढारत

मींजि कर पछिताहि ॥ मिली कुबिजा मलै लैकै सो भई अरधंग। सूर प्रभु बस भए ताके करत नाना रंग ॥ २६७२ ॥



अथ गोपीवचन कुबिजाप्रति। राग गौरी

कुबिजा मिली कहौ यह बात। मात पिता बसुदेव देवकी मन दुख मुख हरषात ॥ सुन्दरि भई अंग परसत हीं करी सुहागिनि भारी। नृपति कान्ह कुबिजा पटरानी हँसति कहति ब्रजनारी ॥ सौतिशाल उर में अति शाल्यो नखशिख लौं भहरानी। सूरदास प्रभु ऐसेई भाई कहति परस्पर वानी ॥२६७३॥



(इस प्रकार बहुत से ताने देते-देते श्याम रङ्ग के विषय में गोपियाँ कहती हैं—)

राग मलार

सखी री श्याम सबै इक सार। मीठे वचन सुहाये बोलत अंतर जारनहार॥ भवँर कुरंग काग अरु कोकिल कपटिन की चटसार॥ कमलनयन मधुपुरी सिधारे मिटि गयो मंगलचार॥ सुनहु सखी री दोष न काहू जो विधि लिखो लिलार॥ यह करतूति इन्है की नाईं पूरव विविध विचार॥ उमँगी घटा नापि आवै पावसप्रेम की प्रीति अपार। सूरदास सरिता सर पोषत चातक करत पुकार॥ २६८७ ॥



राग मलार

सखी री श्याम कहा हितु जानै। कोऊ प्रीति करै कैसेहूँ वे अपनो गुण ठानै॥ देखो या जलधर की करनी वरषत पोषै आनै। सूरदास सरवस जो दीजै कारो कृतहि न मानै॥ २६८८॥

❀

राग सारंग

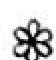
तिनहि न पतीजै री जे कृतहीन माने। ज्यों भँवरा रस चाखि चाहिकै तहाँ जाइ जहाँ नवतन जाने॥ कोयल काग पालि कहा कीन्हों मिले कुलहि जब भए सयाने। सोई घात भई नंदमहर की मधुबन ते जो आने॥ तब तो प्रेम बिचार न कीन्हों होत कहा अबके पछिताने। सूरदास जे मन के खोटे अवसर परे जाहिं पहिचाने॥ २६८९॥

❀

राग धनाश्री

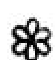
तब ते मिटे सब आनंद। या ब्रज के सब भाग संपदा लै जु गए नँदनंद॥ विह्वल भई यशोदा डोलत दुखित नंद उपनंद। धेनु नहीं पय स्रवति रुचिर मुख चरति नाहिं तृण कंद॥ विषम वियोग दहत उर सजनी बाढ़ि रहे दुखदंद। शीतल कौन करै री माई नाहिं इहाँ हरिचंद॥ रथ चढ़ि चले गहे

नहिं कोऊ चाहि रही मतिमंद। सूरदास अब कौन छोड़ावै परे विरह के फंद ॥ २६९० ॥



अथ नंदयशोदावचन परस्पर । राग रामकली

इक दिन नंद चलाई बात। कहत सुनत गुण राम कृष्ण के ह्वै आयो परभात। वैसहि भोर भयो यशुमति को लोचन जल न समात। सुमिरि सनेह विरह उर अंतर ढरि आवत ढरि जात ॥ यद्यपि वै वसुदेव देवकी हैं निज जननी तात। बार एक मिलि जाहु सूर प्रभु धाइहून के नात ॥ २६९४ ॥



राग गौरी

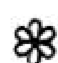
चूक परी हरि की सिवकाई। यह अपराध कहाँ लौं कहिए कहि कहि नंदमहर पछिताई ॥ कोमल चरण कमल कंटक कुश हम उन पै बन गाइ चराई। रंचक दधि के काज यशोदा बाँधे कान्ह उलूखल लाई। इंद्र कोपि जानि ब्रज राखे वरुन फाँस मान मेरी निठुराई। सूर अजहुँ नातो मानत है प्रेमसहित करै नंद दोहाई ॥ २६९५ ॥



राग सोरठ

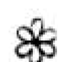
हरि की एकौ बात न जानी। कहौ कंत कहाँ तज्यो श्याम को अतिहि विकल पूछति नँदरानी ॥ अब ब्रज सूनो भयो गिरिधर बिनु गोकुल मणि घिलगानी। दशरथ प्राण तज्यो

छिन भीतर बिछुरत शारंगपानी ॥ ठाढ़ी रही ठगोरी डारी बोलत गदगद बानी। सूरदास प्रभु गोकुल तजि गए मथुरा ही मनमानी ॥ २६९६ ॥



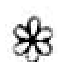
राग सारंग

लै आवहु गोकुल गोपालहि। पाँइन परिकै बहु बिनती करि बलि छलि बाह रसालहि ॥ अबकी बार नेक देखरावहु यहि ब्रज नंद आपने लालहि। गाइन गनत ग्वाल गोसुत सँग सिखवत वेणु रसालहि ॥ यद्यपि महाराज सुख संपति कौन गिने मोती मणि लालहि। तदपि सूर वे छिन न तजत हैं वा घुँघुची की मालहि ॥ २६९७ ॥



राग सोरठ

सराहों तेरो नंद हियो। मोहन सों सुत छाँड़ि मधुपुरी गोकुल आनि जियो ॥ कहा कहौं मेरे लाल लड़ैते जब तू बिदा कियो। जीवन प्रान हमारे ब्रज को बसुदेव छीनि लियो ॥ कह्यो पुकारि पार पचिहारी बरजत गमन कियो। सूरदास प्रभु श्यामलाल धन ले परहाथ दियो ॥ २६९८ ॥



राग बिलावल

यद्यपि मन समझावत लोग। शूल होत नवनीत देखि मेरे मोहन के मुख योग ॥ निशिबासर छतियाँ लै लाऊँ बालक

लीला गाऊँ। वैसे भाग बहुरि फिर ह्वै हैं मोहन मोद खवाऊँ॥ जा कारण मुनि ध्यान धरैं शिव अंग विभूति लगावै। सो बालकलीला धरि गोकुल ऊखल साथ बँधावै॥ बिदरत नहीं बज्र को हिरदय हरिवियोग क्यों सहिए। सूरदास प्रभु कमलनैन बिनु कौने विधि ब्रज रहिए॥ २६९९॥

राग कान्हरो

नंदब्रज लीजै ठोंकि बजाइ। देहु बिदा मिलि जाहिं मधु-पुरी जहँ गोकुल के राइ॥ नैनन पंथ गयो क्यों सूझो उलटि दियो जब पाइ। रघुपति दशरथ सुनी है पर मरिबे गुण गाइ॥ भूमि मशान विदित ए गोकुल मनहु धाइ धाइ खाइ। सूरदास प्रभु पास जाहिं हम देखैं रूप अघाइ॥ २७००॥

❀

राग सोरठ

माई हौं किन संग गई। हो ए दिन जानत ही बूड़ी लोगन की सिखई॥ मो को वैरी भए कुटुँब सब फेरि फेरि ब्रज गाड़ी। जो हौं कैसेहु जान पावती तौ कत आवत छाँड़ी॥ अबहौं जाइ यमुनजल बहिहौं कहा करौं मोहिं राखी। सूर-दास वा भाइ फिरत हौं ज्यों मधु तोरे माखी॥ २७०१॥

❀

राग मलार

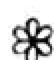
हौं तौ माई मथुरा ही पै जैहौं। दासी ह्वै वसुदेवराइ की दरशन देखत रैहौं॥ राखि राखि एते दिवसन मोहि कहा कियो तुम नीको। सोऊ तौ अक्रूर गए लै तनक खिलौना जी को। मोहि देखिकै लोग हँसेंगे अरु किन कान्ह हँसै। सूर अशीश जाइ देहौं जिनि न्हातहु बार खसै॥ २७०२॥



(यशुमति ने पंथी के हाथ मथुरा को संदेसा भेजा —)

राग सारंग

पंथी इतनी कहियो बात। तुम बिनु इहाँ कुँवरवर मेरे होत जिते उतपात॥ वकी अघासुर टरत न टारे बालक बनहि न जात। ब्रजपिंजरी रूँधि मानों राखे निकसन को अकुलात॥ गोपी गाय सकल लघु दीरघ पीत वरण कृश गात। परम अनाथ देखियत तुम विनु केहि अवलंबिये प्रात॥ कान्ह कान्ह कै टेरत तब धौं अब कैसे जिय मानत। यह व्यवहार आजु लौं है ब्रज कपट नाट छल ठानत॥ दसहू दिशि ते उदित होत है दावानल के कोट। आँखिन मूँदि रहत सन्मुख ह्वै नाम कवच दै ओट॥ ए सब दुष्ट हते अरि जेते भए एक ही पेट। सत्वर सूर सहाइ करौ अब समुझि पुरातन हेट॥ २७०३॥



राग सारंग

कहियो श्याम सों समुझाइ । वह नातो नहिं मानत मोहन मनौ तुम्हारी धाइ ॥ एक वार माखन के काजे राखे मैं अटकाई । वाको बिलग मानो जिनि मोहन लागत मोहिं वलाई ॥ बारहि वार इहै लव लागी गहे पथिक के पाँइ । सूरदास या जननी को जिय राखौ वदन देखाइ ॥ २७०४ ॥



राग बिलावल

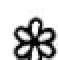
यद्यपि मन समुझावत लोग । शूल होत नवनीत देखि मेरे मोहन के मुखयोग ॥ प्रातकाल उठि माखन रोटी को बिन माँगे देहै । अब उहि मेरे कुँवर कान्ह को छिन छिन अंकम लैहै ॥ कहियो पथिक जाइ घर आवहु राम कृष्ण दोउ भैया । सूर श्याम कत होत दुखारी जिनके मो सी मैया ॥ २७०५ ॥



राग रामकली

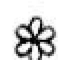
मेरो कहा करत ह्वै है । कहियहु जाइ वेगि पठवहिं गृह गाइनि को द्वैहै ॥ दीजै छाँड़ि नगर वारी सब प्रथम वोरि प्रतिपारो । हमहूँ जिय समुझै नहिं कोऊ तुम तजि हितू हमारो ॥ आजुहि आजु काल्हि काल्हिहि करि भलो जगत यश लीन्हों । आजहुँ काल्हि कियो चाहत हो राज्य अटल करि दीन्हों ॥ परदा सूर वहुत दिन चलती दुहुँहुनि फबती

लूटि । अंतहु कान्ह आयहै गोकुल जन्म जन्म की चूटि ॥ २७०६ ॥



राग रामकली

संदेसो देवकी सों कहियो। हौं तौ धाइ तुम्हारे सुत की मया करति रहियो॥ यद्यपि टेव तुम जानत उनकी तऊ मोहिं कहि आवै। प्रातहि उठत तुम्हारे कान्ह को माखन रोटी भावै॥ तेल उबटनो अरु तातो जल ताहि देखि भजि जाते। जोइ जोइ माँगत सोइ सोइ देती क्रम क्रम करि करि न्हाते॥ सूर पथिक सुनि मोहिं रैनि दिन बढ़्यौ रहत उर सोच। मेरो अलक लड़ैतो मोहन ह्वै है करत सँकोच॥ २७०७ ॥



राग सोरठ

मेरो कान्ह कमलदललोचन। अबकी बेर बहुरि फिरि आवहु कहाँ लगे जिय सोचन॥ यह लालसा होत जिय मेरे बैठी देखत रैहौं। गाइ चरावन कान्ह कुँवर सों भूलि न कबहूँ कैहौं॥ करत अन्याय न बरजौं कबहूँ अरु माखन की चोरी। अपने जियत नैन भरि देखौं हरि हलधर की जोरी। एक बेर ह्वै जाहु इहाँ लौं अनत कहूँ के उत्तर। चारिहु दिवस आनि सुख दीजै सूर पहुनई सूतर॥ २७०८ ॥



अथ पंथीवाक्य देवकी प्रति। राग आसावरी

हौं इहाँ गोकुलहीं ते आई। देवकी माई पाँइ लागति हौं यशुमति इहाँ पठाई॥ तुमसों महरि जुहार कह्यो है कहहु तौ तुमहिं सुनाऊँ। बारक बहुरि तुम्हारे सुत को कैसेहुँ दरशन पाऊँ॥ तुम जननी जग विदित सूर प्रभु हौं हरि को हित-धाइ। जो पठवहु तौ पाहुन नाते आवहिं बदन दिखाइ॥२७०९॥



राग सारंग

जो परिराखत हौ पहिचानि। तौ अबकै वह मोहन मूरति मोहिं देखावहु आनि॥ तुम रानी वसुदेव गेहनी हौं गँवारि व्रजवासी। पठै देहु मेरो लाड़लड़ैतौ बारौ ऐसी हाँसी॥ भली करी कंसादिक मारे सब सुरकाज किए। अब इन गैयन कौन चरावै भरि भरि लेत हिए॥ खान पान परिधान राज-सुख जो कोउ कोटि लड़ावै। तदपि सूर मेरो बारो कन्हैया माखन ही सचुपावै॥ २७१०॥



राग सोरठ

मेरे कुँवर कान्ह बिनि सब कछु वैसेहि धरयो रहै। को उठि प्रात होत लै माखन को कर नेत गहै॥ सूने भवन यशोदा सुत के गुनि गुनि शूल सहै। दिन उठि घेरतही घर ग्वारनि उरहन कोउ न कहै॥ जो व्रज में आनंद हो तो मुनि

मनसाहु न गहै। सूरदास स्वामी बिनु गोकुल कौड़ीहू न लहै॥ २७११॥



(इधर गोपियाँ कृष्ण के विरह में व्याकुल हो रहीं और परस्पर कहने लगीं—)

राग नट

अब तौ ऐसेई दिन मेरे। कहा करौं सखि दोष न काहू हरिहित लोनन फेरे॥ मृदुमद मलय कपूर कुमकुमा ए सब संतत चेरे। मादप वन शशि कुसुम सकोमल तेउ देखियत जु करेरे॥ वन वन वसत मोर चातक पिक आपुन दिए वसेरे। अव सोइ वकत जाहि जोइ भावै बरजे रहत न मेरे॥ जे द्रुम सींचि सींचि अपने कर कियो वढ़ाय बड़ेरे। तिन सुनि सूर किसल गिरिवर भए आनि नैन मग घेरे॥ २७२०॥



राग सारंग

बिनु गोपाल बैरिनि भई कुंजैं। जे वै लता लगत तनु शीतल अव भई विषम अनल की पुंजैं॥ वृथा वहुत यमुनातट खगरो वृथा कमलफूलनि अलि गुंजैं। पवन पानि घनसारि सुमन दै दधिसुत किरनि भानु भै भुंजैं॥ ए ऊधो कहियो माधो सों मदन मारि कीन्हीं हम लुंजैं। सूरदास प्रभु तुम्हरे दरश को मग जोवत अँखियन भई धुंजैं॥ २७२१॥



राग कान्हरो

सोचति राधा लिखति नखन में वचन न कहत कंठ जल तास। छति पर कमल कमल पर कदली पंकज कियो प्रकास॥ तापर अलि सारंग पर सारंग प्रति सारंग रिपु लै कियो वास। तहाँ अरिपंथ पिता युग उदित वारिज विविध रंग भयो अभास॥ सारंग मुख ते परत अंबु ढरि मन शिव पूजति तपति विनास। सूरदास प्रभु हरि विरहा रिपु दाहत अंग दिखावत वास॥२७२३॥



राग नट

मैं सब लिखि शोभा जु बनाई। सजल जलद तन वसन कनक रुचि उर बहुदाम रु राई॥ उन्नत कंध कटि खीन विशद भुज अँग अँग प्रति सुखदाई। सुभग कपोल नासिका नैन छवि अलक लिहित धृतपाई॥ जानति हीय हलोल लेख करि ऐसेहि दिन विरमाई। सूरदास मृदु वचन श्रवण को अति आतुर अकुलाई॥ २७२४॥



राग गौरी

सुरति करि वहाँ की बात रोइ दियो। पंथी एकु देखि मारग में राधा बोलि लियो॥ कहि धौं वीर कहाँ ते आयो हम जु प्रणाम कियो। पालागों मन्दिर पगु धारौ सुनि दुख यान

त्रियो ॥ गदगद कंठ हियो भरि आयो वचन कह्यो न दियो । सूर श्याम अभिराम ध्यान मन भरभर लेत हियो ॥ २७२५ ॥



राग मलार

कहियो पथिक जाइ हरि सों मेरो मन अटको नैनन के लेखे । इहै दोष दै दै झगरत है तव निरखत मुख लगी क्यों न मेखे ॥ कैतो मोहिं वताय दवकियो लगी पलक जड़ जाके पेखे । ते अब अव इन पै भरि चाहत बिधि जो लिखे दरशन सुख रेखे ॥ यहि विधि अनुदिन जुरति जतन करि गनत गए अँगुरिन अवसेखे ; सूरदास मुनि इनि झगरनि ते नहिं चित घटत वदन विन देखे ॥ २७२६ ॥



राग इमन

नाथ अनाथन की सुधि लीजै । गोपी गाइ ग्वाल गोसुत सव दीन मलीन दिनहि दिन छीजै ॥ नैन सजल धारा बाढ़ी अति वूड़त व्रज किन कर गहि लीजै ॥ इतनी विनती सुनहु हमारी बारकहू पतियाँ लिखि दीजै ॥ चरण कमल दरसन नवनौका करुणासिंधु जगत यश लीजै । सूरदास प्रभु आस मिलन की एक वार आवन व्रज कीजै ॥ २७२७ ॥



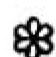
राग सारंग

दिशिप्रति कालिंदी अतिकारी। अहो पथिक कहियौ उन हरि सों भई विरहज्वरजारी॥ मन पर्यंक ते परी धरणि धुकि तरङ्ग तलफ नित भारी। तट बारू उपचार चूरजल परी प्रसेद पनारी॥ विगलित कच कुच कास कुलिन पर पंकजु काजल सारी। मन में भ्रमर ते भ्रमत फिरत है दिशि-दिशि दीन दुखारी। निशिदिन चकई वादि वकत है प्रेममनोहर हारी। सूरदास प्रभु जोई यमुनगति सोइ गति भई हमारी॥ २७२८॥



राग सारंग

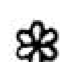
परेखो कौन वोल को कीजै। ना हरि जाति न पाँति हमारी कहा मानि दुख लीजै॥ नाहिन मोर चंद्रिका माथे नाहिन उर बनमाल। नहिं सोभित पुहुपन के भूषण सुंदर श्यामतमाल॥ नंदनंदन गोपीजनवल्लभ अब नहीं कान्ह कहावत। वासुदेव यादव कुलदीपक बंदीजन वर भावत॥ बिसरयो सुख नातो गोकुल को और हमारे अंग। सूर श्याम वह गई सगाई वा मुरली के संग॥ २७२९॥



राग सारंग

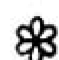
वटाऊ होहिं न काके मीत। संग रहत सिर मेलि ठगौरी हरत अचानक चीत॥ मोहे नैन रूप दरशन के श्रवण मुर-

लिका गीत। देखत ही हरि ले जु सिधारे बाँधि पछोरी पीत ॥ याही ते झुकति इहै मग चितवति सुख जु भए विपरीत। सूरदास बरु भली पिंगला आसा तजि परतीत ॥ २७३० ॥



राग मलार

कहा परदेसी को पतियारो। पीछे ही पछिताहि मिलहुगे प्रीति बढ़ाइ सिधारो ॥ ज्यों मृगनाद नाद के बींधे लाग्यो बान बिसारो। प्रीति के लिए प्राण बस कीनो हरि तुम यहै बिचारो ॥ बलि अरु बालि सुपनखा बपुरी हरि ते कहाँ दुरायो। सूरदास प्रभु जानि भले है भरयो भरायो डरायो ॥ २७३१ ॥



राग मलार

कहा परदेसी को पतिआरो। प्रीति बढ़ाय चले मधुवन को बिछुरि दियो दुखभारो ॥ ज्यों जलहीन मीन तरफत ऐसे बेकल प्राण हमारो। सूरदास प्रभु के दरसन बिनु ज्यों बिनु दीपक भौन अँधियारो ॥ २७३२ ॥



राग आसावरी

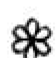
सखी री हरि को दोष जनि देहु। ताते मन इतनो दुख पावत मेरोई कपट सनेहु ॥ विद्यमान अपने इन नैननि सूनो देखति गेहु। तदपि सखी ब्रजनाथ बिना उर फटि न होत बड़

वेहु ॥ कहि कहि कथा पुरातन सजनी अब जिन अंतहि लेहु। सूरदास तन योग करौंगी ज्यों फिरि फागुन मेहु ॥ २७३३ ॥



राग मलार

अब कछु औरहि चाल चली। मदनगोपाल विना या तनु की सवै बात बदली ॥ गृह कंदरा समान सेज भई चाहि सिंहहू थली। शीतल चंद्र सुतौ सखि कहियत तिनहूँ अधिक जली ॥ मृगमद मलय कपूर कुमकुमा सींचति आनि अली। एकन फुरत बिरह ज्वर ते कछु लागति नाहिं भली ॥ वह ऋतु अमृत लता सुनि सूरज अव विषफलनि फली। हरि विधु मुख नहिं नहिं नै फूलति मनसा कुमुद कली ॥ २७३४ ॥



राग सारंग

इहि विरियाँ बन ते व्रज आवते। दूरहि ते वह वैन अधर धरि वारंवार बजावते ॥ कबहुँक काहू भाँति चतुर चित अति ऊँचे सुर गावते। कबहुँक लै लै नाम मनोहर धवरी धेनु बुलावते ॥ इहि विधि वचन सुनाय श्याम घन मुरछे मदन जगावते। आगम सुख उपचार विरह ज्वर वासर ताप नसा-वते ॥ रुचि रुचि प्रेम पियासे नैनन क्रम क्रम बलहिं बढ़ा-वते। सूरदास स्वामी तिहि अवसर पुनि पुनि प्रगट करावते ॥ २७३५ ॥



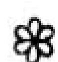
राग सोरठ

कहा दिन ऐसे ही जैहैं। सुन सखि मदनगोपाल अब किन ग्वालन सँग रैहैं ॥ कबहूँ जात पुलिन यमुना के बहु बिहार बिधि खेलत। सुरत होत सुरभी सँग आवत बहुत कठिन करि झेलत ॥ मृदु मुसुकानि आनि राखो पिय चलत कह्यो है आवन। सूर सो दिन कबहूँ तौ ह्वैहै मुरली शब्द सुनावन ॥ २७५२ ॥



राग मलार

श्याम सिधारे कौने देस। तिनको कठिन करेजो सखो री जिनको पिय परदेस ॥ उन ऊधो कछु भलो न कीन्हीं कौन तजन को वेस। छिन बिनु प्रान रहत नहिं हरि बिन निशि-दिन अधिक अँदेस ॥ अतिहि निठुर पतियाँ नहिं पठई काहू हाथ सँदेस। सूरदास प्रभु यह उपजत है धरिए योगिनि वेस ॥ २७५३ ॥



राग मलार

गोपालहि पावौं धौं केहि देश। शृंगी मुद्रा कनक खपर करिहौं योगिन भेष ॥ कंथा पहिरि विभूति लगाऊँ जटा बँधाऊँ केश। हरि कारण गोरखहि जगाऊँ जैसे स्वाँग महेश ॥

तन मन जारों भस्म चढ़ाऊँ बिरहिन गुरु उपदेश। सूर श्याम बिनु हम हैं ऐसी जैसे मणि बिन शेष ॥ २७५४ ॥



राग केदारो

फिर ब्रज आइए गोपाल। नंद नृपति-कुमार कहिहैं अब न कहिहैं ग्वाल॥ मुरलिका सुर सप्त दिशि दिशि चले निशान बजाइ। दिग्विजय को युवति मंडल भूप परिहैं पाइ॥ सुरभिसेन सु सखा भट सँग उठैगी खुर रैनु। आतपत्र मयूर चंद्रिका लसति है रवि ऐनु॥ सदस पति मधुकरनि करवर मदन आयसु पाइ। द्रुम लता वन कुसुम थानकु वसन कुटी बनाइ॥ सकल खग गण पैक पायक ँवरिया प्रतिहार। समै सुख गोविंद ब्रज को कहत र विचार ॥२७५५॥



राग जैतश्री

फिरिकै बसो गोकुलनाथ। अब न तुमहिं जगाय पठवैं गोधनन के साथ॥ बरजैं न माखन खात कबहूँ दह्यो देत लुढ़ाइ। अब न देहिं उराहनों यशुमतिहि आगे जाइ॥ दौरि दामन देहिंगी लकुटी यशोदा पानि। चोरी न देहिं उघारिकै अवगुण न कहिहैं आनि॥ कहिहैं न चरणन देन जावक गुहन वेनी फूल। कहिहैं न करन शृंगार कबहीं वसन यमुना-कूल॥ करिहैं न कबहीं मान हम हठि हैं न माँगत दान। कहिहैं न मृदु मुरली बजावन करन तुमसों गान॥ देहु दरशन

नंदनंदन मिलनहूँ की आस । सूर हरि के रूप कारन मरत लोचन प्यास ॥ २७५६ ॥



राग जैतश्री

हरि सों प्रीतम क्यों बिसराहि । मिलन दूरि मन बसत चंद्र पर चित चकोर पछताहि ॥ जल में रहहि जलहि ते उपजहि जलही विन कुँभिलाहि । जल तजि हंस चुगै मुक्ता-फल मीन कहा उड़ि जाहि ॥ सोइ गोकुल गोवर्धन सोई सोइ किन करहि अब छाहि । प्रगट न प्रीति करै परदेसी सुख केहि देस समाहि ॥ धरणी दुखित देखि वादर अति वर्षाॠतु बरषाहिं । सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलन विन दुख क्यों हृदय समाहिं ॥ २७५७ ॥



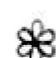
राग जैतश्री

वारक जाइवो मिलि माधो । को जानै तनु छूटि जाइगो शूल रहै जिय साधो ॥ पहुनेहु नंद वबा के आवहु देखि लेउँ पल आधो । मिलेही में विपरीति करी विधि होत दरश को वाधो ॥ सो सुख शिव सनकादि न पावत सो सुख गोपिन लाधो । सूरदास राधा विलपति है हरि को रूप अगाधो ॥ २७५८ ॥



राग धनाश्री

लोचन लालच ते न टरैं। हरिमुख ए रंग संग विधे दाधौ फिरैं जरैं॥ ज्यों मधुकर रुचि रच्यो केतकी कंटक कोटि अरै। तैसोई लोभ तजत नहिं लोभी फिरि फिरि फिरी फिरै॥ मग ज्यों सहत सहज सरदारन सन्मुख ते न टरै। जानत आहि हते तनु त्यागत तापर हितहि करै॥ समुझि न परै कवन सच पावत जीवत जाइ मरै। सूर सुभट हठ छाँड़त नाहीं काटो शीश लरै॥ २७७० ॥



राग सारंग

लोचन चातक जीवो नहिं चाहत। अवधि गए पावस की आसा क्रम क्रम करि निरवाहत॥ सरिता सिंधु अनेक अवर सखी विलसत पति सजन सनेह। ए सब जल यदुनाथ जलद विनु अधिक दहत हैं देह॥ जब लगि नहिं वरपत व्रज ऊपर नौघन श्याम शरीर। तौ इह तृपा जाय क्यों सूरज आनि ओस के नीर॥ २७७१ ॥



राग गौरी

कहा इन नैनन को अपराध। रसना रटत सुनत यश श्रवण इतनी अगम अगाध॥ भोजन किये विनु भूँख क्यों भाजै विन खाए सब स्वाद। इकटक रहत छुटत नहिं कबहूँ हरि देखन की साध॥ ये दृग दुखी विना वह मूरति कहो कहा

अब कीजै। एक वेर व्रज आनि कृपा करि सूर सो दरशन दीजै ॥ २७७८ ॥



राग मलार

चितवतही मधुवन तन जात। नैनन नींद परति नहिं सजनी सुनि सुनि बात मन अकुलात ॥ अब ए भवन देखिअत सुनो धाइ धाइ हमको व्रज खात। कवन प्रतीति करैं मोहन की जेहि छाँड़े निज जननी तात ॥ अनुदिन नैन तपत दरशन को हरदि समान देखिअत गात। सूरदास स्वामी के बिछुरे ऐसे भए हमारे धात ॥ २७७९ ॥



राग मलार

देख सखी उत है वह गाउँ। जहाँ वसत नँदलाल हमारे मोहन मथुरा नाउँ ॥ कालिंदी के कूल रहत हैं परम मनोहर ठाउँ। जो तनु पंख होइ सुन सजनी आजु अबहिं उड़ि जाउँ ॥ होनो होउ होउ सो अबहीं यहि व्रज अन्न न खाउँ। सूरदास नँदनंदन सों रति लोगन कहा डराउँ ॥ २७८० ॥



राग गौरी

मथुरा के द्रुम देखिअत न्यारे। वहाँ श्याम हमारे प्रीतम चितवत लोचन हारे ॥ कितिक बीच संदेहु दुर्लभ सुनियत टेर

पुकारे। तुव गुण सुमिरि सुमिरि हम मोहन मदन बान उर मारे॥ तुम बिन श्याम सबै सुख भूलो गृह बन भए हमारे। सूरदास प्रभु तुम्हरे दरश बिनु रैनि गनत गए तारे॥ २७८१॥



राग कान्हरो

मैं जान्यो री आए हैं हरि चौंकि परं ते पछितानी। इते मान तन तलफत वहि ते जैसे मीन तट बिन पानी॥ सखो सुदेह ते जरति विरह ज्वर तनु पुनि पुनि नहिं प्रकृत्यो आनी। कहा करौं अपथि भई मिलि वढ़ी व्यथा दुःख दुहरानी॥ पठवो पथिक सब समाचार लिखि विपति विरह वपु अकुलानी। सूरदास प्रभु तुम्हरे दरश बिना कैसे घटत कठिन कानी॥ २७८७॥



राग मलार

ज्यों जागी तो कोऊ नाहीं अंत लगी पछितान। हौं जानौं साँचे मिले माधौ भूलो यहि अभिमान॥ नींद माहिं मुरझाई रहिहो प्रथम पंच संधान। अब उर अंतर मेरी माई सपने छुटी छलिवान॥ सूर सकत जैसे लछिमन तन विह्वल होइ मुरझान। ल्याउ सजीवन मूर श्याम को तौ रहिहैं ए प्रान॥ २७८८॥



राग कल्याण

हरि बिछुरन निशि नींद गई री। बन प्रिय विरह शिली-मुख मधुपति वचननि हौं अकुलाई री॥ वह जु हुती प्रतिमा समीप की सुख संपति दुरंत जई री। ताते भर हरि सुन री सजनी सेज सलिल दृगनीरमई री॥ अबऊ अधार जु प्राण रहत हैं इनिवसहिन मिलि कठिन ठई री। सूरदास प्रभु सुधा-रस बिना भई सकल तनु बिरह रई री॥ २७८९॥

❀

राग केदारो

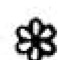
बहुरयो भूलि न आँखि लगी। सुपनेहु के सुख न सहि सकी नींद जगाइ भगी॥ बहुत प्रकार निमेष लगाए छूटि नहीं शठगी। जनु हीरा हरि लिये हाथ ते ढोल बजाइ ठगी॥ कर मीड़ति पछिताति विचारति इहि विधि निशा जगी। वह मूरत वह सुख दिखरावै सोई सूर सगी॥ २७९०॥

❀

राग धनाश्री

मति कोऊ प्रीति के फंद परै। सादर संत देखि मन मानौ पेखै प्राण हरै॥ या पतंग कहा कर्म कीन्हों जीव को त्याग करै। अपने मरबे ते न डरत है पावक पैठि जरै॥ भौ करत नहीं ताहि निपाते केतिक प्रेम धरै। शारँग सुनत नाद रस मोहयो मरिवे ते न डरै॥ जैसे चकोर चंद्र को चाहत

जल बिन मीन मरै। सूरज प्रभु सों ऐसे करि मिलिए तौ कहा का न सरै ॥ २८०८ ॥



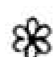
राग सारंग

प्रीति करि काहू सुख न लह्यो। प्रीति पतंग करी दीपक सों आपै प्राण दह्यो ॥ अलिसुत प्रीति करी जलसुत सों संपति हाथ गह्यो। शारँग प्रीति करी जो नाद सों सन्मुख बान सह्यो ॥ हम जो प्रीति करी माधौ सों चलत न कछू कह्यो। सूरदास प्रभु बिनु दुख दूनो नैनन नीर बह्यो ॥ २८०९ ॥



राग मलार

प्रीति तो मरनोऊ न बिचारै। प्रीति पतंग ज्योति पावक ज्यों जरत न आपु सँभारै ॥ प्रीति कुरंग नाद स्वर मोहित बधिक निकट ह्वै मारे। प्रीति परेवा उड़त गगन ते गिरत न आपु सँभारे ॥ सावन मास पपीहा बोलत पिय पिय करि जो पुकारै। सूरदास प्रभु दरशन कारन ऐसी भाँति बिचारै॥२८१०॥



राग मलार

जिन कोउ काहू के बस होहि। ज्यों चकई दिनकर बस डोलति मोहिं फिरावत मोहि ॥ हम तौ रीझि लट्टू भई लालन महाप्रेम तिय जानि। वंध अवंध अमति निशिवासर को सुरझावति आनि ॥ उरझे संग अंग अंग प्रति विरह वेलि

की नाईं। मुकुलित कुसुम नयन निद्रा तजि रूपसुधा सिय-राई॥ अति आधीन हीन मति व्याकुल कहा लौं कहौं बनाई। ऐसी प्रीति करी रचना पर सूरदास बलि जाई॥ २८११॥



राग नट

दिन ही दिन को सहै वियोग। यह शरीर नाहिन मेरो सखी इहै विरह ज्वर योग॥ रचि स्रक कुसुम सुगंध सेज सजि बसन कुमकुमा बोरि। नलनी दलनि दूरि करि उन ते कंचुकि के बँद छोरि॥ बन बन जाइ मोर चातक पिक मधु-बन टेरि सुनाई। उचित चंद चंदन चढ़ाइ उर त्रिविध समीर बहाई॥ रटि मुख नाम श्यामसुंदर को तोहिं सुनाइ सुनाई। तो देखत तनु होमि मदन मुख मिलौ माधवहि जाई॥ सूर-दास स्वामी कृपालु भए जानि युवति रस रीति। तिहि छिन प्रगट भए मनमोहन सुमिरि पुरातन प्रीति॥ २८१२॥



राग धनाश्री

बहुरि न कबहूँ सखी मिलें हरि। कमल-नयन के कारण सजनि अपनो सो जतन रही बहुतो करि॥ जेहि जेहि पथिक जात मधुवन तन तिनहुँ सों व्यथा कहति पाँइनि परि। काहु न प्रगट करी यदुपति सों दुसह दुरासा गई अवधि ढरि॥ धीर न धरति प्रेम व्याकुल चित लेत उसाँस नीर लोचन

भरि। सूरदास तनु थकित भई अब कृष्णविरह सों पर न सकति मरि ॥ २८१३ ॥

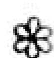
पावस-समय-वर्णन। राग मलार

ब्रज ते पावस पै न टरी। शिशिर वसंत शरद गत सजनी बीती औधि करी॥ उनै उनै घन बरषत चष उर सरिता सलिल भरी। कुमकुम कज्जल कीच बहै जनु कुचयुग पारि परी॥ ताहू में प्रगट विषम ग्रीषम ऋतु इतयो ताप मरी। सूरदास प्रभु कुमुद चंद्र बिनु विरहा तरनि जरी॥ २८१४ ॥



राग मलार

अब वर्षा को आगम आयो। ऐसे निठुर भयो नँदनंदन संदेसो न पठायो॥ बादर घोर उठे चहुँ दिशि ते जलधर गरजि सुनायो। एकै शूल रही मेरे जिय बहुरि नहीं ब्रज छायो॥ दादुर मोर पपीहा बोलत कोकिल शब्द सुनायो। सूरदास के प्रभु सों कहियो नैनन है झर लायो॥ २८१५ ॥



राग मलार

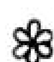
ब्रज पर बदरा आए गाजन। मधुवन को पठए सुन सजनी फौज मदन लग्यो साजन॥ ग्रीवारंध्र नैन चातकजल पिक मुख बाजे बाजन। चहुँ दिसि ते तनु विरहा घेरो अब कैसे पावतु भाजन॥ कहियत हुते श्याम परपीरक आए

शंकर के काजन। सूरदास श्रीपति की महिमा मथुरा लागे राजन ॥ २८१७ ॥



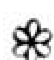
राग मलार

देखियत चहुँ दिशि ते घन घेरो। मानो मत्त मदन के हथियन वल करि बंधन तोरो ॥ श्याम सुभग तनु चुअत गंड-मद वरषत थोरे थोरे। रुकत न पौन महावतहू पै मुरत न अंकुस मोरे॥ वल वेनी वल निकसि नयन जल कुच कंचुकि बूँद वोरे। मनों निकसि बगपाँति दाँत उर अवधि सरोवर फोरे ॥ तब तेहि समै आनि ऐरापति व्रजपति सों कर जोरे। अब सुनि सूर कान्ह के हरि विन गरत गात जैसे वोरे ॥ २८१८ ॥



राग मलार

व्रज पर सजि पावस दल आयो। धुरवा धुंधि बढ़ी दसहूँ दिसि गर्जि निसान वजायो ॥ चातक मोर इतर पै दागन करत अवाजैं कोयल। श्याम घटा गज अशन वाजि रथ चित वगपाँति सजोयल ॥ दामिनि कर करवार बूँद शर इहि विधि साजे सैन। निधरक भयो चल्यो व्रज आवत अग्र फौजपति मैन ॥ हम अवला जानिकै तुम वल कहौ कौन विधि कीजै। सूर श्याम अवके इहि औसर आनि राखि व्रज लीजै ॥ २८१९ ॥



राग मलार

ऐसे बादर ता दिन आए जा दिन श्याम गोवर्धन धारयो। गरजि गरजि घन बरसन लागे मनो सुरपति निज वैर सँभारयो॥ सबै संयोग जुरो है सजनी हठि करि घोष उजारयो। अब को सात दिवस राखैगो दूरि गयो व्रज को रखवारयो॥ जब बल-राम हुते या व्रज में काहू देव न ऐसो डारयो। अब यह भूमि भयानक लागै विधिना बहुरि कंस अवतारयो॥ अब इह सुरति करै को हमारी या व्रज कोऊ नाहिं हमारयो। सूरदास अति-विकल विरहिनी गोपिन पिछलो प्रेम सँभारयो॥ २८३२॥



राग मलार

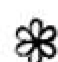
बहुरि वन बोलन लागे मोर। कर संभार नंदनंदन की सुनि बादर को घोर॥ जिनको पिय परदेस सिधारो सो तिय परी निठोर। मोहिं बहुत दुख हरि बिछुरे को रहत विरह को जोर॥ चातक पिक चकोर पपीहा ए सबही मिलि चोर। सूरदास प्रभु वेगि न मिलहु जनम परत है वोर॥ २८३७॥



राग मलार

यहि वन मोर नहीं ए कामबान। विरह खेद धनु पुहुप भृंग गुन करिल तरैया रिपुसमान॥ लयो घेरि मनों मृग चहुँ दिशि ते अचूक अहेरी नहिं अजान। पुहुपसेन घन रचित युगल तनु क्रीड़त कैसो वन निधान॥ महामुदित मन मदन

प्रेमरस उमँगि भरे मैं मैन जान। इहि अवस्था मिले सूरदास प्रभु बदरयो नानागदै जीवनदान ॥ २८३८ ॥



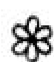
राग मलार

सखी री चातक मोहिं जियावत। जैसेहि रैनि रटति हौं पिय पिय तैसेही वह पुनि पुनि गावत ॥ अतिहि सुकंठ दाहु प्रीतम को तारु जीभ मन लावत। आपु न पीवत सुधारस सजनी विरहिनि बोलि पिआवत ॥ जो ए पंछि सहाय न होते प्राण बहुत दुख पावत। जीवन सफल सूर ताही को काज पराए आवत ॥ २८४५ ॥



राग सारंग

चातक न होइ कोउ बिरहिनि नारि। अजहूँ पिय पिय रजनि सुरति करि झूठेहि माँगत वारि ॥ अति कृश गात देखि सखि याको अहनिशि वाणी रटत पुकारि। देखौ प्रीति बापुरे पशु की आन जनम मानत नहिं हारि ॥ अब पति बिनु ऐसो लागत यह ज्यों सरवर शोभित बिन वारि। त्योंही सूर जानिए गोपी जो न कृपा करि मिलहु मुरारि ॥ २८४६ ॥



राग मलार

बहुत दिन जीवो पपीहा प्यारो। वासर रैनि नाँव लै बोलत भयो विरह ज्वर कारो ॥ आपु दुखित पर-दुखित जानि

जिय चातक नाउँ तुम्हारो। देखो सकल विचारि सखी जिय बिछुरन को दुख न्यारो॥ जाहि लगै सोई पै जानै प्रेम बाण अनियारो। सूरदास प्रभु स्वाति बूँद लगि तज्यो सिंधु करि खारो॥ २८४८॥



राग मलार

हौं तौ मोहन के विरह जरी रे तू कत जारत। रे पापी तू पंखि पपीहा पिउ पिउ पिउ अधराति पुकारत॥ सब जग सुखी दुखी तू जल बिनु तऊ न तनु की बिथहि विचारत। कहा कठिन करतूति न समुझत कहा मृतक अबलनि शर मारत॥ तू शठ बकत सतावत काहू होत उहै अपने उर आरत। सूर श्याम बिनु ब्रज पर बोलत हठि अगिलेऊ जनम बिगारत॥ २८४९॥



राग मारू

शरद समैहू श्याम न आए। को जानै काहे ते सजनी कहुँ विरहिन बिरमाए॥ अमल अकास कास कुसुमिन छिति लच्छण स्वाति जनाए। सर सरिता सागर जल उज्ज्वल अलिकुल कमल सुहाए॥ अहि मयंक मकरंद कंद हति दाहक गरल जिवाए। त्रिय सब रंग संग मिलि सुंदरि रचि सचि सींच सिराए॥ सूनी सेज तुपार जमत

चिरहास चंदन वाए। अबलहि आस सूर मिलिबे की भए व्रजनाथ पराए॥ २८५४॥



(चन्द्रमा की ओर देखकर गोपी कहती है—)

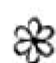
राग कान्हरे

छूटि गई शशि शीतलताई। मनु मोहि जारि भसम कियो चाहत साजत मनो कलंक तनु काई॥ याही ते श्याम अकास देखियै मानो धूम रह्यो लपटाई। ता ऊपर दै दै देत किरनि उर उडुगण काउनै चढ़ि इत आई॥ राहु केतु दोउ जोरि एक करि कहि इहि समै जरावहि पाई। ग्रसे ते न पचि जात पाप में कहत सूर बिरहिनि दुखदाई॥ २८५५॥



राग केदारो

यह शशि शीतल काहे ते कहियत। मीनकेत अंबुज आनंदित ताते ताहित लहियत॥ बिरहिनि अरु कमलनि त्रासत कहुँ अपकारी रथ नहिंयत। सूरदास प्रभु मधुवन गौने तो इतनो दुख सहियत॥ २८५६॥



राग मलार

कोऊ बरजो री या चंद्रहि। अतिही क्रोध करत हम ऊपर कुमुदिनि कुल आनंदहि॥ कहा कहों वर्षा रवि तमचर कमल-वलाहक कारे। चलत न चपल रहत थिरकै रथ बिरहिन के

तनु जारे ।। नींदत शैल उदधि पन्नग को श्रीपति कमठ कठोरहि । देति असीस जरा देवी को राहु केतु किनि जोरहि ।। ज्यों जलहीन मीन तनु तलफति ऐसी गति ब्रजबालहि । सूरदास प्रभु आनि मिलावहु मोहन मदनगुपालहि ।।२८६२।।



राग मलार

अब या तनुहि कहो कहा कीजै । सुन री सखी श्यामसुंदर बिन बाँटि विषम विष पीजै ।। कै गिरिए गिरि चढ़ि सुनि सजनी शीश शंकरहि दीजै । कै दहिए दारुण दावानल जाइ यमुन धसि लीजै ।। दुसह वियोग विरह माधो को दिनही दिनही छीजै । सूर श्याम प्रीतम बिनु राधे सोचि सोचि जिय जीजै ।। २८६४ ।।



राग भोपाली

हमहि कहा सखी तन के जतन की अब या यशहि मनोहर लीजै । सकल त्रास सुख याही वपु लौं छाँड़ि दिये ते कछु न छीजै ।। कुसुमित सेज कुसुम सर सरवर हरि के प्राण प्राणपति जीजै । विरह थाह ब्रजनाथ सबन दै निधरक सकल मनोरथ कीजै ।। सबन कहत मन रीस रिसाए नहिन बसाय प्राण तजि दीजै । सूर सुपति सों चरचि चतुरई तुम यह जाइ बधाई लीजै ।। २८६५ ।।



राग मलार

हरि परदेस बहुत दिन लाए। कारी घटा देखि बादर की नैन नीर भरि आए॥ वीरबटाऊ पंथी हो तुम कौन देस ते आए। इह पाती हमरी लै दीजो जहाँ साँवरे छाए॥ दादुर मोर पपीहा बोलत सोवत मदन जगाए। सूरदास गोकुल ते बिछुरे आपुन भए पराए॥ २८८३॥



राग मलार

हमारे हिरदै कुलि से जीत्यौ। फटत न सखी अजहुँ उहि आसा वरष दिवस पर बीत्यौ॥ हमहूँ समुझि परी नीके-करि यहै असित तनु रीत्यो। बहुरि न जीवन मरन सों साझो करी मधुप की प्रीत्यो॥ अब तौ बात घरी पहरन सखी ज्यों उद्दबस की भीत्यो। सूर श्याम दासी सुख सोवहु भयो उभय मनचीत्यो॥ २८८४॥



राग मारू

किते दिन हरि देखे बिन बीते। एकौ फुरत न श्याम-सुंदर बिन विरह सबै सुख जीते॥ मदनगोपाल बैठि कंचन-रथ चिते किए तनु रीते। सुफलकसुत लै गए दगा दै प्राणनहीं के प्रीते॥ बहुरि कृपालु घोष कब आवहिं मोहन राम समीते। सूरदास प्रभु बहुरि कृपा करि मिलहु सुदामा मीते॥२८८५॥



राग सारंग

कान्ह धों हमसों कहा कह्यो। निकस्यो बचन सुनाइ सखी री नाहिन परतु रह्यो॥ मैं मतिहीन मर्म नहिं जान्यो भूली मथत मह्यो। अब कहा करों घोष बसि सजनी दूत दूरि निवह्यो॥ सबै अजान भई तेहि औसर काहू रथ न गह्यो। सूरदास प्रभु वृथा लाज करि दुसह वियोग सह्यो॥२८६४॥



(इधर व्रज की सुध आने पर कृष्ण ने अपने नीरस साथी उपंगसुत उद्धव को भेजने का विचार किया। उद्धव का चरित्र कहते हैं—)

राग नट

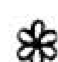
यदुपति जानि उद्धव रीति। जिहिं प्रगट निज सखा कहियत करत भाव अनीति॥ विरहदुख जहाँ नाहिं जामत नहीं उपजै प्रेम। रेख रूप न वरन जाके यहि धरयो वह नेम॥ त्रिगुणतनु करि लखत हमको ब्रह्म मानत और। विना गुण क्यों पुहुमि उधरै यह करत मन डौर॥ विरहरस के मंत्र कहिए क्यों चलै संसार। कछु कहत यह एक प्रगटत अतिभरयो अहंकार॥ प्रेमभजन न नेकु याके जाइ क्यों समुझाइ। सूर प्रभु मन इहै आनी व्रजहि देउँ पठाइ॥ २९०९॥



राग नट

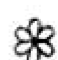
इह अद्योत दरशी रंग। सदा मिलि एकसाथ बैठत चलत वोलत संग॥ वात कहत न बनत यासों निठुर योगी जंग।

प्रेम सुनि बिपरीत भाषत होत है रसभंग ॥ सदा ब्रज को ध्यान मेरे रासरंग तरंग। सूर वह रस कहीं कासें मिल्यो सखा भुरंग ॥



राग नट

संग मिलि कहौं कासों बात। यह तो कथत योग की बातैं जामें रस जरि जात ॥ कहत कहा पितु मात कौन को पुरुष नारि कहा नात। कहा यशोदा सी है मैया कहा नंद सम तात ॥ कहँ ब्रज भानुसुता सँग को सुख यह वासर वह प्रात। सखी सखा सुख नहीं त्रिभुवन में नहिं वैकुंठ सुहात ॥ वै बातैं कहिए केहि आगे यह गुनि हरि पछितात। सूरदास प्रभु ब्रजमहिमा कहि लिखी वदत बल भ्रात ॥ २९१० ॥



राग धनाश्री

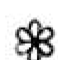
कहाँ सुख ब्रज को सो संसार। कहाँ सुखद बंशीवट यमुना यह मन सदा विचार ॥ कहाँ वनधाम कहाँ राधा सँग कहाँ संग ब्रजवाम। कहाँ रसरास बीच अंतर सुख कहाँ नारि तनुताम ॥ कहाँ लता तरु तरु प्रति झूलनि कुंज कुंज वनधाम। कहाँ विरह सुख विनु गोपिन सँग सूर श्याम मम काम ॥ सखा हम को मिले ऊधो वचनन मारत ताम। भाव भजन बिना नहीं सुख कहाँ प्रेम अरु योग ॥ काग हँसहि संग जैसो कहाँ दुख कहाँ भोग। जगत में यह संग देखो वचन

प्रति कहै ब्रह्म। सूर ब्रज की कथा सो कहै यह करै जो दंभ ॥ २९११ ॥



राग कान्हरो

हंस काग को संग भयो। कहाँ गोकुल कहाँ गोप गोपिका बिधि यह संग दयो ॥ जैसे कंचन काँच संग ज्यों चन्दन संग कुगंधि। जैसे खरी कपूर दोउ यक सम यह भई ऐसी संधि ॥ जलविनु मीन रहत कहुँ न्यारे यह सो रीति चलावत। जब ब्रज की बातैं यहि कहियत तबहिं तबहिं उचटावत ॥ याको ज्ञान थापि ब्रज पठऊँ और न याहि उपाव। सुनहु सूर याको बन पठऊँ यहै बनैगो दावँ ॥ २९१२ ॥



राग धनाश्री

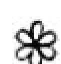
याहि और कछु नहीं उपाइ। मेरा प्रगट कह्यो नहिं वदिहै ब्रजही देउँ पठाइ ॥ गुप्तप्रीति युवतिन की कहिकै याको करौं महंत। गोपिन को परवोधन कारण जैहै सुनत तुरंत ॥ अति अभिमान करैगो मन में योगिन की इह भाँति। सूर श्याम यह निहचै करिकै बैठत है मिलि पाँति ॥ २९१३ ॥



राग धनाश्री

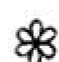
हरि गोकुल की प्रीति चलाई। सुनहु उपँगसुत मोहिं न विसरत ब्रजवासी सुखदाई ॥ यह चित होत जाउँ मैं

अवहीं यहाँ नहीं मन लागत। गोपी ग्वाल गाइ बन चारन अति दुख पायो त्यागत ॥ कहाँ माखन रोटी कहाँ यशुमति जेवहु कहि कहि प्रेम। सूर श्याम के वचन हँसत सुनि थापत अपनो नेम ॥ २६१५ ॥



राग रामकली

यदुपति लखो तेहि मुसकात। कहत हम मन रहे जोई सोइ भई यह बात ॥ वचन परकट करन कारण प्रेमकथा चलाइ। सुनहु ऊधो मोहिं व्रज की सुधि नहीं बिसराइ ॥ रैनि सोवत दिवस जागत नहीं है मन आन। नंद यशुमति नारि नर व्रज तहाँ मेरो प्रान ॥ कहत हरि सुनि उपँगसुत यह कहत हौं रसरीति। सूर चित ते टरत नाहीं राधिका की प्रीति ॥ २६१६ ॥



राग नट

ऊधो मन अभिमान बढ़ायो। यदुपति योग जानि जिय साँचो नयन अकास चढ़ायो ॥ नारिन पै मोको पठवत हैं कहत सिखावन योग। मन ही मन अपकरत प्रशंसा यह मिथ्या सुख भोग ॥ आयसु मानि लियो सिर ऊपर प्रभु आज्ञा परमान। सूरदास प्रभु गोकुल पठवत मैं क्यों कहौं कि आन ॥ २६२२ ॥



राग कान्हरो

तुम पठवत गोकुल को जैहौं। जो मानिहैं ब्रह्म की बातैं तौ उनसों मैं कैहौं ॥ गदगद वचन कहत मन प्रफुलित वार वार समुझैहौं। आजुइ नहीं करौं तुव कारज कौन काज पुनि लैहौं ॥ यह मिथ्या संसार सदाई यह कहिकै उठि ऐहौं। सूर दिना द्वै ब्रजजन सुख दै आइ चरण पुनि गैहौं ॥२९२३॥

❀

राग विहागरो

तुरत ब्रज जाहु उपँगसुत आजु। ज्ञान बुझाइ खबरि दै आवहु एक पंथ द्वै काजु ॥ जब ते मधुवन को हम आए फेरि गयो नहिं कोई। युवतिन पै ताही को पठवै जो तुम लायक होई ॥ एक प्रवीन अरु सखा हमारे जानी तुम सरि कौन। सोइ कीजो जैसे ब्रजबाला साधन सीखै पौन ॥ श्रीमुख श्याम कहत यह बानी ऊधो सुनत सिहात। आयसु मानि सूर प्रभु जैहैं नारि मानिहैं बात ॥ २९२५ ॥

❀

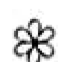
राग विहागरो

श्याम कर पत्री लिखी बनाइ। नंदबाबा सों विनती करी कर जोरि यशोदामाइ ॥ गोप ग्वाल सखन गहि मिलि मिलि कंठ लगाइ। और ब्रजनर-नारि जे हैं तिनहि प्रीति जनाइ ॥ गोपिकनि लिखि योग पठयो भाउ जान न जाइ। सूर प्रभु मन और यह कहि प्रेम लेत दृढ़ाइ ॥ २९२६ ॥

❀

राग विहागरो

उपँगसुत हाथ दई हरि पाती। यह कहियो यशुमति मैया सों नहिं विसरत दिनराती॥ कहत कहा वसुदेव देवकी तुमको हम हैं जाए। कंसत्रास शिशु अतिहि जानिकै व्रज में राखि दुराए॥ कहै वनाइ कोटि कोउ वातैं कहि वलराम कन्हाई। सूर काज करिकै कछु दिन में वहुरि मिलैंगे आई॥ २९३० ॥



राग विलावल

ऊधो इतनो कहियो जाइ। हम आवैंगे दोऊ भैया मैया जिनि अकुलाइ॥ याको विलग बहुत हम मान्यो जब कहि पठयो धाइ। वह गुण हमको कहा विसरिहै वड़े किये पय प्याइ॥ और जु मिल्यो नंदवावा सों तव कहियो समुझाइ। तौ लों दुखी होन नहिं पावैं धवरी धूमरि प्याइ॥ यद्यपि यहाँ अनेक भाँति सुख तदपि रह्यो ना जाइ। सूरदास देखो व्रजवासिन तवहीं हियो सिराइ॥ २९३१ ॥



राग आसावरी

ऊधो जननी मेरी को मिलिहौ अरु कुशलात कहोगे। वावा नंदहि पालागन कहि पुनि पुनि चरण गहोगे॥ जा दिन ते मधुवन हम आए शोध न तुमही लीनो हो। दै दै सौंह कहोगे हित करि कहा निठुरई कीन्हों हो॥ यह कहियो

बलराम श्याम अब आवेंगे दोउ भाई हो। सूर कर्म की रेख मिटै नहिं यहै कह्यो यदुराई हो॥ २९३२॥



राग केदारो

विधना इहै लिख्यो संयोग। कहाँ ते मधुपुरी आए तज्यों माखन भोग॥ कहाँ वै ब्रज के सखा सब कहाँ मथुरा लोग। देवकी-वसुदेव-सुत सुनि जननि कैहै सोग॥ रोहिणी माता कृपा करि उछँग लेती ओग। सूर प्रभु मुख यह वचन कहि लिखि पठायो योग॥ २९३३॥



राग गौरी

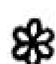
पाती लिखि ऊधो कर दीन्ही। नंद यशुदहि हेतु कहि दीजौ हँसि उपंगसुत लीन्ही॥ मुख वचनन कहि हेतु जनायो तुम हौ हितू हमारे। बालक जानि पठै नृप डर ते तुम प्रतिपालन-हारे॥ कुबिजा सुन्यो जात ब्रज ऊधो महलइ लियो बोलाई। हाथन पाति लिखी राधा को गोपिन सहित बड़ाई॥ मोको तुम अपराध लगावत कृपा भई अन्यास। झुकत कहा मोपर ब्रजनारी सुनहु न सूरजदास॥ २९३४॥



राग गौरी

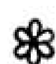
ऊधो ब्रजहि जाहु पा लागौं। यह पाती राधाकर दीजौ यह मैं तुमसों माँगौं॥ गारी देहि प्रात उठि मोको सुनत

रहत यह बानी। राजा भये जाइ नँदनंदन मिली कूबरी रानी॥ मोपर रिसि पावत काहे को बरजि श्याम नहिं राख्यो। लरि-काँई ते बाँधति यशुमति कहा जु माखन चाख्यो॥ रजु लै सबै हजूर होति तुम सहित सुता वृषभान। सूर श्याम बहुरो ब्रज जैहैं ऐसे भए अजान॥ २९३६॥



राग धनाश्री

ऊधो यह राधा सों कहियो। जैसी कृपा श्याम मोहिं कीन्हो आपु करत सोइ रहियो॥ मोपर रिस पावत वे कारण मैं हौं तुम्हरी दासी। तुमहीं मन में गुणि धौं देखो विन तप पायो कासी॥ कहाँ श्याम की तुम अर्धांगिनि मैं तुम सर की नाहीं। सूरज प्रभु को यह न बूझिए क्यों न वहाँ लौं जाहीं॥ २९३७॥



राग सारंग

ऊधो जाइ कहियो राधिकाही तुम इतनी सी बात। आवन दिए कहो काहे को फिरि पाछे पछितात॥ अब दुख मानि कहा धौं करिहौ हाथ रहैगी गारी। हमैं तुम्हैं अंतर है जेतो जानत हैं बनवारी॥ ए तो मधुप सबै रस भोगी जहाँ जहाँ रस नीको। जो रस खाइ स्वाद करि छाँड़े सो रस लागत फीको॥ एक कुँवर हरि हर्यो हमारो जगत माँझ यश लीनो। ताको कहा निहारो हमको मैत्रिभंग करि दीनो॥ तुम सब

नारि गँवारि अहीरी कहा चातुरी जानों। राखि न सकी आपु बसकै तब अब काहे दुख मानों॥ सूरदास प्रभु की ए बातैं ब्रह्म लखै नहिं पारै। जाके चरण पाइकै कमला गति आपनी बिसारै॥ २९३८॥

❀

राग केदारो

सुनियत ऊधो लये सँदेसो तुम गोकुल को जात। पाछे करि गोपिन सों कहियो एक हमारी बात॥ मात पिता को नेह समुझिकै श्याम मधुपुरी आए। नाहिन कान्ह तुम्हारे प्रीतम ना यशुमति के जाए॥ देखो बूझि आपने जिय में तुम माधो कौने सुख दीने। ए बालक तुम मत्त ग्वालिनी सबै मुंड करि लीने॥ तनक दही माखन के कारण यशुदा त्रास दिखावै। तुम हँसि सब बाँधन को दौरी काहू दया न आवै॥ जो वृषभानुसुता उन कीनी सो सब तुम जिय जानों। ताही लाज तज्यो ब्रज मोहन अब काहे दुख मानों॥ सूरदास प्रभु सुनि सुनि बातैं रहे श्याम सिर नाए। इत कुबिजा उत प्रेम गोपिका कहत न कछु बनि आए॥ २९३९॥

❀

राग बिहागरो

ऊधो जात ब्रजहि सुने। देवकी वसुदेव सुनिकै हृदय हेत गुने॥ आपसे पाती लिखी कहि धन्य यशुमति नंद। सुत हमारो पालि पठयो अति दियो आनंद॥ आइकै मिलि जात

कबहुँ न श्याम अरु बलराम। इहौ कहति पठाइ देहैं तबहि तनु बिन वाम॥ बाल सुख सब तुमहिं लूट्यो मोहिं मिले कुमार। सूर यह उपकार तुमते कहत बारंबार॥ २९४०॥



राग बिलावल

तब ऊधो हरि निकट बुलायो। लिखि पाती दोउ हाथ दई तेहि ए मुख वचन सुनायो॥ व्रजवासी जावत नारी नर जल थल द्रुम वन पात। जो जेहि विधि तासों तैसेही मिलि अरस परस कुशलात॥ जो सुख श्याम तुमहिं ते पावत सो त्रिभुवन कहुँ नाहिं। सूरदास प्रभु दै सौंह आपनी समुझत हौं कै नाहिं॥ २९४१॥



राग सारंग

पहिले प्रणाम नंदराइ सों। ता पीछे मेरो पालागन कहियो यशुमति माइ सों॥ बार एक तुम बरसाने लौं जाइ सबै सुधि लीजौ। कहि वृषभानु महर सों मेरो समाचार सब दीजौ॥ श्रीदामा आदि सकल ग्वालन को मेरे हित भेटिबो। सुख संदेस सुनाइ सबनको दिन दिन को दुख मेटिबो॥ मित्र एक मन बसत हमारे ताहि मिलै सुख पाइहो। करि करि समाधान नीकी विधि मोंहिको माथो नाइहो॥ डरियहु जिनि तुम सघन कुंज में हैं तहँ के तरु भारी। वृंदावन मति रहति निरंतर कबहुँ न होत नियारी॥ ऊधो सों समुझाइ प्रगट

करि अपने मन की वीती। सूरदास स्वामी सों छल सों कही सकल व्रजप्रीती ॥ २९४२ ॥



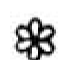
राग सारंग

कही हरि ऊधो सों व्रज प्रीति। बोले चले योग गोपिन को तहाँ सरन विपरीति ॥ तुरत अंक भरि रथहि चढ़ायो विनय कह्यो करि ताहि। विरहा जाल मेटि गोपिन को आवहु काज निवाहि ॥ लै रज चरण शीश वंदन करि व्रज रैहौं दिन द्वैक। सूरज प्रभु श्रीमुख कहि पठवत तुम विनु रहों न नैक ॥ २९४३ ॥



राग गौरी

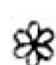
गहर जनि लावहु गोकुल जाइ। तुमहिं बिना व्याकुल हम ह्वैहैं यदुपति करी चतुराइ ॥ अपनोई रथ तुरत मँगायो दियो तुरत पलनाइ। अपने अंग आभूषण करि करि आपुनही पहिराइ ॥ अपनो मुकुट पीतांबर अपनो देत सबै सुख पाये। सूर श्याम तद्यपि उपंगसुत भृगुपद एक बचाये ॥ २९४४ ॥



राग बिलावल

ऊधो चले श्याम आयसु सुनि व्रज नारिन को योग कह्यो। हरि के मन यह प्रेम लहैगो वह तो जिय अभिमान गह्यो ॥

आतुर चल्यो हर्ष मन कीन्हें कृष्ण महंत करि पठै दियो। स्यंदन उहै श्याम सब भूषण जानि परै नंदसुवन वियो ॥ युवती कहा ज्ञान समुझैंगी गर्गवचन मन कहत चल्यो। सूर ज्ञान को मान बढ़ाये मधुवन के मारगहि मिल्यो ॥ २९४५ ॥



राग कल्याण

मथुरा ते निकसि परे गैल माँझ आइ उहै मुकुट पीतांवर श्याम रूप काछे। भृगुपद एक वंचित उर और अंग आछे ॥ ज्ञान को अभिमान किए मोको हरि पठयो। मेरोई भजन थापि माया सुख झुठयो ॥ मधुवन ते चल्यो तवहिं गोकुल नियरान्यो। देखत व्रजलोग श्याम आयो अनुमान्यो ॥ राधा सों कहति नारि काग सगुन टेरो। मिलिहैं तोहिं श्याम आजु भयो वचन मेरो ॥ वैसोइ रथ देखति सब कहति हरष वानी। सूरज प्रभु से लागत तरुनी मुसकानी ॥ २९४६ ॥



भँवरगीत। राग विलावल

राधेहि सखी वतावत री। वैसोई रथ लखौं सेत मैं को उतही ते आवत री ॥ चढ़ि आयो अक्रूर जाहि पर स्यंदन व्रज तन धावत री। वैसोइ ध्वजा पताका वैसोइ घर घर सबन सुनावत री ॥ कोउ कहै श्याम कहति को ऐहै व्रजतरुनी

हरषावत री। सूर श्याम जेहि मग पग धारे तेहि मारग दरशावत री* ॥ २६५० ॥



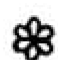
राग बिलावल

घर घर इहै शब्द पर्‍यो। सुनत यशुमति धाइ निकसी हर्षित हियो भर्‍यो ॥ नंद हर्षित चले आगे सखा हर्षत अंग। झुंड झुंडन नारि हर्षत चली उदधि तरंग ॥ गाइ हर्षत पय स्रवत थन हुँकरत गउ बाल। उमँगि अंगन मात कोऊ बिरध तरुन अरु बाल ॥ कोउ कहत बलराम नाहीं श्याम रथ पर एक। कोउ कहति प्रभु सूर दोऊ रचित बात अनेक ॥ २६५४ ॥



राग बिलावल

सुने ब्रजलोग आवत श्याम। जहाँ तहाँ ते सबै धाईं सुनत दुर्लभ नाम ॥ मानो मृगी बन जरति व्याकुल तुरत बरष्यो नीर। बचन गद्गद प्रेम व्याकुल धरत नहिं मन धीर ॥ एक एक पल युग सबनको मिलन को अतुरात। सूर तरुनी मिलि परस्पर भईं हर्षित गात ॥ २६५५ ॥



राग धनाश्री

नंदगोप हर्षित ह्वै गए लेन आगे। आवत बलराम श्याम सुनत दौरि चली बाम मुकुट झलक पीतांबर मन मन अनुरागे ॥

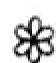
* उद्धव के गोकुल जाने के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्ध अध्याय ४६। लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ४७।

निहचै आए गोपाल आनंदित भई बाल मिट्यो विरह जंजाल जोवत तेहि काल। गदगद तनु पुलक भयो विरहा को शूल गयो कृष्णदरश आतुर अति प्रेम के बेहाल॥ रथ ज्यों ज्यों निकट भयो मुकुट पीत बसन नयो मन में कछु सोच भयो श्याम किधौं कोउ। सूरज प्रभु आवत हैं हलधर को नहीं लखत झंखति कहति तो होते संग वीर दोउ॥ २९५६॥



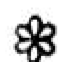
राग बिलावल

उमँगि ब्रज देखन को सब धाए। एकहि एक परस्पर बूझति जनु मोहन दूलह आए॥ सोई ध्वजा पताका सोई जा रथ चढ़ि ता दिवस सिधाए। श्रुति कुंडल अरु पीत वसन स्रक वैसोई साज बनाए॥ जाइ निकट पहिचान्यो ऊधो नयन जलज जल छाए। सूरज श्याम मिटी दरशन आसा नूतन बिरह जगाए॥ २९५९॥



राग बिलावल

जबहीं कहो ए श्याम नहीं। परी मुरछि धरणी ब्रजबाला जो जहाँ रही सु तहीं॥ सपने की रजधानी ह्वै गई जो जागी कछु नाहीं। बार बार रथ ओर निहारहिं श्याम बिना अकुलाहीं॥ कहा आय करिहैं ब्रज मोहन मिली कूबरी नारी। सूर कहत सब ऊधो आए गईं श्यामशर मारी॥ २९६०॥



राग रामकली

तरुणी गईं सब बिलखाइ। जबहिं आए सुने ऊधो अतिहि गई झुराइ ॥ परीं व्याकुल जहाँ यशुमति गईं तहाँ सब धाइ। नीर नयनन बहत धारा लई पोछि उठाइ ॥ एक भई अब चलौं मारग सखा पठयो श्याम। सुनो हरि कुशलात ल्यायो महरि सों कहैं वाम ॥ जबहि लौं रथ निकट आयो तबहुँ ते परतीति। वह मुकुट कुंडल पीतांबर सूर प्रभु अंगरीति ॥ २९६१ ॥



राग बिलावल

भली भई हरि सुरति करी। उठी महरि कुशलात बूझिए आनँद उमँगि भरी ॥ भुजा गहे गोपी परबोधत मानहुँ सुफल धरी। पाती लिखि कछु श्याम पठायो यह सुनि मनहिं ढरी ॥ निकट उपंगसुत आइ तुलाने मानों रूप हरी। सूर श्याम को सखा इहै री श्रवणन सुनी परी ॥ २९६२ ॥



राग धनाश्री

निरखति ऊधो सुख पायो। सुंदर सुजल सुवंश देखियत याते श्याम पठायो ॥ नीके हरि संदेस कहैगो श्रवण सुनत सुख पैहै। यह जानति हरि तुरत आय हैं एकहि हृदय सिरैहै ॥ घेरि लिये रथ पास चहूँधा नंद गोप ब्रजनारी। महर लिवाय गए निज मंदिर हरषित लियो उतारी ॥ अरघ देत

भीतर तेहि लीन्हों धनि धनि दिन कहि आजु। धनि धनि सूर उपंगसुत आए मुदित कहत व्रजराजु ॥ २९६३ ॥



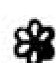
अथ नंदवचन उद्धवप्रति। राग मलार

कबहिं सुधि करत गोपाल हमारी। पूँछत नंद पिता ऊधो सों अरु यशुदा महतारी॥ बहुतै चूक परी अनजानत कहा अबके पछिताने। वासुदेव घर भीतर आए मैं अहीर कै जाने॥ पहिले गर्ग कह्यो हुतो हमसों संग देत गयो भूली। सूरदास स्वामी के बिछुरे राति दिवस भै शूली ॥२९६४॥



अथ उद्धववचन। राग सारंग

कह्यो कान्ह सुनि यशुमति मैया। आवहिंगे दिन चारि पाँच में हम हलधर दोउ भैया॥ मुरली बेत विषाण देखिए शृंगी बेर सबेरै। लै जिनि जाइ चुराइ राधिका कछुक खिलौना मेरै॥ जा दिन ते तुम्हसों बिछुरे हम कोउ न कहत कन्हैया। भोरहि नाहिं कलेऊ कीनो साँझ न पय पीयो धैया॥ कहत न बन्यो सँदेसो मोपै जननि जितो दुख पायो। अब हमसों वसुदेव देवकी कहत आपनो जायो॥ कहिए कहा नंदबाबा सों बहुत निठुर मन कीनों। सूर हमहिं पहुँचाइ मधुपुरी बहुरो शोध न लीनों ॥२९६५॥



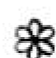
पुनः नंदवचन । राग सारंग

हमते कछु सेवा न भई । धोखे धोखे रहे धोख ही जाने नाहिं त्रिलोकमई ॥ चरण पकरि करि बिनती करिवो सब अपराध छमा कीबे । ऐसो भाग होइगो कबहूँ श्याम गोद में लीबे ॥ कहै नंद आगे ऊधो के एक बेर दरशन दीबे । सूर-दास स्वामी मिलि अबकै सबै दोष गत कीबे ॥ २९६६ ॥



सखावचन । राग बिलावल

भली बात सुनियत है आज । कोऊ कमलनयन पठयो है तन बनए अपनो सो साज ॥ पूँछत सखा कहौ कैसे हैं अब नाहीं कछु करते लाज । कंस मारि वसुदेवगृह आए उग्रसेन को दीन्हों राज ॥ राजा भए ज्ञानही भयो सुख सुरभी सँग वन गोप-समाज । अब सुन सूर करै को कौतुक व्रज में नाहिं वसत व्रजराज ॥ २९६७ ॥



अथ व्रज-नर-नारीवाक्य । राग सारंग

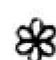
वैसोइ रथ वैसोइ सब साज ।। मानहुँ बहुरि विचारि कछू मन सुफलकसुत आयो व्रज आज ॥ पहिलेइ गमन गयो लै हरि को परम सुमति राधो रतिराज । अजहुँ कहा कीयो चाहत है या ते अधिक कंस को काज ॥ व्याध जो मृगन बधत सुन सजनी सो शर काढ़ि संग नहिं लेत । यह अक्रूर कठिन

कीनो यहि ये इतनो दुख देत ॥ ऐसे वचन बहुत विधि कहि कहि लोचन भरि सींचत उर गात। सूरदास प्रभु अवधि जानिकै चलीं सबै पूँछन कुशलात ॥ २९६८ ॥



राग रामकली

व्रज घर घर सब होत बधाए। कंचन कलश दूब दधि रोचन महरि महर वृंदावन आए ॥ मिलि व्रजनारि तिलक सिर कीनो करि प्रदक्षिणा पास। पूँछत कुशल नारि नर हरषत आए सब व्रजवास ॥ सकसकात तन धकधकात उर अकबकात सब ठाढ़े। सूर उपंगसुत बोलत नाहीं अतिहिरदै ह्वै गाढ़े ॥ २९६९ ॥



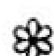
सखीवचन गोपीप्रति। राग धनाश्री

आजु व्रज कोऊ आयो है। कै धों बहुरि अक्रूर क्रूर ह्वै जियत जानि उठि धायो है ॥ मैं देख्यो ताको रथ ठाढ़ो तुम सखी शोधन पायो है। कै करि कृपा दुखित जानिकै हरिसंदेस पठायो है ॥ चलीं मिलि सिमिटि सखी पूछन को ऊधो दरश दिखायो है। तब पहिचानि सबै प्रभु को भृत कमल जोरि सिर नायो है ॥ हरि हैं कुशल कुशल हैं तुमहूँ कुशल लोग जेहि भायो है। है वह नगर कुशल सूरज प्रभु करि सुदृष्टि जहाँ छायो है ॥ २९७० ॥



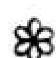
राग धनाश्री

देख्यो नंद द्वार रथ ठाढ़ो। बहुरि सखी सुफलकसुत आयो पर्यो सँदेह जिय गाढ़ो॥ प्राण हमारे तबहिं गयो लै अब केहि कारण आयो। मैं जानी यह बात सत्य कै कृपा करन उठि धायो॥ इतने अंतर आनि उपंगसुत तिहि क्षण दरशन दीन्हों। तब पहिचानि जानि प्रभु को भृतु परम सुचित मन कीन्हों॥ तब परणाम कियो अति रुचि सों अरु सबहीं कर जोरे। सुनियत हुते तैसई देखे सुंदर सुमति सो भोरे॥ तुम्हरो दरसन पाइ आपनो जन्म सुफल करि मान्यो। सूर सु ऊधो मिलत भए सुख ज्यों ज्यों खग पायो पान्यो॥ २९७१॥



राग नट

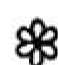
ऊधो कहो हरि कुशलात। कहो आवन किधौं नाहीं बोलिए मुख बात॥ एक छिन युग जात हमको बिन सुने हरि प्रीति। आइ आपै कृपा कीनी अब कहो कछु नीति॥ तब उपंगसुत सबनि बोले सुनो श्रीमुख योग। सूर सुनि सब दौरि आईं हटकि दीनो लोग॥ २९७३॥



अथ उद्धववचन। राग सारंग

गोपी सुनहु हरि कुसलात। कंस नृप को मारि छोर्यो आपनो पितु मात॥ बहुत बिधि व्यवहार करि दियो उग्रसेनहि राज। नगर लोग सुखी बसत हैं भए सुरन के काज॥ इहै

पाती लिखी अरु मुख कह्यो कछू सँदेस। सूर निर्गुण ब्रह्म धरिकै तजहु सकल अँदेस ॥ २९७४ ॥



राग केदारो

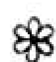
गोपी सुनहु हरिसंदेस। गए सँग अक्रूर मधुवन हत्यो कंस नरेस ॥ रजक मारयो वसन पहिरे धनुष तोरे जाइ। कुवलया चाणूर मुष्टिक दये धरणि गिराइ ॥ मात पितु के बंदि छोरे वासुदेव कुमार। राज्य दीन्हों उग्रसेनहि चमर निज कर ढार ॥ कह्यो तुमको ब्रह्म ध्यावो छाँड़ि विषै विकार। सूर पाती दई लिखि मोहि पढ़ौ गोपकुमार ॥ २९७५ ॥



(पाती की बात सुनते ही गोपियाँ दौड़ीं।)

राग सारंग

पाती मधुवनही ते आई। सुंदर श्याम कान्ह लिखि पठई आइ सुनो री माई ॥ अपने अपने गृह ते दौरीं लै पाती उर लाई। नैनन निरखि निमेष न खंडित प्रेमव्यथा न बुझाई ॥ कहा करौं सूनो यह गोकुल हरि बिन कछु न सोहाई। सूरदास प्रभु कौन चूक ते श्याम सुरति बिसराई ॥ २९७६ ॥



राग सारंग

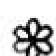
निरखत अंक श्यामसुंदर के बार बार लावत लै छाती। लोचन जल कागज मसि मिलि करि ह्वै गई श्याम श्यामजू की

पाती ॥ गोकुल वसत नंदनंदन के कबहुँ बयारि न लागी ताती । अरु हम उती कहा कहैं ऊधो जब सुनि वेणु नाद सँग जाती ॥ प्रभु कै लाड़ वदति नहिं काहू निशिदिन रसिक रास रस राती । प्राणनाथ तुम कबहुँ मिलहुगे सूरदास प्रभु बाल सँघाती ॥ २६७७ ॥



राग सारंग

पाती मधुवन ते आई । ऊधो हरि के परम सनेही ताके हाथ पठाई ॥ कोउ पूछत फिरि फिरि ऊधो को आपुन लिखो कन्हाई । बहुरो दई फेरि ऊधो को तब उन बाँचि सुनाई ॥ मन में ध्यान हमारो राखो सूरदास सुखदाई ॥२६७८॥



राग मारू

लिखि आई व्रजनाथ की छाप । ऊधो बाँधे फिरत शीश पर देखे आवै ताप ॥ उलटी रीति नंदनंदन की घरि घरि भयो संताप । कहियो जाइ योग आराधै अविगत अकथ अमाप ॥ हरि आगे कुबिजा अधिकारिनि को जीवै इहि दाप । सूर सँदेस सुनावन लागे कहौ कौन यह पाप ॥ २६७६ ॥



राग मलार

कोऊ व्रज बांचत नाहिंन पाती । कत लिखि लिखि पठवत नँदनंदन कठिन विरह की काँती ॥ नैन सजल कागज

अति कोमल कर अँगुरी अति ताती। परसे जरै विलोके भीजै दुहूँ भाँति दुख भाती॥ क्यों ए वचन सु अंक सूर सुनि विरह मदन शरघाती। मुख मृदु वचन बिना सींचे अब जिवहिं प्रेम रस माती॥ काहे को लिखि पठवत कागर। मदनगोपाल प्रगट दरशन विनु क्यों राखहि मन नागर॥ ऊधो योग कहा लै कीवो बिनु जल सूखो सागर। कहि धौं मधुप सँदेस सुचित है मधुवन श्याम उजागर। सूर श्याम बिनु क्यों मन राखौं तन योवन के आगर॥ २९८० ॥



राग धनाश्री

ऊधो कहा करैं लै पाती। जव नहिं देख्यो गुपाललाल को विरह जरावत छाती॥ जानति हौं तुम मानति नाहीं तुमहूँ श्याम सँघाती। निमिष निमिष मो विसरत नाहीं शरद सुहाई राती॥ यह पाती लै जाहु मधुपुरी जहाँ वसैं श्याम सुजाती। मनुज हमारे उहाँ लै गए काम कठिन शरघाती॥ सूरदास प्रभु कहा चलत है कोटिक बात सुहाती। एक वेर मुख बहुरि दिखावहु रहैं चरण-रजराती॥ २९८१ ॥



ऊधोवचन। राग धनाश्री

सुनहु गोपी हरि को संदेस। करि समाधि अंतर्गति ध्यावहु यह उनको उपदेस॥ वै अविगति अविनासी पूरण सब घट रह्यो समाइ। निर्गुण ज्ञान विनु मुक्ति नहीं है वेद

पुराणन गाइ ।। सगुण रूप तजि निर्गुण ध्यावो इक चित इक मन लाइ । यह उपाव करि विरह तरी तुम मिलै ब्रह्म तब आइ ।। दुसह सँदेस सुनत माधो को गोपीजन बिलखानी । सूर विरह की कौन चलावै बूड़त मन बिन पानी ।। २९८८ ।।



गोपीवचन । राग मलार

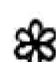
मधुकर हमही क्यों समुझावत । बारंबार ज्ञान गीता ब्रज अबलनि आगे गावत ।। नंदनंदन बिनु कपट कथा ए कत कहि रुचि उपजावत । स्रक चंदन जो अंग छुधारत कहि कैसे सुख पावत ।। देखि विचारत ही जिय अपने नागर हो जु कहावत । सब सुमनन पर फिरी निरख करि काहे को कमल बँधावत ।। चरणकमल कर नयन कमल कर नयन कमल वर भावत । सूरदास मनु अलि अनुरागी केहि बिधि है बहरावत ।।२९८९।।



राग मलार

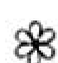
रहु रहु मधुकर मधुमतवारे । कौन काज या निर्गुण सों चिरजीवहु कान्ह हमारे ।। लोटत पीत पराग कीच में नीचन अंग सम्हारे । बारंबार सरक मदिरा की अपसर रटत उघारे ।। द्रुम बेली हमहूँ जानत है जिनके हो अलि प्यारे । एक वास लैकै बिरमावत जेते आवत कारे ।। सुंदर वदन

कमलदल लोचन यशुमति नंद दुलारे। तन मन सूर अर्पि रही श्यामहि कापै लेहिं उधारे ॥ २९९० ॥



राग मलार

मधुकर कौन देस ते आए। व्रजवाते अक्रूर गए लै मोहन ताते भए पराए ॥ जानी सखा श्यामसुंदर कै अवधि बंधन उठि धाए। अंग विभाग नंदनंदन के यहि स्वामित हैं पाए ॥ आसन ध्यान वाइ आराधन अलि मन चित तुम ताए। अतिहि विचित्र सुबुद्धि सुलक्षण गुंजयोग मति गाए ॥ मुद्रा भस्म विषान त्वचा मृग व्रज युवतिन मन भाए। अतसी कुसुम वरन मुरली मुख सूरज प्रभु किन ल्याए ॥ २९९१ ॥



राग मलार

आए माई दुर्ग श्याम के संगी। जे पहिले रँग रँगे श्यामरँग तिनही की बुधि रंगी ॥ हमरी उनकी सी मिलवत है ताते भए विहंगी। सूधी कहै सवन समुझावत ते साँचे सरवंगी ॥ औरन को सरवसु लै मारत आपुन भए अभंगी। सूर सु नाम शिलीमुख जे पीवैं धन कवच उपंगी ॥ २९९७ ॥



राग कान्हरो

प्रकृति जो जाके अंग परी। श्वान पूँछ को कोटिक लागे सूधी कहुँ न करी ॥ जैसे सुभख नहीं भख छाँड़ै जन्मत जौन

घरी। धोए रंग जात नहिं कैसेहु ज्यों कारी कमरी॥ ज्यों अहि डसत उदर नहिं पूरत ऐसी धरनि धरी। सूर होइ सो होइ सोच नहिं तैसे हैं एऊ री॥ ३०१०॥



राग सारंग

ऊधो होहु आगे ते न्यारे। तुमहि देखि तन अधिक जरत है अरु नैनन के तारे॥ अपनो योग सैंति धरि राखो यहाँ देत कत डारे। सो को जानत अपने मुख है मीठे ते फल खारे॥ हमरे गिरिधर के जु नाम गुण वसे कान्ह उरवारे। सूरदास हम सबै एक मत ए सव खोटे कारे॥ ३०११॥



राग कल्याण

जाहु जाहु आगे ते ऊधो पति राखति हौं तेरी। काहे को अव रोप दियावत देखति आँखि वरत है मेरी॥ तुम जो कहत हौ संत हैं गोविंद कहियत है कुबिजा उन घेरी। दोऊ मिले तैसेई तैसे वह अहीर वै कंस की चेरी॥ तुम सारिखे वसीठ पठाए कहिए कहा वुद्धि उन केरी। सूर श्याम वह सुधि विसराई गावत हैं ग्वालन सँग हेरी॥ ३०१२॥



राग धनाश्री

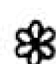
ऊधो हम आजु भईं बड़ भागी। जिन अँखियन तुम श्याम विलोके ते अँखियाँ हम लागी॥ जैसे सुमन-वास लै

आवत पवन मधुप अनुरागी। अति आनंद होत है तैसे अंग अंग सुख रागी॥ ज्यों दर्पण में दरशन देखत दृष्टि परम रुचि लागी। तैसे सूर मिले हरि हमको विरह व्यथा तनु त्यागो॥ ३०१५॥



राग सारंग

विलग जिनि मानो हमारी बात। डरपत वचन कठोर कहत मति विनु पानी उड़ि जात॥ जो कोउ कहै जरै कछु अपने फिरि पाछे पछितात। जो प्रसाद तुम पावत ऊधो कृष्ण नाम लै खात॥ मन जो तिहारो हरिचरणन तर चलत रहत दिन प्रात॥ सूर श्याम ते योग अधिक है कासों कहि आवै यह बात॥ ३०१६॥



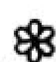
ऊधोवचन। राग धनाश्री

जानि करि वावरी जिनि होहु। तत्त्व भजै ऐसी ह्वै जैहो ज्यों पारस परसे लोहु॥ मेरो वचन सत्य करि मानहु छाँड़ो सबको मोहु। जो लगि सब पानी कीचु परी तौ लगि अस्तुति द्रोहु॥ अरे मधुप बातें ए ऐसी क्यों कहि आवत तोहि। सूर सुवस्तुहि छाँड़ि अभागे हमहिं बतावत खोहि॥ ३०२०॥



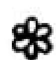
गोपीवचन। राग सारंग

कहिबे जीय न कछु शक राखो। लावा मेलि दए हैं तुमको वकत रहो दिन आखो॥ जाकी बात कहो तुम हमसों सो धौं कहौ को काँधी। तेरो कहो सो पवन भूस भयो वहो जात ज्यों आँधी॥ कत श्रम करत सुनत को इहाँ है होत जो वन को रोयो। सूर इते पर समुझत नाहीं निपट दई को खोयो॥ ३०२१॥



राग सारंग

मधुकर भली सुमति मति खोई। हाँसी होन लगी है व्रज में योगहि राखहु गोई॥ आतम ब्रह्म लखावत डोलत घट घट व्यापक जोई। चापे काख फिरत निर्गुण गुण इहाँ गाहक नहिं कोई॥ प्रेमकथा सोई पै जानै जापर बीती होई। अति रस एतो कहा कोइ जानै बूझि देखावै ओई॥ वड़ो दूत तू वड़ो उमर को वड़िए बुद्धि बड़ाई। सूरदास पूरो दै षटपद कहत फिरत हो सोई॥ ३०२२॥



राग सारंग

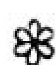
उलटी रीति तिहारी ऊधो सुनै सु ऐसी को है। अल्प वयस अबला अहीरि शठ तिनहिं योग कत सोहै॥ कचखुवि-आँधरि काजर कानी नकटी पहिरै वेसरि। मुडली पटिया पारि सँवारे कोढ़ी लावै केसरि॥ वहिरी पति सों बातैं करै

तौ तैसोई उत्तर पावै। सो गति होइ सबै ताकी जो ग्वारिनि योग सिखावै ॥ सिखई कहत श्याम की बतियाँ तुमको नाहीं दोषु। राज काज तुमते न सरैगो काया अपनी पोषु ॥ जाते भूलि सबै मारग में इहाँ आनि कहा कहते। भली भई सुधि रही सूर तौ मोह धार में बहते ॥ ३०२६ ॥



राग सारंग

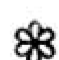
राखो सब इह योग अटपटो ऊधो पाँइ परौं। कहाँ रसरीति कहा तनुशोधन सुनि सुनि लाज मरौं ॥ चंदन छाँड़ि विभूति बतावत यह दुख क्यों न जरौं। नासा कर गहि योग सिखावत बेसरि कहा धरौं ॥ सगुण रूप रहत उर अंतर निर्गुण कहा करौं ॥ निशि दिन रटना रटत श्याम गुण का करि योग मरौं ॥ मुद्रा न्यास अंग अँगभूषण पतिव्रत ते न टरौं। सूरदास याही व्रत मेरे हरि मिलि नहिं बिछुरौं ॥ ३०२७ ॥



राग सारंग

मधुकर हम अयान मति भोरी। जाने तेइ योग की बातैं जे हैं नवल किशोरी ॥ कंचन को मृग कवने देख्यो किन बाँध्यो गहि डोरी। बिनही भीत चित्र किन कीनो किन नभ हठ करि घाल्यो झोरी ॥ कहि धौं मधुप वारि मथि माखन काढ़ि जो भरी कमोरी। कहो कौन पै कढ़ो जाइ कन बहुत सरास

पछोरी ॥ सब ते ऊँचो ज्ञान तुम्हारो हम अहीरि मति थोरी । सूरज कृष्णचंद्र को चाहत अँखिआँ तृषित चकोरी ॥ ३०२८ ॥



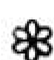
अथ नेत्र-अवस्थावर्णन । राग धनाश्री

अँखियां हरि दरशन की भूँखी । अब कैसे रहति श्याम रँग राती ए वातैं सुनि रूखी ॥ अवधि गनत इकटक मग जोवत तब ए इत्यो नहिं झूखी । इते मान इहियोग सँदेशन सुनि अकुलानी दूखी ॥ सूर सकत हठ नाव चलावत ए सरिता हैं सूखी । बारक वह मुख आनि देखावहु दुहिपै पिवत पतूखी ॥ ३०२९ ॥



राग धनाश्री

और सकल अंगन ते ऊधो अँखियां वहुत दुखारी । अधिक पिराति सिराति न कबहूँ अनेक जतन करि हारी ॥ चितवत मग सुनिमेष न मिलवत विरह बिकल भई भारी । भरि गई विरह वाइ माधो के इकटक रहत उघारी ॥ अलि आली गुरुज्ञान शलाका क्यों सहि सकति तुम्हारी । सूर सु अंजन आँजि रूपरस आरति हरौ हमारी ॥ ३०३९ ॥



राग रामकली

ऊधो इन नैनन अंजन देहु । आनहु क्यों न श्यामरँग काजर जासों जुरयो सनेहु ॥ तपति रहति निशि वासर मधु-

कर नहिं सुहात बन गेहु। जैसे मीन मरत जल बिछुरत कहा कहौं दुख एहु॥ सब बिधि बानि ठानि करि राख्यो खरी कपूर को रेहु। बारक श्याम मिलावहु सूर सुनि क्यों न सुयश यश लेहु* ॥ ३०४० ॥



---

* नेत्रों की प्रीति के लिए देखिए विहारी-सतसई, रतनहज़ारा—पृष्ठ ६०–४ इत्यादि।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने भी सूरदास कृत नेत्र-प्रीति-वर्णन की छाया पर 'चन्द्रावली' नाटिका में कुछ कविता की है। उदाहरणार्थ—

लगौंहीं चितवनि औरहि होति।
दुरत न लाख दुराओ कोऊ प्रेम झलक की जोति॥
घूँघट में नहिं थिरत तनिकहूँ अति ललचौंही बानि।
छिपत न कैसहुँ प्रीति निगोड़ी अन्त जात सब जानि॥

सखी ये नैना बहुत बुरे।
तब सों भये पराये, हरि सों जब सों जाइ जुरे॥
मोहन के रस बस ह्वै डोलत तलफत तनिक दुरे।
मेरी सखि प्रीति सब छाँड़ी ऐसे ये निगुरे॥
जग खीझ्यो बरज्यो पै ये नहिं हठ सों तनिक मुरे।
अमृत भरे देखत कमलन से विष के बुते छुरे॥

होत सखि ये उलझौंहैं नैन।
उरझि परत सुरझ्यो नहिं जानत सोचत समुझत हैं न॥
कोऊ नाहिं बरजै जो इनको बनत मत्त जिमि गैन।
कहा कहौं इन बैरिन पाछे होत लैन के दैन॥

राग मलार

सखी री मथुरा में द्वै हंस। वै अक्रूर ए ऊधो सजनी जानत नीके अंस ॥ ए दोउ नीर खीर निरवारत इनहि बधायो कंस। इनके कुल ऐसी चलि आई सदा उजागर वंस ॥ अब इन कृपा करी व्रज आए जानि आपनो अंस। सूर सु ज्ञान सुनावत अबलनि सुनत होत मति भ्रंस ॥ ३०४९ ॥



राग सारंग

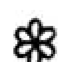
मानो भरे दोउ एकहि साँचे। नख शिख कमलनयन की शोभा एकै भृगुपद बाँचे ॥ दारुजात कैसे गुण इनमें ऊपर अंतर श्याम। हमको है गजदंत प्रचारित वचन कहत नहिं काम ॥ एई सब असित देह धरे जेते ऐसेई सब जानि। सूर एक ते एक आगरे वा मथुरा की खानि ॥ ३०५१ ॥



नैना वह छबि नाहिंन भूले।
दया भरी चहुँ दिसि की चितवन नैन कमलदल फूले ॥
वह आवनि वह हँसनि छबीली वह मुसकनि चित चोरैं।
वह बतरानि मुरनि हरि की वह वह देखन चहुँ कोरैं ॥
वह धीरी गति कमल फिरावन कर लै गायन पाछे।
वह बीरी मुख बेनु बजावनि पीत पिछौरी काछे ॥
परबस भये फिरत हैं नैना इक छन टरत न टारे।
हरिससि मुख ऐसी छबि निरखत तन मन धन सब हारे ॥ इत्यादि।

राग सारंग

सबै खोटे मधुवन के लोग। जिनके संग श्यामसुंदर सखी सीखे सब अपयोग ॥ आए हैं कहियत व्रज ऊधो युवतिन को लै योग। आसन ध्यान नैन मूँदे सखि कैसे कटै वियोग ॥ हम अहीरि इतनी का जानैं कुबिजा सों संयोग। सूर सुवैद कहा लै कीजै कहे न जाने रोग ॥ ३०५२ ॥



राग नट

मधुवन के लोगन को पतिआइ। मुख औरै अंतर्गति औरै पतियाँ लिखि पठवत जो बनाइ ॥ ज्यों कोइ लखत काग जिवाए भक्त अभक्त खवाइ। कुहुकुहानि सुनि ऋतु वसंत की अंत मिले कुल अपने जाइ ॥ ज्यों मधुकर अंबुज रस चाख्यो बहुरि न बूझी बातैं आइ। सूर जहाँ लगि श्यामगात है तिनसे कत कीजें सगाइ ॥ ३०५३ ॥



राग नट

माई री मधुवन की यह रीति। नीरस जानि तजत छिन भीतर नवल कुसुम रस प्रीति ॥ तिनहूँ के संगिन को कैसे चित आवति परतीति। हमहिं छाँड़ि बिरमहिं कुबिजा सँग आए न रिपु रण जीति ॥ जिनि पतियाहु मधुर सुनि बातैं लागे करन समीति। सूरदास श्यामसँग ऐसे ज्यों भुस पर की भीति ॥ ३०५४ ॥

राग धनाश्री

ऊधो प्रेम रहित योग निरस काहे को गायो। हम अबलनि को निठुर वचन कहे कहा पायो॥ जिनि नैनन कमलनैन मोहन मुख हेरयो। मूँदन ते नैन कहत कौन ज्ञान तेरयो॥ तामें सुनि मधुकर हम कहा लेन जाहीं। जामें प्रिय प्राणनाथ नंदनँदन नाहीं॥ जिनके तुम सखा साधु वात कहो तिनकी। जीवत कहि प्रेम-कथा दासी हम उनकी॥ अविनासी निर्गुण मत कहा आनि भाख्यो। सूरदास जीवन प्रभु कान्ह कहा राख्यो॥ ३०५७॥



राग सारंग

जिनि चालहि अलि बात पराई। नहिं कोउ सुनै न समुझत व्रज में नई कीरति सब जात हिराई॥ जाने समाचार सुख पाए मिलि कुल की आरति बिसराई। भले ठौर वसि भली भई मति भले ठौर पहिंचानि कराई॥ मीठी कथा कटुकसी लागति उपजत हैं उपदेस खराई। उलटे न्याउ सूर के प्रभु के वहे जात माँगत उतराई॥ ३०५८॥



ऊधोवचन। राग धनाश्री

ज्ञान बिना कहुँ वै सुख नाहीं। घट घट व्यापक दारु-अग्नि ज्यों सदा बसै उर माहीं॥ निर्गुण छाँड़ि सगुण को

दौरति सोचि कहौ किहि वाहीं। तत्त्व भजौ ज्यों निकट न छूटै त्यों तनु के सँग छाँहीं॥ तिनके कहो कौन जस पायो जे अब लौं अवगाहीं। सूरदास ऐसे कर लागत ज्यों कृषि कीन्हें पाहीं॥ ३०६२॥



गोपीवचन। राग सोरठ

ऊधो प्यारे कही सो बहुरि न कहिए। जो तुम हमें जिवायो चाहत अनबोले होइ रहिए॥ प्राण हमारे घात होत हैं तुमरे भावै हाँसी। या जीवन ते मरन भलो है करवट लेवो कासी॥ पूरबप्रीति सँभारि हमारे तुमको कहन पठायो। हम तौ जरि बरि भस्म भए तुम आनि मसान जगायो॥ कै हरि हमको आनि मिलावहु कै ले चलिए साथे। सूर श्याम बिन प्राण तजत हैं बनै तुम्हारे माथे॥ ३०६३॥



राग धनाश्री

रे मधुकर कहा सिखावन आयो। एतौ नैन रूप रस राचे कह्यो न करत परायो॥ योग युक्ति हम कछू न जानैं ना कछु ब्रह्मज्ञानो। नवकिशोर मोहन मृदु मूरति तासों मन उरझानो॥ भली करी तुम आए ऊधो देखो दसा बिचारी। दाइ उपाइ मिलाइ सूर प्रभु आरति हरहु हमारी॥ ३०६४॥



राग सारंग

हमको हरि की कथा सुनाउ। ए आपनी ज्ञानगाथा अलि मथुरा ही लै जाउ॥ वै नर नारि नीके समुझेंगी तेरो वचन बनाउ। पालागौं ऐसी इन बातनि उनहीं जाइ रिझाउ॥ जो शुचि सखी श्यामसुंदर को अरु जिय अति सतिभाउ। तो वारक आतुर इन नैनन वह मुख आनि देखाउ॥ जो कोउ कोटि करै कैसेहू विधि विद्या व्यौसाउ। तो सुन सूर मीन के जल विनु नाहिंन और उपाउ॥३०७२॥



राग भोपाली

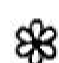
ऊधो हरि विनु ब्रज रिपु बहुरि जिये। जे हमरे देखत नँदनंदन हति हति हुते सो दूरि किये॥ निशि को रूप वकी बनि आवत अति भय करत सु कंप हिये। ताप हते तनु प्राण हमारे रविहु छिनक छँड़ाइ लिये॥ उर ऊँचे उसाँस तृणावर्त तिहि सुख सकल उड़ाइ दिए। कोटिक काली सम कालिंदी परसत सलिल न जात पिए॥ वन वकरूप अघासुर समघर कतहू तौन चितै सकिए। कैसो कठिन कर्म कैसो विन काको सूर शरन तकिए॥ ३०७३॥



राग सोरठ

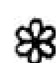
ऊधो तुम ब्रज की दशा विचारो। ता पाछे यह सिद्धि आपनी योगकथा विस्तारो॥ जा कारण तुम पठए माधो

सो सोचो जिय माहीं। कितोक बीच विरह परमारथ जानत हौ किधौं नाहीं॥ तुम परवीन चतुर कहियत हौ संतन निकट रहत हौ। जल बूड़त अवलंब फेन को फिरि फिरि कहा गहत हौ॥ वह मुसकानि मनोहर चितवन कैसे उर ते टारौ। योग युक्ति अरु मुक्ति परमनिधि वा मुरली पै वारौ॥ जिहि उर कमल नैन जु बसत हैं तिहि निर्गुण क्यों आवै। सूरदास सो भजन वहाऊँ जाहि दूसरो भावै॥ ३०७४॥



राग आसावरी

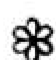
ऊधो कहाँ की प्रीति हमारे। अजहूँ रहत तन हरि के सिधारे॥ छिदि छिदि जात विरह शर मारे। पुरि पुरि आवत अवधि बिचारे॥ फटत न हृदय सँदेश तुम्हारे। कुलिश ते कठिन धुकत दोउ तारे॥ वर्षत नैन महा जलधारे। उर पाषाण विदरत न विदारे॥ जीवन वरन दोउ दुखभारे। कहियत सूर लाज पतिहारे॥ ३०७५॥



राग मलार

ह्याँ तुम कहत कौन की बातैं। सुन ऊधो हम समुझत नाहीं फिरि बूझति हैं तातैं॥ को नृप भयो कंस किन मारयो को वसुदेवसुत आहि। ह्याँ यशुदासुत परममनोहर जीजतु है मुख चाहि॥ नितप्रति जात धेनु वनचारन गोपसखन के संग। वासरगत रजनी मुख आवत करत नैन गति पंग॥

को अविनासी अगम अगोचर को विधि वेद अपार। सूर वृथा वकबाद करत कत इहि ब्रज नंदकुमार ॥ २०७९ ॥



राग मलार

ऊधो हरि काहे के अंतर्यामी। अजहुँ न आइ मिले इहि औसर अवधि बतावत लामी॥ कीन्ही प्रीति पुहुप शुंडा की अपने काज के कामी। तिनको कौन परेखो कीजै जे हैं गरुड़ के गामी॥ आई उघरि प्रीति कलईसी जैसी खाटी आमी। सूर इते पर खुनसनि मरियत ऊधो पीवत मामी ॥ २०८० ॥



राग मलार

मधुकर वह जानी तुम साँची। पूरणब्रह्म तुम्हारो ठाकुर आगे माया नाची॥ यह इहि गाउँ न समुझत कोऊ कैसो निर्गुण होत। गोकुल बाट परे नँदनंदन उहै तुम्हारो पोत॥ को यशुमति ऊखल सों बाँध्यो को दधिमाखन चोरे। कै ए दोऊ रूख हमारे यमला अर्जुन तोरे॥ को लै बसन चढ़्यो तरुशाखा मुरली मन औ करपै। कै रसरास रच्यो वृंदावन हरपि सुमन सुर वरपै॥ ज्यों डाक्यों तब कत बिन बूड़े काहे को जीभ पिरावत। तब जु सूर प्रभु गए क्रूर लै अब क्यों नैन सिरावत ॥ २०८१ ॥



राग कान्हरो

निर्गुण कौन देस को वासी। मधुकर कहि समुझाइ सौंह दै बूझति साँचत हाँसी॥ को है जनक कौन है जननी कौन नारि को दासी। कैसो वरन भेष है कैसो केहि रस में अभिलासी॥ पावैगो पुनि कियो आपनो जोर करैगो गासी। सुनत मौन ह्वै रह्यो बावरो सूर सबै मति नासी॥ ३०८२॥

❀

उद्धववचन। राग बिहागरो

गोपी सुनहु हरिसंदेस। कह्यो पूरण ब्रह्म ध्यावो त्रिगुण मिथ्या भेष॥ मैं कहौं सो सत्य मानहु त्रिगुण डारौ नाप। पंचत्रिय गुण सकल देही जगत ऐसो भाष॥ ज्ञान बिनु नर मुक्ति नाहीं यह विषै संसार। रूप रेख न नाम कुल गुण वरण अवर न सार॥ मात पितु कोउ नाहिं नारी जगत मिथ्या लाइ। सूर सुख दुख नाहिं जाके भजो ताको जाइ॥३११९॥

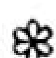
❀

(गोपियों ने उत्तर दिया—)

राग सारंग

ऐसी बात कहौ जिनि ऊधो। नँदनंदन की कान करत न तो आवत आखर मुख ते सूधो॥ बात नहीं उड़ि जाहि और ज्यों त्यों हम नाहिंन काची। मन क्रम वचन विशुद्ध एकमत कमलनैन रँगराची॥ सो कछु जतन करौ पा लागौं मिटै हृदय को शूल। मुरली धरे आनि दिखरावो बाढ़े प्रीति दुकूल॥

इनही बातन भए श्याम तनु अजहुँ मिलावत हो गढ़ि छोलि। सूर वचन सुनि रह्यो ठग्यो सो बहुरि न आयो बोलि ॥ ३१२० ॥



राग धनाश्री

ऊधोजी हमहि न योग सिखैए। जेहि उपदेस मिलै हरि हमको सो व्रत नेम बतैए ॥ मुक्ति रहो घर बैठि आपने निर्गुण सुनत दुख पैए। जिहि सिर केश कुसुम भरि गूँदे तेहि कैसे भसम चढ़ैए ॥ जानि जानि सब मगन भए हैं आपुन आपु लखैए। सूरदास प्रभु सुनहु नवोनिधि बहुरि कि या व्रज अइए ॥ ३१२४ ॥



राग मलार

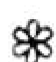
हम तो तबहीं ते योग लियो। जबहीं ते मधुकर मधुवन को मोहन गवन कियो ॥ रहित सनेह सरोरुह सब तन श्रीखंड भस्म चढ़ाए। पहिरि मेखला चीर चिरातन पुनि पुनि फेरि सिआए ॥ श्रुति ताटंक नैन मुद्रावलि औधि अधार अधारी। दरशनभिक्षा माँगत डोलत लोचन पत्र पसारी ॥ बाँधो वेणु कंठ शृंगी पिय सुमिरि सुमिरि गुण गावत। कर वर वेत दंड उर उर तन सुनत श्वान दुख धावत ॥ गोरख शब्द पुकारत आरत रस रसना अनुराग। भोग भुगति भूलेहु भावै नहिं भरी विरह वैराग ॥ भूली भई फिरति भ्रम श्रम के वन वीथिन दिन राति। वारक आवत कुटुंब यात्रा है सोऊ न सोहाति ॥

परम गुरू रतिनाथ हाथ सिर दियो प्रेम उपदेस । चतुर चेटकी मथुरानाथ सों कहियो जाइ आदेस ॥ भोगी को देखहु या ब्रज में योग देन जेहि आए । देखी सिद्धि तिहारे सिद्ध की जिनि तुम इहाँ पठाए ॥ सूर सुमति प्रभु तुमहिं लखायो हमरे सोई ध्यान । अलि चलि औरै ठौर देखावहु अपनो फोकट ज्ञान ॥ ३१२५ ॥



राग सोरठ

योग की गति सुनत मेरे अंग आगि वई । सुलगि सुलगि हम जरतिही तुम आनि फूँकि दई ॥ भोग कुबिजा कूबरी सँग कौन बुद्धि भई । सिंह भष तजि चरत तिनुका सुनी बात नई ॥ ध्यान धरत न टरत मूरति त्रिविध ताप तई । सूर हरि की कृपा जापर सकल सिद्धिमई ॥ ३१३१ ॥



राग धनाश्री

योग सँदेसो ब्रज में लावत । थाके चरण तुम्हारे ऊधो बार बार के धावत ॥ सुनिहै कथा कौन निर्गुण की रचि पचि बात बनावत । सगुन सुमेरु प्रकट देखियत तुम तृण की ओट दुरावत ॥ हम जानत परपंच श्याम के बात नहीं बौरावत । देखी सुनी न अब लगि कबहूँ जल मथि माखन आवत ॥ योगी योग अपार सिंधु में ढूँढ़े हूँ नहिं पावत । इहाँ हरि प्रकट प्रेम यशुमति के ऊखल आप बँधावत ॥ चुप करि रहौ ज्ञान ढकि

राखो कत हो विरह वढ़ावत। नंदकुमार कमलदललोचन कहि को जाहि न भावत॥ काहे को विपरीत बात कहि सबके प्राण गँवावत। सोहं सकित सूर अबलनि जिहि निगम नेति यश गावत॥ ३१३५॥



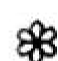
राग सारंग

मन तो मथुरा ही जो रह्यो। तब को गयो वहुरि नहिं आयो गहे गुपाल गह्यो॥ राख्यो रूप चुराइ निरंतर सों हरि शोधु लह्यो। आए और मिलावन ऊधो मन दै लेहु मर्यो॥ निर्गुण साटि गुपालहि माँगत क्यों दुख जात सह्यो। यह तनु यहि आधार आजु लगि ऐसे ही निबह्यो। सोई लेत छुड़ाइ सूर अब चाहत हृदय दह्यो॥ ३१४०॥



राग सारंग

मुक्ति आनि मंदे मो मेली। समुझि सगुन लै चले न ऊधो यह तुम पै सब पुजी अकेली॥ कै लै जाहु अनत ही वेचो कै लै राख जहाँ विषवेली। याहि लागि को मरै हमारे वृंदावन चरणन सों ढेली॥ धरे शीश घर घर डोलत हो एकै मति सब भई सहेली। सूरदास गिरिधरन छबीलो जिनकी भुजा कंठ गहि खेली॥ ३१४४॥



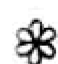
राग सारंग

ऊधो मन तौ एकै आहि। लै हरि संग सिधारे ऊधो योग सिखावत काहि॥ सुनि शठ नीति प्रसून रस लंपट अबलनि को घाँचाहि। अब काहे को लोन लगावत विरहअनल के दाहि॥ परमारथ उपचार कहत हो विरहव्यथा है जाहि। जाको राजरोग कफ वाढ़त दह्यो खवावत ताहि॥ अब लगि अवधि अलंबन करि करि राख्यों मनहि सवाहि। सूरदास या निर्गुण सिंधुहि कौन सकै अवगाहि॥ ३१४५॥



राग सारंग

ऊधो मन न भए दस बीस। एक हुतो सो गयो श्याम सँग को अवराधे ईस॥ इंद्री सिथिल भई केशो विन ज्यों देही बिन सीस। आसा लगी रहत तनु श्वासा जीजो कोटि बरीस॥ तुम तौ सखा श्यामसुंदर के सकल योग के ईश। सूरदास वा रस की महिमा जो पूँछै जगदीश॥ ३१४६॥



राग सारंग

ऊधो यह मन और न होई। पहिले हो चढ़ि रह्यो श्याम रँग छूटत नहिं देख्यो धोई॥ कै तुम वचन बड़े अलि हमसों सोई कह जो मूल। करत केलि वृंदावन कुंजन वा यमुना के कूल॥ योग हमहिं ऐसो लागत ज्यों तो चंपे को

फूल ॥ अब क्यों मिटत हाथ की रेखें कहौ कौन विधि कीजै। सूर श्याम मुख आनि देखावहु जेहि देखे दिन जीजै ॥३१४८॥



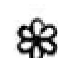
राग सारंग

ऊधो कहिए काहि सुनाइ। हरि बिछुरे हम जीती सहत हैं तिते बिरह के घाइ ॥ वरु माधो मधुबनहीं रहते कत यशुमति के आए। कत प्रभु गोपवेष ब्रज धार्‍यो कत ए सुख उपजाए ॥ कत गिरि धर्‍यो इंद्र प्रण मेट्यो कत वनराशि वनाए। अब कह निठुर भए अवलनि पर लिखि लिखि योग पठाए ॥ तुम परवीन सबै जानत हौ ताते यह कहि आई। आपन कौन चलावै सूर जिन मात पिता बिसराई ॥ ३१५९ ॥



राग मलार

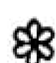
श्याम अब न हमारे। मथुरा गए पलटि से लीन्हें माधो मधुप तुम्हारे ॥ अब मोहिं आवत पतु पछतावो कैसे वै गुण जात बिसारे। कपटी कुटिल काग अरु कोकिल अंत भए उड़ि न्यारे ॥ करि करि मोह मगन व्रजवासी प्रेम प्रतीति प्राण धन वारे। सूर श्याम को कौन पत्यैहै कुटिलगात तनु कारे ॥ ३१६७ ॥



(श्याम रङ्ग की ओर इशारा करके कहती हैं—)

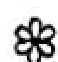
राग धनाश्री

मधुकर कहा कारे की जाति। ज्यों जल मीन कमल मधुपन को छिन नहिं प्रीति खटाति॥ कोकिल कपट कुटिल वायस छलि फिरि नहिं वह बन जाति। तैसे ही रसकेलि रस अचयो बैठि एक ही पाँति॥ सुत हित योग यज्ञव्रत कीजतु बहुबिधि नीकी भाँति। देखहु अहि मन मोह मया तजि ज्यों जननी जनि खाति॥ तिनको क्यों मन विषय में कीजै अवगुण लौं सुखसाति। तैसे सूर सुने यदुनंदन बजी एक रस ताँति॥ ३१६८॥



राग धनाश्री

श्याम सखी कारेहू में कारे। तिनसों प्रीति कहा कहि कीजै मारग छाँड़ि सिधारे॥ लोक चतुर्दश विभव कहत है पट्ठहि पत्र जल न्यारे। सरवर त्यागि विहंग उड़े ज्यों फिरि पाछे न निहारे॥ तव चितचोर भोर व्रजवासिन प्रेम नेम व्रत टारे। लै सरबस नहिं मिले सूर प्रभु कहिअत कुलट विचारे॥ ३१६९॥



राग मलार

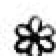
संदेसनि विरहव्यथा क्यों जाति। जब ते दृष्टि परी वह मूरति कमलवदन की काँति॥ अब तो जिय ऐसी बनिआई

कहो कोउ केहु भाँति। जोइ वह कहै सोई सो सुनो सखी युगवर रैनि विहाति॥ जौ लौं न भेटौं भुज भरि हरि को उर कंचुकी न सोहाति। सूरदास प्रभु कमलनयन बिनु तलफति अरु अकुलाति॥ ३१८४॥



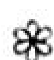
राग मलार

गोपालहि लै आवहू मनाइ। अब की बेर कैसेहु ऊधो करि छल बल गहि पाइ॥ दीजो उनहि सु सारि उरहनो संधि संधि समुझाइ। जिनहिं छाँड़ि व्रटिया महँ आए ते विकल भए यदुराइ॥ तुमसों कहा कहों हों मधुकर बातैं वहुत वनाइ। वहियाँ पकरि सूर के प्रभु की नंद की सौंह दिवाइ॥ ३१८६॥



राग केदारो

ऊधो श्याम इहाँ लै आवहु। व्रजजन चातक मरत पियासे स्वातिबूँद बरपावहु॥ इहाँ ते जाहु विलंब करहु जिनि हमरी दसा जनावहु। घोषसरोज भए हैं संपुट होइ दिनमणि विगसावहु॥ जो ऊधो हरि इहाँ न आवहिं तौ हमैं वहाँ बुलावहु। सूरदास प्रभु हमहिं मिलावहु तव तिहुँ पुर यश पावहु॥ ३१८७॥



राग केदारो

कहहु कहा हमते बिगरी। कौने न्याइ योग लिखि पठए हम सेवा कछुए न करी ॥ पाखंड प्रीति करी नँदनंदन अवधि अधार हुती सो टरी। मुद्रा जटा ऊधो लै आए ब्रज-बनिता पहिरो सगरी ॥ जाति स्वभाउ मिटै नहिं सजनी अंत तऊ बरी कुबरी। सूरदास प्रभु वेगि मिलहु किनि नातरु प्राण जात निकरी ॥ ३१८८ ॥



राग केदारो

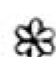
विरही कहाँ लौं आपु सँभारै। जब ते गंग परी हरि पग ते बहिबो नहीं निवारै ॥ नैनन ते बिछुरी भौंहैं भ्रम शशि अजहूँ तनु गारे। राम ते बिछुरी कमल कंठ भए सिंधु भए जरि छारे ॥ बैन ते बिछुरी विधि अवधि भई वेदहि को निरवारे। सूरदास जाके सब अंग बिछुरे केहि विद्या उपचारे ॥ ३१८९ ॥



उद्धववचन। राग मलार

वे हरि सकल ठौर के वासी। पूरण ब्रह्म अखंडित मंडित पंडित मुनिनविलासी ॥ सप्तपताल अध ऊर्ध्व पृथ्वीतल जल नभ वरुन बयारी। अभ्यंतर दृष्टी देखन को कारणरूप मुरारी ॥ मन बुधि चित अहंकार दशेन्द्रिय प्रेरक रथमन-कारी। ताके काज वियोग बिचारत ये अबला व्रजनारी ॥

जाको जैसो रूप मन रुचै सो अपवस करि लीजै। आसन बैसन ध्यान धारणा मन आरोहण कीजै ॥ षटदल अष्ट द्वादश-दल निर्मल अजपा जाप जपाली। त्रिकुटी संगम ब्रह्म द्वार भिदि यों मिलिहै वनमाली ॥ एकादशगीता श्रुति साखी जिहि विधि मुनि समुझाए। ते संदेस श्रीमुख गोपिन को सूर सुमधुप जनाए ॥ ३२६१ ॥



अथ गोपीवचन। राग कर्णाटी

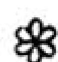
देखि रे प्रेम प्रगट द्वादश मीन। ऊधो एक बार नंदलाल राधिका बन ते आवत सखिहि सहित गिरिधर रसभीन ॥ गए नव कुंज कुसुमनि के पुंज अलि करैं गुंज सुख हम देखि भई लवलीन। षट उडुगण षट मनिधर राजत चौबीस घात केहि चित्र कीन ॥ षट इंदु द्वादश पतंग मनो मधुप सुनि खग चौअन माधुरी दस पीन। द्वादश बिंबाधर सो बानवे वज्र कन मानो षट दामिनि षट जलज हँसि दीन ॥ द्वादश धनुष द्वादशै विष्का मनमोहन षटै चिबुक चिह्न चित चीन। द्वादश [illegible]ल अधोमुख झूलत मधु मानो कंजदल सों बीसद्वै वंसीन ॥ द्वादशै मृणाल द्वादश कदली खंभ मानो द्वादश दारिम सुमन प्रवीन। चौबीस चतुष्पद शशि सौ बीस मधुकर अंग अंग रस कंद नवीन ॥ नील नीलै मिलि घटा विविध दामिनि मनो षोडश शृंगार शोभित हरिहीन। फिरि फिरि चक्र गगन में भ्रमी बतावत युवती योग मौन कहुँ कीन ॥ वचन

रचन रसरास नंदनंदन ते वही योग पौन हृदये लवलीन। नंद यशोदा दुखित गोपी गाय ग्वाल गोसुत सब मलिनगात दिन ही दिन दुखीन ॥ वकी वका शकटा तृण केशी वच्छ वृषभ रासभै अलि बिनु गोपाल इन वैर कीन। उद्धव यहाँ मिलाइ परैं पाँय तेरे सूर प्रभु आरति हरैं भई तनु छीन ॥ ३२६२ ॥



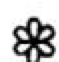
राग गौरी

मधुकर ल्याए योग सँदेसो। भली श्याम कुशलात सुनाई सुनतहि भयो अँदेसो ॥ आश रही जिय कबहुँ मिलै की तुम आवत ही नासी। युवतिन कहत जटा सिर बाँधौ तौ मिलिहैं अविनासी ॥ तुमको जिन गोकुलहि पठाए ते वसु-देव कुमार। सूर श्याम हमते कहुँ न्यारे होत न करत विहार ॥ ३२६३ ॥



राग रामकली

ऊधो मौनै साधि रहे। योग कहि पछितात मन मन बहुरि कछु न कहे ॥ श्याम को यह नहीं बूझे अतिहि रह्यो सिखाइ। कहा मैं कहि कहि लजानो नैन रह्यो नवाइ ॥ प्रथम ही कहि वचन एकै लियो गुरु करि मानि। सूर प्रभु मोको पठायो इहै कारण जानि ॥ ३२७२ ॥



राग कल्याण

कहा न कीजै अपने काजै। अब दिन दस ऐसो करि देखो जो हरि मिलैं योग के साजै॥ माथे जटा पहिरि उर कंथा लावहु भस्म अंग मुख माजै। सींगी बजाइ पहिरि मृगछाला लोचन मूँदि रहौ किन आजै॥ सन्मुख ह्वै शर सहौ सयानी नाहिंन वचन आजु के भाजै। योग विरह के बीच परमदुख मरियतु है यह दुसह दुराजै॥ ऊधो कहै सत्य करि मानो वर्षा वदत पंचमी गाजै। ज्यों यमुनाजल छाँड़ि सूर प्रभु लीन्हें वसन तजी कुललाजै॥ ३२७३॥



(गोपियों ने फिर कहा—)

राग सारंग

ऊधो कहा मति दीनो हमहिं गोपाल। आवहु री सखी सब मिलि सोचैं जो पावैं नँदलाल॥ घर बाहर ते बोलि लेहु सब जावदेक ब्रजबाल। कमलासन बैठहु री माई मूँदहु नैन विसाल॥ षटपद कही सोऊ करि देखी हाथ कछू नहिं आई। सुंदर श्याम कमलदललोचन नेकु न देत दिखाई॥ फिरि भई मगन विरहसागर में काहुहि सुधि न रही। पूरण प्रेम देखि गोपिन को मधुकर मौन गही॥ कछु ध्वनि सुनि श्रवणन चातक की प्राण पलटि तनु आए। सूर सो अबके टेरि पपीहै विरही मृतक जिवाए॥ ३२७४॥



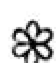
राग कान्हरो

ऊधो सूधे नेकु निहारो। हम अबलनि को सिखवन आए सुनो सयान तिहारो॥ निर्गुण कहो कहा कहियत है तुम निर्गुण अति भारी। सेवत सगुण श्यामसुंदर को मुक्ति लही हम चारी॥ हम सालोक्य स्वरूप सरोज्यो रहत समीप सहाई। सो तजि कहत और की औरै तुम अलि बड़े अदाई॥ हम मूरख तुम बड़े चतुर हो बहुत कहा अब कहिए। वेही काज फिरत भटकत कत अब मारग निज गहिए॥ अहो अज्ञान कतहि उपदेसत ज्ञानरूप हमही। निशिदिन ध्यान सूर प्रभु को अलि देखति जित तितही॥ ३२९० ॥



राग कान्हरो

ऊधो कोउ नाहिंन अधिकारी। लै न जाहु यह योग आपनो कत तुम होत दुखारी॥ यह तौ वेद उपनिषद को मत महापुरुष व्रतधारी। हम अवला अहीरि व्रजवासिनि देख्यो हृदय बिचारी॥ को है सुनत कहत कासों हो कौन कथा अनुसारी। सूर श्याम सँग जात भयो मन-अहि काँचुली उतारी॥ ३२९१ ॥



राग सारंग

हरि बिनु यह बिधि है व्रज जीजतु। पंकज वरषि वरषि उर ऊपर सारंग रिपु जल भीजतु॥ वायस अजा शब्द की

मिलवनि याही दुख तनु छीजतु। चन्द न चौथे जात गोपिन को मधुप परखि यश लीजतु ॥ तारापति अरि के सिर ठाढ़ो निमिष चैन नहिं कीजतु। सूरदास प्रभु वेगि कृपा करि प्रगट दरश मोहिं दीजतु ॥ ३३०१ ॥



राग सारंग

हमारे धनजीवन कृष्णमुकुंद। परमउदार कृपानिधि कोमल पूरण परमानंद ॥ निठुर वचन सुनि फटतु हियो यों रहु रे अलि मतिमंद। व्रजयुवतिन को सुगम जनावत योग युक्ति सुखद्वंद ॥ यहु तौ जाइ उनै उपदेसो सनकादिक स्वच्छंद। वारक हमैं दरश देखरावो सूर श्याम नँदनंद ॥ ३३०२ ॥



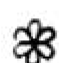
राग मलार

मधुकर मन सुनि योग डरै। तुमहूँ चतुर कहावत अतिही इतनी न समुझि परै ॥ और सुमन जो अनेक सुगंधिक शीतल रुचि जो करै। क्यों तुमको कहि वनै सरै ज्यों और सवै अनरै ॥ दिनकर महाप्रताप पुंजवर सबको तेज हरै। क्यों न चकोर छाँड़ि मृगअंकहि वाको ध्यान धरै ॥ उलटोइ ज्ञान सकल उपदेसत सुनि सुनि हृदय जरै। जंवूवृक्ष कहो क्यों लंपट फलवर अंवु फरै ॥ मुक्ता अवधि मराल प्राण मैं अव लगि ताहि चरै। निघटत निपट सूर ज्यों जल विनु व्याकुल मीन मरै ॥३३११॥



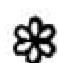
राग आसावरी

ऊधो योग योग हम नाहीं। अबला सार ज्ञान कहा जानैं कैसे ध्यान धराहीं॥ ते ये मूँदन नैन कहत हैं हरि-मूरति जा माहीं। ऐसे कथा कपट की मधुकर हमते सुनी न जाहीं॥ श्रवण चीर अरु जटा बँधावहु ए दुख कौन समाहीं। चंदन तजि अँग भस्म बतावत विरहअनल अति दाहीं॥ योगी भरमत जेहि लगि भूले सो तो है अपु माहीं। सूर श्याम ते न्यारे न पल छिन ज्यों घट ते परछाहीं॥ ३३१२॥



राग केदारो

ऊधो सुनिहो वात नई सी। प्रेमवानि की चोट कठिन है लागी होइ कहो कत ऐसी॥ तुमहिं विचारि कहा कहि दीजे आनि कहत रे जैसी। जानै कहा बाँझ व्यावर दुख जातक जननहि पीर है कैसी॥ हम वावरी न आनि बौरावत कहत न तुम्हैं वूझिए ऐसी। सूरदास न्याइ कुबिजा को सरवसु लेइ हमारो वैसी॥ ३३२९॥



यशोमतिवचन। राग केदारो

ऊधो उदित भई सब दुख की करनी। व्रजवेली सब सूखन लागीं बात कही नँद घरनी॥ कमलवदन कुँभिलात सबन के गौवन छाड़ी तृण की चरनी। सुख संपति बिति गयो सबन की लागी अलि अनजल की झरनी॥ देखो चारु चन्द्र-

मुख शीतल विन दरशन क्यों मिटती जरनी। सुतसनेह समुझति सु सूर प्रभु फिरि फिरि यशुमति परती धरनी ॥३३३०॥



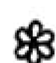
राग सारंग

जैसे कियो तुम्हारे प्रभु अलि तैसो भयो ततकाल। ग्रंथित सूत धरत तेहिं ग्रीवा जहाँ धरते बनमाल ॥ टेरि देत श्रीदामा द्रुम चढ़ि सरस व्रचन गोपाल। ते अब श्रवण अक्रूर प्रमुख सब कहत कंस कुशलात ॥ कोमल नील कुटिल अलकावलि रेखी राजत भाल। ऐसे सर त्यागे सुन सूरज फन्दा न्याइ मराल ॥ ३३३३ ॥



राग मलार

विरचि मन वहुरि राचो आइ। टूटी जुरै वहुत जतननि करि तऊ दोष नहिं जाइ ॥ कपट हेतु की प्रीति निरन्तर नोधि चोखाइ गाइ। दूध फाटि जैसे भइ काँजी कौन स्वाद करि खाइ ॥ केरा पासि ज्यों वेरि निरन्तर हालत दुख दै जाइ। स्वातिबूँद जैसे परै फनिकमुख परत विषै है जाइ ॥ एती केती तुमरी उनकी कहत बनाइ वनाइ। सूरजदास दिगम्बरपुर ते रजक कहा व्योसाइ ॥ ३३३४ ॥



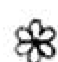
राग मलार

ऊधो तुम हो अति बड़भागी। अपरस रहत सनेहतगा ते नाहिंन मन अनुरागी॥ पुरइनिपात रहत जल भीतर तारस देह न दागी। ज्यों जल माँह तेल की गागरि बूँद न ताको लागी॥ प्रीतिनदी महँ पाँव न बोरयो दृष्टि न रूप परागी। सूरदास अबला हम भोरी गुर चैंटी ज्यों पागी॥ ३३३५॥



राग काफी

आयो घोष बड़ो व्यापारी। लादि पोप गुणज्ञान योग की व्रज में आनि उतारी॥ फाटक दैकै हाटक भागत भोरो निपट सुधारी। धुरही ते खोटो खायो है लिये फिरत सिर भारी॥ इनके कहे कौन डहकावै ऐसी कौन अनारी। अपनो दूध छाँड़ि को पीवै खारे कूप को वारी॥ ऊधो जाहु सवेरे ह्याँ ते वेगि गहर जनि लावहु। मुख माँगो पैहो सूरज प्रभु साहुहि आनि दिखावहु॥ ३३४०॥



राग धनाश्री

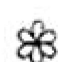
ऊधो योग कहा है कीजतु। ओढ़िअत है की डसिअत है कीधौं कहिअत कीधौं जु पतीजत॥ की कछु भलो खेल-वनी सुंदरि की कछु भूषण नीको। हमरे नँदनंदन जो कहिअत जीवन जीवन जी को॥ तुम जो कहत हरि निगम निरन्तर निगम नेति हैं रीति। प्रगट रूप की राशि मनोहर क्यों

छाँड़े परतीति ॥ गाइ चरावन गए घोष ते अबहीं हैं फिरि आवत। सोई सूर सहाय हमारे वेणु रसाल बजावत ॥ ३३४१ ॥



राग मलार

हम अलि कैसे कै पतिआहिं। वचन तुम्हारे हृदय न आवत क्योंकर धीर धराहिं ॥ वपु आकार भेष नहिं जाको कौन ठौर मन लागे। हौं करि रही कंठ में मनिआ निर्गुण कहा रसहि ते काज ॥ सूरदास सर्गुण मिलि मोहन रोम रोम सुखराज ॥ ३३५२ ॥



राग मलार

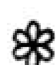
मधुकर जानत हैं सब कोऊ। जैसे तुम अरु सखा तिहारे गुणन आगरे दोऊ ॥ सुफलकसुत कारे नख-शिख ते कारे तुम अरु वोऊ। सरबस हरन करत अपने सुख कोउ कितो गुण होऊ ॥ प्रेम कृपण थोरे वित वपुरी उबरत नाहिंन सोऊ। सूर सनेह करै जो तुमसों सो पुनि आप विगोऊ ॥ ३३५३ ॥



राग मलार

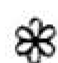
मधुकर तुम रसलंपट लोग। कमलकोष नित रहत निरंतर हमहिं सिखावत योग ॥ अपने काज फिरत बन अंतर निमिष नहीं अकुलात। पुहुप गए बहुरौ वल्लिन के नेक

निकट नहिं जात ॥ तुम चंचल अरु चोर सकल अँग बातन को पतिआत। सूर बिधाता धन्य रचे एइ मधुप साँवरे गात ॥ ३३५४ ॥



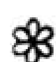
राग मलार

मधुकर नाहिंन काज सँदेसो। इहि ब्रज कौने योग लिख्यो है कोटि जतन उपदेसो ॥ रवि के उदय मिलन चकई को शशि के समय अँदेसो। चातक क्यों बन वसत बापुरो बधिकहि काज बधे सो ॥ नगर आहि नागर बिनु सूनो कौन काज बसिबे सो। सूर स्वभाव मिटै क्यों कारे फनिकहि काज डसे सो ॥ ३३६५ ॥



राग मलार

ऊधो हम वह कैसे मानैं। धूत धौल लंपट जैसे हरि तैसे और न जानैं ॥ सुनत सँदेस अधिक तनु कंपत जनि कोउ डर तहाँ आनै। जैसे बधिक गँवहि ते खेलत अंत धनुहिया तानै ॥ निर्गुण वचन कहहु जनि हमसों ऐसी करटि न कानै। सूरदास प्रभु की हौं जानों और कहै औरै कछु ठानै ॥३३६६॥



राग मलार

ऊधो नंद को गोपाल गिरिधर गयो तृण जो तोर। मीन जल की प्रीति कीनी नाहिं निबही वोर ॥ अबकै जब हम

दरश पावैं देहिं लाख करोर। हरि सों हीरा खोइ कैहैं रहि समुंद्र ढँढोर ॥ ऊधो हमारो कछु दोष नाहीं वै प्रभु निपट कठोर। हौं जपौं तुम नाम निशि दिन जैसे चंद्र चकोर ॥ हम दासी बिन मोल की ऊधो ज्यों गुड्डी वस डौर। सूर को प्रभु दरश दीजै नहीं मनसा और ॥ ३३८३ ॥



राग सोरठ

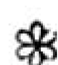
ऊधो अवरै कान्ह भए। जब ते यह व्रज छाड़ि मधुपुरी कुब्जिाधाम गए ॥ कै वह प्रीति रीति गोकुल बसि दुख सुख प्रीति निबाहत। अब इह करत वियोग देह द्रुम सुनत काम दव डाहत ॥ जहाँ स्वारथ हरि गुण साँवरो निर्गुण कपट सुनावत। सूर सुमिरि व्रजनाथ आपने कत न परेखो आवत ॥ ३३८४ ॥



उद्धववचन। राग धनाश्री

यह उपदेस कह्यो है माधो। करि विचार सन्मुख ह्वै साधो ॥ इंगला पिंगला सुषमना नारी। सून्यो सहज में बसहिं मुरारी ॥ ब्रह्मभाव करि मैं सब देखो। अलख निरंजन ही को लेखो ॥ पद्मासन इक मन चित ल्यावो। नैन मूँदि अंतर्गति ध्यावो ॥ हृदयकमल में ज्योति प्रकाशी। सो अच्युत अविगति अविनाशी ॥ याहि प्रकार विषम तम तरिए। योगपंथ क्रम क्रम अनुसरिए ॥ दुसह सँदेस सुनत व्रजबाला।

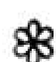
मुरछि परी धरणी बेहाला ॥ अरे मधुप लंपट अनिआई। यह सँदेस कत कहैं कन्हाई ॥ नंदभवन में सदा विराजै। नटवर भेष सदा हरि राजै ॥ रास विलास करैं वृंदावन। विच गोपी बिच कान्ह श्यामघन ॥ अलि आयो है योग सिखावन। देखि प्रीति लागे सिर नावन ॥ भवँरगीत जो दिन दिन गावै। ब्रह्मानंद परमपद पावै ॥ सूर योग की कथा बहाई। शुद्ध भक्ति गोपी जन पाई ॥ साँचो मतो जौ जिहि विधि धावै। तैसो भाव हरि हिय भरि पावै ॥३४०८॥



अथ गोपीवचन। राग धनाश्री

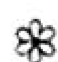
इहाँ हरिजी बहु क्रीड़ा करी। सो तो चित ते जात न टरी॥ इहाँ पय पीवत बकी संहारी। शकट तृणावर्त इहाँ हरि मारी॥ वत्सासुर को इहाँ निपात्यो। बका अघा इहाँ हरिजी घात्यो॥ हलधर मारयो धेनुक को इहाँ। देखो ऊधो हत्यो प्रलंब जहाँ॥ इहाँ ते ब्रह्मा हमको गयो हरि। और किए हरि लगी न पलक घरि॥ ते सब राखे संपति नरहरि। तब इहाँ ब्रह्मा आय अस्तुति करि॥ इहाँ हरि काली उर्ग निकास्यो। लगेउ जरावन अनल सो नास्यो॥ वस्त्र हमारे हरि जु इहाँ हरि। कहाँ लगि कहिए जे कौतुक करि॥ हरि हलधर इहाँ भोजन किए। विप्रतियन को अति सुख दिए॥ इहाँ गोवर्धन कर हरि धारयो। मेघवारि ते हमैं निवारयो॥ शरदनिशा में रास रच्यो इहाँ। सो सुख हमपै

बरण्यो जात कहाँ ॥ वृषभ असुर को इहां सँहारयो । भ्रम अरु केशी इहां पछारयो ॥ इहाँ हरि खेलत आँखिमुचाई । कहाँ लगि बरनैं हरिलीला गाई ॥ सुनि सुनि ऊधो प्रेम-मगन भयो । लोटत धर पर ज्ञानगर्व गयो ॥ निरखत व्रज-भूमि अति सुख पावै । सूर प्रभू को पुनि पुनि गावै ॥३४०९॥



राग धनाश्री

ऊधो जो करि कृपा पाउँ धरत हरि तौ मैं तुमहिं जनावों । मौन गहे तुम बैठि रहो हो मुरली शब्द सुनावों ॥ अबहिं सिधारे बन गोचारन हौं बैठी यश गावों । निसिआगम श्रीदामा के सँग नाचत प्रभुहि देखावों ॥ को जानै दुविधा संकोच में तुम डर निकट न आवै । तब इह द्वंद बढ़ै पुनि दारुण सखियन प्राण छोड़ावै ॥ छिन न रहै नँदलाल इहां बिन जो कोउ कोटि सिखावै । सूरदास ज्यों मन ते मनसा अनत कहूँ नहिं धावै ॥ ३४१० ॥

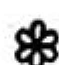


(इतना सुनकर ऊधोजी का भाव बदल गया और वह बोले—)

राग सारंग

मैं व्रजवासिन की बलिहारी । जिनके संग सदा हैं क्रीड़त श्रीगोवर्धनधारी ॥ किनहूँ के घर माखन चोरत किनहूँ के सँग दानी । किनहूँ के सँग धेनु चरावत हरि की अकथ कहानी ॥

किनहूँ के सँग यमुना के तट बंसी टेर सुनावत। सूरदास वलि वलि चरणन की इह सुख मोहिं नित भावत॥ ३४११॥



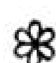
राग सारंग

हौं इहि मोरन की बलिहारी। बलिहारी वा बाँस वंश की बंसीसी सुकुमारी। सदा रहत है करज श्याम के नेकहु होत न न्यारी॥ बलिहारी वा कुंजजात की उपजी जगत उजि-यारी। सदा रहत हृदये मोहन के कबहूँ टरत न टारी॥ बलिहारी कुल शैल सर्व विधि कहत कालिंदिदुलारी। निशि दिन कान्ह अंग आली गण आपुनहूँ भईं कारी॥ बलिहो वृंदावन के भूमिहि सो तो भागकि सारी। सूरदास प्रभु नाँगे पाँयन दिनप्रति गैया चारी॥ ३४१२॥



अथ गोपीवचन। राग मारू

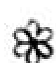
अलि तुम जाहु फिरि वहि देस। चीर फारि करिहौं भगौहैं शिखनि शिखि लवलेस॥ भाल लोचन चन्द्र चमकनि कठिन कंठहि सेस। नाद मुद्रा विभूति भारी करैं रावर भेस॥ वहाँ जाइ सँदेस कहियो जटा धारैं केश। कौन कारण नाथ छाँड़ी सूर इहै अँदेश॥ ३४१३॥



राग मलार

हम पर हेतु किए रहिबो। वा व्रज को व्यवहार सखा तुम हरि सों सब कहिबो॥ देखे जात अपनी इन अँखियन

या तन को दहिबो। बरनौं कहा कथा या तनु की हिरदै को सहिबो ॥ तब न कियो प्रहार प्राणनि को फिरि फिरि क्यों चहिबो। अब न देह जरि जाइ सूर इन नैनन को बहिबो ॥३४१४॥



राग मलार

अपने जिय सुरति किए रहिबो। ऊधो हरि सों इहै बीनती समो पाइ कहिबो ॥ घोष बसत की चूक हमारी कछू न चित गहिबो। परमदीन यदुनाथ जानिकै गुण विचारि सहिबो ॥ अबकी बेर दयालु दरश दै दुख की राशि दहिबो। सूर श्याम हम कहैं कहाँ लग वचनलाज बहिबो ॥ ३४१५ ॥



राग कल्याण

यदुपति को सँदेस सखी री कैसे कै कहौं। बिनहीं कहे आपनेहि मन में कब लग शूल सहौं ॥ जो कछु बात बनाऊँ चित में रचि पचि सोचि रहौं। मुख आनत ऊधो तन चितवत नवहु विचार बहौं ॥ सो कछु सीख देहु मोहिं सजनी जाते धीर गहौं। सूरदास प्रभु के सेवक सों बिनती करि निबहौं ॥ ३४१६ ॥



राग बिलावल

कर कंकन ते भुज ठाढ़ भई। मधुवन चलत श्याम मन-मोहन आवन अवधि जु निकट दई ॥ जो अति पंथ मनावत

शंकर निसिवासर मो गनत गई। पाती लिखत विरह तनु व्याकुल कागर ह्वै गयो नीर मई ॥ ऊधो मुख के वचनन कहियो हरि की नितप्रति शूल नई। सूरदास प्रभु तुम्हरे दरश को विरह वियोगिन विकल भई ॥ ३४१७ ॥



राग कल्याण

कहियो मुख सँदेस हाथ लै दीजो पाती। समय पाइ व्रजबात चलाई सुख ही माँझ सुहाती ॥ हम प्रतीत करि सरवस अरप्यो गन्यो नहीं दिनराती। नँदनंदन यह जुगत न होई लै जु रहे मनु थाती ॥ जो तब साधि दीज तौ कोऊ तो अब कत पछताती। सूरदास प्रभु मुकुर जानती तौ सँग लीन्हें जाती ॥ ३४१८ ॥



राग धनाश्री

ऊधो नँदनंदन सों इतनी कहियो। यद्यपि व्रज अनाथ करि डारयो तदपि सुरति चित किये रहियो ॥ तिनकी तोर करहु जिनि हमसों एक बीस की लाज निबहियो। गुण अवगुण देखि नहिं कीजतु दासन दास की इतनी सहियो ॥ तुम बिन प्राण त्याग हम करिहैं यह अवलंब न सुपनेहु लहियो। सूरदास प्रभु लिखि दे पठयो कहाँ योग कहाँ पियनंद-हियो ॥ ३४१९ ॥

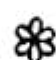
राग नट

ऊधो इतनी जाइ कहो। सबै विरहिनी पाइँ लागति हैं मथुरा कान्ह रहो॥ भूलिहि जिनि आवहिं यहि गोकुल तप्त रैनि ज्यों चंद। सुंदर वदन श्याम कोमलतनु क्यों सहिहैं नँदनंद॥ मधुकर मोर प्रबल पिक चातक वन उपवन चढ़ि बोलत। मनहुँ सिंह की गर्ज सुनत गो वत्स दुखित तनु डोलत॥ आसन भए अनल विष अहि सम भूषण विविध विहार। जित जित फिरत दुसहु द्रुम द्रुम प्रति धनुप धरे मनु मार॥ तुम हो संत सदा उपकारी जानत हौ सब रीति। सूरदास ब्रजनाथ बचै तौ ज्यों नहिं आवै ईति॥ ३४२०॥



राग मलार

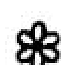
मधुकर इतनी कहियहु जाइ। अति कृश गात भई ए तुम बिनु परमदुखारी गाइ॥ जलसमूह बरषति दोउ आँखैं हूँकति लीने नाँ। जहाँ तहाँ गोदोहन कीनो सूँघति सोई ठाउँ॥ परति पछार खाइ छिन ही छिन अति आतुर ह्वै दीन। मानहु सूर काढ़ि डारी है वारि मध्य ते मीन॥ ३४२१॥



राग नट

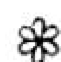
तुम बिनु हम अनाथ ब्रजबासी। इतनो सँदेसो कहियो ऊधो कमलनैन बिनु त्रासी॥ जा दिन ते तुम हमसों बिछुरे भूख नींद सब नासी। विह्वल विकल कलहू न परत तनु ज्यों

जल मीन निकासी ॥ गोपी ग्वाल वाल वृंदावन खग मृग फिरत उदासी। सबई प्राण तज्यो चाहत हैं को करवत को कासी ॥ अंचल जोरे करत बीनती मिलिबे को सब दासी। हमरो प्राणघात ह्वै निवरे तुम्हरे जाने हाँसी ॥ मधुकर कुसुम न तजत सखी री छाँड़ि सकल अविनासी। सूर श्याम बिन यह बन सूनो शशि बिनु रैनि निरासी ॥ ३४२२ ॥



राग धनाश्री

सबै करति मनुहारि ऊधो कहियो हो जैसे गोकुल आवैं। दिन दस रहे सु भली कीन्हीं अब जनि गहरु लगावैं ॥ नहिंन सोहात कछू हरि तुम बिनु कानन भवन न भावै। धेनु विकल सो चरत नहीं तृण बछा न पीवन धावै ॥ देखत अपनी आँखि तुमहिं तन और कहा बातन समुझावैं। सूरदास प्रभु कठिन हीन तन कत अब वै ब्रजनाथ कहावैं ॥ ३४२३ ॥



राग गौरी

ऊधो हरि बेगहि देहु पठाइ। नँदनंदन दरशन बिनु रटि मरौं ब्रज अकुलाइ ॥ मातु यशुमति-सहित ब्रजपति परे धरणि मुरझाइ। अति विकल तनु प्राण त्यागत करै कछु गति आइ ॥ सकल सुरभी यूथ दिन प्रति रुदति पुर दिश धाइ। जहाँ जहाँ दुहि बन चराई मरति तहाँ बिललाइ ॥ परमप्यारी शरद राधिका

लई गृह दुख छाइ। तजत चक्र न वक्र चख बिनु करै कोटि उपाइ॥ योगपद लै देहु योगिहि हमहिं योग मिलाइ। मधुप बिछुरे वारि मीनहि अनत कहा सोहाइ॥ आजु जेहि विधि श्याम आवैं कहो तेहि बिधि जाइ। सूरदास विरह ब्रजजन जरत लेहु बुझाइ॥ ३४२४॥



राग केदारो

ऊधो एक मेरी बात। बूझियो हरवाइ हरि सों प्रथम कहि कुशलात॥ तुम जो इह उपदेस पठायो आनि योग मन ज्ञान। सत्यहू सब वचन झूठो मानिए मन न्यान॥ और ब्रज कहि दूसरोहू सुन्यो कहा बलवीर। जाहि बरजन इहाँ पठयो करि हमारी पीर॥ आपु जब ते गए मथुरा कहत तुमसों लोग। सहज ही ता दिवस ते हम भूलियो भय भोग॥ प्रगट पति पितु मात प्रभु जन प्राण तुम आधीन। ज्यों चकोरहि सँग चकोरी चित्त चंदहि लीन॥ रूप रसन सुगंध परसन रुचि न इंद्रिन आन। होति हाँस न ताहि विष की कियो जिन मधुपान॥ ह्वै गए मन आपुही सब गिनत गुन गन ईश। ज्ञान की अज्ञान ऊधो तृण तोरि दीजै शीश॥ बहुत कहा कहैंहि केशोराइ परम प्रवीन। सूर सुमत न छाँड़िहैं जहाँ जिवत जल विन मीन॥ ३४२६॥



(ऊधोजी फिर बोले—)

राग नट

अब अति चकितवंत मन मेरो। आयो हों निर्गुण उपदेशन भयो सगुन को चेरो॥ मैं कछु ज्ञान कह्यो गीता को तुमहिं न परह्यो नेरो। अति अज्ञान जानिकै अपनो दूत भयो उन केरो॥ निज जन जानि हरि इहाँ पठायो दीनो बोझ घनेरो। सूर मधुप उठि चले मधुपुरी बोरि योग को बेरो॥ ३४३१॥



गोपीवचन। राग केदारो

ऊधो तिहारे मैं चरणन लागौं बारक यहि ब्रज करियो बिभावरी। निशि न नींद आवै दिवस न भोजन भावै चितवत मग भई दृष्टि झावरी॥ एक श्याम बिन कछू न भावै रटत फिरत जैसे वकत बावरी। या वृंदावन सघन श्याम बिनु तहाँ यमुना बहै सुभग साँवरी॥ लाज न होति उहै चलि जाती चलि न सकति आवै बिरहताव री। सूरदास प्रभु आनि मिलावहु ऊधो कीरति होइ रावरी॥ ३४३२॥



अथ यशोमति-संदेश उद्धवप्रति। राग धनाश्री

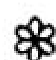
ऊधो तिहारे पाँइ लागति हौं कहियो श्याम सों इतनी बात। इतनी दूर वसत क्यों बिसरे अपनी जननी तात॥ जा दिन ते मधुपुरी सिधारे श्याम मनोहरगात। ता दिन ते मेरे नैन पपीहा दरश प्यास अकुलात॥ जहाँ खेलन को

ठैर तुम्हारे नंद देखि मुरझात। जो कबहूँ उठि जात खरिक लौं गाइ दुहावन प्रात॥ दुहत देखि औरन के लरिका प्राण निकसि नहिं जात। सूरदास बहुरो कब देखौं कोमल कर दधि खात॥ ३४३३॥



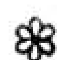
राग मलार

तब तुम मेरे काहे को आए। मथुरा क्यों न रहे यदु-नंदन जोपै कान्ह देवकी जाए॥ दूध दही काहे को चोरयो काहे को वन गाइ चराए। अघ अरिष्ट काली नाहिं काढ़यो विपजल ते सब सखा जिआए॥ सूरदास लोगन के भोरए काहे कान्ह अब होत पराए॥ ३४३४॥



राग सोरठ

ऊधो हम ऐसे नहिं जानी। सुत के हेत मर्म नहिं पायो प्रगटे शारँगपानी॥ निशिवासर छाती सों लाई बालकलीला गाइ। ऐसे कबहूँ भाग होहिंगे बहुरो गोद खेलाइ॥ को अब ग्वाल सखा सँग लीन्हें साँझ समै व्रज आवै। को अब चोरि चोरि दधि खैहै मैया कवन बोलावै॥ विदरत नाहिं वज्र की छाती हरिवियोग क्यों सहिए। सूरदास अब नँद-नंदन बिनु कहो कौन विधि रहिए॥ ३४३५॥



राग धनाश्री

ऊधो जो अब कान्ह न ऐहैं। जिय जानौ अरु हृदय विचारो हम अतिही दुख पैहैं ॥ पूँछो जाइ कवन को ढोटा तब कहा उत्तर दैहैं। खायो खेले संग हमारे याको कहा बतैहैं ॥ गोकुल अरु मथुरा के वासी कहाँ लौं झूठे कैहैं। अब हम लिखि पठयो चाहत हैं वहाँ पता नहिं पैहैं ॥ इन गायन चरवो छाँड़ो है जो नहिं लाल चरैहैं। इतने पर नहिं मिलत सूर प्रभु फिरि पाछे पछितैहैं ॥ ३४३६ ॥



राग सारंग

तब ते छीन शरीर सुभाहु। आधो भोजन सुबल करत है ग्वालन के उर दाहु ॥ नंद गोप पिछवारे डोलत नैनन नीर प्रवाहु। आनद मिट्यो मिटी सब लीला काहु न मन उत्साहु ॥ एक बेर बहुरो ब्रज आवहु दूध पतूखी खाहु। सूर सुपथ गोकुल जो वैठहु उलटि मधुपुरी जाहु ॥ ३४३७ ॥



राग नट

कहियो यशुमति की आशोस। जहाँ रहो तहाँ नंद-लाड़िलो जीवो कोटि वरीस ॥ मुरली दई दोहनी घृत भरि ऊधो धरि लई सीस। इह घृत तौ उनहीं सुरभिन को जो प्यारी जग-दीस ॥ ऊधो चलत सखा मिलि आए ग्वालवाल दस बीस। अबके इहाँ ब्रज फेरि बसावो सूरदास के ईस ॥ ३४३८ ॥

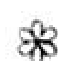
अथ सखावचन । राग बिलावल

ऊधो देखत हो जैसे ब्रजवासी । लेत उसाँस नैन जल-पूरित सुमिरि सुमिरि अविनासी ॥ भूलि न उठत यशोदा जननी मनो भुअंगम डासी । छूटत नहीं प्राण क्यों अटके कठिन प्रेम की फाँसी ॥ आवत नहीं नंद मंदिर में वहयो फिरत पनियासी । प्रेम न मिले धेनु दुर्बल भई श्यामविरह की त्रासी ॥ गोपी ग्वाल सखा बालक सब कहूँ न सुनियत हासी । काहे दियो सूर सुख में दुख कपटी कान्ह लवासी ॥ ३४३९ ॥



उद्धववचन । राग सारंग

धन्य नंद धन यशुमति रानी । धन्य कान्ह प्रकटे सुख-दानी ॥ धन्य ग्वाल धन्य धन्य गोपिका जेहि खेलाए शारँग-पानी । धन्य ब्रजभूमि धन्य वृंदावन जहाँ अविनासी आए ॥ धन्य धन्य सूर आजु हमहूँ जो तुम सब देखे आए* ॥३४४०॥



---

* उद्धव और गोपियों की बातचीत के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्ध अध्याय ४७। लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ४८।

इसी को भँवरगीत कहते हैं। कथा है कि जब गोपियाँ उद्धव से बातें कर रही थीं तब एक काला भौंरा गूँजता हुआ आ पहुँचा। उसी को सम्बोधन करके गोपियाँ बातें करने लगीं। संस्कृत, हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में भँवरगीत गाने में कवियों ने क़लम तोड़ दी है।

(ऊधोजी मथुरा आए और कृष्ण से मिले। कृष्ण से इस प्रकार वार्तालाप हुआ।)

राग सारंग

ऊधो जब ब्रज पहुँचे जाइ। तब की कथा कृपा करि कहिए हम सुनिहैं मन लाइ॥ बावा नंद यशोदा मइया मिले

हिन्दी में सूरदास से उतरकर नन्ददास का भँवरगीत है। उदाहरणार्थ कुछ पद उद्धृत करते हैं—

(उद्धव) वै तुमतें नहिं दूरि ज्ञान की आँखिन देखो,
अखिल विस्व भरि पूरि ब्रह्म सब रूप विसेखौ।
लोह दारु पाषाण में जल थल महि आकास,
सचर अचर बरतत सबै ज्योतिहि रूप प्रकास।
सुनो व्रजनागरी।

(गोपी) कौन ब्रह्म की जोति ज्ञान कासों कहो ऊधो,
हमरे सुन्दर स्याम प्रेम को मारग सूधो।
नैन बैन स्रुति नासिका मोहन रूप लखाय,
सुधि बुधि सब मुरली हरी प्रेम ठगोरी लाय।
सखा सुन स्याम के।

(उ॰ व) यह सब सगुण उपाधि रूप निर्गुण है उनको,
निरविकार निरलेप लगत नहिं तीनों गुण को।
हाथ न पाय न नासिका नैन बैन नहिं कान,
अच्युत ज्योति प्रकासही सकल विस्व को प्रान।
सुनो व्रजनागरी।

(गोपी) जो मुख नाहिंन हतो कहो किन माखन खायो,
पायन बिन गोसङ्ग कहो बन बन को धायो?

सबन हित आइ। कबहूँ सुरति करत माइन की किधौं रहे बिसराइ॥ गोपसखा दधि खात भात वन अरु चाखते

आंखिन में अञ्जन दयो गोवर्द्धन हाथ,
नन्द-यसोदा-पूत है कुँवर कान्ह व्रजनाथ।
सखा सुन स्याम के।

(उद्धव) जाहि कहत तुम कान्ह ताहि कोउ पिता न माता,
अखिल अण्ड ब्रह्मण्ड विस्व उनही में जाता।
लीला गुण अवतार है धरि आए तन स्याम,
जोग जुगत ही पाइए परब्रह्म पुरधाम।
सुनो व्रजनागरी।

(गोपी) ताहि बतावो जोग जोग ऊधो तहँ जावो,
प्रेमसहित हम पास स्यामसुंदर-गुण गावो।
नैन बैन मन प्रान में मोहन-गुण भरपूर,
प्रेम-पियूषै छोड़िकै कौन समेटै धूर।
सखा सुन स्याम के।

भौंरे को इशारा करके गोपियाँ कहती हैं—
कोउ कहै री विस्व मांझ जेते हैं कारे,
कपट कुटिल की कोटि परम मानुप मसिहारे।
एक श्याम तन परसिके जरत आज लौं अंग,
ता पाछे यह मधुप ह्रू लायो जोग-भुवंग।
कहाँ इनको दया ?

कोई कहै री मधुप भेप उनही को धारयो,
स्याम पीत गुंजार बैन किंकिणि झनकारयौ।
वापुर गोरस चोरिकै फिर आयो यहि देस,
इनको जनि मानहु कोऊ कपटी इनको भेस।
चोरि जनि जाय कछु।

चराइ। गऊ बच्छ मुरली सुनि उमड़त अबहिं रहत कोहि
भाइ॥ गोपिन गृहव्योहार बिसारे मुख सन्मुख सुख पाइ।

कोऊ कहै रे मधुप कहैं अनुरागी तुमको,
कौने गुण धौं जानि एहु अचरज है हमको।
कारो तन अति पातकी मुख पियरो जगनिन्द,
गुन अवगुन सब आपनो आपुहि जानि अलिन्द।
देखि लै आरसी

कोउ कहै रे मधुप कहा तू रस को जानै,
बहुत कुसुम पै बैठि सबै आपन सम मानै।
आपन सम हमको कियो चाहत है मतिमन्द,
दुबिधा ज्ञान उपजायकै दुखित प्रेम आनन्द।
कपट के छन्द सों।

सोऊ कहै रे मधुप कहा मोहन-गुन गावै,
हृदय कपट सों परम प्रेम नाहिं न छवि पावै।
जानति हौ सब भाँति कै सरबस लयो चुराय,
यह बौरी ब्रजबासिनी को जो तुम्हें पतियाय।
लहे हम जानिकै।

कोऊ कहै रे मधुप कौन कहै तुम्हैं मधुकारी,
लिये फिरत मुख जोग गाँठ काटत बेकारी।
रुधिर-पान कियो बहुतकै अरुन अधर रँगरात,
अब ब्रज में आए कहा करन कौन को घात ?
जात किन पातकी।

कोऊ कहै रे मधुप प्रेम पटपद पसु देख्यो,
अब लौं यहि ब्रजदेस माहिं कोउ नाहिं बिसेख्यो।

पलकवोट निमि पर अनखाती यह दुख कहा समाइ ॥ एक सखी उनमें जो राधा जब हो इहँ ते गयो । तब व्रजराजसहित

द्वै सिंह आनन उपर रे कारो पीरो गात,
खल अमृत सम मानहीं अमृत देखि डरात ।
बादि यह रसिकता ।
कोऊ कहै रे मधुप ज्ञान उलटो लै आयो,
मुक्ति परे जे फेरि तिन्हें पुनि कर्म्म बतायो ।
वेद उपनिषद सार जे मोहन गुन गहि लेत,
तिनके आतम सुद्र करि फिरि करि सन्था देत ।
जोग चटसार में ।
कोऊ कहै रे मधुप निगुन इन बहु करि जान्यो,
तर्क बितर्क नियुक्ति बहुत उनहीं यह आन्यो ।
पै इतनो नहिं जानहीं वस्तु विना गुन नाहिं,
निर्गुन होहि अतीत के सगुन सकल जग माहिं ।
सखा सुन स्याम के ।
कोऊ कहै रे मधुप तुम्हें लज्जा नहिं आवै,
सखा तुम्हारो स्याम कूबरीनाथ कहावै ।
यह नीची पदवी हुती गोपीनाथ कहाय,
अब यदुकुलपावन भयो दासीजूठन खाय ।
मरत कह बोल को ।
कोउ कहै अहो मधुप स्याम योगी तुम चेला,
कुबजा तीरथ जाय कियो इन्द्रिन को मेला ।
मधुबन सुधि विसरायकै आए गोकुल माहिं,
इहाँ सबै प्रेमी बसैं तुमरो गाहक नाहिं ।
पधारो ..व

सब गोपिन आगे ह्वै जो लयो ॥ उतरे जाइ नंदबाबा के सबही

कोउ कहै रे मधुप साधु मधुवन के ऐसे,
और तहाँ के सिद्ध लोग ह्वैहैं धौं कैसे।
औगुन गुन गहि लेत हैं गुन को डारत मेटि,
मोहन निर्गुन को गहे तुम साधन को भेंटि।
गाँठि को खोयकै।

कोउ कहै रे मधुप होंहि तुमसे जो सङ्गी,
क्यों न होय तन स्याम सकल बातन चौरङ्गी।
गोकुल के जोरी कोउ पाई नाहिं तुमारि,
मदन त्रिभङ्गी आपुही करी त्रिभङ्गी नारि।
रूप गुन सील की। इत्यादि।

एक अज्ञातनाम कवि ने इसी विषय पर 'सनेहलीला' लिखी है जो। संवत् १९४९ में भारतजीवन यन्त्रालय, काशी से प्रकाशित हुई थी। इसमें केवल १३२ दोहे हैं पर बड़ी ऊँची श्रेणी के हैं। उदाहरणार्थ, ऊधो से योग का सँदेशा और उपदेश पाने पर गोपियाँ कहती हैं—

यद्यपि जोग प्रसिद्ध है तौ तुमही ले जाव।
बहुरौ नाहिं न पायहौ ऐसो उत्तम दाँव ॥
ऊधौ जाते देखिए तत्त्वरूप मन माहिं।
सो हमको सिखवत कहा तुमही साधत नाहिं ॥
ये तौ तिनको चाहिए जिनके अन्तर राय।
दादुर बिन जल हू जियै मीन तुरत मरि जाय ॥
दोऊ इक ठौर के दादुर मीन समान।
वै जल बिनु मारुत भखैं वै छिन में दैं प्रान ॥
ऊधौ इतनौ अन्तरौ ब्रज मथुरा के लोग।
विमुख करावै श्याम तें जार देहु यह जोग ॥

शोध जहां। मेरी सौं साँची कहु ऊधो मैया कछू कह्यो ॥ बारंबार कुशल पूँछी मोहिं लै लै तुम्हरो नाम। ज्यों जल तृषा बढ़ी चातक चित कृष्ण कृष्ण बलराम॥ सुंदर परम

पठए आए कौन के कौन मित्र को जान।
इहां तुम्हारी कौन सौं कहो कौन पहिचान॥
वचन वचन बाढ़त बिथा नहिं जानत पर-हेत।
मधुकर दाधे अङ्ग पर कहा लोन घसि देत॥
तन कारो मन साँवरो कपटी परम पुनीत।
मधुकर लोभी बास को पलक एक को मीत॥
तुम तौ स्वारथ के सगे नहिं बेली सों भाय।
भावै तौ तरुवर चढ़ै भावै जरि वरि जाय॥ इत्यादि।

मुसलमान कवि रसखान कहते हैं—

मानस हैं। तो वही रसखान बसौं ब्रज गोकुल गांव के ग्वारन।
जौ पशु हैं। तो कहा वस मेरो चरौं नित नन्द की धेनु मँझारन॥
पाहन हैं। तो वही गिरि को जो धरयो कर छत्र पुरन्दर धारन।
जौ खग हैं। तो बसेरो करौं मिलि कालिंदी-कूल कदम्ब की डारन॥१॥
या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं।
आठहुँ सिद्धि नवो निधि को सुख नन्द की गाय चराइ बिसारौं॥
रसखानि कबौं इन आंखिन सों ब्रज के बन-बाग-तड़ाग निहारौं।
कोटिन हूँ कलधौत के धाम करील के कुञ्जन ऊपर वारौं॥ २॥
आयो हुतो नियरे रसखानि कहा कहूँ तू न गई वहि ठैंया।
या ब्रज में सिगरी बनिता सब वारति प्राननि लेत बलैया॥
कोऊ न काहू की कानि करै कछु चेटक सो जु करयो जदुरैया।
गाइगो तान जमाइगो नेह रिझाइगो प्रान चराइगो गैया॥३॥ इत्यादि।

श्रीअयोध्या सिंह उपाध्याय ने 'प्रियप्रवास' के नवम और दशम सर्ग में इसी विषय का वर्णन किया है। उदाहरणार्थ, यशोदा उद्धव से कहती हैं—

विचित्र मनोहर वह मुरली देइ घाली। लई उठाइ उर लाइ सूर प्रभु प्रीति आनि उर शाली॥ ३४४४॥



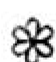
मेरे प्यारे स-कुशल सुखी और सानन्द तो हैं?
कोई चिन्ता मलिन उनको तो नहीं है बनाती?
ऊधो छाती वदन पर है म्लानता भी नहीं तो?
हो जाती हैं हृदयतल में तो नहीं वेदनाएँ?॥ २३॥
मीठे मेवे मृदुल नवनी और पक्वान्न नाना।
धीरे प्यारों-सहित सुत को कौन होगी खिलाती?
प्रातः पीता सु-पय कजरी गाय का चाव से था।
हा! पाता है न अब उसको प्राण-प्यारा हमारा॥ २४॥
संकोची है परम अति ही धीर है लाल मेरा।
लज्जा होती अमित उसको मांगने में सदा थी।
जैसे लेके स-रुचि सुत को अंक में मैं खिलाती,—
हा! वैसे ही अब नित खिला कौन वामा सकेगी॥ २५॥
मैं थी सारा दिवस मुख को देखते ही बिताती।
हो जाती थी व्यथित उसको म्लान जो देखती थी।
हा! ऐसे ही अब वदन को देखती कौन होगी?
ऊधो माता-सदृश ममता अन्य की है न होती॥ २६॥
खाने पीने शयन करने आदि की एक वेला,
हो जाती थी कुछ टल कभी खेद होता बड़ा था।
ऊधो ऐसी दुखित उसके हेतु क्यों अन्य होगी।
माता की सी अवनितल में है अमाता न होती॥ २७॥
जो पाती हूँ कुँवर-मुख के जोग मैं भोग प्यारा,
तो होती हैं हृदय-तल में वेदनाएँ बड़ी ही।

राग सारंग

सुनिए व्रज की दशा गोसाईं। रथ की ध्वजा पीत पट भूषण देखत ही उठि धाईं॥ जो तुम कही योग की बातैं ते

जो कोई भी सु-फल-सुत के योग्य मैं देखती हूँ,—
हो जाती हूँ व्यथित अति ही दग्ध होती महा हूँ॥ २८॥
जो लाती थीं विविध रँग के मुग्धकारी खिलोने,
वे आती हैं सदन अब भी कामना में पगी सी।
हा! जाती हैं पलट जब वे हो निराशा-निमग्ना,
तो उन्मत्ता-सदृश मग की ओर मैं देखती हूँ॥ २९॥
आते लीला-निपुण नट हैं आज भी बांध आशा।
कोई यों भी न अब उनके खेल को देखता है।
प्यारे होते मुदित जितने कौतुकों से सदा थे,
वे आंखों में विषम द्व हैं दर्शकों के लगाते॥ ३०॥
प्यारा खाता रुचिर नवनी को बड़े चाव से था।
खाते खाते पुलक पड़ता नाचता कूदता था।
ये बातें हैं सरस नवनी देखते याद आती।
हो जाता है मधुरतर औ स्निग्ध भी दग्धकारी॥ ३१॥
हा! जो वंशी सरस रव से विश्व को मोहती थी,—
सो आले में मलिन बन औ मूक होके पड़ी है।
जो छिद्रों से अमिय बरसा मूरि थी मुग्धता की,—
सो उन्मत्ता परमविकला उन्मना है बनाती॥ ३२॥
प्यारे ऊधो सुरत करता लाल मेरी कभी है?
क्या होता है न अब उसको ध्यान बूढ़े पिता का?
रो रो हो हो विकल अपने वार जो हैं बिताते,—
हा! वे सीधे सरल शिशु हैं क्या नहीं याद आते?॥ ३३॥

मैं सबैं सुनाईं । श्रवण मूँदि गुण कर्म तुम्हारे प्रेममगन मन गाईं ॥ औरो कछु संदेस सखी इक कहत दूरि लौं आईं । हुतो कछू हमहू सों नातो निपट कहा विसराईं ॥ सूरदास प्रभु वनविनोद करि जो तुम गऊ चराईं । ते गाय ग्वालन हेरि देय हेरति मानों भईं पराई ॥ ३४४५ ॥

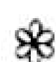


कैसे भूलीं सरस खनि सी प्रीति की गोपिकाएँ ?
कैसे भूले सुहृदपन के सेतु से गोपग्वाले ?
शान्ता धीरा मधुरहृदया प्रेम-रूपा रसज्ञा—
कैसे भूली प्रणय-प्रतिमा-राधिका मोहमग्ना ? ॥ ३४ ॥
कैसे वृन्दा-विपिन बिसरा क्यों लता-वेलि भूली ?
कैसे जी से उतर सिगरी कुञ्ज-पुञ्जें गई हैं ?
कैसे फूले विपुल फल से नम्र भूजात भूले ?
कैसे भूला विकच तरु सो कालिँदी-कूलवाला ? ॥ ३५ ॥
सोती सोती चिहुँककर जो श्याम को है बुलाती,
ऊधो मेरी यह सदन की सारिका कान्तकण्ठा ।
पाला पोसा प्रतिदिन जिसे श्याम ने प्यार से है—
हा ! कैसे सो हृदय-तल से दूर यों हो गई है ! ॥ ३६ ॥
कुंजों-कुंजों प्रतिदिन जिन्हें चाव से था चराया ;
जो प्यारी थीं परम, व्रज के लाड़िले को सदा ही ;
खिन्ना-दीना-विकल वन में आज जो घूमती हैं ;
ऊधो कैसे हृदय-धन को हाय ! वे धेनु भूलीं ? ॥३७॥ इत्यादि ।

इसी प्रकार सैकड़ों कवियों ने यह संवाद गाया है । अब भी इस विषय पर कविता हो रही है, यद्यपि पुरानी कविता से उसे बहुधा कोई समानता नहीं है ।

राग सारंग

ब्रज के विरही लोग दुखारे। बिन गोपाल ठगे से ठाढ़े अति दुर्बल तनु कारे॥ नंद यशोदा मारग जोवत नित उठि सांझ सवारे। चहुँ दिशि कान्ह कान्ह करि टेरत अँसुवन बहत पनारे॥ गोपी गाइ ग्वाल गोसुत सब अति ही दीन विचारे। सूरदास प्रभु विन यों शोभित चंद्र विना ज्यों तारे॥ ३४४६॥



राग केदारो

हरिजी सुनो वचन सुजान। विरहव्याकुल छीन तन मन हीन लोचन प्रान॥ इहै है संदेसा ब्रज को माधो सुनहु निदान। मैं सबै ब्रज दीन देखे ज्यों विना निर्मान॥ तुम बिना शोभा न ज्यों गृह विना दीप भयान। आस श्वास उसाँस घट में अवधि आसा प्रान॥ जगतजीवन भक्तपालन जगतनाथ कृपाल। करि जतन कछु सूर के प्रभु जो जिवैं ब्रजबाल॥ ३४४७॥



राग जैतश्री

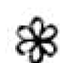
सुनहु श्याम वै सब ब्रजवनिता विरह तुम्हारे भईं बावरी। नाहिंन नाथ और कहि आवत छांड़ि जहाँ लगि कथा रावरी॥ कबहुँ कहत हरि माखन खायो कौन वसैया कठिन गाँव री। कबहुँ कहत हरि ऊखल बांधे घर घर ते लै चलो दाँव री॥ कबहुँ कहत ब्रजनाथ वन गए जोवत मग भईं दृष्टि झाँवरी।

कबहुँ कहत वा मुरली महियाँ लै लै बोलत हमरो नाँउ री॥ कबहुँ कहत ब्रजनाथ साथ ते चंद्र उग्यो है एहि ठाँव री। सूरदास प्रभु तुम्हरे दरश बिनु अब वह मूरति भई साँवरी॥ ३४४८॥



राग विहागरो

हरि आए सो भली कीन्हीं। मोहिं देखत कहि उठी राधिका अंक तिमिर को दीन्हीं॥ तनु अति कँपति विरह अति व्याकुल उर धुकधुकी खेद कीन्ही। चलत चरण गहि रही गई गिरि खेद सलिल भयभीनी॥ छूटी वट भुज फूटी बलया टूटी लर फटी कंचुकी झीनी। मानो प्रेम के परन परेवा याही ते पढ़ि लीन्ही॥ अवलोकति इहि भाँति रमापति मानो छूटी अहिमणि छीनी। सूरदास प्रभु कहौं कहाँ लगि है अयान मतिहीनी॥ ३४४९॥



राग मलार

सुनो श्याम यह बात और कोउ क्यों समुझाय कहै। दुहुँ दिशि को रतिविरह विरहिनी कैसे कै जो सहै॥ जब राधे तबहीं मुख माधो माधो रटत रहै। जब माधो वोइजात सकल तनु राधा विरह दहै॥ उभय अग्र दौंदारु कीट ज्यों शीतल-ताहि चहै। सूरदास अति बिकल विरहिनी कैसेहु सुख न लहै॥ ३४५०॥

राग केदारो

चित दै सुनो श्याम प्रबीन। हरि तुम्हारे विरह राधा मैं जु देखी छीन॥ तज्यो तेल तमोल भूषण अंग वसन मलीन। कंकना कर वाम राख्यो गढ़ी भुज गहि लीन॥ जब सँदेसा कहन सुंदरि गवन मो तन कीन। खसि मुद्रावलि चरन अरुझी गिरि धरनि बलहीन॥ कंठ वचन न बोल आवै हृदय परिहस भीन। नैन जल भरि रोइ दीनो ग्रसित आपद दीन॥ उठी बहुरि सँभारि भट ज्यों परम साहस कीन। सूर प्रभु कल्याण ऐसे जिवहि आसालीन॥ ३४५१॥



राग केदारो

भरि भरि लेत ऊरध श्वास। साँवरे ब्रजनाथ तुम बिनु दुखित पंचशरत्रास॥ अमित पीर अधार डोलत समर मीन बिलास। तेई सुख दुख भए दारुण मिलि गए रस-रास॥ निगम गुरुजन लोग न डरत जग करत उपहास। सूर श्याम बिनु विकल विरहिनी मरत दरश बिन प्यास॥ ३४५२॥



राग धनाश्री

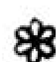
उमँगि चले दोउ नैन विशाल। सुनि सुनि यह संदेस श्याम-घन सुमिरि तुम्हारे गुण गोपाल॥ आनन वपु उरजनि के अंतर जलधारा बाढ़ी तेहि काल। मनु युग जलज सुमेरशृंग ते जाइ मिले सम शशिहि सनाल॥ भीजे विय अंचर उर

राजित तिन पर वर मुकुतन की माल। मानों इंदु आए नलिनीदल लंकृत अमी ओस-कण-जाल॥ कहाँ वह प्रीति-रीति राधा सों कहाँ यह करनी उलटी चाल। सूरदास प्रभु कठिन कथन ते क्यों जीवै विरहिनि बेहाल॥ ३४५३॥



राग मारू

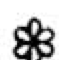
तुम्हरे विरह ब्रजनाथ राधिकानैनन नदी बढ़ी। लीने जाति निमेषकूल दोउ एते यान चढ़ी॥ गोलकनाउ निमेष न लागत सो पलकनि बर बोरति। ऊरध श्वास समीर तरंगिनि तेज तिलक तरु तोरति॥ कज्जलकीच कुचील किए तट अंबर अधर कपोल। थकि रहे पथिक सुयश हितही के हस्त चरण मुख बोल॥ नाहिंन और उपाय रमापति बिन दरशन जो कीजै। अंशु सलिल बूड़त सब गोकुल सूर सुकर गहि लीजै॥ ३४५४॥



राग मलार

नैन घट वटत न एक घरी। कबहुँ न मिटत सदा पावस ब्रज लागी रहत झरी॥ विरहइंद्र बरषत निशिवासर इहि अति अधिक करी। उरध उसाँस समीर तेज जल उर भुवि उमँगि भरी॥ बूड़ति भुजा रोमद्रुम अंबर अरु कुच उच्च धरी। चलि न सकत पथिक रहे थकि चंद्र की चखरी॥ सब ऋतु

मिटी एक भईं ब्रज महि यहि बिधि उलटि धरी। सूरदास प्रभु तुम्हरे बिछुरे मिटि मर्याद टरी ॥ ३४५५ ॥



राग केदारो

देखी मैं लोचन चुवत अचेत। मनहुँ कमल शशि त्रास ईस को मुक्ता गनि गनि देत ॥ द्वार खड़ो इकटक मग जोवत ऊरध श्वास न लेत। मानहुँ मदन मिले चाहति है मुंचत मरुत समेत ॥ श्रवणन सुनत चित्र पुतरी लौं समुझावत जित नेत। कहुँ कंकन कहुँ गिरी मुद्रिका कहुं ताटंक कहुँ नेत ॥ मनहु बिरहदव जरत विश्व सब राधा रुचिर निकेत। धुज होइ सूखि रही सूरज प्रभु बँधी तुम्हारे हेत ॥ ३४५६ ॥



राग मलार

नैननि होड़ बदी बरषा सों। राति दिवस बरसत झर लाए दिन दूरी करखा सों ॥ चारि मास बरषे जल खूटे हारि समुझ उनमानी। एतेहू पर धार न खंडित इनकी अकथ कहानी ॥ एते मान चढ़ाइ चढ़ो अति तजी पलक की सीव। मैं दिन दिन उन मानो महाप्रलय की नीव ॥ तुम पै होइ सो करहु कृपानिधि ए ब्रज के व्यवहार। अबकी बेर पाछिले नाते सूर लगावहु पार ॥ ३४५७ ॥



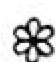
राग गौरी

ब्रज ते द्वै ऋतु पै न गई। ग्रीषम अरु पावस प्रवीन हरि तुम बिनु अधिक भई॥ उरध उसाँस समीर नैन घन सब जल योग जुरे। बरषि प्रकट कीन्हें दुख दादुर हुते जु दूरि दुरे॥ तुम्हरो कठिन वियोग विषम दिनकर सम उदो करै। हरि-पद-विमुख भए सुनु सूरज को इहि ताप हरै॥ ३४५८॥



राग कान्हरो

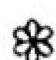
नाहिंन कछु सुधि रही हिए। सुनो श्याम वै सखिहि राधिकहि युगवति जतन किए॥ कर कंकन कोकिला उड़ावत बिन मुख नाम लिए। सैन सूचना नखनि निरावै किसलय श्रवणन शबद दिए॥ शशिशंका निशि जालनि के मग बसन बनाइ किए। दस दिशि शीत समीरहि रोकत अंबर ओट दिए॥ मृगमद मलै परस तनु तलफत जनु विष विषम पिए। जो न इते पर मिलहु सूर प्रभु तौ जान बीजए॥ ३४५९॥



राग गौरी

कहा लौं कहिए ब्रज की बात। सुनहु श्याम तुम बिनु उन लोगइ जैसे दिवस बिहात॥ गोपी गाइ ग्वाल गोसुत वै मलिनवदन कृशगात। परमदीन जनु शिशिर-हिमीहत अंबुज-गन बिन पात॥ जा कहुँ आवत देखि दूर ते सब पूँछति कुशलात। चलन न देत प्रेमआतुर उर कर चरणन लपटात॥ पिक-

चातक बन बसन न पावहि वायस वलिहि न खात। सूर श्याम संदेसन के डर पथिक न उहि मग जात ॥ ३४६० ॥



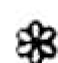
राग मलार

ब्रज की कही न परति है बातैं। गिरितनयापति भूषण जैसे विरह जरी दिनरातैं ॥ मलिन बसन हरिहित अंतर्गति तनु पीरो जनु पाते। गदगदवचन नैन जलपूरित बिलखि बदन कृश-गाते ॥ मुक्तो ताते भवन ते बिछुरे मीन मकर बिललाते। सारंग-रिपु सुत सुहृदपति बिना दुख पावति बहु भाँते ॥ हरि सुर भषन बिना विरहाने छीन भई तनु ताते। सूरदास गोपिन परतिज्ञा मिलहु पहिल के नाते ॥ ३४६१ ॥



राग कल्याण

रहति रैनि दिन हरि हरि हरि रट। चितवत इकटक मग चकोर लौं जब ते तुम बिछुरे नागरनट ॥ भरि भरि नैन नीर ढारति है सजल करति अति कंचुकि के पट। मनहुँ विरह की ज्वरता लगि लियो नेम प्रेम शिव शीश सहसघट ॥ जैसे युव के अग्र ओसकण प्राण रहत ऐसे अवधिहि के तट। सूर-दास प्रभु मिलौ कृपा करि जे दिन कहे तेउ आए निकट ॥३४६२॥



राग सारंग

दिन दस घोष चलहु गोपाल। गाइन के अवसेर मिटावहु लेहु आपने ग्वाल॥ नाचत नहीं मोर ता दिन ते बोले न वर्षाकाल। मृग दूबरे तुम्हारे दरश बिनु सुनत न वेणु रसाल॥ वृंदावन हरयो होत न भावत देखो श्याम तमाल। सूरदास मइया अनाथ है घर चलिए नँदलाल॥ ३४६३॥

❀

(ऊधो की बात सुनकर श्रीकृष्ण बोले—)

राग सोरठ

ऊधो भलो ज्ञान समुझायो। तुमसों अब यों कहा कहत हैं मैं कहि कहा पठायो॥ कहवावत हौ बड़े चतुर पै वहाँ न कछु कहि आयो। सूरदास ब्रजवासिन को हित हरि हिय माँझ दुरायो॥ ३४६४॥

❀

(ऊधो ने उत्तर दिया—)

राग सारंग

मैं समुझाई अति अपनो सो। तदपि उन्हैं परतीति न उपजी सबै लखो सपनो सो॥ कह्यो तुम्हारी सबै कही मैं और कछू अपनी। श्रवण न वचन सुनत हैं उनके जो घट मँह अकनी॥ कोई कहै बात बनाइ पचासक उनकी बात जो एक। धन्य धन्य जो नारी ब्रज की बिन दरशन इहि टेक॥ देखत उमँग्यो प्रेम यहाँ के धरी रही सब रोयो। सूर श्याम हौं रहौं ठगो सो ज्यों मृग चौको भोयो॥ ३४६५॥

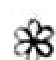
राग सारंग

बातैं सुनहु तौ श्याम सुनाऊँ। वै उमँगी जलनिधितरंग ज्यों तामें थाह न पाऊँ॥ कौन कौन को उत्तर दीजै ताते भग्यो अगाऊँ। वे मारे सिर पटिया पारे कंथा काहि उढ़ाऊँ॥ एक अँधेरा हिये की फूटी दौरत पहिर खराऊँ। सूर सकल पट दरशन वे हैं बारहखड़ी पढ़ाऊँ॥ ३४६६॥



राग सारंग

सुनि लीन्हों उनहीं को कह्यो। अपनी चाल समुझि मन हीं मन गुनी अरगाइ रह्यो॥ अबलनि सो कही परि जा पै बात तोरि कनि कानि। अनबोले पूरो दै निबह्यो बहुत दिनन को जानि॥ जानि बूझि कैहो कत पठयो शठ बावरो अयानो। तुमहूँ बूझि बहुत बातन को वहा जाहु तो जानो॥ आज्ञाभंग होय क्यों मो पै गयउ तुम्हारे ठीले। सूर पठावन ही की बोरी रह्यो जु गज सो लीले॥ ३४६७॥



राग मलार

हो हरि बहुत दाँउ दै हारयो। आज्ञाभंग होइ क्यों मो पै वचन तुम्हारो पारयो॥ हारि मानि उठि चल्यो दीन ह्वै जानि आपुन पै कैदु। जानि लेहु हरि इतने ही में कहा करैनी मन को वैदु॥ उत्तर को उत्तर नहिं आवत तब उनहीं मिलि जातु। मेरी किती बात ब्रह्मा को अर्ध वचन में मातु॥ अपनो चाल

समुझि मन ही मन घल्यो बसीठी तोरि। सूर एकहू अंग न काची मैं देखी टकटोरि ॥ ३४६८ ॥



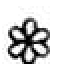
राग मलार

कहिवे में न कछू शक राखी। वुधि विवेक उनमान आपने मुख आई सो भाखी ॥ हैं। मरि एक कहौं पहरक में वे छिन माँझ अनेक। हारि मानि उठि चल्यो दीन ह्वै छाँड़ि आपनी टेक ॥ हैं। पठयो कत कौने काजै शठ मूरख जो अयानो। तुमहिं वुझावहु ते वातन की वहाँ जाहु तौ जानो ॥ श्रोमुख की सिखई ग्रंथों कत ते सब भईं कहानी। एकु होइ तौ उत्तर दीजै सूर सु मठी उभानी ॥ ३४६९ ॥



राग सोरठ

माधोजी मैं योग को बोझा भरयो। श्याम उन मुख विधु वचन सुधारस सुनि सुनि कछु न कह्यो ॥ तौ लौं भार तरंग मो उदधि सखी लोचन उमह्यो। तुम जो कह्यो ज्ञान को मारग सो बातैं जो वह्यो ॥ मोहिं आश्चर्य एक जो लागत तौ कैसे जात सह्यो। सुरदास प्रभु सखा सयानी लै भुज वीच गह्यो ॥ ३४७० ॥



राग नट

कोऊ सुनत न वात हमारी। कहा मानै योग युक्ति यादवपति प्रगट प्रेम व्रजनारी ॥ कोऊ कहति इंद्र जब वरषो

टेकि गोवर्धन लेत। कोउ कहत हरि गए कुंजवन शीश धाम वे देत॥ कोऊ कहत नाग कारे सुनि गए हरि यमुनातीर। कोउ कहै गए अघासुर मारन संग लिये बलवीर॥ कोउ कहै ग्वाल बाल सँग खेलत बन में जाइ लुकाने। सूर सुमिरि गुण माथे तुम्हारे कोउ कह्यो ना मानै॥ ३४७१॥



राग सारंग

हरि तुम्हें बारंबार सँभारै। कहहु तौ सब युवतिन के नाम कहो जे हित सों उर धारै॥ कबहुँक आँखि मूँदकै चाहति सब सुख अधिक तिहारे। तब प्रसिद्ध लीला सँग विहरत अब चित डोर विहारे॥ जाको कोऊ जेहि विधि सुमिरे सोउ तेही हित मानै। उलटी रीति सबै तुम्हरे है हम तो प्रगट कहि जानै॥ जो पतिआँ हो तुम पठवत लिखि बीच समुझि सब पाउ। सूर श्याम है पलक धाम में लखि चित कत बिललाउ॥३४७२॥



राग सारंग

माधोजू कहा कहौं उनकी गति। देखत बनै कहत नहिं आवै परम प्रतीत तुमते रति॥ यद्यपि हो षट मास रह्यो ढिग लही नहीं उनकी मति। कासों कहौं सबै एकै बुधि परबोधी मानै नाहीं अति॥ तुम कृपालु करुणामय कहियत ताते मिलत कहा क्षति। सूर श्याम सोई पै कीजै जाते तुम पावहु पति॥ ३४७३॥

राग सारंग

तुम्हारोइ चित्र बनाउ कियो। तब को इंदु सम्हारि तुरत ही मनसिज साजि लियो ॥ अति गहि युग अँगुली के बीचै उन भरि पानि पियो। पुरप्रति करति लेख को प्रारंभ तबहिं प्रहार कियो ॥ वै पथ विकल चकित अति आतुर भर्मत हेतु दियो। भृति बिलंबि पृष्टि दै श्यामा श्यामै श्याम बियो ॥ या गति पाइ रही राधा अब चाहति अमृत पियो। सूरदास प्रभु प्रीति उलटि परी है कैसे जात जियो ॥ ३४७४ ॥



राग केदारो

अब जिनि बाँधिबेहि डराहु। दूध दधि माखन मनोहर डारि देहु अरु खाहु ॥ सदा बैठे घोष रहियो बन न दैहै जान। पलक हू भरि दुख न दैहैं राखिहै ज्यों प्रान ॥ सब तिहारो कहे करिहैं वचन माथे मानि। परमचतुर सुजान ईते माँझ लीजो जानि ॥ अब न कौनो चूक करिहैं यह हमारे बोल। किंकिरिनि की लाज धरि ब्रज सुबस करहु निटोल ॥ समुझि निज अपराध करनी नारि नावति नीचि। बहुत दिन ते बरति है कै आँखि दीजै सीचि ॥ मनसि वचन अरु कर्मना कछु कहति नाहिंन राखि। सूर प्रभु यह बोल हृदय सातराजा साखि* ॥ ३४७५ ॥

---

* श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्ध अध्याय ४७। लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ४८।

(ऊधो की बातें सुनकर कृष्ण बोले—)

राग मारू

सुन ऊधो मोहिं नेक न विसरत वै व्रजबासी लोग। तुम उनको कछु भली न कीनी निशि दिन दियो वियोग॥ यद्यपि

गोकुल से लौटने पर कृष्ण और ऊधो की बातचीत नन्ददास ने भी खूब कराई है। उदाहरणार्थ—

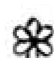
करुनामयी रसिकता है तुम्हारी सब झूठी,
जबही लों नहिं लखो तबहि लों बांधीं मूँठी।
मैं जान्यो व्रज जायके तुम्हरो निर्दय रूप,
जो तुमको अवलम्ब ही वाकों मेलो कूप।
कौन यह धर्म्म है!
पुनि पुनि कहै अहो चलो जाय वृन्दावन रहिए,
प्रेमपुञ्ज को प्रेम जाय गोपन सँग लहिए।
और काम सब छांड़िके उन लोगन सुख देहु,
नातरु टूट्यो जात है अबही नेह सनेहु।
करोगे तो कहा?
सुनत सखा के बैन नैन भरि आए दोऊ,
बिबस प्रेम आवेश रही नाहीं सुधि कोऊ।
रोम रोम प्रति गोपिका ह्वै रहि सांवरे गात,
कल्पतरोरुह सांवरो व्रजबनिता भई पात।
उलहि अँग अङ्ग ते।
हो सचेत कहि भलो सखा पठयो सुधि ल्यावन,
अवगुन हमरे आनि तहाँ ते लगे बतावन।
मोमें उनमें अन्तरो एकौ छिन भरि नाहिं,
ज्यों देखो मो माहिं वे तो मैं उनहीं मांहिं,
तरङ्गनि वारि ज्यों।

वसुदेव देवकी मथुरा सकल राजसुख भोग। तद्यपि मनहिं बसत बंसीबट ब्रज यमुना संयोग॥ वै उत रहत प्रेम अवलम्बन इतते पठयो योग। सूर उसाँस छाँड़ि भरि लोचन बढ़यो विरहज्वर शोग॥ ३४९२॥



राग मारू

ऊधो मोहिं ब्रज विसरत नाहीं। वृंदावन गोकुल तन आवत सघन तृणन की छाहीं॥ प्रात समय माता यशुमति अरु नंद देखि सुख पावत। माखन रोटी दह्यौ सजायो अति हित साथ खवावत॥ गोपी ग्वाल बाल सँग खेलत सब दिन हँसत सिरात। सूरदास धनि धनि ब्रजबासी जिनसों हँसत ब्रजनाथ॥ ३४९३॥



गोपी रूप दिखाय तबै मोहन बनवारी,
ऊधो भ्रमहि निवारि डारि मुख मोह की जारी।
अपनो रूप दिखाय के लीन्हों बहुरि दुराय,
नन्ददास पावन भयो जो यह लीला गाय।
प्रेमरस पुञ्जनी। इत्यादि।

दशम स्कन्ध उत्तरार्ध

जरासंध का आना । राग मारू

श्याम बलराम जब कंस मारयो । सुनि जरासंध वृत्तांत अस सुता से युद्ध हित कटक अपनो हँकारयो ॥ जोरि दल प्रबल सो चल्यो मथुरापुरी सुन्यो भगवान जब निकट आयो । तब दुहूँ वीर दल साजिकै आपनो नगर ते निकसि रणभूमि छायो ॥ दुहूँ दिशि सुभट बाँके विकट अति जुरे मनो दोउ दिशि घटा उमड़ि आई । सूर प्रभु सिंहध्वनि करत जोधा सकल जहाँ तहाँ करन लागे लराई ॥ १ ॥



राग मलार

मानहु मेघघटा अति गाढ़ी । बरषत बाण बूँद सेनापति महानदी रण बाढ़ी ॥ जहाँ घरन वरन बादर बानैत अरु दामिनि करि करि वार । उड़त धूरि धुँरवा धुर दीसत शूल सकल जलधार ॥ गर्जनि पणव निसान शंखरव हय गज हींस चिकार । प्रगटत दुरत देखियत रविसम द्वै वसुदेवकुमार ॥ कुंजर कूल रमित अति राजत तहँ शोणित सलिल गंभीर । धनुष तरंग भँवर स्यंदन पग जलचर सुभट शरीर ॥ उड़त ध्वजा पताक छत्र रथ तरुवर टूटत तीर । परम निशंक समर-सरिता-तट क्रीड़त यादव वीर ॥ सूने किए भुवन भूपति के

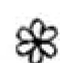
सुवस किए सुरलोक। छिनक मध्य हरि हरो कृपा करि उन सबहिन के शोक॥ आनंदे मधुबन के वासी गई नगर की रोक। जरासंध को जीति सूर प्रभु आए अपने वोक॥ २॥



कालयवनदहन। मुचुकुंद-उद्धार

राग सारंग

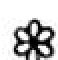
बार सत्रह जरासंध मथुरा चढ़ि आयो। गयो सो सब दिन हार जात घर बहुत लजायो॥ तब खिसिआइकै काल-यवन अपने सँग ल्यायो। हरिजी कियो विचार सिंधुतट नगर बसायो॥ उग्रसेन सब कुटुम लै ता ठौर सिधायो। अमरपुरी ते अधिक सुख तहँ लोगन पायो॥ कालयवन मुचुकुंद सो हरि भस्म करायो। बहुरि आइ भरमाइ अचल सब ताहि जरायो॥ जरासंध वहँ ते बहुरि निज देश सिधायो। श्याम राम गए द्वारका सूरज यश गायो॥ ३॥



अथ द्वारकाप्रवेश। राग कल्याण

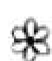
देख री आजु नैन भरि हरिजू के रथ की शोभा। योग यज्ञ जप तप तीरथ व्रत कीजत है जेहि लोभा॥ चारु चक्र मणि खचित मनोहर चंचल चमर पताका। श्वेतछत्र मनो शशि प्राची दिशि उदै कियो निशि राका॥ घन तन श्याम सुदेश पीतपट शीश मुकुट उर माला। जनु दामिनि घन रवि तारा-गण प्रगट एक ही काला॥ उपजत छविकर अधर शंख मिलि

सुनियत शब्द प्रशंसा। मानहु असित कमलमंडल में कूजत हैं कलहंसा॥ मदनगोपाल देखियत है अब सब दुख शोक बिसारी। बैठे हैं सुफलकसुत गोकुल लेन जो वहां सिधारी॥ आनंदित चित जननि तात हित कृष्ण मिलन जिय भाए। सूरदास दुहुँ कुल हित कारण अब मधुपुरी आए॥ ४॥



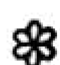
द्वारका की शोभा। राग कल्याण

दिन द्वारावती देखन आवत। नारदादि सनकादि महामुनि ते अवलोकि प्रीति उपजावत॥ विद्रुम स्फटिक पची कंचन खचि मणिमय मंदिर बने बनावत। जितने तर नर नारि उपर खग सबदिन को प्रतिबिंब दिखावत॥ जल थल रंग विचित्र बहुत विधि अवलोकत आनंद बढ़ावत। भूलि रहे अति चतुर चितै चित कौन सत्य कछु मर्म न पावत॥ वन उपवन फल फूल सुभग सर शुक सारिका हंस पारावत। चातक मोर चकोर वदत पिक मनहु मदन चटसार पढ़ावत॥ धाम धाम संगीत सरस गति वीणा वेणु मृदंग बजावत। अति आनंद प्रेमपुलकित तनु जहां तहा यदुपति-यश गावत॥ निशिदिन रहत विमान रूठ रुचि सुर वनितानि संग सब आवत। सूर श्याम क्रीड़त कौतूहल अमरन अपनो भवन न भावत॥ ५॥



राग सारंग

श्रीमनमोहन खेलत चौगान। द्वारावती कोट कंचन में रच्यो रुचिर मैदान। यादव वीर बराइ बटाई इक हलधर इक आपै ओर। निकसे सबै कुँअर असवारी उच्चै:श्रवा के पोर॥ लीले सुरंग कुमैत श्याम तेहि परदे सब मन रंग। बरन अनेक भाँति भाँतिन के चमकति चपला वेग॥ जीन जराइ जु जगमगाइ रहे देखत दृष्टि भ्रमाइ। सुर नर मुनि कौतुक सबै लागे इकटक रहे लुभाइ॥ जबहीं हरि लै चले गोइ कुदासों लाइ। तबहीं औचक ही वेल हलधर पाइ॥ कुँवर सबै घेरि फेरे फेरत छुड़त नहिनै गुपाल। बलै अछव छल बल करि सूरदास प्रभु हाल॥ ६॥



रुक्मिणीपत्रिका-आवन। राग विलावल

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करो। हरि चरणारविंद उर धरो॥ हरि सुमिरण जब रुक्मिणि करयो। हरि करि कृपा ताहि तब बरयो॥ कहौं सो कथा सुनो चित लाई। कहै सुनै सो रहै सुख पाई॥ कुंदनपुर को भीषम राई। विष्णुभक्ति को ता मन चाई॥ रुक्म आदि ताके सुत पाँच। रुक्मिणि पुत्री हरिरँग राच॥ नृपति रुक्म सों कह्यो सुनाई। कुँवरि योग्य वर श्रीयदुराई॥ रुक्म रिसाइ पिता सों कह्यो। सुनि ताको अंतर्गत दह्यो॥ रुक्म चँदेरी विप्र पठायो। व्याहकाज शिशुपाल बुलायो॥ सो बरात जोरि

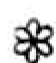
तहाँ आयो। श्रीरुक्मिणि के जिय नहिं भायो॥ कह्यो मेरो पति श्रीभगवान। उनहीं बरौं कै तजौं परान॥ भीषमसुता रुक्मिणी बाम। सूरजपति निशिदिन वह नाम॥ ७॥



(रुक्मिणी ने कृष्ण को एक ब्राह्मण के हाथ चिट्ठी भेजी और कहा—)

राग कान्हरो

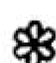
पतिया दीजै श्याम सुजानहि। मुख सँदेस बनाइ विप्र ज्यों प्रभु न ढीठ करि मानहि॥ श्रीहरि योग्य रुक्मिणी लिखितं विनती सुनहिं प्रभू धरि कानहि। बाँचत वेगि आइवो माधव जात धरे मेरे प्रानहि॥ समुझत नहीं दीनदुख कोऊ सिंह भखहि श्रृगाल के पानहि। मणि मर्कट कर देत मूढ़मति मृगमद रज में सानहि॥ कब लगि सहौं दुख दरश दीन भई मीन बिना जलपानहिं। सूरदास प्रभु अधर-सुधाघन वरषि देहु जियदानहिं॥ ८॥



राग मारु

द्विज वेग धावहु कहि पठावहु द्वारका ते जाइ। कुंदनपुर एक होत अजगुत बाघ घेरी गाइ॥ दीन ह्वै करि करहु विनती पाती दीजहु जाइ। रुक्म बरबस व्याहि देहै गनै पितहि न माइ॥ लग्न लै जु बरात साजी उनत मंडप छाइ। पैज करि शिशुपाल आए जरासंध सहाइ॥ हंस को मैं अंश राख्यो

काग कत मँडराइ। गरुड़वाहन कृष्ण आवहु सूर बलि बलि जाइ ॥ १३ ॥



(ब्राह्मण ने कृष्ण को रुक्मिणी की चिट्ठी दी और कहा—)

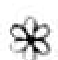
राग आसावरी

बाल मृगी सी भूली आँगन ठाढ़ी। नवल विरहिनी चित चिंता बाढ़ी ॥ तुम्हारो पंथ निहारै स्वामी। कबहिं मिलहुगे अंतर्यामी ॥ मंडप पुर देखे उर थरथर करै। मनु चहुँ दिशि दौ लागी धीरज तन न धरै ॥ अपने विवाह के दुंदुभि सुनि सुनि। चकृत मन मानो महासिंहध्वनि ॥ सखिन की माल जाल जिय जानति। व्याधरूप शिशुपालहि मानति ॥ सूरदास युग भरि बीतत छिनु। हरि नवरंग कुरंग पीव बिनु ॥ १४ ॥



कुंदनपुर श्रीकृष्ण गये। राग सारंग

सुनत हरि रुक्मिणि को सँदेस। चढ़ि रथ चले विप्र को सँग लै कियो न गेहप्रवेस ॥ बारंबार विप्र को पूँछत कुँवरि वचन सो सुनावत। दीन वचन करुणानिधान सुनि नयन नीर भरि आवत ॥ कह्यो हलधर सों आवहु दल लै मैं पहुँचत हौं धाई। सूर प्रभू कुंडिनपुर आए विप्रजू जाइ सुनाई ॥ १५ ॥



राग सारंग

कुँवरि सुनि पायो अति आनंदन। मनहीं मनहिं विचार करत इह कब मिलिहैं नँदनंदन॥ हार चीर पाटंबर देकरि विप्रहि गेह पठायो। पै इह भेद रुक्मिणी निज मुख काहू कहि न सुनायो॥ हरिआगमन जानिकै भीषम आगे लेन सिधायो। सूरदास प्रभु दरशन कारन नगरलोग सब धायो॥ १६॥



राग आसावरी

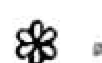
देख रूप सब नगर के लोग। बारंबार अशीश देत सब यह वर बन्यो रुक्मिणीयोग॥ जो कछु चतुराई विधना मों जानत युगरस रीति। तौ अजहूँ लौं राजसुता पति हरि ह्वै है शिशुपालहि जीति॥ जो राजा कौतुक चलि आए ते मुख निरखि कहत हैं बात। परत न पलक चकोर चंद्र लौं अवलोकत लोचन अकुलात॥ मनसा ताको ही जगजीवन सुंदर वर वसुदेवकुमार। सूरदास जाके जिय जैसी हरि कीन्हें तैसो व्यवहार॥ १७॥



सखीवचन रुक्मिणीप्रति सुही। राग बिलावल

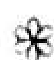
सोच सोच तू डार उठि देख दीनदयालु आयो। निरखि लोचन प्रणतमोचन कुँवरि फल बाँछो सो पायो॥ सुनत भइ अकुलाइ ठाढ़ी ज्यों मृतक विधि दै जिवायो। चढ़ि

सदन वह वदन की छवि परखि दीनो दव बुझायो। ले बलाइ सुकर लगायो निरखि मंगलचार गायो। नैन आरति अर्घ्य आँसू पुहुप तन मन धन चढ़ायो॥ जानि हौं ब्रजनाथ जिय की कियो सो जो तुम बतायो। अपहरन पुन वरन वंश हरि जानि हौं केहि योग भायो॥ भक्त के बस भक्तवत्सल विदुर साती साग खायो। मुदित ह्वै गई गौरिमंदिर जोरि कर बहु विधि मनायो॥ प्रगट तेहि छिन सूर के प्रभु बाँह गहि कियो वाम भायो। कृपासागर गुणनआगर दासि दुख दीनहि बिहायो॥ १८॥



रुक्मिणीहरन। राग आसावरी

रुक्मिणी देवी मंदिर आई। धूप दीप पूजा सामग्री अली संग सब ल्याई॥ रखवारी को बहुत महाभट दीन्हें रुक्म पठाई। ते सब सावधान भए चहुँ दिशि पंछी इहाँ न जाई॥ कुँवरि पूजि गौरी विनती करि वर देहु यादवराई। मैं पूजा कीन्ही या कारण गौरी सुनि मुसुकाई॥ पाइ प्रसाद अंबिका-मंदिर रुक्मिणि बाहेर आई। सुभट देख सुंदरता मोहे धरणि गिरे मुरझाई॥ यहि अंतर यादवपति आए रुक्मिणि रथ बैठाई। सूर प्रभू पहुँचे अपने घर तब सबहिन सुधि पाई॥ १९॥



राग आसावरी

याही ते शूल रही शिशुपालहि। सुमिरि सुमिरि पछ-ताति सदा वह मानभंग के कालहि॥ दुलहिन कहति दौरि दीजहु द्विज पाती नंद के लालहि। वर सुवरात बुलाइ बड़े हित मनसि मनोहर वालहि॥ आए हरषि हरन रुक्मिणि रिस लगी दनुज उर शालहि। सूरजदास सिंह वलि अपुनो लीनी दलकि शृगालहि॥ २०॥

❀

श्रीकृष्ण-रुक्मिणी-विवाह। राग सोरठ

श्याम जव रुक्मिणि हरि लै सिधारे। सुनि जरासंध शिशुपाल धाए॥ शालव दंतवक्र बनारसी को नृपति चढ़े दल साजि मानो रविहि छाए। सांगकि झलक चहुँ दिशि चपला चमकि गज गर्ज सुनत दिग्गज डेराए॥ श्याम वलराम सुधि पाइ सन्मुख भए बाणवर्षा करन लगे सारे। रुक्मिणी भय कियो श्याम धीरज दियो वान सों बान तिनके निवारे॥ राम हल मूशल सँभारि धायो वहुरि विपुल रथ औ सुभट सव संहारे। रुंड पर रुंड धुकि परे धरि धरणि पर गिरत ज्यों संग कर वज्र मारे॥ जरासंध जीव ते भजो रणखेत ते शाल दंतवक्र या बिधि पराई। प्रात के समै ज्यों भानु के उदय ते भलै होइ जात उडगन नशाई॥ गह्यो भगवान शिशुपाल को जीव ते ताहि सो वचन या विधि उचारे। रुक्मिणी लिये मैं जात तुम देखतहि पै नहीं हरष कछु मन हमारे॥ पुरुष

को भाजिबे ते मरन है भलो जाइ सुरलोक द्वारे उघारे। पुरुष को हार अरु जीत दोउ होत है हर्ष अरु सोच नहिं चित्त धारे ॥ बीज बोइए जोइ अंत लोनिए सोइ समुझि यह बात नहिं चित्त धरई। करन कारण महाराज हैं आप ही तिनहिं चित राखि नित धर्म्म करई ॥ बहुरि भगवान शिशु-पाल को छांड़ि दियो गयो निज देसो को सो खिसाई। शस्त्र धनु छाँड़िकै भाजि नरपति गए यादवन हेत हरिदै लुटाई ॥ रुक्म यह सुनि चल्यो सौंह करि नृपन पै श्याम बलराम को बाँधि ल्याऊँ। आइ इहाँ कह्यो शिशुपाल सों मैं नहीं आपनो बल तुम्हैं अब दिखाऊँ ॥ बाण वर्षा लग्यो करन या भाँति कहि कृष्ण ज्यों तिनहिं मग में निवारयो। आपने बाण को काटि ध्वज रुक्म के असुर औ सारथी तुरत मारयो ॥ रुक्म भू परयो उठि युद्ध हरि सों करयो हरि सकल शस्त्र ताके निवारे। बहुरि खिसिआइ भगवान के ढिंग चल्यो ज्यों चलत पतंग दीपक निहारे ॥ खड्ग लै ताहि भगवान मारन चले रुक्मिणी जोरि कर बिनय कियो। दोष इन कियो मोहिं क्षमा प्रभु कीजिए भद्र करि शीश जिवदान दीयो ॥ राम अरु यादवन सुभट ताके हते रुधिर के नहर सरिता बहाई। सुभट मनो मकर अरु केश सेवार ज्यों धनुष त्वच चर्म कूरम बनाई ॥ बहुरि भगवान के निकट आए सकल देखिकै रुक्म को हँसे सारे। कह्यो भगवान सों कहा यह कियो तुम छांड़िबो हुतो या भलो मारे ॥ मरे ते अप्सरा आइ ताको बरति भाजिहैं

देखि अब गेहनारी। रुक्मिणी सों कह्यो सोच नहिं कीजिए होत है सोइ जो होनिहारी॥ रुक्म सिर नाइ या भाँति बिनती करी नाथ मैं बुद्धि मर्म तुम्हरो न जान्यो। ब्रह्म तुम अनंत तुमहिं कारण करण मैं कौन भाँति तुमको पहिचान्यो॥ दीनबंधु कृपासिंधु करुणाकर सुनि विनय दया करि ताहिको छाँड़ि दीन्हों। बहुरि निज नगर पैठ्यो न सो लाज करि बनहिं तिन आपनो वास कीन्हों॥ आइ भीषम दियो दाइज ता ठौर बहु श्याम आनंदसहित पुर सिधाए। सुनत द्वारावती मारु उत सों भयो सूर जन मंगलाचार गाए॥ २१॥



राग आसावरी

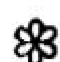
देखहिं दौरि द्वारकावासी। सुनत सकल पुर जीत रुक्मिणी लै आए यदुपति अविनासी॥ लेति बलाइ करत नवछावरि बलि भुजदंड कनक अति त्रासी। नर नारी के नैन निरखि करि चातक तृपित चकोरि प्यासी॥ कर आरती कलश लै धाई चीन्हि न परति कुलवधू दासी। देस देस भयो रहसि सूर प्रभु जरासंध शिशुपाल की हाँसी॥ २२॥



राग धनाश्री

आवहु री मिलि मंगल गावहु। हरि रुक्मिणिहि लिये आवत हैं इह आनँद यदुकुलहि सुनावहु॥ बाँधो बंदनवार मनोहर कनककलश भरि नीर भरावहु। दधि अच्छत फल

फूल परमरुचि अंगन चंदन चौक पुरावहु ।। कदली यूथ अनूप कुशल दल सुरंग सुमन लै मंडल छावहु। हरद दूब केशर मग छिरकौ भेरी मृदंग निसान वजावहु ।। जरासंध शिशुपाल नृपति ते जीते हैं उठि अर्घ्य चढ़ावहु । वलसमेत तनु कुशल सूर प्रभु हरि आए आरती सजावहु ।। २३ ।।



विवाहवर्णन। राग बिलावल। छंद त्रिभंगी

श्रीयादवपति व्याहन आयो। धन्य धन्य रुक्मिणि हरि वर पायो ।।

हरि श्याम घन तन परमसुदर तड़ित वसन विराजई। अँग अंग भूषण सुरस शशि पूरणकला मनों भ्राजई ।। कमल मुख कर कमल लोचन कमल मृदु पद सोहहीं। कमल नाभिः कमल सुंदर निरखि सुर मुनि मोहहीं ।। १ ।।



छंद

सुधा सरोवर छिटकि अनूपम। ग्रीव कपोत मनो नासा कीरसम ।।

कीरनासा इंद्रधनुभू भँवर से अलकावली। अधर विद्रुम वज्रकन दाड़िम किधौं दशनावली ।। खौर केशरि अति विराजत तिलक मृगमद को दियो। कामरूप विलोकि मोह्यो वास पद अंबुज कियो ।। २ ।।



छंद

वसुदेवनंदन त्रिभुवनमनहरन। मुकुट तरुन मनो मकर-कुंडल श्रवन ॥

मुकुटकुंडल जड़ित हीरा लाल शोभा अति बनी। पन्ना पिरोजा लगे बिच बिच चहूँ दिशि लटकत मनी ॥ सेहरो सिर मुकुट लटक्यो कंठ माला राजई। हाथ पहुँची वीर कानग-जरित मुँदरी भ्राजई ॥ ३ ॥

❀

छंद

उर वैजंती माल शोभा अति बनी। चरणन नूपुर कटतट किंकिनी ॥

किंकिनी कटि चरण नूपुर शब्द सुंदर कुंजही। कोकिला कलहंस वाल रसाल ते नहिं पुंजही ॥ तुरई बाजनि वीना ताजनि चपल चपला सेहरी। जैन जारित जराव वागहि लगे सब मुकुतासरी ॥ ४ ॥

❀

छंद

चढ़ि यदुनंदन वनित बनाइकै। साजि वरात चले यादव चाइकै ॥

चले साजि बरात यादव कोटि छप्पन अतिवली। उग्र-सेन वसुदेव हलधर करत मन मन अति तली ॥ शंख भेरि निशान बाजहिं नचहिं सुद्ध सोहावनी। भाट बोलैं विरद नारी वचन कहैं मनभावनी ॥ ५ ॥

छंद

सुरपति आयो संग है शची। शुद्ध मुहूरत चौरी विधि रची॥

रची चौरी आपु ब्रह्मा जरित खंभ लगाइकै। इंद्र सुरदारनि सहित बैठे तहाँ सुख पाइकै॥ चौक मुक्ताहल पुरायो आइ हरि बैठे तहाँ। निरखि सुर नर सकल मोहे रहि गए जहँ के तहाँ॥ ६॥

❀

छंद

कुँवरि रुक्मिणि कमला अवतरी। शशि षोडश कला शोभा तनु धरी॥

कुँवर शशि षोडश कला शृंगार करि ल्याई अली। विविध विधि कियो व्याह विधि वसुदेव मन उपजी रली॥ सुर पुहुप बरसैं हरषिकै गंधर्व किन्नर गावहीं। शारदा नारद आदि सुयश उच्चार जयति सुनावहीं॥ ७॥

❀

छंद

विप्रगणउ दिए बहु युगुति सुरति करि। किए अयाची याचक जन बहुरि॥

बहुरि निज मंदिर सिधारे करि सुभद्रा आरती। देवकी पीवो वार नीरद दई अशीशा भारती॥ युवा युवती खेलाइ

कुल व्यवहार सकल कराइबो। जनन मन भयो सूर आनँद हरषि मंगल गाइबो* ॥ ८ ॥



(इस प्रकार आनन्दपूर्वक कृष्ण का विवाहोत्सव समाप्त हुआ। रुक्मिणी से प्रद्युम्न नाम पुत्र उत्पन्न हुआ जो साक्षात् कामदेव का अवतार था। शंबर उसे हर ले गया। उसे मारकर कृष्ण रुक्मिणी-सहित द्वारका लौट आए। एक बार कृष्ण पर स्यमंतक मणि चुराने का मिथ्या आरोप लगाया गया। कृष्ण ने मणि का पता लगाकर आरोप को दूर किया और जाम्बवती से विवाह किया। सत्राजित की पुत्री सत्यभामा से भी विवाह किया। तत्पश्चात कृष्ण ने पांच पटरानियों से और १६,००० रानियों से विवाह किया। तत्पश्चात् अनेक लीलाएँ हुईं; रुक्मिणी की भक्ति की परीक्षा हुई; प्रद्युम्न का विवाह हुआ; रुक्म कलिङ्ग राजा का वध हुआ; अनिरुद्ध का विवाह हुआ। †)

बलभद्र वृन्दावन आये। राग बिलावल

श्याम राम के गुण नित गावों। श्याम रामही सों चित लावों ॥ एक बार हरि निज पुर छए। हलधरजी वृन्दावन गए ॥ यह देखत लोगन सुख पाए। जान्यो राम श्याम

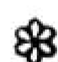
* जरासंधपराजय, द्वारकागमन, रुक्मिणीहरण और विवाह के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कंध अध्याय ५०–५४। लल्लूजी-लालकृत प्रेमसागर अध्याय ५१—५५।

महाराज रघुराजसिंह-कृत ग्रन्थ रुक्मिणीपरिणय। सुप्रसिद्ध कवि विद्यापति-कृत नाटक रुक्मिणीपरिणय।

† देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कंध अध्याय ५६–६२। प्रेमसागर ५७—६३।

दोउ आए ॥ नंद यशोमति जब सुधि पाई। देह गेह की सुरति भुलाई ॥ आगे ह्वै लेबे को धाए। हलधर दौरि चरण लपटाए ॥ बल को हित करि गले लगाए। दै असीस बोली ता भाए ॥ तुम तो भली करी बलराम। कहाँ रहे मनमोहन श्याम ॥ देखी कान्हर की निठुराई। कबहूँ पाती हू न पठाई ॥ आपु जाइ वहाँ राजा भए। हमको बिछुरि बहुत दुख दए ॥ कहो कबहुँ हमरी सुधि करत। हम तो उन बिनु बहु दुख भरत ॥ कहा करैं वहाँ कोउ न जात। उन बिनु पल पल युगसम जात ॥ यहि अंतर आए सब ग्वार। बैठे सबन यथाव्यवहार ॥ नमस्कार काहू को कियो। काहू को भर अंकम लियो ॥ गोपी जुरीं मिलीं बन आई। अति-हित साथ असीस सुनाई ॥ हरि करि सुधि सुधि बुधि बिस-राई। तिनको प्रेम कहो नहिं जाई ॥ कोउ कहै हरि ब्याही बहु नार। तिनके बढ़यो बहुत परिवार ॥ उनको इह हम देत असीस। सुख सों जीवैं कोटि बरीस ॥ कोऊ कहैं हरिहि नहिं चीन्हों। बिन चीन्हें उनको मन दीन्हों ॥ निशिदिन रोवत हमैं बिहाइ। कहो कहा हम करैं उपाइ ॥ कोउ कहै इहाँ चरावत गाइ। राजा भए द्वारका जाइ ॥ काहे को वै आवैं इहाँ। भोगविलास करत नित उहाँ ॥ कोउ कहै हरिरीति सब नई। और मित्रन को सब सुख दई ॥ बिहर हमारो कहाँ रहि गयो। जिन हमको अति ही दुख दयो ॥ कोउ कहै जे हरिजी की रानी। कौन भाँति

हरि को पतियानी ॥ कोउ कहै चतुर नारि जो होई। करिहै नहीं निवारो सोई ॥ कोउ कहै हम तुम क्यों पतिआई। उनको हित कुललाज गवाई ॥ हरि कछु ऐसो टोना जानत। सबको मन अपने बस आनत ॥ कोउ कहै हम हरि सब बिसराइ। कहा कहैं कछु कह्यो न जाइ ॥ हरि को सुमिरि नयनजल ढारे। नेक नहीं मन धीरज धारे ॥ इह सुनि हलधर धीरज धार। कह्यो आइहै हरि निरधार। जब बल इह संदेस सुनायो। तब कछु इक धीरज मन आयो ॥ बल तहँ रहे बहुरि दुइ मास। ब्रजवासिन सों करत विलास ॥ सबसों मिलि पुनि निजपुर आए। सूरदास हरि को गुण गाए ॥ ३७ ॥



(तत्पश्चात् कृष्ण ने पुण्डरीक का उद्धार किया, द्विविद और सुतीक्ष्ण नामक राक्षसों का वध किया।)

नारदसंशय; द्वारकाआगमन। राग धनाश्री

हरि की लीला देखि नारद चकृत भए। मन यह करत बिचार गोमती तर गए ॥ अलख निरंजन निर्विकार अच्युत अविनासी। सेवत जाहि महेश शेष सुर माया दासी ॥ धर्मस्थापन हेतु पुनि धार्‍यो नरअवतार। ताको पुत्र कलत्र सों नहिं संभवत पियार ॥ हरि के षोड़श सहस रहे पतिवर्ता नारी। सबसों हरि को हेत सबै हरिजी की प्यारी ॥ जाके गृह दुइ नारि होइ ताहि कलह नित होइ। हरि बिहार केहि

विधि करत नैनन देखों जोइ ॥ द्वारावति ऋषि पैठ भवन हरिजू के आयो। आगे होइ हरि नारिसहित चरणन सिर नायो। सिंहासन बैठारिकै प्रभु धोए चरण बनाइ। चरणोदक सिर धरि कह्यो कृपा करी ऋषिराइ ॥ तब नारद हँसि कह्यो सुनो त्रिभुवनपतिराई। तुम देवन के देव देत हौ मोहिं बड़ाई ॥ विधि महेश सेवत तुम्हैं मैं बपुरा केहि माहीं। कहत तुम्हैं ब्राह्मण देवता यामें अचरज नाहीं ॥ और गेह ऋषि गए तहाँ देखे यदुराई। चमर ढोरावत नारि करत दासी सेवकाई ॥ ऋषि को रूखे देखि हरि बहुरि कियो सन्मान। उहँऊ ते नारद चले करत ऐसो अनुमान ॥ जा गृह में मैं जाउँ श्याम आगे ही आवत। ताते छाँड़ि सुभाउ जाउँ अब धावत ॥ जहाँ नारद श्रम करि गए तहाँ देखे घनश्याम। पालनहू क्रीड़ा करत कर जोरे खड़ी बाम ॥ नारद जहाँ जहाँ जाइँ तहाँ तहाँ हरि को देखै। कहुँ कछु लीला करत कहूँ कछु लीला पेखै ॥ योंहीं सब गृह में गए भयो न मन विश्राम। तब ताको व्याकुल निरखि हँसि बोले घनश्याम ॥ नारद मन को भर्म तोहिं इतनों भरमायो। मैं व्यापक सब जगत वेद चारों मुख गायो ॥ मैं कर्ता मैं भुक्ता मोंहिं बिनु और न कोइ। जो मोकों ऐसो लखै ताहि नहीं भ्रम होइ ॥ बूझो सब घर जाइ सबै जानत मोहि योंहीं। हरि की हमसों प्रीति अनत कहूँ जात न क्योंहीं ॥ मैं उदास सबसों रहों इह मम सहज सुभाइ। ऐसो जानै मोहिं जो मम माया न रचाइ ॥ तब

नारद कर जोरि कह्यो तुम अज अनंत हरि। तुमसे तुम बिन द्वितिय कोउ नाहीं उत्तम दुरि॥ तुम माया तुम कृपा बिनु सकै नहीं तरि कोइ। अब मोको कीजै कृपा ज्यों न बहुरि भ्रम होइ॥ ऋषि चरित्र मम देखि कछू अचरज मति मानो। मोते द्वितिया और कोऊ मन माहिं न आनो॥ मैं ही कर्ता मैं ही भुक्ता नहिं यामें संदेहु। मेरे गुण गावत फिरौ लोगन को सुख देहु॥ नारद करि परणाम चले हरि के गुण गावत। बार बार उरहेत ध्याय हृदय में ध्यावत॥ इह लीला करि अचरज की सूरदास कहि गाइ। ताको जो गावै सुनै सो भवजल तरि जाइ॥४७॥

❀

(इसके बाद कवि ने श्रीकृष्ण का हस्तिनापुर जाना, जरासंध को मारना, पाण्डवयज्ञ और शिशुपालवध इत्यादि लीलाएँ गाई हैं।*)

सुदामादारिद्रभंजन। राग बिलावल

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करो। हरि चरणारविंद उर धरो॥ विप्र सुदामा सुमिरं हरी। ताकी सकल आपदा टरी॥ कहौं सो कथा सुनो चित धार। कहै सुनै सो लहै सुखसार॥ विप्र सुदामा परमकुलीन। विष्णुभक्त सो अति लवलीन॥ भिक्षावृत्ति उदर नित भरै। निशिदिन हरि हरि सुमिरन करै॥ नाम सुशीला ताकी नारी। पतिव्रता अति आज्ञाकारी॥ पति जो कहै सो करै चित लाइ। सूर कह्यो इक दिन या भाइ॥

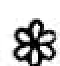
❀

---

* श्रीमद्भागवत दशम स्कंध अध्याय ७२–७५। प्रेमसागर ७२–७६।

राग बिलावल

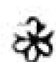
कहि न सकति सकुचति इक बात। केतिक दूरि द्वारका नगरी काहे न द्विज यदुपति लौं जात॥ जाके सखा श्याम-सुंदर से श्रीपति सकल सुखन के दात। उनके अछत आपने आलस काहे कंत रहत कृश गात॥ कहियत परमउदार कृपा-निधि अंतर्यामी त्रिभुवनतात। द्रवत आपु देत दासन को रीझत हैं तुलसी के पात॥ छाँड़ौ सकुच बाँधि पट तंदुल सूरज संग चलो उठि प्रात। लोचन सफल करौ प्रभु अपने हरि-मुखकमल देखि बिलसात॥ ५९॥



(सुदामाजी कृष्ण के पास गये।)

राग बिलावल

दूरिहि ते देखै बलवीर। अपने बालसखा सुदामा मलिन-बसन अरु छीनशरीर॥ पौढ़े हुते प्रयंक परम रुचि रुक्मिणि चमर डोलावत तीर। उठि अकुलाइ अगमने लीने मिलत नैन भरि आए नीर॥ तेहि आसन बैठारि श्यामघन पूँछी कुशल करौ मन धीर। ल्याए हौ सु देहु किन हमको अब कहा राखि दुरावत चीर॥ दरशन परसि दृष्टि संभाषन रही न उरअंतर कछु पीर। सूर सुमति तंदुल चबात ही कर पकरयो कमला भइ भीर॥ ६१॥



(इसी कथा को फिर कहते हैं—)

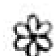
राग धनाश्री

यदुपति देखि सुदामा आए। विह्वल विकल छीन दारिद्र-वश करि प्रलाप रुक्मिणि समुझाए॥ दृष्टि परे ते दिए संभाषण भुजा पसारि अंक लै आए। तंदुल देखि बहुत दुख उपज्यो माँगु सुदामा जो मन भाए॥ भोजन करत गह्यो कर रुक्मिणि सोइ देहु जो मन न डुलावै। सूरदास प्रभु नव निधि दाता जा पर कृपा सोइ जन पावै॥ ६२॥



राग विलावल

ऐसी प्रीति की बलि जाउँ। सिंहासन तजि चले मिलन को सुनत सुदामा नाउँ॥ गुरुबांधव अरु विप्र जानिकै चरणन हाथ पखारे। अंकमाल दै कुशल बूझिकै अर्धासन बैठारे॥ अर्धंगी बूझत मोहन को कैसे हितू तुम्हारे। दुर्बल दीन छीन देखति हौं पाँउ कहाँ ते धारे॥ संदीपन के हम औ सुदामा पढ़े एक चटसार। सूर श्याम की कौन चलावै भक्तन कृपा अपार॥६३॥



राग धनाश्री

गुरुगृह जब हम बन को जात। तुरत हमारे बदले लकरी ये सब दुख निज गात॥ एक दिवस वर्षा भई वन में रहि गए ताही ठौर। इनकी कृपा भयो नहि मोहिं श्रम गुरु आए भय भोर॥ सो दिन मोहिं बिसरत न सुदामा जो कीन्हों उपकार। प्रतिउपकार कहा करौं सूर अब भाषत आप मुरार॥ ६४॥

राग धनाश्री

हरि को मिलन सुदामा आयो। विधि करि अरघ पाँवड़े दीने अंतर प्रेम बढ़ायो ॥ आदर बहुत कियो यादवपति मर्दन करि अन्हवायो। चोवा चंदन अगर कुमकुमा परिमल अंग चढ़ायो ॥ पूरबजन्म अदात जानिकै ताते कछू मँगायो। मूठिक तंदुल बाँधि कृष्ण को बनिता विनय पठायो ॥ समदै विप्र सुदामा घर को सर्वसु दै पहुँचायो। सूरदास बलि बलि मोहन की तिहूँ लोक पद पायो ॥ ६५ ॥

❀

राग बिलावल

सुदामा गृह को गमन कियो। प्रगट विप्र को कछु न जनायो मन में बहुत दियो ॥ वोई चीर कुचील वोई विधि मोको कहा कियो। धरिहौं कहा जाइ त्रिय आगे भरि भरि लेत हियो ॥ भयो संतोष भाव मनहीं मन आदर बहुत कियो। सूरदास कीन्हें करनी बिन को पतिआइ वियो ॥ ६७ ॥

❀

राग बिलावल

सुदामा मंदिर देखि डरयो। शीश धुनै दोऊ कर मींड़ै अंतर सोच परयो ॥ ठाढ़ी त्रिया मार्ग जो जोवै ऊँचे चरण धरयो। तोहिं आदरयो त्रिभुवन को नायक अब क्यों जात फिरयो ॥ इहाँ हुती मेरी तनिक मड़ैया को नृप आनि छरयो। सूरदास प्रभु करि यह लीला आपद विप्र हरयो ॥ ६८ ॥

राग बिलावल

देखत भूलि रह्यो द्विज दीन। ढूँढ़त फिरै न पूँछन पावै आपुन गृह प्राचीन॥ किधौं देवमाया बौरायो किधौं अनत ही आयो। तृणहु की छाँह गई निधि माँगत अनेक जतन करि छायो॥ चितवत चकित चहूँ दिशि ब्राह्मण अद्भुत रचना रीति। ऊँचे भवन मनोहर छाजा मणि कंचन की भीति॥ पति पहि-चानि धरी मंदिर ते सूर त्रिया अभिराम। आवहु कंत देखि हरि को हित पाउँ धारिए धाम॥ ६९॥



राग बिलावल

भूलो द्विज देखत अपनो घर। औरहि भाँति रची रचना रुचि देखत ही उपज्यो हिरदय डर॥ कै यह ठौर छिनाइ लियो कहुँ आइ रह्यो कोऊ समरथ नर। कै हौं भूलि अनतखंड आयो यहु कैलास जहाँ सुनियत हर॥ बुधजन कहत दुबल घातक बिधि सोइ न आजु लह्यो यह पटतर। ज्यों नलिनी बन छाँड़ि बसी जल दाही हेम जहाँ पानी सर॥ जगजीवन जग-दीश जगतगुरु अविगति जानि भरो। आत्रो चलें मंदिर अपने ही कमलाकंत धरो॥ ता पीछे त्रिय उतरि कह्यो पति चलिए घरहि गहे कर से कर। सूरदास यह सब हित हरि को रोप्यो द्वार सुभगति कलपतर॥ ७०॥



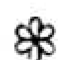
राग बिलावल

कहा भयो मेरो गृह माटी को। हों तो गयो गुपालहि भेंटन और खर्च तंडुल गाँठी को॥ बिनु ग्रीवा कल सुभग न आन्यौ हुतो कमंडलु दृढ़ काठी को। घुनो बाँस गत बुन्यो खटोला काहू को पलँग कनकपाटी को॥ नौतन पीरे दिकु-युगतीपै भूषण हुते न लोह माटी को। सूरदास प्रभु कहा निहोरों मानतु रंक त्रास टाटी को॥ ७१॥



राग धनाश्री

कहौ कैसे मिले श्याम संघाती। कैसे गए सु कंत कौन बिधि परसे हुते वस्तर कुचिल कुजाती॥ सुनि सुंदरि प्रतिहार जनायो हरि समीप रुक्मिणी जहाती। उभै मुठी लीनी तंदुल की संपति संचित करी ही थाती॥ सूर सु दीनबंधु करुणामय करत बहुत जो ओ न रिसाती॥ ७२॥



राग बिलावल

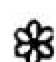
ऐसे मोहिं और कौन पहिंचानै। सुन सुंदरी दीनबंधु बिन कौन मिताई मानै॥ कहाँ हम कृपण कुचील कुदरशन कहाँ वै यादवनाथ गुसाँईं। भेंटे हृदय लगाइ अंक भरि उठि अग्रज की नाँईं॥ निज आसन बैठारि परमरुचि निज कर चरण पखारे। पूँछी कुशल श्यामघनसुंदर सब संकोच

निवारे ॥ लीन्हें छोरि चीर तें चाउर कर गहि मुख में मेले । पूरवकथा सुनाइ सूर प्रभु गुरुगृह बसे अकेले ॥ ७३ ॥



राग धनाश्री

हरि बिन कौन दरिद्र हरै । कहत सुदामा सुन सुंदरि जिय मिलन न हरि बिसरै ॥ और मित्र ऐसे समया महँ कत पहिंचान करै । विपति परे कुशलात न बूझै बात नहीं विचरै ॥ उठिकै मिले तंदुल हरि लीने मोहन वचन फुरै । सूरदास स्वामी की महिमा टारी निधि न टरै ॥ ७४ ॥



राग धनाश्री

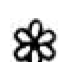
और को जानै रस की रीति । कहाँ हौं दीन कहाँ त्रिभुवनपति मिले पुरातन प्रीति ॥ चतुरानन तन निमिष न चितवत इती राज की नीति । मोसों बात कही हृदय की गए जाहि युग बीति ॥ बिनु गोविंद सकल सुख सुंदरि भुस पर की सी भीति । हौं कहा कहौं सूर के प्रभु के निगम करत जाकी कीति ॥ ७५ ॥



राग धनाश्री

गोपाल बिना और मोहिं ऐसो कौन सँभारै । हँसत हँसत हरि दौरि मिले सु उर ते उर नहिं टारै ॥ छीन अंग जीरन वस्त्र दीन मुख निहारै । मम तन रज पथ लागी पीत पट

सों झारै ।। सुखद सेज आसन दीन्हों सु हाथ पाँय पखारै । हरि हित हर गंग धरे पदजल सिर ढारै ।। कहि कहि गुरु-गेहकथा सकल दुख निवारै । न्याय निज वपु सूरदास हरिजी ऊपर वै वारै ।। ७६ ।।



(सारी कथा को एक पद में कहते हैं—)

राग केदारो

दीन द्विज द्वारे आइ रहो ठाढ़ो । नाम सुदामा कहत नाथ जो दुखी आहि अति गाढ़ो ।। सुनतहि वचन कमलदल-लोचन कमला दल उठि धाए । त्रिभुवननाथ देखि अपनो प्रिय हित सों कंठ लगाए ।। आदर करि मंदिर लै आने कनक पलँग बैठाए । कथा अनेक पुरातन कहि कहि गुरु के धाम बताए ।। खइबे को कछु भाभी दीन्हों श्रीपति श्रीमुख बोले । फेंट उपर तें अंजुल तंदुल बल करि हरिजू खोले ।। दुइ मूठी तंदुल मुख में ले बहुरो हाथ पसार्‍यो । त्रिभुवन दैकरि कह्यो रुक्मिणी अपनो दान निवार्‍यो ।। विदा कियो पहुँचे निज नगरी हेरत भवन न पायो । मंदिर रही नारि पहिचान्यो प्रेमसमेत बुलायो ।। दीनदयालु देवकीनंदन वेद पुकारत चारो । सूर सु भेटि सुदामा को दुख हरि दारिद्र मिटारो* ।। ७७ ।।



---

* यह कथा नरोत्तमदास ने अपने सुदामाचरित्र में गाई है । कृष्ण के पास आकर द्वारपालों ने कहा—

(इधर व्रज में गोपियां कृष्ण के विरह में कातर रहती थीं। वे एक पथिक से बोलीं—)

राग मलार

तब ते बहुरि न कोऊ आयो। उहै जु एक बेर ऊधो सों कछु संदेसो पायो॥ छिन छिन सुरति करत यदुपति की परत न मन समुझायो। गोकुलनाथ हमारे हित लगि लिखिहू क्यों न पठायो॥ यहै विचार करहु धों सजनी इतौ गहर क्यों लायो। सूर श्याम अब वेगि न मिलहू मेघनि अंबर छायो॥ ७८॥



राग गौरी

बहुरयो व्रज बात न चाली। वहै सु एक बेर ऊधो कर कमलनैन पाती दै घाली॥ पथिक तुम्हारे पाँइन लागति मथुरा

सीस पगा न झँगा तन में प्रभु जाने को आहि बसै केहि गामा।
धोती फटी सी लटी दुपटी अरु पायँ उपानह की नहिं सामा॥
द्वार खड़ो द्विज दुर्बल एक रहो चकि सो वसुधा अभिरामा।
पूछत दीनदयाल को धाम बतावत आपनो नाम सुदामा॥
कैसे बिहाल बेंवाइन सों भए कंटकजाल गड़े पग जो ये।
हाय महादुख पाए सखा तुम आए इतै न किते दिन खोए॥
देखि सुदामा कि दीन दसा करुना करिके करुनानिधि रोए।
पानी परात को हाथ छुयो नहिं नैनन के जल सों पग धोए॥
कांपि उठी कमला जिय सोचत मोते कहा हरि को मन रोंको।
सिद्धि छपैं, नव निद्धि चपैं, वसु रुद्र कँपैं यह बांभन धों को॥
सोर परयो सुरलोकहु में जब दूसरी बार लियो भरि झोंको।
मेरु डरै बकसै जनि मोहिं कुबेर चबात ही चावर चोंको॥ इत्यादि।

जाउ जहाँ वनमाली। कहियो प्रगट पुकार द्वार ह्वै कालिंदी फिरि आयो काली॥ तबहूँ कृपा हुती नँदनंदन रचि रचि रसिक प्रीति प्रतिपाली। माँगत कुसुम देखि ऊँचे द्रुम लेव उछंग गोद करि आली॥ जब वह सुरति होत उर अंतर लागति कामबाण की भाली। सूरदास प्रभु प्रीति-पुरातन सुमिरत उरह शूल अति शाली॥ ७९॥



राग धनाश्री

तुम्हरे देश कागर मसि खूटी। भूँख प्यास अरु नींद गई सब हरि बिन विरह लयो तनु टूटी॥ दादुर मोर पपीहा बोलें अवधि भई सब झूठी। हम अपराधिनि मर्म न जान्यो अरु तुमहू ते टूटी॥ सूरदास प्रभु कबहुँ मिलहुगे सखी कहत सब झूठी॥ ८०॥



(कृष्ण सुदूरवर्ती द्वारका को जायँगे—यह सुनकर गोपियों को और भी क्लेश हुआ था।)

पथिक कहियो ब्रज जाइ सुने हरि जात सिंधुतट। सुनि सब अंग भए शिथिल गयो नहिं वज्रहियो फट॥ नर नारी घर घर सबै इह करति विचारा। मिलिहैं कैसी भाँति हमैं अब नंदकुमारा॥ निकट बसत हुती अस कियौ अब दूर पयाना। विना कृपा भगवान उपाउ न सूर अपाना॥ ८१॥



राग गौरी

हमारे श्याम चलन कहत हैं दूरि। मधुवन बसत आस हुती सजनी अब मरिहैं जु बिसूरि॥ कौने कहौ कौन सुनि आई किहि रुख रथ की धूरि। संगहि सबै चलौ माधव के ना तौ मरिहौ झूरि॥ दक्षिण दिशि यह नगर द्वारका सिंधु रह्यो जलपूरि। सूरदास प्रभु बिनु क्यों जीवों जात सजीवन मूरि॥ ८२॥

❀

गोपिकाविरह। राग धनाश्री

नैना भए अनाथ हमारे। मदनगोपाल वहाँ ते सजनी सुनियत दूरि सिधारे॥ वै जलहर हम मीन बापुरी कैसे जिवहिं निनारे। हम चातक चकोर श्यामघन वदन सुधा-निधि प्यारे॥ मधुवन बसत आस दरशन की जोइ नैन मग-हारे। सूर श्याम करी पिय ऐसी मृतकहु ते पुनि मारे* ॥८३॥

❀

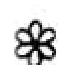
---

* गोपियों के विरह पर सेनापति कवि कहते हैं—

दामिनी दमक सुरचाप की चमक स्याम
　　घटा की धमक अति घोर घनघोर ते।
कोकिला कलापी कल कूजत हैं जित तित
　　सीतल है हीतल समीर झकझोर ते॥
सेनापति आवन कह्यो है मनभावन
　　लगो है तरसावन बिरह जुर जोर ते।
आयो सखी सावन विरहसरसावन
　　सु लागो बरसावन सलिल चहुँ ओर ते॥

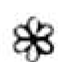
रुक्मिणिवचन श्रीभगवानप्रति। राग धनाश्री

रुक्मिणि बूझत है गोपालहिं। कहौ बात अपने गोकुल की केतिक प्रीति ब्रजबालहिं॥ कहा देखि रीझे राधा सों चंचल नैन बिशालहिं। तब तुम गाय चरावन जाते उर धरते बनमालहिं॥ इतनी सुनत नैन भरि आए प्रेम नंद के लालहिं। सूरदास प्रभु रहे मौन ह्वै घोष बात जनि चालहिं॥ १०१॥



राग धनाश्री

रुक्मिणि मोहिं निमेष न बिसरत वै ब्रजवासी लोग। हम उनसों कछु भलो न कीनी निशिदिन मरत वियोग॥ यदपि कनकमय रची द्वारका सखी सकल संभोग। तदपि मन जो हरत वंशीवट ललिता के संयोग॥ मैं ऊधो पठयो गोपिन पै देइ सँदेसा योग। सूरदास देखि उनकी गति किन्ह उपदेशो योग॥ १०२॥



दूरि जदुराई सेनापति सुखदाई देखो
आई रितु पावस न पाई प्रेमपतियां।
धीर जलधर की सुनत धुनि धरकी सुदरकी
सोहागिनी की छोहभरी छतियां॥
आई सुधि बर की हिय में आनि खरकी सुमिरि
प्रानप्यारी वह प्रीतम की बतियां।
बीती औधि आवन की लाल मन भावन की
डग भई बावन की सावन की रतियां॥ इत्यादि।

राग मलार

रुक्मिणि मोहिं ब्रज बिसरतु नाहीं। वा क्रीड़ा खेलत यमुनातट विमल कदम की छाँहीं॥ गोपवधू की भुजा कंठ धरि विहरत कुंजनमाहीं। अनेक विनोद कहाँ लौं बरणौं मो मुख बरणि न जाई॥ सकल सखा अरु नंद यशोदा वे चित ते न टराहीं। सुत हित जानि नंद प्रतिपाले बिछुरत विपति सहाहीं॥ यद्यपि सुखनिधान द्वारावति तोउ मन कहुँ न रहाहीं। सूरदास प्रभु कुंजविहारी सुमिरि सुमिरि पछिताहीं॥ १०३॥



राग धनाश्री

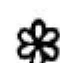
रुक्मिणि चलहु जनमभूमि जाहीं। यदपि तुम्हारो हतो द्वारका मथुरा के सम नाहीं॥ यमुना के तट गाय चरावत अमृतजल अचवाहीं। कुंजकेलि अरु भुजा कंध धरि शीतल द्रुम की छाहीं॥ सरस सुगंध मंद मलयागिरि विहरत कुंजन माहीं। जो क्रीड़ा श्रीवृन्दावन में तिहूँ लोक में नाहीं॥ सुरभी ग्वाल नंद अरु यशुमति मम चित ते न टराहीं। सूरदास प्रभु चतुरशिरोमणि सेवा तिनकि कराहीं॥ १०४॥



श्रीकृष्णकुरुक्षेत्रआवन। राग सारंग

ब्रजबासिन को हेतु हृदय में राखि मुरारी। सब यादव सों कह्यो बैठिकै सभा मँझारी॥ बड़ो पर्व रवि गहन कहा कहौं

तासु बड़ाई। चलौ सबै कुरुक्षेत्र तहाँ मिलि न्हैए जाई॥ तात मात निज नारि लै हरिजी सब संगा। चले नगर के लोग साजि रथ तरल तुरंगा॥ कुरुक्षेत्र में आइ दियो इक दूत पठाई। नंद यशोमति गोपी ग्वाल सब सूर बुलाई॥१०५॥



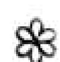
सखीवचन राधिकाप्रति; शकुनविचार। राग सारंग

वायस गहगहात शुभ वाणी विमल पूर्वदिशि बोली। आजु मिलाओ श्याम मनोहर तू सुनु सखी राधिके भोली॥ कुच भुज अधर नयन फरकत हैं विनहि वात अंचल ध्वज डोली। सोच निवार करो मन आनँद मानो भाग्य-दशा विधि खोली॥ सुनत सु वचन सखी के मुख ते पुलकित प्रेम तरकि गई चोली। सूरदास अभिलाष नंदसुत हरषीं सुभग नारि अनमोली॥१०६॥



राग केदारो

माधवजी आवनहार भए। अंचल उड़त मन होत गहगहो फरकत नैन खए॥ देही देखि सोच जिय अपने चितवत सगुन दए। ऋतु बसंत फूली द्रुमवल्ली उलहे पात नए॥ करति प्रतीति आपु आपुन ते सबन शृंगार ठए। सूरदास प्रभु मिलहु कृपा करि अवधिहु पूजि गए॥ १०७॥



(श्रीकृष्ण के दूत ने आकर यशोदा से कहा—)

राग धनाश्री

हौं इहां तेरे ही कारण आयो। तेरी सौं सुन जननी यशोदा हठि गोपाल पठायो॥ कहा भयो जो लोग कहत हैं देवकी माता जायो। खान पान परिधान सबै सुख तैहीं लाड़ लड़ायो॥ इतो हमारो राज द्वारका मो जी कछू न भायो। जब जब सुरति होत उहि हित की बिछुर बच्छ ज्यों धायो॥ अब वे हरि कुरुक्षेत्र में आए सो मैं तुम्हैं सुनायो। सब कुल-सहित नंद सूरज प्रभु हित करि वहां बोलायो॥ १०८॥

❀

राधिकावचन सखीप्रति । राग सारंग

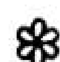
राधा नैन नीर भरि आई। कब धौं श्याम मिलैं सुंदर सखी यदपि निकट है आई॥ कहा करौं केहि भाँति जाउँ अब पेपहि नहिं तिन पाई। सूर श्यामसुंदर घन दरशे तनु की ताप नशाई॥ १०९॥

❀

सखीवचन राधिकाप्रति । राग केदारो

अब हरि आइहैं जिन सोचै। सुन विधुमुखी वारि नयनन ते अब तू काहे मोचै॥ सत्य जानि चित चेत आनि तू अब नख क्यों तनु नोचै। मदन मुरारि सँभारि सुमिरि सुख तुम समीप को बोचै॥ लै लेखनि मसि करि करि अपने लिखि

संदेस छाँड़ि संकोचै। सूर सु विरह जनाउ करत कित प्रबल मदन रिपु पोचै॥ ११०॥



गोपीसंदेश श्रीभगवानप्रति। राग सारंग

पथिक कहियो हरि सों यह बात। भक्तवछल है विरद तिहारो हम सब किए सनाथ॥ प्राण हमारे संग तुम्हारे हमहू हैं अब आवत। सूर श्याम सों कहत संदेसो नयनन नीर बहावत॥ १११॥



कुरुक्षेत्र श्रीभगवानमिलन। राग सारंग

नंद यशोदा सब ब्रजवासी। अपने अपने शकट साजिकै मिलन चले अविनासी॥ कोउ गावत कोउ वेणु बजावत कोउ उतावल धावत। हरि-दरशन-लालसा कारन विविध मुदित सब आवत॥ दरशन कियो आइ हरिजी को कहत सपन की साँची। प्रेम मानि कछु सुधि न रही अँग रहे श्याम रँग राची॥ जासों जैसी भाँति चाहिए ताहि मिल्यो त्यों धाइ। देस देस के नृपति देखि यह प्राण रहे अरगाइ॥ उमँग्यो प्रेमसमुद्र दसहुँ दिशि परमित कही न जाइ। सूरदास इह सुख सो जानै जाके हृदय समाइ॥ ११२॥



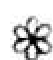
राग कान्हरो

तेरी जीवनिमूरि मिलहि किन माई। महाराज यदुनाथ कहावत तबहीं हुते शिशु कुँवर कन्हाई॥ पानि परे भुज धरे कमलमुख पेषत पूरब-कथा चलाई। परमउदार पानि अवलोकत हीन जानि कछु कहत न जाई॥ फिरि फिरि अब सन्मुख ही चितवति प्रीति सकुच जानी न दुराई। अब हँसि भेटहु कहि मोहिं निज जन बाल तिहारो हो नंद दोहाई॥ रोम पुलकि गदगद तनु तेहि छिन जलधारा नैनन वरषाई। मिले सु तात मात बंधू सब कुशल कुशल करि प्रश्न चलाई॥ आसन देइ बहुत करि विनती सुत धोखे तब वृद्ध हेराई। सूरदास प्रभु कृपा करी अब चितहि धरे पुनि करी बड़ाई॥ ११३॥



राग मलार

माधव या लगि है जग जीजतु। जाते हरि सों प्रेम पुरातन बहुरि नयो करि कीजतु॥ कहँ रवि राहु भयो रिपु मति रचि विधि संयोग बनायो। उहि उपकार आज यहि औसर हरिदरशन सचुपायो॥ कहाँ बसहिं यदुनाथ सिंधुतट कहँ हम गोकुलवासी। वह वियोग यह मिलनि कहाँ अब काल चाल औरासी॥ सूरदास मुनि चरण चरचि करि सुरलोकनि रुचि मानी। तब अरु अब यह दुसह प्रमानी निमिषो पीर न जानी॥ ११४॥



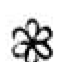
श्रीभगवान-रुक्मिणि-प्रत्युत्तर। राग कान्हरो

हरिजू सों बूझत है रुक्मिणि इनमें को वृषभानुकिशोरी। बारेक हमैं दिखावो अपने बालापन की जोरी॥ जाको हेतु निरंतर लीए डोलत ब्रज की खोरी। अति आतुर होइ गाइ-दुहावन जाते परघर चोरी॥ रजनी सेज सुकरि सुमनन की नवपल्लव पुट तोरी। बिनु देखे ताके मन तरसै छिन बीते युग मोरी॥ सूर सोच सुख करि भरि लोचन अंतर प्रीति न थोरी। शिथिल गात मुख वचन फुरत नहिं ह्वै जो गई मति भोरी॥११५॥



राग धनाश्री

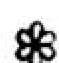
बूझति है रुक्मिणि पिय इनमें को वृषभानकिशोरी। नेक हमैं देखरावहु अपनी बालापन की जोरी॥ परमचतुर जिन कीने मोहन अल्प वैसही थोरी। बारे ते जिहि यहै पढ़ायो बुधि बल कल विधि चोरी॥ जाके गुण गनि गुथति माल कबहूँ उर ते नहिं छोरी। सुमिरन सदा बसतहीं रसना दृष्टि न इत उत मोरी॥ वह देखो युवतिवृंद में ठाढ़ी नीलवसन तनु गोरी। सूरजदास मेरो मन वाकी चितवन देखि हरयो री॥ ११६॥



राग मारू

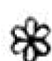
गोविंद परम कृपा मैं जानी। निगम जु कहत दयालु-शिरोमणि सत्य सु निधि वानी॥ अब ये श्रवण वरन कर

स्वारथ तुम जु दरशसुख दीनो। या फल योग सुकृत नहिं समुझत दीन देखि हित कीनो॥ यह दिन धन्य धन्य जीवन जस धन्य भाग्य प्रभु पाए। शिव मुनि मन दुर्लभ चरणांबुज जनहि प्रगट परसाए॥ हरषित सुजन सखा त्रिय बालक कृष्णमिलन जिय भाए। सूरजदास सकल लोचन जनु शशि चकोरकुल पाए॥ ११७॥



राग सारंग

हरिजी इते दिन कहाँ लगाए। तबहिं अवधि में कहत न समुझी गनत अचानक आए॥ भली करी जु अबहिं इन नैनन सुंदर चरण दिखाए। जानी कृपा राजकाजहुँ हम निमिष नहीं बिसराए॥ विरहिनि विकल विलोकि सूर प्रभु धाइ हृदय कर लाए। कछु मुसुकाइ कह्यो सारथि सुन रथ के तुरंग छुराए॥ ११८॥



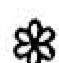
राग मलार

हरिजू वै सुख बहुरि कहाँ। यदपि नैन निरखत वह मूरति फिरि मन जात तहाँ॥ मुख मुरली सिर मोरपखौवा गर घुँघुँचिन को हार। आगे धेनु रेनु तनु मंडित चितवन तिरछी चाल॥ राति दिवस अंग अंग अपने हित हँसि मिलि खेलत खात। सूर देखि वा प्रभुता उनकी कहि नहिं आवै बात॥ ११९॥



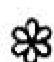
राग धनाश्री

रुक्मिणि राधा ऐसे बैठीं। जैसे बहुत दिनन की बिछुरी एक बाप की बेटी ॥ एक सुभाउ एकलै दोऊ दोऊ हरि को प्यारी। एक प्राण मन एक दुहुँन को तनु करि देखिअत न्यारी ॥ निज मंदिर लै गई रुक्मिणी पहुनाई विधि ठानी। सूरदास प्रभु तहँ पग धारे जहाँ दोऊ ठकुरानी ॥ १२० ॥



राग धनाश्री

राधा माधव भेंट भई। राधा माधव माधव राधा कीट भृंग गति ह्वइ जो गई ॥ माधव राधा के रँग राचे राधा माधवरंग रई। माधो राधा प्रीति निरंतर रसना कहि न गई ॥ बिहँसि कह्यो हम तुम नहिं अंतर यह कहि व्रज पठई। सूरदास प्रभु राधा माधव व्रजविहार नित नई नई ॥ १२१ ॥



राधावचन सखीप्रति। राग धनाश्री

करत कछु नाहीं आजु बनी। हरि आए हौं रही ठगी सी जैसे चित्तधनी ॥ आसन हर्षि हृदय नहिं दीन्हों कमल-कुटी अपनी। न्यवछावर उर अरघ न अंचल जलधारा जो बनी ॥ कंचुकी ते कुचकलश प्रगट ह्वै टूटि न तरक तनी। अव उपजी अति लाज मनहि मन समुझत निज करनी ॥ मुख

देखत न्यारे सी रहिहौं बिनु बुधिमति सजनी। तदपि सूर मेरी यह जड़ता मंगल माँझ गनी ॥ १२२ ॥



भगवानवचन ब्रजवासीप्रति। राग सारंग

ब्रजवासिन सों कह्यो सबन ते ब्रजहित मेरे। तुमसों मैं नहिं दूर रहत हौं सबहिन के नियरे॥ भजै मोहिं जो कोई भजों मैं तिनको भाई। मुकुर माँह ज्यों रूप आपनो आपुन सम दरशाई॥ यह कहिकै समदे सकल जन नयन रहे जल छाई। सूर श्याम को प्रेम कछू मोपै कह्यो न जाई॥ १२३ ॥



राग सारंग

सबहिन ते सब है जन मेरो। जन्म जन्म सुन सुबल सुदामा निबह्यो इह प्रण मेरो॥ ब्रह्मादिक इंद्रादि आदि दै जानत बलि बसि केरो। इक उपहास त्रास उठि चलते तजिकै अपनो खेरो॥ कहा भयो जो देस द्वारका कीन्हों दूरि बसेरो। आपुनहीं या ब्रज के कारण करिहौं फिरि फिरि फेरो॥ यहाँ वहाँ हम फिरत साध हित करत असाध अहेरो। सूर हृदय ते टरत न गोकुल अंग छुअत हौं तेरो॥ १२४ ॥



वचन ब्रजवासी। राग सारंग

हम तो इतने ही सचुपायो। सुंदर श्याम कमलदललोचन बहुरो दरश देखायो॥ कहा भयो जो लोग कहत हैं कान्ह

द्वारका छायो। सुनि यह दशा विरह लोगन की उठि आतुर होइ धायो ॥ रजक धेनु गज कंस मारिकै कियो आपने भायो। महाराज होय मातु पिता मिलि तऊ न व्रज बिसरायो ॥ गोपी गोप अरु नंद चले मिलि प्रेमसमुद्र बहायो। येते मान कृपालु निरन्तर नैन नीर ढरि आयो ॥ यद्यपि राज बहुत प्रभुता सुनि हरि हित अधिक जनायो। वैसहि सूर बहुरि नँदनंदन घर घर माखन खायो ॥ १२५ ॥

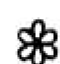


ऋपिस्तुति। राग बिलावल

हरि हरि हरि सुमिरहु सब कोई। बिनु हरि सुमिरन मुक्ति न होई ॥ श्रीशुक व्यास कह्यो यह गाई। सोई अब कहौं सुनो चित लाई ॥ सूरज गहन पर्व हरि जान। कुरुक्षेत्र में आए न्हान ॥ तहाँ ऋषि हरिदरशन हित आए। हरि आगे होइ लेन सिधाए ॥ आसन दे पूजा हित करी। हाथ जोरि बिनती उच्चरी ॥ दरश तुम्हारे देवन दुर्लभ। हमको भयो सो अतिही सुर्लभ ॥ यों कहि पुनि लोगन समुझायो। जैसे वेद-पुराणन गायो ॥ हरिजी को पूजै हरि जान। ताको होइ तुरत कल्यान ॥ गुरुपूजा बहु विधि सों कीजै। तीरथ जाइ दान बहु दीजै ॥ यह सब किए होइ फल जोइ। संतसंग सों छिन में होइ ॥ यह सुनिकै ऋषि रहे लजाइ। पुनि हरि सो

बोले या भाइ ॥ तुम सबके गुरु सबके स्वामी। तुम सबहिन के अंतर्यामी ॥ तुम्हैं वेद ब्राह्मणहि बखानत। ताते हमरी अस्तुति ठानत ॥ हम सेवक तुम जगतअधार। नमो नमो तुम्हें वारंवार ॥ तुम परब्रह्म जगत करतारा। नरतनु धरयो हरन भूभारा ॥ सुरपूजा औ तीर्थ बतावत। लोगन के मति को भरमावत ॥ तुम रूपहि यहि भाँति छिपायो। काठ माँह ज्यों अग्नि दुरायो ॥ बसुदेव तुमको जानत नाहीं। और लोग बपुरे किन माहीं ॥ कोउ न मानत कोउ न जानत। कोऊ शत्रु मित्र करि मानत ॥ सर्व अशक्ति तुम सर्व अधार। तुम्हैं भजै सो उतरै पार ॥ जैसे नींद माहिं कोइ होय। वहु विधि सपनो पावै सोय ॥ पै तेहि वहाँ न कछू सम्हार। कहि देखत को देखनहार ॥ त्यों जिय रहै विषैरस होइ। तेहिके शुद्धि बुद्धि नहिं कोइ ॥ जा पर कृपा तुम्हारी होइ। रूप तुम्हारो जानै सोइ ॥ घट घट माँह तिहारो वास। सर्व ठौर ज्यों दीप प्रकास ॥ इहि विधि तुमको जानै जोइ। भक्तरु ज्ञानी कहिये सोइ ॥ नाथ कृपा अब हम पर कीजै ! भक्ति आपनी हमको दीजै ॥ प्रेम-भक्ति बिन कृपा न होइ। सर्व शास्त्र में देखे जोइ ॥ तपसी तुमको तप करि पावै। सुनि भागवत गृही गुण गावै ॥ कर्मयोग करि सेवत कोई। ज्यों सेवै त्योंही गति होई ॥ ऋषि यहि विधि हरि के गुण गाइ। कह्यो होइ आज्ञा यदुराइ ॥ हरि तिनको पुनि पूजा करी। कीरति सकल जगत विस्तरी ॥ वेद पुराण सबन को सार। व्यास कह्यो भागवत विचार ॥ बिनु

हरिनाम नहीं उद्धार। वेद पुराण सबन को सार ॥ सूर जानि यह भजो मुरार ॥ १२७ ॥



(इसके बाद वेदों ने और नारद ऋषि ने कृष्ण की स्तुति की। सुभद्राविवाह, भस्मासुर-वध और भृगुपरीक्षा के पश्चात् दशम स्कंध समाप्त होता है।)

एकादश स्कन्ध

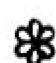
(११ वें अध्याय में केवल छः पद हैं, हंसावतार का वर्णन है।)

द्वादश स्कन्ध

बौद्धावतार-वर्णन। राग बिलावल

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करो। हरि-चरणारविंद उर धरो॥ बौद्धरूप जैसे हरि धारयो। अदितिसुतन को कारज सारयो॥ कहौं सो कथा सुनो चित धार। कहै सुनै सो तरै भव पार॥ असुर एक समय शुक्र पै जाइ। कह्यो सुरन जीतैं केहि भाइ॥ शुक्र कह्यो तुम जग विस्तरो। करिकै यज्ञ सुरन सों लरो॥ याही बिधि तुमरी जय होइ। या बिनु और उपाय न कोइ॥ असुर शुक्र की आज्ञा पाइ। लागे करन यज्ञ बहु भाइ॥ तब सुर सब हरिजू पै जाइ। कह्यो वृत्तांत सकल सिर नाइ॥ हरिजू तिनको दुःखित देख। कियो तुरत सेवरि को भेप॥ असुरन पास बहुरि चलि गए। तिनसों वचन ऐसी विधि कए॥ यज्ञ माहिं तुम पशुन यों मारत। दया नहीं आवत संहारत॥ अपनो सो जीव सवन को जानि। कीजै नहिं जीवन की हानि॥ दया-धर्म पालै जो कोइ। मेरी मति

ताकी जय होइ ॥ यह सुनि असुरन यज्ञ त्यागि। दया-धर्म-मारग अनुरागि ॥ या विधि भयो बुद्धअवतार। सूर कह्यो भागवत-अनुसार ॥ २ ॥



(भविष्य कल्की-अवतार, परीक्षित का मोक्ष और जनमेजय-कथा के पश्चात् द्वादश स्कन्ध समाप्त होता है।)

इति संक्षिप्त सूरसागर